प्रकाशक हिंदी साहित्य भंडार, अमीनाबाद लखनऊ
मुद्रक विद्यामंदिर प्रेस रानीकटरा लखनऊ
तिथि २५ जनवरी १९६१
मूल्य छह रुपया

कृष्ण-भ्राता को

संसार जिसको न सुख समझ सका, न दुख।

# निवेदन

प्रस्तुत संकलन में सूरदास के १८०१ पद हैं। इनमें लगभग १५०० तो काव्य-कला की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं शेष कथा-प्रसंग का परिचय देने के लिए संकलित किये गये हैं और इस कारण उनकी भी अपनी उपयोगिता है।

'सूरसागर' के लखनऊ, बंबई और काशी के संस्करण मात्र उपलब्ध हैं। प्रस्तुत संकलन का मुख्य आधार यद्यपि सभा का ही संस्करण है तथापि अनेक पदों के पाठ लखनऊ और बंबई के 'सूरसागरों' से भी लिये गये हैं। इन सभी संस्करणों के विद्वान संपादकों के प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

—प्रे० ना० टंडन

# सूची


| क्रम | प्रसंग | पद | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| १ | विनय और आत्मनिवेदन | १—१५० | ९ |
| २. | पौराणिक प्रसंग | १५१—१८० | ५२ |
| ३. | राम चरित | १८१—२५७ | ६२ |
| ४ | बाल-लीला | २५८—५७८ | ८७ |
| ५. | रूप-चित्रण | ५७९—६५३ | १७६ |
| ६. | राधा-कृष्ण | ६५४—९४१ | २ ५ |
| ७ | मुरली-माधुरी | ९४२—१०१२ | २८३ |
| ८. | गोपी-कृष्ण | १०१३—१२०४ | ३०३ |
| ९. | नेत्रोपालंभ | १२०५—१२५३ | ३३५ |
| १० | मथुरा-प्रवास | १२५४—१३३७ | ३६८ |
| ११ | गोपी-विरह | १३३८—१४३८ | ३९३ |
| १२. | कृष्ण और उद्धव | १४३९—१४८९ | ४२१ |
| १३ | उद्धव-गोपी-संवाद | १४९०—१७ ४ | ४३५ |
| १४. | आश्वासन | १७०५—१७३६ | ४९५ |
| १५. | द्वारिका-चरित | १७३७—१७९१ | ५ ५ |
| १६ | पुनर्मिलन | १७९२—१८०१ | ५१३ |
| | पदानुक्रमणिका | | ५२५ |

# संक्षिप्त सूरसागर

## (क) विनय और आत्मनिवेदन

चरन-कमल बंदौं हरि-राई।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै अंधे कौं सब कछु दरसाई।
बहिरौ सुनै गूँग पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराई।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार बार बंदौं तिहिं पाई ॥१॥

अबिगत-गति कछु कहत न आवै।
ज्यौं गूँगैं मीठे फल कौ रस अंतरगत ही भावै।
परम स्वाद सबही सु निरंतर अमित तोष उपजावै।
मन-बानी कौं अगम अगोचर, सो जानै जो पावै।
रूप-रेख-गुन जाति जुगुति-बिनु निरालंब कित धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातैं सूर सगुन-पद गावै ॥२॥

बासुदेव की बड़ी बड़ाई।
जगत-पिता जगदीस जगत-गुरु निज भक्तनि की सहत ढिठाई।
भृगु को चरन राखि उर ऊपर, बोले बचन सकल सुखदाई।
सिव-बिरंचि मारन कौं धाए यह गति काहू देव न पाई।
बिनु बदलैं उपकार करत हैं, स्वारथ बिना करत मित्राई।
रावन अरि कौ अनुज बिभीषन ताकौं मिले भरत की नाई।
बकी कपट करि मारन आई, सो हरि जू बैकुंठ पठाई।
बिनु दीन्हैं ही देत सूर प्रभु ऐसे हैं जदुनाथ गुसाईं ॥३॥

प्रभु को देखौ एक सुभाइ।
अति गंभीर-उदार उदधि हरि, जान सिरोमनि राइ।
तिनका सौं अपने जन कौ गुन मानत मेरु-समान।
सकुचि गनत अपराध-समुद्रहिं बूँद-तुल्य भगवान।
बदन-प्रसन्न कमल सनमुख ह्वै देखत हौं हरि जैसैं।
बिमुख भए अकृपा न निमिषहूँ फिरि चितयौ तौ तैसैं।
भक्त-बिरह-कातर करुनामय डोलत पाछैं लागे।
सूरदास ऐसे स्वामी कौं देहिं पीठ सो अभागे ॥४॥

हरि सौं ठाकुर और न जन कौ।
जिहिं जिहिं बिधि सेवक सुख पावै, तिहिं बिधि राखत मन कौं।
भूख भए भोजन जु उदर कौं तृषा तोय पट तन कौं।
लग्यौ फिरत सुरभी ज्यौं सुत-सँग औचट गुनि गृह बन कौं।
परम उदार चतुर चिंतामनि कोटि कुबेर निधन कौं।
राखत है जन की परतिज्ञा हाथ पसारत कन कौं।
संकट परैं तुरत उठि धावत परम सुभट निज पन कौं।
कोटिक करैं एक नहिं मानै सूर महा कृतघन कौ ॥५॥

राम भक्तबत्सल निज बानौ।
जाति गोत कुल नाम गनत नहिं रंक होइ कै रानौ।
सिव-ब्रह्मादिक कौन जाति प्रभु हौं अजान नहिं जानौं।
हमता जहाँ तहाँ प्रभु नाहीं सो हमता क्यौं मानौं ?
प्रगट खंभ तैं दए दिखाई, जद्यपि कुल कौ दानौ।
रघुकुल राघव कृष्न सदा ही गोकुल कीन्हौं थानौ।
बरनि न जाइ भक्त की महिमा, बारंबार बखानौं।
ध्रुव रजपूत बिदुर दासी-सुत कौन कौन अरगानौ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ भक्तनि हाथ बिकानौ।
राजसूय मैं चरन पखारे स्याम लिए कर पानौ।

रसना एक, अनेक स्याम-गुन कहँ लगि करौं बखानी।
सूरदास-प्रभु की महिमा अति साखी बेद-पुरानी॥६॥

काहू के कुल तन न विचारत।
अबिगत की गति कहि न परति है ब्याध-अजामिलि तारत।
कौन जाति अरु पाँति बिदुर की ताही कैं पग धारत।
भोजन करत माँगि घर उनकैं राज-मान-मद टारत।
ऐसे जनम करम के ओछे, ओछनि हूँ ब्यौहारत।
यहै सुभाव सूर के प्रभु कौ भक्त-बछल पन पारत॥७॥

गोबिंद प्रीति सबनि की मानत।
जिहिं जिहिं भाइ करत जन सेवा, अंतर की गति जानत।
सबरी कटुक बेर तजि मीठे चाखि, गोद भरि ल्याइ।
जूठनि की कछु संक न मानी, भच्छ किए सत-भाइ।
संतन भक्त-मीत हितकारी स्याम बिदुर कें आए।
प्रेम-बिकल अति आनँद उर धरि कदली छिकुला खाए।
कौरव-काज चले रिषि सापन, साक-पत्र सु अघाए।
सूरदास करुना-निधान प्रभु जुग जुग भक्त बढ़ाए॥८॥

सरन गए को को न उबारयौ।
जब जब भीर परी संतनि कौं चक्र सुदरसन तहाँ सँभारयौ।
भयौ प्रसाद जु अंबरीष कौं दुरबासा कौ क्रोध निवारयौ।
ग्वालनि हेत धरयौ गोबर्धन, प्रगट इंद्र कौ गर्व प्रहारयौ।
कृपा करी प्रहलाद भक्त पर खंभ फारि हिरनाकुस मारयौ।
नरहरि रूप धरयौ करुनाकर, छिनक माहिं उर नखनि बिदारयौ।
ग्राह ग्रसत गज कौं जल बूड़त नाम लेत वाकौ दुख टारयौ।
सूर स्याम बिनु और करै को, रंग-भूमि मैं कंस पछारयौ॥९॥

स्याम गरीबनि हूँ के गाहक।
दीनानाथ हमारे ठाकुर साँचे प्रीति-निबाहक।

कहा बिदुर की जाति पाँति कुल, प्रेम प्रीति के गाहक।
कह पांडव कैं घर ठकुराइ, अरजुन के रथ-वाहक।
कहा सुदामा कैं धन हौ, तौ सत्य-प्रीति के चाहक।
सूरदास सठ, तातैं हरि भजि आरत के दुख दाहक ॥१०॥

कैसैं तुम गज कौ पाउँ छुड़ायौ।
अपने जन कौ दुखित जानि कै पाउँ पियादे धायौ।
जहँ जहँ गाढ़ परी भक्तनि कौं तहँ तहँ आपु जनायौ।
भक्ति-हेत प्रहलाद उबारयौ, द्रौपदि-चीर बढ़ायौ।
प्रीति जानि हरि गए बिदुर कैं, नामदेव घर छायौ।
सूरदास द्विज दीन सुदामा तिहिं दारिद्र नसायौ ॥११॥

हरि के जन सब तैं अधिकारी।
ब्रह्मा महादेव तैं को बड़ तिनकी सेवा कछु न सुधारी।
जाँचक पै जाँचक कह जाँचै? जौ जाँचै तौ रसना हारी।
जन प्रहलाद प्रतिज्ञा पाली कियौ बिभीषन राजा भारी।
सिला तरी जल माहिं सेत बँधि बलि पद चरन अहिल्या तारी।
जे रघुनाथ-सरन तकि आए, तिनकी सकल आपदा टारी।
जिहिं गोबिंद अचल ध्रुव राख्यौ रबि-ससि कियौ प्रदच्छिनकारी।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु धरनी जननि बोझ कत मारी ॥१२॥

आपर दीनानाथ हरै।
कौन कुलीन कहौ सुंदर सोइ जिहिं पर कृपा करै।
प्र    कौन बिभीषन रंक-निसाचर हरि हँसि छत्र धरै।
रघु    कौन बड़ौ रावन तैं गर्बहिं-गर्ब गरै।
बरनि    कौन सुदामा हू तैं आप समान करै।
ध्रुव रु    कौन है अजामील तैं जम तहँ जात डरै।
जुग जुग।    कौन अधिक नारद तैं निसि-दिन भ्रमत फिरै।
गजगज मैं    सौ, संकर मैं, ताकी भ्रम करै।

अधिक कुरूप कौन कुबिजा तैं, हरि पति पाइ तरै।
अधिक सुरूप कौन सीता तैं, जनम बियोग भरै।
यह गति-मति जानै नहिं कोऊ, किहिं रस रसिक ढरै।
सूरदास भगवंत भजन बिनु फिरि फिरि जठर जरै ॥१३॥

जाकौ दीनानाथ निवाजैं।
भव-सागर मैं कबहुँ न झूकै, अभय निसानै बाजैं।
बिप्र सुदामा कौ निधि दीन्ही अर्जुन रन मैं गाजैं।
लंका राज बिभीषन राजैं ध्रुव आकास बिराजैं।
मारि कंस-केसी मथुरा मैं मेट्यौ सबै दुराजैं।
उग्रसेन-सिर छत्र धरयौ है, दानव दल दिसि भाजैं।
अंबर गहत द्रौपदी राखी पलटि अंध-सुत लाजैं।
सूरदास प्रभु महा भक्ति तैं जाति अजातिहिं साजैं ॥१४॥

जाकौ मनमोहन अंग करै।
ताकौ केस खसै नहिं सिर तैं, जौ जग बैर परै।
हिरनकसिपु परहार थक्यौ प्रहलाद न नैकु डरै।
अजहूँ लगि उत्तानपाद-सुत, अबिचल राज करै।
राखी लाज द्रुपद-तनया की, कुरुपति चीर हरै।
दुरजोधन कौ मान भंग करि बसन-प्रवाह भरै।
जौ सुरपति कोप्यौ ब्रज ऊपर, क्रोध न कछू सरै।
ब्रज जन राखि नंद कौ लाला गिरिधर बिरद धरै।
जाकौ बिरद है गर्ब-प्रहारी सो कैसैं बिसरै।
सूरजदास भगवंत-भजन करि सरन गए उधरै ॥१५॥

जाकौ हरि अंगीकार कियौ।
ताके कोटि बिघन हरि हरि कै अभै प्रताप दियौ।
दुरबासा अंबरीष सतायौ सो हरि-सरन गयौ॥
परतिज्ञा राखी मन-मोहन फिरि तापैं पठयौ।

बहुत सासना दई प्रहलादहिं, ताहि निसंक कियौ ॥
निकसि खंभ तैं नाथ निरंतर, निज जन राखि लियौ ।
मृतक भए सब सखा जिवाए, विष जल जाइ पियौ ।
सूरजदास भक्तबछल हैं, उपमा कौं न बियौ ॥१६॥

कहा कमी जाके राम धनी ।
मनसा-नाथ मनोरथ-पूरन सुख-निधान जाकी मौज घनी ।
अर्थ, धर्म अरु काम, मोच्छ, फल, चारि पदारथ देत गनी ।
इंद्र समान हैं जाके सेवक, नर बपुरे की कहा गनी ।
कहा कृपिन की माया गनिये करत फिरत अपनी अपनीं ।
खाइ न सकै खरचि नहिं जानै ज्यौं भुवंग-सिर रहत मनी ।
सूर कहत जे भजत राम कौं, तिनसौं हरि सौं सदा बनी ॥१७॥

बिनती सुनौ दीन की चित दै कैसे तुव गुन गावै ?
माया नटी लकुटि कर लीन्हे कोटिक नाच नचावै ।
दर-दर लोभ लागि लिये डोलति नाना स्वाँग बनावै ।
तुम सौं कपट करावति प्रभु जू मेरी बुधि भरमावै ।
मन अभिलाष-तरंगनि करि करि मिथ्या निसा जगावै ।
सोवत सपने मैं ज्यौं संपति त्यौं दिखाइ बौरावै ।
महा मोहिनी मोहि आतमा अपमारगहिं लगावै ।
ज्यौं दूती पर-बधू भोरि कै लै पर पुरुष दिखावै ।
मेरे तौ तुम पति तुमही गति तुम समान को पावै ?
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, को मो दुख बिसरावै ॥१८॥

हरि तेरौ भजन कियौ न जाइ ।
कहा करौं तेरी प्रबल माया देति मन भरमाइ ।
जबै आवौं साधु-संगति कछुक मन ठहराइ ।
ज्यौं गयंद अन्हाइ सरिता बहुरि वहै सुभाइ ।

धेप धरि धरि हरयौ पर धन साधु-साधु कहाइ।
जैसे नटवा लोभ कारन करत स्वाँग बनाइ।
करौं जतन, न भजौं तुमकौं कछुक मन उपजाइ।
सूर प्रभु की सबल माया देति मोहिं भुलाइ ॥१६॥

माधौ जू मन माया बस कीन्हौ।
लाभ-हानि कछु समुझत नाहीं ज्यौं पतंग तन दीन्हौं।
गृह-दीपक, धन तेल, तूल तिय सुत-ज्वाला अति जोर।
मैं मति हीन मरम नहिं जान्यौ, परयौ अधिक करि दौर।
बिवस भयौ नलिनी के सुक ज्यौं, बिन गुन मोहिं गह्यौ।
मैं अज्ञान कछू नहिं समुझयौ परि दुख पुंज सह्यौ।
बहुतक दिवस भए या जग मैं भ्रमत फिरयौं मति हीन।
सूर स्यामसुन्दर जौ सेवै, क्यौं होवै गति दीन ॥२०॥

अब हौं माया हाथ बिकानौ।
परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-बस भज्यौ न श्रीपति रानौ।
हिंसा-मद-ममता-रस भूल्यौ आसाही लपटानौ।
याही करत अधीन भयौ हौं निद्रा अति न अघानौ।
अपने ही अज्ञान-तिमिर मैं बिसरयौ परम ठिकानौ।
सूरदास की एक आँखि है, ताहू मैं कछु कानौ ॥२१॥

दीन जन क्यों करि आवै सरन ?
भूल्यौ फिरत सकल जल-थल-मग, सुनहु ताप-त्रय-हरन।
परम अनाथ बिवेक-नैन बिनु निगम ऐन क्यौं पावै ?
पग पग परत कर्म-तम-कूपहिं, को करि कृपा बचावै ?
नहिं कर लकुटि सुमति-सतसंगति जिहिं अधार अनुसरई
प्रबल अपार मोह-निसि बस बिसि,सु धौं कहा अब करई।
अकुलित रटत सभीत ससंकित, सुकृत सब्द नहिं पावै।
सूर स्याम पद-नख-प्रकास बिनु, क्यौं करि तिमिर नसावै ॥२२॥

अब सिर परी ठगौरी देव।
तातैं बिबस भयौ करुनामय छाँड़ि बिहारी सेव।
माया-मंत्र पढ़त मन निसि-दिन मोह-मूरछा आनत।
ज्यौं मृग-नाभि-कमल निज अनुदिन निकट रहत नहिं जानत।।
भ्रम-मद-मत्त, काम-तृष्ना-रस-बेग न क्रमै गह्यौ।
सूर एक पल गहरु न कीन्यौ, फिरि जुग इतौ सह्यौ ।।२३।।

माया देखत ही जु गई।
ना हरि-हित, ना तू हित, इनमैं एकौ तौ न भई।
ज्यौं मधुमाखी सँचति निरंतर, बन की ओट लई।
ब्याकुल होत हरे ज्यौं सरबस, आँखिनि धूरि दई।
सुत-संतान-स्वजन-बनिता-रति घन समान उनई।
राखी सूर पवन पाखँड हति करी जो प्रीति नई ।।२४।।

माधौ जू, यह मेरी इक गाइ।
अब आजु तैं आप आगैं दई, लै आइऐ चराइ।
है अति हरहाई हटकत हूँ बहुत अमारग जाति।
फिरति बेद-बन-ऊख उपारति, सब दिन अरु सब राति।
हित करि मिलै लेहु गोकुलपति अपने गोधन माहैं।
सुख सोऊँ सुनि बचन तुम्हारे, देहु कृपा करि बाँह।
निधरक रहौं सूर के स्वामी जनम न जानौं फेरि।
मन ममता रुचि सौं रखवारी, पहिलैं लेहु निबेरि ।।२५।।

किते दिन हरि-सुमिरन बिनु खोए।
पर निंदा रसना के रस करि केतिक जनम बिगोए।
तेल लगाइ कियौ रुचि-मर्दन बस्तर मलि-मलि धोए।
तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै बिषयिनि के मुख जोए।
काल बली तैं सब जग काँप्यौ ब्रह्मादिक हू रोए।
सूर अधम की कहौ कौन गति, उदर भरे परि सोए ।।२६।।

यह आसा पापिनी दहै।
तजि सेवा बैकुंठनाथ की नीच नरनि कै संग रहै।
जिनको मुख देखत दुख उपजत तिनको राजा-राय कहै।
धन-मद-मूढ़नि अभिमानिनि मिलि लोभ लिए दुर्बचन सहै।
भई न कृपा स्यामसुंदर की जब कहा स्वारथ फिरत वहै?
सूरदास सब सुख-दाता प्रभु-गुन बिचारि नहिं चरन गहै॥२७॥

इहिं राजस को को न बिगोयौ?
हिरनकसिपु, हिरनाच्छ आदि दै रावन कुंभकरन कुल खोयौ।
कंस, केसि चानूर महाबल करि निरजीव जमुन-जल बोयौ।
जग्य-समय सिसुपाल सुजोधा अनायास लै जोति समोयौ।
ब्रह्मा-महादेव-सुर-सुरपति नाचत फिरत महा रस मोयौ।
सूरदास सौ चरन-सरन रह्यौ सो जन निपट नींद भरि सोयौ॥२८॥

फिरि फिरि ऐसोइ है करत।
जैसैं प्रेम पतंग दीप सौं, पावक हू न डरत।
भव-दुख-कूप जान करि दीपक देखत प्रगट परत।
काम-ब्याल रज-तम बिष-ज्वाला कत सह अंगु जरत।
अबिहित बाद-बिबाद सकल मत इन लगि भेष धरत।
इहिं बिधि भ्रमत सकल निसि दिन गत कछू न काज सरत।
अगम सिंधु जतननि सजि नौका हठि क्रम भार भरत।
सूरदास-ब्रत यहै कृष्ण भजि, भव जलनिधि उतरत॥२९॥

माधौ नैंकु हटकौ गाइ।
भ्रमत निसि-बासर अपथ-पथ अगह गहि नहिं जाइ।
छुधित अति न अघाति कबहूँ निगम-द्रुम दलि खाइ।
अष्ट दस घट नीर अँचवति तृषा तउ न बुझाइ।
छहौं रस जौ धरौ आगैं तउ न गंध सुहाइ।
और अहित अभच्छ भच्छति कला बरनि न जाइ।

व्योम, धर, नद, सैल कानन इते चरि न अघाइ।
नील खुर अरु अरुन लोचन सेत सीग सुहाइ।
भुवन चौदह खुरनि खूँदति, सु धौं कहाँ समाइ।
ढीठ निठुर, न डरति काहूँ त्रिगुन ह्वै समुहाइ।
हरै खात खात दनुज-मानव-सुरनि सीस चढ़ाइ।
रचि बिरंचि मुख-भौंह-छबि लै चलति चित चुराइ।
नारदादि सुकादि मुनिजन थके करत उपाइ।
ताहि कहु कैसैं कृपानिधि सकत सूर चराइ ? ॥२०॥

कहत है आगैं जपिहैं राम।
बीचहिं भई और की औरै परयौ काल सौं काम।
गरभ-बास दस मास अधोमुख तहँ न भयौ बिस्राम।
बालापन खेलत ही खोयौ, जोबन जोरत दाम।
अब तौ जरा निपट नियरानी, करयौ न कछुवै काम।
सूरदास प्रभु कौं बिसरायौ बिना लियैं हरि-नाम ॥२१॥

रे मन जग पर जानि ठगायौ।
धन-मद कुल-मद, तरुनी कैं मद, भव-मद हरि बिसरायौ।
कलि-मल हरन, कालिमा-टारन रसना स्याम न गायौ।
रसमय जानि सुवा सेमर कौं चोंच घालि पछितायौ।
कर्म-धर्म लीला-जस हरि-गुन इहिं रस-सौंच न आयौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु कहु कैसैं सुख पायौ ॥२२॥

रे मन छाँड़ि बिषय कौ रँचिबौ।
कत तू सुवा होत सेमर कौ अंतहिं कपट न बचिबौ।
अंतर गहत कनक-कामिनि कौ हाथ रहैगौ पचिबौ।
तजि अभिमान राम कहि बौरे नतरुक ज्वाला तचिबौ।
सतगुरु कह्यौ, कहौं तोसौं हौं, राम-रतन धन सँचिबौ।
सूरदास प्रभु हरि-सुमिरन बिनु जोगी-कपि ज्यौं नचिबौ ॥२३॥

अब कैसे पैयत सुख माँगे ?

जैसोइ बोइए तैसोइ लुनिए, कर्मन भोग अभागे।
तीरथ ब्रत कछुवै नहिं कीन्हौं, दान दियौ नहिं आगे।
पछिले कर्म सम्हारत नाहीं करत नहीं कछु आगे।
बोवत बबुर दाख फल चाहत, जोवत है फल लागे।
सूरदास तुम राम न भजि कै, फिरत काल सँग लागे ॥२४॥

रे मन गोविंद के ह्वै रहियै।

इहिं संसार अपार विरत ह्वै जम की त्रास न सहियै।
दुख, सुख कीरति भाग आपनें आइ परै सो गहियै।
सूरदास भगवंत भजन करि अंत बार कछु लहियै ॥२५॥

रे मन, अजहूँ क्यौं न सम्हारै।

माया-मद मैं भयौ मत्त कत जनम वादिहीं हारै।
तू तौ विषया रंग रँग्यो है बिन धोए क्यौं छूटै।
सान भवन करि देखौ, तैसैं बार-बार विष घूटै।
रस लै-लै औटाइ करत गुर डारि देत है खोई।
फिरि औटाए स्वाद जात है गुर तैं खाँड़ न होई।
सेत हरौ रातौ अरु पियरौ रंग लेत है धोई।
कारौ अपनौ रंग न छाँड़ै अनरँग कबहुँ न होई।
कुबिजा भई स्याम-रँग-रातौ तातैं सोभा पाई।
ताहि सबै कंचन सम तौलैं अरु भी निकट समाई।
नंद-नंदन पद-कमल छाँड़ि कै माया-हाथ बिकानौ।
सूरदास आपुहिं समुझावै लोग बुरौ जिनि मानौ ॥२६॥

नर तैं जनम पाइ कह कीनौ।

उदर भरयौ कूकर सूकर लौं प्रभु कौ नाम न लीनौ।
श्री भागवत सुनी नहिं स्रवननि गुरु गोविंद नहिं चीन्हौ।
भाव-भक्ति कछु हृदय न उपजी मन विषया मैं दीन्हौ।

झूठो सुख अपनो करि जान्यौ परस प्रिया कैं भीनौ।
अघ को मेरु बढ़ाइ अधम तू अंत भयौ बलहीनौ।
लख चौरासी जोनि भरमि कै फिरि वाही मन दीनौ।
सूरदास भगवंत भजन बिनु ज्यौं अंजलि-जल छीनौ ॥३७॥

नीकैं गाइ गुपालहिं मन रे।
जा गाऐं निर्भय पद पाए अपराधी अनगन रे।
गायौ गीध अजामिल गनिका, गायौ पारथ धन रे।
गायौ स्वपच परम अघ-पूरन सुत पायौ बाम्हन रे।
गायौ ग्राह ग्रसत गज जल में खंभ बँधे तैं जन रे।
गाऐं सूर कौन नहिं उबरयौ हरि परिपालन पन रे ॥३८॥

रह्यौ मन सुमिरन कौ पछितायौ।
यह तन राँचि राँचि करि बिरच्यौ कियौ आपनौ भायौ।
मन-कृत दोष अथाह तरंगिनि तरि नहिं सक्यौ, समायौ।
मेल्यौ जाल काल जब खैंच्यौ, भयौ, मीन-जल-हायौ।
कीर पढ़ावत गनिका तारी ब्याध परम पद पायौ।
ऐसौ सूर नाहिं कोउ दूजौ दूरि करै जम-दायौ ॥३९॥

सब तजि भजिए नंद-कुमार।
और भजे तैं काम सरै नहिं, मिटै न भव-जंजार।
जिहिं जिहिं जोनि जन्म धारयौ बहु जोरयौ अघ कौ भार।
तिहिं काटन कौं समरथ हरि कौ तीछन नाम-कुठार।
बेद पुरान, भागवत गीता सब कौ यह मत सार।
भव-समुद्र हरि-पद-नौका बिनु कोउ न उतारै पार।
यह जिय जानि इहीं छिन भजि दिन बीते जात असार।
सूर पाइ यह समौ लाहु लहि दुर्लभ फिरि संसार ॥४०॥

राम न सुमिरयौ एक घरी।
परम भाग सुकित के फल तैं सुंदर देह धरी।

जिहिं जिहिं जोनि भ्रम्यौ संकट-बस सोइ-सोइ दुखनि भरी।
काम क्रोध मद लोभ-गरब मैं, बिसरयौ स्याम हरी।
भैया बंधु कुटुंब घनेरे, तिनतें कछु न सरी।
लै देहा घर-बाहर जारी, सिर ठोंकी लकरी।
मरती बेर सम्हारन लागे, जो कछु गाड़ि धरी।
सूरदास तैं कछू भयौ नहिं, परी काल फँसरी ॥४१॥

जनम सिरानोई सो लाग्यौ।
रोम रोम नख-सिख लौं मेरैं महा अघनि बपु पाग्यौ।
पंचनि के हित-कारन यह मन जहँ तहँ भरमत भाग्यौ।
तीनौं पन ऐसैं ही खोए, समय गए पर जाग्यौ।
जौ तुम कोउ तारयौ भारी तौ मोसौं पतित न लाग्यौ।
हौं स्रवननि सुनि कहत न पत्यौ सूर सुधारौ भाग्यौ ॥४२॥

जौ हरि-ब्रत निज उर न धरैगौ।
तौ को अस त्राता जु अपुन करि कर कुठावँ पकरैगौ।
आन देव की भक्ति-भाइ करि, कोटिक कसब करैगौ।
सब वे दिवस चारि मनरंजन, अंत काम बिगरैगौ।
चौरासी लख जोनि भ्रमि जग, जम-बस भ्रमत फिरैगौ।
सूर सुजन सेवक सोइ साँचौ जो स्यामहिं सुमिरैगौ ॥४३॥

अंत के दिन कौं हैं घनस्याम।
माता-पिता-बंधु-सुत तौं लगि जौ लगि जिहिं कौ काम।
आमिष-रुधिर-अस्थि अँग जौलौं, तौलौं कोमल चाम।
तौ लगि यह संसार सगौ है जौ लगि लेहि न नाम।
इतनौ जउ जानत मन मूरख, मानत याही धाम।
छाँड़ि न करत सूर भव भव-हर हू रावन सौं ठाम ॥४४॥

जनम तौ ऐसैहिं बीति गयौ।
जैसैं रंक पदारथ पाए लोभ बिसाहि लयौ।

बहुतक जन्म पुरीष-परायन सूकर स्वान भयौ।
अब मेरी-मेरी करि बौरे, बहुरौ बीज बयौ।
नर कौ नाम पारगामी हो सो तोहिं स्याम दयौ।
तैं जड़ नारिकेलि कपि-कर ज्यौं, पायौ नाहिं पयौ।
रजनी गत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौ न चयौ।
सूर नंद-नंदन जेहिं बिसरयौ, आपुहिं आपु हयौ ॥४५॥

प्रीतम जानि लेहु मन माहीं।
अपने सुख कौं सब जग बाँध्यौ कोउ काहू कौ नाहीं।
सुख मैं आइ सबै मिलि बैठत रहत चहूँ दिसि घेरे।
बिपति परी सब सब सँग छाँड़े, कोउ न आवै नेरे।
घर की नारि बहुत हित जासौं रहति सदा सँग लागी।
जा छन हंस तजी यह काया, प्रेत प्रेत कहि भागी।
या बिधि कौ ब्यौहार बन्यौ जग, तासौं नेह लगायौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, नाहक जनम गवायौ ॥४६॥

जौ अपनौ मन हरि सौं राँचे।
आन उपाय प्रसंग छाँड़ि कै, मन-बच-क्रम अनुसाँचे।
निसि-दिन नाम लेत ही रसना फिरि जु प्रेम-रस माँचे।
इहिं बिधि सकल लोक मैं बाँचे कौन कहै अब साँचे।
सीत उष्न, सुख-दुख नहिं मानै, हर्ष-सोक नहिं खाँचे।
जाइ समाइ सूर वा निधि मैं बहुरि जगत नहिं नाचे ॥४७॥

हरि बिन अपनौ को संसार।
माया-लोभ-मोह हैं चाँडे काल-नदी की धार।
ज्यौं जन-संगति होति नाव मैं, रहति न परसैं पार।
तैसै धन-दारा-सुख-संपति, बिछुरत लगै न बार।
मानुष-जनम, नाम नरहरि कौ, मिलै न बारंबार।
इहिं तन छन-भंगुर के कारन, गरबत कहा गँवार।

जैसे अंधौ अंध कूप मैं गनत न खाल पनार।
तैसेहिं सूर बहुत उपदेसै सुनि सुनि गे कै बार ॥४८॥

हरि बिनु मीत नहीं कोउ तेरे।
सुनि मन, कहौं पुकारि तोसौं हौं भजि गोपालहिं मेरे।
या संसार विषय-विष-सागर, रहत सदा सब घेरे।
सूर स्याम बिनु अंतकाल मैं कोउ न आवत नेरे ॥४६॥

जा दिन मन-पंछी उड़ि जैहै।
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहैं।
या देही को गरब न करिये स्यार-काग-गिध खैहैं।
तीननि मैं तन कृमि कै बिष्टा कै ह्वै खाक उड़ैहै।
कहँ वह नीर कहाँ वह सोभा कहँ रँग-रूप दिखैहै।
जिन लोगनि सौं नेह करत है, तेई देखि घिनैहैं।
घर के कहत सबारे काढ़ौ भूत होइ धरि खैहै।
जिन पुत्रनिहिं बहुत प्रतिपाल्यौ, देवी-देव मनैहै।
तेई लै खोपरी बाँस दै, सीस फोरि बिखरैहैं।
अजहूँ मूढ़ करौ सतसंगति संतनि पै कछु पैहै।
नर वपु धारि नाहिं जन हरि कौं जम की मार सौ खैहै।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु वृथा सु जनम गँवैहै ॥५०॥

अब तौ यहै बात मन मानी।
छाँड़ौं नाहिं स्याम-स्यामा की बृंदावन रजधानी।
भ्रम्यौ बहुत लघु धाम विलोकत छन-भंगुर दुखदानी।
सर्वोपरि आनंद अखंडित सूर मरम लपिटानी ॥५१॥

महि अस जनम बारंबार।
पुरबलो धौं पुन्य प्रगट्यौ लह्यौ नर अवतार।
घटै पल पल बढ़ै छिन छिन, जात लागि न बार।
धरनि पत्ता गिरि परे तैं फिरि न लागै डार।

भव-उदधि जमजमोक दरसै, निपट ही अँधियार।
सूर हरि कौ भजन करि करि उतरि पल्ले-पार ॥४२॥

अद्भुत राम-नाम के अंक।
धर्म-अँकुर के पावन द्वै दल, मुक्ति-बधू-ताटंक।
मुनि-मन-हंस-पच्छ-जुग जाकै बल उड़ि ऊरध जात।
जनम-मरन काटन कौं कर्तरि तीछन बहु बिख्यात।
अंधकार अज्ञान हरन कौं रबि-ससि जुगल-प्रकास।
बासर-निसि दोउ करैं प्रकासित महा कुमग अनयास।
दुहूँ लोक सुखकरन-हरनदुख बेद-पुराननि साखि।
भक्ति-ज्ञान के पंथ सूर ये, प्रेम निरंतर भाखि ॥४३॥

अब तुम नाम गहौ मन नागर।
जातैं काल-अगिनि तैं बाँचौ सदा रहौ सुखसागर।
मारि न सकै, बिघन नहिं ग्रासै, जम न चढ़ावै कागर।
क्रिया कर्म करतहु निसि-बासर भक्ति कौ पंथ उजागर।
सोचि बिचारि सकल स्रुति-सम्मति, हरि तैं और न आगर।
सूरदास प्रभु इहिं औसर भजि उतरि चलौ भवसागर ॥४४॥

बंदौं चरन-सरोज तिहारे।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन ललित त्रिभंगी प्रान-पियारे।
जे पद-पदुम सदा सिव के धन, सिंधु-सुता उर तैं नहिं टारे।
जे पद पदुम तात-रिस त्रासत मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे।
जे पद-पदुम परस जल-पावन सुरसरि-दरस कटत अघ भारे।
जे पद पदुम परस रिषि-पतिनी बलि, नृग, ब्याध, पतित बहु तारे।
जे पद पदुम रमत बृंदावन अहि सिर धरि, अगनित रिपु मारे।
जे पद पदुम परसि ब्रज-भामिनि सरबस दै सुत-सदन बिसारे।
जे पद पदुम रमत पांडव दल दूत भए, सब काज सँवारे।
सूरदास तेइ पद पंकज त्रिबिध ताप-दुख हरन हमारे ॥४५॥

हरि जू, तुमतें कहा न होई ?
बोलै गुंग, पंगु गिरि लंघै अरु आवै अंधौ जग जोई।
पतित अजामिल दासी कुबिजा तिनके कलिमल डारे धोई।
रंक सुदामा कियौ इंद्र सम पांडवहित कौरव-दल खोई।
बालक मृतक जिवाइ दए प्रभु, तब गुरु-द्वारें आनँद होई।
सूरदास प्रभु इच्छापूरन, श्रीगुपाल सुमिरौ सब कोइ ॥४६॥

बिनती करत मरत हौं लाज।
नख सिख लौं मेरी यह देही है पाप की जहाज।
और पतित आवत न आँखि-तर देखत अपनौ साज।
तीनौं पन भरि ओर निबाह्यौ तऊ न आयौ बाज।
पाछें भयौ न आगैं ह्वैहै, सब पतितनि सिरताज।
नरकौ भज्यौ नाम सुनि मेरौ, पीठि दई जमराज।
अबलौं नान्हे-नून्हे तारे ते सब वृथा अकाज।
साँचें बिरद सूर के तारत लोकनि-लोक अवाज ॥४७॥

अब कै राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह कौन उबारै प्रान ?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं जय जय कृपानिधान ॥४८॥

अब कै नाथ मोहिं उधारि।
मगन हौं भव-अंबुनिधि मैं कृपासिंधु मुरारि।
नीर अति गंभीर माया लोभ-लहरि तरंग।
लिए जात अगाध जल कौ गहे, ग्राह अनंग।
मीन इंद्री तनहिं काटत मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत, उरझि मोह-सिवार।

अबिगत-गति जानी न परै।
मन-बच-कर्म-अगाध, अगोचर, किहिं बिधि बुधि मैं धरै ?
अति प्रचंड पौरुष बल पाएँ, केहरि भूख मरै।
अनायास बिनु उद्यम कीन्हैं, अजगर उदर भरै।
रीतै भरै, भरै पुनि ढारै, चाहै फेरि भरै।
कबहुँक तृन बूड़ै पानी मैं, कबहुँक सिला तरै।
बागर तैं सागर करि डारै, चहुँ दिसि नीर भरै।
पाहन-बीच कमल बिगसावै, जल मैं अगिनि जरै।
राजा रंक, रंक तैं राजा, लै सिर छत्र धरै।
सूर पतित तरि जाइ छिनक मैं, जौ प्रभु नैंकु ढरै॥६३॥

कीजै प्रभु अपने बिरद की लाज।
महापतित कबहूँ नहिं आयौ, नैंकु तिहारैं काज।
माया सबल धाम-धन-बनिता, बाँध्यौ हौं इहिं साज।
देखत-सुनत सबै जानत हौं, तऊ न आयौ बाज।
कहियत पतित बहुत तुम तारे, स्रवननि सुनी अवाज।
दई न जाति खेवट उतराई, चाहत चढ़्यौ जहाज।
लीजै पार उतारि सूर कौ, महाराज ब्रजराज।
नई न करन कहत प्रभु, तुम हौ सदा गरीब निवाज॥६४॥

अपने जान मैं बहुत करी।
कौन भाँति हरि कृपा तुम्हारी, सो स्वामी समुझी न परी।
दूरि गयौ दरसन के ताईं, ब्यापक प्रभुता सब बिसरी।
मनसा-बाचा-कर्म अगोचर, सो मूरति नहिं नैन धरी।
गुन बिनु गुनी, सुरूप रूप बिनु, नाम बिना श्री स्याम हरी।
कृपासिंधु अपराध अपरिमित, छमौ सूर तैं सब बिगरी॥६५॥

माधौ जू, जो जन तैं बिगरै।
तउ कृपाल करुनामय केसव, प्रभु नहिं जीय धरै।

जैसैं जननि-जठर अंतरगत सुत अपराध करै।
तोऊ जतन करै अरु पोषै निकसै अंक भरै।
जद्यपि मलय बृच्छ जड़ काटै कर कुठार पकरै।
तऊ सुभाव न सीतल छाँड़ै, रिपु-तन-ताप हरै।
धर बिधंसि नल करत किरषि हल बारि बीज बिथरै।
सहि सन्मुख तउ सीत उष्न कौं, सोई सुफल करै।
रसना द्विज दलि दुखित होति बहु तउ रिस कहा करै।
छमि सब लोभ जु छाँड़ि छबौं रस लै समीप सँचरै।
करुना करन दयालु दयानिधि निज भय दीन डरै।
इहिं कलिकाल ब्याल-मुख-ग्रासित सूर सरन उबरै ॥६६॥

दीनानाथ अब बारि तुम्हारी।
पतित-उधारन बिरद जानि कै, बिगरी लेहु सँवारी।
बालापन खेलत ही खोयौ, जुवा बिषय-रस मातैं।
बृद्ध भए सुधि प्रगटी मोकौं, दुखित पुकारत तातैं।
सुतनि तज्यौ, तिय तज्यौ, भ्रात तज्यौ, तन तैं त्वच भई न्यारी।
स्रवन न सुनत, चरन-गति थाकी, नैन भए जलधारी।
पलित केस, कफ कंठ बिरुंध्यौ, कल न परति दिन-राती।
माया-मोह न छाँड़ै तृष्ना ये दोऊ दुख-दाती।
अब यह बिथा दूरि करिबे कौं और न समरथ कोई।
सूरदास प्रभु करुनासागर, तुमतैं होइ सो होई ॥६७॥

मेरी कौन गति ब्रजनाथ?
भजन बिमुख रु सरन नाहीं फिरत बिषयनि साथ।
हौं पतित अपराध-पूरन भर्यौ कर्म-बिकार।
काम क्रोध रु लोभ चितवौं, नाथ तुमहिं बिसार।
उचित अपनी कृपा करिहौ तबै तौ बनि आइ।
सोइ करहु जिहिं चरन सेवै सूर जूठनि खाइ ॥६८॥

मोहिं कछु कीजै दीन-दयाल ।
जाते जन छन चरन न छाँड़ै करुना-सागर भक्त रसाल ।
इंद्री अजित, बुद्धि बिषयारत, मन की दिन-दिन उलटी चाल ।
काम-क्रोध मद-लोभ-मोह-भय अहनिसि नाथ ! रहत बेहाल ।
जोग-जुगति, जप-तप तीरथ ब्रत इनमैं एकौ अंक न भाल ।
कहा करौं किहिं भाँति रिझावौं हौं तुमकौं सुंदर नँदलाल ।
सुनि समरथ सरबज्ञ कृपानिधि असरन-सरन, हरन जग-जाल ।
कृपानिधान सूर की यह गति कासौं कहै कृपन इहिं काल ॥६९॥

कृपा अब कीजिए बलि जाउँ ।
नाहिंन मेरैं और कोउ, बलि, चरन-कमल बिन ठाउँ ।
हौं असोच, अकिंचन अपराधी, सनमुख होत लजाउँ ।
तुम कृपालु, करुनानिधि केसव, अधम-उधारन नाउँ ।
काकैं द्वार जाइ होउँ ठाढ़ौ देखत काहि सुहाउँ ।
असरन-सरन नाम तुम्हारौ हौं कामी कुटिल निभाउँ ।
कलुषी अरु मन मलिन बहुत मैं सेंत-मेंत न बिकाउँ ।
सूर पतितपावन पद-अंबुज, सो क्यौं परिहरि जाउँ ॥७०॥

नाथ सको तौ मोहिं उधारौ ।
पतितनि मैं बिख्यात पतित हौं, पावन नाम तुम्हारौ ।
बड़े पतित पासंगहु नाहीं, अजामिल कौन बिचारौ ।
भाजै नरक नाम सुनि मेरौ जम दीन्यौ हठि तारौ ।
छुद्र पतित तुम तारि रमापति, अब न करौ जिय गारौ ।
सूर पतित कौं ठौर नहीं, तौ बहुत बिरद कत भारौ ॥७१॥

पतित-पावन हरि, बिरद तुम्हारौ कौनैं नाम धरयौ ?
हौं तौ दीन, दुखित अति दुरबल द्वारैं रटत परयौ ।
चारि पदारथ दिए सुदामा तंदुल भेंट धरयौ ।
द्रुपद-सुता की तुम पति राखी अंबर दान करयौ ।

संदीपन सुत तुम प्रभु दीने, विद्या पाठ करयौ।
बेर सूर की निठुर भए प्रभु मेरौ कछु न सरयौ ॥७२॥

आजु हौं एक-एक करि टरिहौं।
कै तुमहीं कै हमहीं माधौ अपने भरोसैं लरिहौं।
हौं तौ पतित सात पीढ़िनि कौ, पतितै ह्वै निस्तरिहौं।
अब हौं उघरि नचन चाहत हौं तुम्हैं बिरद बिन करिहौं।
कत अपनी परतीति नसावत मैं पायौ हरि हीरा।
सूर पतित तबहीं उठिहै प्रभु, जब हँसि दैहौ बीरा ॥७३॥

मोसौं बात सकुच तजि कहिए।
कत ब्रीड़त, कोउ और बतावौ ताही कै ह्वै रहिए।
कैधौं तुम पावन प्रभु नाहीं कै कछु मोमैं झोलौ।
तौ हौं अपनी फेरि सुधारौं, बचन एक जौ बोलौ।
तीन्यौ पन मैं ओर निबाहे इहै स्वाँग कौ काछे।
सूरदास कौ यहै बड़ौ दुख, परत सबनि के पाछे ॥७४॥

प्रभु, हौं बड़ी बेर कौ ठाढ़ौ।
और पतित तुम जैसे तारे, तिनहीं मैं लिखि काढ़ौ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ टेरि कहत हौं यातैं।
मरियत लाज पाँच पतितनि मैं, हौं अब कहौ घटि कातैं।
कै प्रभु हारि मानि कै बैठौ कै करौ बिरद सही।
सूर पतित जौ झूठ कहत है, देखौ खोजि बही ॥७५॥

प्रभु, हौं सब पतितनि कौ टीकौ।
और पतित सब दिवस चारि के, हौं तौ जनमत ही कौ।
बधिक, अजामिल गनिका तारी और पूतना ही कौ।
मोहिं छाँड़ि तुम और उधारे मिटै सूल क्यौं जी कौ ?
कोउ न समरथ अघ करिबे कौ खैंचि कहत हौं लीकौ।
मरियत लाज सूर पतितनि मैं मोहूँ तैं को नीकौ ॥७६॥

हरि, हौं सब पतितनि कौ राजा।
पर-निंदा मुख पूरि रह्यौ जग, यह निसान नित बाजा।
तृष्ना देसरु सुभट मनोरथ, इंद्री खड्ग हमारी।
मंत्री काम कुमति दीबे कौं, क्रोध रहत प्रतिहारी।
गज अहंकार चढ़्यौ दिगविजयी, लोभ छत्र करि सीस।
फौज असत संगति की मेरैं, ऐसौ हौं मैं ईस।
मोह-मया बंदी गुन गावत, मागध दोष अपार।
सूर पाप कौ गढ़ दृढ़ कीन्हौ, मुहकम लाइ किवार॥७५॥

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
तुम सौं कहा छिपी करुनामय, सबके अंतरजामी।
जिन तन दियौ ताहि बिसरायौ, ऐसौ नौनहरामी।
भरि भरि द्रोह बिषै कौं धावत, जैसें सूकर ग्रामी।
सुनि सतसंग होत जिय आलस, बिषयिनि सँग बिसरामी।
श्रीहरि चरन छाँड़ि बिमुखन की निसि दिन करत गुलामी।
पापी परम अधम अपराधी, सब पतितनि मैं नामी।
सूरदास प्रभु अधम उधारन सुनियै श्रीपति स्वामी॥७८॥

माधौ जू, मोहिं काहे की लाज।
जनम जनम यौं ही भरमायौ, अभिमानी बेकाज।
जम-भय कौन मिलै जग जीवन, निरखि दुखित भए देव।
गुन अवगुन की समुझ न संका, परि आई यह टेव।
अब अनखाइ कहौ घर अपनैं, राखौ सौंपि बिचारि।
सूर स्वान के पालनहारैं आवत है निज गारि॥८१॥

थोरे जीवन भयौ तन भारी।
कियौ न संत-समागम कबहूँ, लियौ न नाम तुम्हारी।
अति उनमत्त मोह माया बस नहिं कछु बात बिचारी।
करत उपाय न पूछत काहू, गनत न खाटी-खारी।

इंद्री-स्वाद बिबस निसि-बासर, आप अपुनपौ हारौ।
जल औंडे मैं चहुँ दिसि पैरयौ, पाउँ कुल्हारौ मारौ।
बाँधी मोट पसारि त्रिबिध गुन, नहिं कहुँ बीच उतारौ।
देख्यौ सूर बिचारि सीस धरि, अब तुम सरन पुकारौ ॥८०॥

अब मैं नाच्यौ बहुत गुपाल।
काम क्रोध कौ पहिरि चोलना, कंठ बिषय की माल।
महामोह के नूपुर बाजत, निंदा सब्द रसाल।
भ्रम-भोयौ मन भयौ पखावज, चलत असंगत चाल।
तृष्ना नाद करति घट भीतर, नाना बिधि दै ताल।
माया कौ कटि फेंटा बाँध्यौ, लोभ तिलक दियौ भाल।
कोटिक कला काछि दिखराई, जल-थल सुधि नहिं काल।
सूरदास की सबै अबिद्या, दूरि करौ नँदलाल ॥८१॥

जनम तौ बादिहिं गयौ सिराइ।
हरि सुमिरन नहिं गुरु की सेवा, मधुबन बस्यौ न जाइ।
अब की बार मनुष्य-देह धरि, कियौ न कछू उपाइ।
भटकत फिर्‌यौ स्वान की नाईं, नैंकु जूठ कै चाइ।
कबहुँ न रिझए लाल गिरिधरन, बिमल-बिमल जस गाइ।
प्रेम सहित पग बाँधि घूँघरू, सक्यौ न अंग नचाइ।
श्रीभागवत सुनी नहिं स्रवननि, नैंकहु रुचि उपजाइ।
आनि भक्ति करि, हरि-भक्तनि के कबहुँ न धोए पाइ।
अब हौं कहा करौं करुनामय, कीजै कौन उपाइ।
भव-अंबोधि नाम-निज-नौका, सूरहिं लेहु चढ़ाइ ॥८२॥

जैसैं राखहु तैसैं रहौं।
जानत हौ दुख सुख सब जन के, मुख करि कहा कहौं ?
कबहुँक भोजन लहौं कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौं।
कबहुँक चढ़ौं तुरंग महा गज, कबहुँक भार बहौं।

कमल-नयन घन स्याम मनोहर अनुचर भयौ रहौं।
सूरदास-प्रभु भक्त-कृपानिधि तुमरे चरन गहौं ॥८३॥

तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी।
जिनकैं बस अनिमिष अनेक गन अनुचर आज्ञाकारी।
बहत पवन भरमत ससि दिनकर, फनपति सिर न डुलावै।
दाहक गुन तजि सकत न पावक, सिंधु न सलिल बढ़ावै।
सिव-बिरंचि-सुरपति-समेत सब सेवत प्रभु-पद चाए।
जो कछु करन कहत सोई सोइ कीजत अति अकुलाए।
तुम अनादि अविगत अनंत गुन-पूरन परमानंद।
सूरदास पर कृपा करौ प्रभु, श्रीवृंदावन चंद ॥८४॥

तुम तजि और कौन पै जाउँ?
काकैं द्वार जाइ सिर नाऊँ, पर-हथ कहाँ बिकाउँ।
ऐसी को दाता है समरथ, जाके दियें अघाउँ।
अंत काल तुम्हरैं सुमिरन गति, अनत कहूँ नहिं दाउँ।
रंक सुदामा कियौ अजाची दियौ अभय-पद ठाउँ।
कामधेनु, चिंतामनि दीन्हीं कलपवृच्छ-तर छाउँ।
भव-समुद्र अति देखि भयानक मन मैं अधिक डराउँ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनौ प्रन सूरदास बलि जाउँ ॥८५॥

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज कौ पंछी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौ ध्यावै।
परम गंग कौ छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ क्यौं करील-फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ॥८६॥

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान।
छूटि गयें कैसें जन जीवत, ज्यौं पानी बिनु पान।

जैसैं मगन नाद-रस सारँग, बधत बधिक बिन बान।
ज्यौं चितवत ससि ओर चकोरी देखत ही सुख मान।
जैसैं कमल होत अति प्रफुलित देखत दरसन भान।
सूरदास प्रभु हरिगुन मीठे, नितप्रति सुनियत कान ॥८७॥

जौ हम भले-बुरे तौ तेरे।
तुम्हैं हमारी लाज बड़ाई बिनती सुनि प्रभु मेरे।
सब तजि तुम सरनागत आयौ दृढ़ करि चरन गहे रे।
तुम प्रताप-बल बदत न काहूँ, निडर भए घर चेरे।
और देव सब रंक-भिखारी त्यागे बहुत अनेरे।
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा तैं पाए सुख जु घनेरे ॥८८॥

हमें नँदनंदन मोल लिये।
जम के फंद काटि मुकराए अभय अजाद किये।
भाल तिलक स्रवननि तुलसीदल, मेटे अंक बिये।
मूँड्यौ मूँड कंठ बनमाला, मुद्रा चक्र दिये।
सब कोउ कहत गुलाम स्याम कौ, सुनत सिरात हिये।
सूरदास कौं और बड़ौ सुख, जूठनि खाइ जिये ॥८९॥

तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत।
लालच लागि कोटि देवन के फिरत कपाटनि खोलत।
जब लगि सरबस दीजै उनकौं, तबहीं लगि यह प्रीति।
फल माँगत फिरि जात मुकर ह्वै, यह देवन की रीति।
एकनि कौं जिय-बलि दै पूजे पूजत नैंकु न तूठे।
तब पहिचानि सबनि कौं छाँड़े नख-सिख लौं सब झूठे।
कंचन मनि तजि काँचहिं सैंतत या माया के लीन्हे।
चारि पदारथ हूँ कौ दाता, सु तौ बिसर्जन कीन्हे।
तुम कृपाल करुनामय केसव, अखिल लोक के नायक।
सूरदास हम दृढ़ करि पकरे, अब ये चरन सहायक ॥९०॥

जौ प्रभु मेरे दोष बिचारैं।
करि अपराध अनेक जनम कौ, नख-सिख भरी बिकारैं।
पुहुमि पत्र करि सिंधु मसानी गिरि-मसि ध्वै लै धारैं।
सुर-तरुवर की साख लेखिनी लिखत सारदा हारैं।
पतित उधारन बिरद पुरानन चारौ वेद पुकारैं।
सूर स्याम हौं पतित-सिरोमनि तारि सकौ तौ तारैं ॥११॥

हमारी तुमकौं लाज हरी।
जानत हौ प्रभु, अंतरजामी जो मोहिं माँझ परी।
अपने औगुन कहँ लौं बरनौं पल पल, घरी घरी।
अति प्रपंच की मोट बाँधिकै अपनैं सीस धरी।
खेवनहार न खेवट मेरैं अब मो नाव अरी।
सूरदास प्रभु तव चरननि की आस लागि उबरी ॥१२॥

ऐसी कब करिहौ गोपाल।
मनसा-नाथ मनोरथ-दाता हौ प्रभु दीनदयाल।
चरननि चित्त निरंतर अनुरत रसना चरित-रसाल।
लोचन सजल प्रेम पुलकित तन, गर अंचल कर माल।
इहिं बिधि लखत झुकाइ रहै जम अपनैं ही भय भाल।
सूर सुजस-रागी न डरत मन, सुनि जातना कराल ॥१३॥

तौ लगि बेगि हरौ किन पीर।
जौ लगि आन न आनि पहूँचै फेरि परैगी भीर।
अबहिं निबहुरी समय सुचित ह्वै हम तौ निधरक कीजे।
औरौ आइ निकसिहैं तातैं आगौं है सो लीजै।
जहाँ तहाँ तैं सब आवैंगे सुनि सुनि सस्तौ नाम।
अब लौं परयौ रहैगो दिन-निसि तुमकौ ऐसौ काम।
यह तौ बिरद प्रसिद्ध भयौ जग लोक-लोक जस लीन्हौ।
सूरदास प्रभु समुझि देखियै मैं तौहिं बड़ो कर दीन्हौ ॥१४॥

जिन जिनहीं केसव उर गायौ।
तिन तिन तुम पै गोबिंद-गुसाईं सबनि अभै-पद पायौ।
सेवा यहै नाम सर अवसर जो काहूँ कहि आयौ।
कियौ बिलंब न कितहुँ कृपानिधि, सोइ-सोइ निकट बुलायौ।
मुख्य अजामिल मित्र हमारौ, सो मैं चलत बुझायौ।
कहौं कहाँ लौं कहौं कृपन की तिनहुँ न स्रवन सुनायौ।
ब्याध गीध, गनिका जिहिं कागर, हौं तिहिं चिठि न चढ़ायौ।
मरियत लाज पाँच पतितनि मैं सूर सबै बिसरायौ ॥९५॥

अपुने कौं को न आदर देइ ?
ज्यौं बालक अपराध कोटि करै मातु न मानै तेइ।
ते बेली कैसैं दहियत हैं जे अपनैं रस भेइ।
श्री संकर बहु रतन त्यागि कै, बिषहिं कंठ धरि लेइ।
माता-अछत छीर बिन सुत मरै, अजा-कंठ-कुच सेइ ?
जद्यपि सूरज महा पतित है, पतित-पावन तुम तेइ ॥९६॥

अब मोहिं मज्जत क्यौं न उबारौ ?
दीनबंधु, करुनानिधि स्वामी जन के दुःख निवारौ।
ममता-घटा मोह की बूँदें, सरिता मैन अपारौ।
बूड़त कतहुँ थाह नहिं पावत गुरुजन-ओट अधारौ।
गरजत क्रोध-लोभ कौ नारौ सूझत कहूँ न उतारौ।
तृष्ना-तड़ित चमकि छनहीं-छन अह निसि यह तन जारौ।
यह भव-जल कलिमलहिं गहे है, बोरत सहस प्रकारौ।
सूरदास पतितनि के संगी, बिरदहिं नाथ सम्हारौ ॥९७॥

हमारे प्रभु औगुन चित न धरौ।
समदरसी है नाम तुम्हारौ सोई पार करौ।
इक लोहा पूजा मैं राखत इक घर बधिक परौ।
सो दुबिधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरौ।

इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरो।
जब मिलि गए तब एक बरन है, गंगा नाम परो।
तन माया, ज्यौ ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि बिगरो।
कै इनको निरधार कीजियै, कै प्रन जात टरो ॥९८॥

पड़ी है राम-नाम की ओट।
सरन गये प्रभु काढ़ि देत नहिं, करत कृपा कै कोट।
बैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ी को छोट ?
सूरदास पारस के परसैं मिटति लोह की खोट ॥९९॥

काहू के बैर कहा सरै।
ताकी सरवरि करै सो झूठौ जाहि गुपाल बड़ा करै।
ससि सन्मुख जो धूरि उड़ावै उलटि ताहि कै मुख परै।
चिरिया कहा समुद्र उलीचै पवन कहा परबत टरै ?
जाकी कृपा पतित है पावन, पग परसत पाहन तरै।
सूर केस नहिं टारि सकै कोउ दाँत पीसि जो जग मरै ॥१०॥

है हरि भजन को परमान।
नीच पावै ऊँच पदवी बाजते नीसान।
भजन को परताप ऐसो जल तरै पाषान।
अजामिल अरु भीलि गनिका, चढ़े जात बिमान।
चलत तारे सकल मंडल चलत ससि अरु भान।
भक्त ध्रुव की अटल पदवी राम के दीवान।
निगम जाको सुजस गावत, सुनत संत सुजान।
सूर हरि की सरन आयौ राखि लै भगवान ॥१०१॥

करी गोपाल की सब होइ।
जो अपनौ पुरुषारथ मानत अति झूठौ है सोइ।
साधन मंत्र जंत्र, उद्यम बल ये सब डारौ धोइ।
जो कछु लिखि राखी नँदनंदन, मेटि सकै नहिं कोइ।

दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम, कतहिं मरत हौ रोइ।
सूरदास स्वामी करुनामय स्याम चरन मन पोइ ॥१०२॥

होत सो जो रघुनाथ ठटै।
पचि-पचि रहैं सिद्ध, साधक, मुनि, तऊ न बढ़ै घटै।
जोगी जोग धरत मन अपनैं, सिर पर राखि जटै।
ध्यान धरत महादेव अरु ब्रह्मा तिन्हूँ पै न छटै।
जती सती तापस आराधैं, चारौं बेद रटै।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, करम फाँस न कटै ॥१०३॥

भावी काहू सौं न टरै।
कहँ वह राहु, कहाँ वै रवि ससि आनि सँजोग परै।
मुनि बसिष्ठ पंडित अति ज्ञानी, रचि-पचि लगन धरै।
तात-मरन सिय हरन, राम बन बपु धरि बिपति भरै।
रावन जीति कोटि तैंतीसी त्रिभुवन राज करै।
मृत्युहिं बाँधि कूप मैं राखै, भावी-बस सो मरै।
अरजुन के हरि हुते सारथी, सोऊ बन निकरै।
द्रुपद-सुता की राजसभा, दुस्सासन चीर हरै।
हरीचंद सौ को जगदाता, सो घर नीच भरै।
जो गृह छाँड़ि देस बहु धावै, तउ वह संग फिरै।
भावी कैं बस तीन लोक हैं सुर नर देह धरै।
सूरदास प्रभु रची सु ह्वैहै, को करि सोच मरै ॥१०४॥

तातैं सेइयै श्री जदुराइ।
संपति बिपति बिपति तैं संपति, देह को यहै सुभाइ।
तरुवर फूलै फरै पतझरै अपने कालहिं पाइ।
सरवर नीर भरै भरि उमड़ै, सूखै खेह उड़ाइ।
दुतिया चंद बढ़त ही बाढ़ै, घटत-घटत घटि जाइ।
सूरदास संपदा आपदा, जिनि कोऊ पतिआइ ॥१०५॥

इहिं बिधि कहा घटैगौ तेरौ ?
नँदनंदन करि घर कौ ठाकुर, आपुन ह्वै रहु चेरौ।
कहा भयौ जौ संपति बाढ़ी, कियौ बहुत घर घेरौ।
कहुँ हरि-कथा कहुँ हरि-पूजा, कहुँ संतनि कौ डेरौ।
जो बनिता-सुत-जूथ सकेले, हय-गय-बिभव घनेरौ।
सबै समर्पौ सूर स्याम कौं, यह साँचौ मत मेरौ ॥१०६॥

इत उत देखत जनम गयौ।
या झूठी माया कैं कारन, दुहुँ दृग अंध भयौ।
जनम-कष्ट तैं मातु दुखित भई, अति दुख प्रान सह्यौ।
वै त्रिभुवनपति बिसरि गए तोहिं सुमिरत क्यौं न रह्यौ।
श्रीभागवत सुन्यौ नहिं कबहूँ बीचहिं भटकि मरयौ।
सूरदास कहै, सब जग बूड़यौ, जुग-जुग भक्त तरयौ ॥१०७॥

जनम सिरानौ अटकैं-अटकैं।
राज-काज, सुत बित की डोरी बिनु बिबेक फिरयौ भटकैं।
कठिन जो गाँठि परी माया की, तोरी जाति न झटकैं।
ना हरि-भक्ति न साधु समागम, रह्यौ बीचहीं लटकैं।
ज्यौं बहु कला काछि दिखरावै, लोभ न छूटत नट कैं।
सूरदास सोभा क्यौं पावै, पिय बिहीन धनि मटकैं ॥१०८॥

बिरथा जन्म लियौ संसार।
करी कबहुँ न भक्ति हरि की, मारी जननी भार।
जज्ञ, जप तप नाहिं कीन्हौ अल्प मति बिस्तार।
प्रगट प्रभु नहिं दूरि हैं, तू देखि नैन पसार।
प्रबल माया ठग्यौ सब जग जनम जूआ हार।
सूर हरि कौ सुजस गावौ जाहि मिटि भव-भार ॥१०९॥

माया हरि कैं काम न आई।
भाव-भक्ति जहँ हरि जस सुनियत तहाँ जात अलसाई।

लोभातुर ह्वै काम मनोरथ तहाँ सुनत उठि धाई।
चरन-कमल सुंदर जहँ हरि के, क्यौंहुँ न जात नवाई।
जब लगि स्याम अंग नहिं परसत, अंधे ज्यौं भरमाई।
सूरदास भगवंत-भजन तजि विषय परम विष खाई ॥११०॥

भए दिन गए विषय के हेत।
तीनौं पन ऐसैं हीं खोए, केस भए सिर सेत।
आँखिनि अंध स्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत।
गंगा-जल तजि पियत कूप जल, हरि तजि पूजत प्रेत।
मन-बच-क्रम जौ भजै स्याम कौं, चारि पदारथ देत।
ऐसौ प्रभू छाँड़ि क्यौं भटकै, अजहूँ चेति अचेत।
राम नाम बिनु क्यौं छूटौगे, चंद गहे ज्यौं केत।
सूरदास कछु खरच न लागत राम-नाम मुख लेत ॥१११॥

जौ तू राम-नाम-धन धरतौ।
अबकौ जनम आगिलौ तेरौ, दोऊ जनम सुधरतौ।
जम कौ त्रास सबै मिटि जातौ भक्त नाम तेरौ परतौ।
तंदुल घिरत समर्पि स्याम कौं संत-परोसी करतौ।
होतौ नफा साधु की संगति मूल गाँठि नहिं टरतौ।
सूरदास बैकुंठ पैंठ मैं कोउ न फैंट पकरतौ ॥११२॥

सबनि सनेही छाँड़ि दयौ।
हा जदुनाथ! जरा तन ग्रास्यौ, प्रतिभौ उतरि गयौ।
सोइ तिय-बार-नात्र-सगन-मद, सोइ जिहिं ठाट ठयौ।
न बंकनि कोउ फिरि नहिं चाँपत, गत स्वारथ समयौ।
सोइ धन-धाम नाम सोई कुल सोई जिहिं बिढ़यौ।
अब सबही कौ बदन स्वान लौं चितवत दूरि भयौ।
बरष दिवस करि होत पुरातन, फिरि फिरि छिजत नयौ।
निज कृति-दोष बिचारि सूर प्रभु तुम्हरी सरन गयौ ॥११३॥

द्वै मैं एकौ तौ न भई।
ना हरि भज्यौ, न गृह-सुख पायौ, वृथा बिहाइ गई।
ठानी हुती और कछु मन मैं, औरै आनि ठई।
अविगत-गति कछु समुझि परत नहिं, जो कछु करत दई।
सुत-सनेहि-तिय सकल कुटुँब मिलि निसि-दिन होत खई।
पद-नख-चंद चकोर बिमुख मन, खात अँगार मई।
विषय-बिकार-दवानल उपजी, मोह-बयारि लई।
भ्रमत भ्रमत बहुतै दुख पायौ, अजहुँ न टेव गई।
होत कहा अबकै पछिताऐं, बहुत बेर बितई।
सूरदास सेये न कृपानिधि जो सुख सकल मई॥११४॥

यह सब मेरीयै आइ कुमति।
अपनैं ही अभिमान दोष दुख पावत हौं मैं अति।
जैसैं केहरि झमकि कूप जल देखत अपनी प्रति।
कूदि परयौ कछु मरम न जान्यौ भई आइ सोइ गति।
ज्यौं गज फटिक सिला मैं देखत, दसननि डारत हति।
जौ तू सूर सुखहिं चाहत है तौ करि बिषय-बिरति॥११५॥

भूलेही लगि जनम गँवायौ।
भूल्यौ कहा स्वप्न के सुख मैं हरि सौं चित न लगायौ।
कबहुँक बैठ्यौ रहसि-रहसि कै, ढोटा गोद खिलायौ।
कबहुँक फूलि सभा मैं बैठ्यौ मूँछनि ताव दिखायौ।
टेढ़ी चाल पाग सिर टेढ़ी, टेढ़ैं-टेढ़ैं धायौ।
सूरदास प्रभु क्यौं नहिं चेतत, जब लगि काल न आयौ॥११६॥

जग मैं जीवत ही कौ नातौ।
मन बिछुरैं तन छार होइगौ, कोउ न बात पुछातौ।
मैं-मेरी कबहूँ नहिं कीजै, कीजै पंच-सुहातौ।
बिषयासक्त रहत निसि-बासर, सुख सियरौ दुख तातौ।

साँच-झूठ करि माया जोरी, आपुन रूखौ खातौ।
सूरदास कछु थिर न रहैगौ, जो आयौ सो जातौ ॥११७॥

बिचारत ही लागे दिन जान।
सजल देह, कागद तैं कोमल किहि बिधि राखै प्रान ?
जोग न जग्य ध्यान नहिं सेवा, संत-संग नहिं ज्ञान।
जिह्वा-स्वाद इंद्रियनि-कारन, आयु घटति दिन मान।
और उपाइ नहीं रे बौरे, सुनि तू यह दै कान।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपान ॥११८॥

अब मैं जानी, देह बुढ़ानी।
सीस, पाउँ, कर कह्यौ न मानत, तन की दसा सिरानी।
आन कहत आनै कहि आवत नैन-नाक बहै पानी।
मिटि गइ चमक-दमक अँग-अँग की, मति अरु दृष्टि हिरानी।
नाहिं रही कछु सुधि तन-मन की भई जु बात बिरानी।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपानी ॥११९॥

रे मन, राम सौं करि हेत।
हरि-भजन की बारि करि लै उबरै तेरौ खेत।
मन सुवा तन पींजरा, तिहिं माँझ राखै चेत।
काल फिरत बिलार-तनु धरि, अब धरी तिहिं लेत।
सकल बिषय-बिकार तजि तू उतरि सागर-सेत।
सूर भजि गोबिंद के गुन, गुर बताए देत ॥१२०॥

बिहारी कृष्न कहत कह जात ?
बिछुरैं मिलन बहुरि न ह्वै है, ज्यौं तरवर के पात।
सीत-बात कफ कंठ बिरोधै, रसना टूटै बात।
प्रान लए जम जात मूढ़-मति देखत जननी-तात।
छन इक माहिं कोटि जुग बीतत नर की केतिक बात ?
यह जग-प्रीति सुवा-सेमर ज्यौं, चाखत ही उड़ि जात।

जम कैं फंद परयौ नहिं जब लगि, चरननि किन लपटात ?
कहत सूर बिरथा यह देही, एतौ कत इतरात ॥१२१॥

हरि की सरन महँ तू आउ।
काम-क्रोध बिषाद-तृष्ना सकल जारि बहाउ।
काम कैं बस जो परै जमपुरी ताकौं बास।
ताहि निसि दिन जपत रहि जो सकल-जीव-निवास।
कहत यह बिधि भली तासौं जौ तू छाँड़ै देहि।
सूर स्याम सहाइ हैं तौ आठहूँ सिधि लेहि ॥१२२॥

दिन दस लेहि गोबिंद गाइ।
छिन न बिसरत चरन-अंबुज, बादि जीवन जाइ।
दूरि जब लौं जरा रोगऽरु चलति इंद्री भाइ।
आपुनौ कल्यान करि लै, मानुषी तन पाइ।
रूप जोबन सकल मिथ्या देखि जनि गरबाइ।
ऐसेहीं अभिमान आलस काल ग्रसिहै आइ।
कूप खनि कत जाइ रे नर, जरत भवन बुझाइ।
सूर हरि कौ भजन करि लै, जनम-मरन नसाइ ॥१२३॥

दिन द्वै लेहु गोबिंद गाइ।
मोह-माया-लोभ लागे काल घेरै आइ।
बारि मैं ज्यौं उठत बुदबुद लागि बाइ बिलाइ।
यौंहि तन-गति जनम झूठौ स्वान काग न खाइ।
कर्म कागद बाँचि देखौ, जौ न मन पतियाइ।
अखिल लोकनि भटकि आयौ लिख्यौ मेटि न जाइ।
सुरति के दस द्वार रूँधे, जरा घेरयौ आइ।
सूर हरि की भक्ति कीन्हैं, जन्म पातक जाइ ॥१२४॥

मन, तोसौं किती कही समुझाइ।
नंदनंदन के चरन कमल भजि तजि पाखँड-चतुराइ।

सुख-संपति, दारा-सुत, हय-गय, छूट सबै समुदाइ।
छनभंगुर ये सबै स्याम बिनु, अंत नाहिं सँग जाइ।
जनमत-मरत बहुत जुग बीते, अजहूँ लाज न आइ।
सूरदास भगवंत भजन बिनु जैहै जनम गँवाइ ॥१२५॥

बौरे मन रहन अटल करि जान्यौ।
धन-दारा सुत-बंधु-कुटुँब कुल, निरखि निरखि बौरान्यौ।
जीवन जन्म अल्प सपनौ सौ, समुझि देखि मन माहीं।
बादर छाहँ धूम बौराहर, जैसे थिर न रहाहीं।
जब लगि डोलत बोलत चितवत धन-दारा हैं तेरे।
निकसत हंस, प्रेत कहि तजिहैं, कोउ न आवै नेरे।
मूरख, मुग्ध अजान, मूढ़मति नाहीं कोऊ तेरौ।
जो कोऊ तेरौ हितकारी, सो कहै काढ़ि सबेरौ।
घरी इक सजन-कुटुँब मिलि बैठैं रुदन-बिलाप कराहीं।
जैसैं काग काग के मूऍं, काँ-काँ करि उड़ि जाहीं।
कृमि-पावक तेरौ तन भखिहैं, समुझि देखि मन माहीं।
दीनदयाल सूर हरि भजि लै यह औसर फिरि नाहीं ॥१२६॥

रे सठ, बिन गोबिंद सुख नाहीं।
तेरौ दुख दूरि करिबे कौं रिधि सिधि फिरि फिरि जाहीं।
सिव बिरंचि सनकादिक, मुनिजन इनकी गति अवगाहीं।
जगत पिता जगदीस सरन बिनु, सुख तीनौं पुर नाहीं।
और सकल मैं देखे ढूँढ़े बादर की सी छाहीं।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, दुख कबहूँ नहिं जाहीं ॥१२७॥

धोखैं ही धोखैं डहकायौ।
समुझि न परी बिषय-रस गीध्यौ हरि-हीरा घर माँझ गँवायौ।
ज्यौं कुरंग जल देखि अवनि कौ, प्यास न गई चहूँ दिसि धायौ।
जनम जनम बहु करम किए हैं, तिनमैं आपुन आपु बँधायौ।

ज्यौं सुक सेमर सेव आस लगि, निसि-बासर हठि चित लगायौ।
रीतौ परयौ जबै फल चाख्यौ, उड़ि गयौ तूल, ताँबरौ आयौ।
ज्यौं कपि डोरि बाँधि बाजीगर, कन-कन कौं चौहटैं नचायौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, काल-ब्याल पै आपु डसायौ ॥१२८॥

भक्ति कब करिहौ, जनम सिरानौ।
बालापन खेलतहीं खोयौ, तरुनाई गरबानौ।
बहुत प्रपंच किए माया के, तऊ न अधम अघानौ।
जतन जतन करि माया जोरी, लै गयौ रंक न रानौ।
सुत-बित-बनिता प्रीति लगाई, झूठे भरम भुलानौ।
लोभ-मोह तैं चेत्यौ नाहीं, सुपनैं ज्यौं डहकानौ।
बिरध भऐं कफ कंठ बिरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितानौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम कैं हाथ बिकानौ ॥१२९॥

तजौ मन, हरि-बिमुखनि कौ संग।
जिनकैं संग कुमति उपजति है, परत भजन मैं भंग।
कहा होत पय पान कराऐं, बिष नहिं तजत भुजंग।
कागहिं कहा कपूर चुगाऐं, स्वान न्हवाऐं गंग।
खर कौं कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन अंग।
गज कौं कहा सलिल अन्हवाऐं, धूरि धरत पुनि अंग।
पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग।
सूरदास कारी कामरि पै, चढ़त न दूजौ रंग ॥१३०॥

रे मन मूरख जनम गँवायौ।
करि अभिमान बिषय-रस गीध्यौ, स्याम सरन नहिं आयौ।
यह संसार सुवा-सेमर ज्यौं, सुंदर देखि लुभायौ।
चाखन लाग्यौ रुई गई उड़ि, हाथ कछू नहिं आयौ।
कहा होत अब के पछिताऐं, पहिलैं पाप कमायौ।
कहत सूर भगवंत-भजन बिनु, सिर धुनि धुनि पछितायौ ॥१३१॥

चकई री चलि चरन-सरोवर जहाँ न प्रेम वियोग।
जहँ भ्रम-निसा होति नहिं कबहूँ सोइ सायर सुख जोग।
जहाँ सनक-सिव हंस, मीन मुनि, नख रवि-प्रभा प्रकास।
प्रफुलित कमल निमिष नहिं ससि-डर, गुंजत निगम सुवास।
जिहिं सर सुभग मुक्ति-मुक्ताफल, सुकृत अमृत-रस पीजै।
सो सर छाँड़ि कुबुधि बिहंगम, इहाँ कहा रहि कीजै।
लछिमी-सहित होति नित क्रीड़ा सोभित सूरजदास।
अब न सुहात बिषय-रस-छीलर, वा समुद्र की आस॥१५२॥

चलि सखि तिहिं सरोवर जाहिं।
जिहिं सरोवर कमल कमला रवि बिना बिगसाहिं।
हंस उज्जल पंख निर्मल, अंग मलि-मलि न्हाहिं।
मुक्ति-मुक्ता अनगिने फल तहाँ चुनि-चुनि खाहिं।
अतिहिं मगन महा मधुर रस, रसन मध्य समाहिं।
पदुम-बास सुगंध-सीतल, लेत पाप नसाहिं।
सदा प्रफुलित रहैं, जल बिनु निमिष नहिं कुम्हिलाहिं।
सघन गुंजत बैठि उन पर भौंरहूँ बिरमाहिं।
देखि नीर जु छिलछिलौ जग, समुझि कछु मन माहिं।
सूर क्यौं नहिं चलै उड़ि तहँ बहुरि उड़िबौ नाहिं॥१५३॥

सुवा चलि ता बन कौ रस पीजै।
जा बन राम-नाम अम्रित-रस स्रवन-पात्र भरि लीजै।
को तेरौ पुत्र पिता तू काकौ घरनी, घर को तेरौ?
काग-सृगाल-स्वान कौ भोजन, तू कहै मेरौ-मेरौ।
बन बारानसि मुक्ति-क्षेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ।
सूरदास साधुनि की संगति बड़े भाग्य जो पाऊँ॥१५४॥

जो सुख होत गुपालहिं गावैं।
सो सुख होत न जप तप कीन्हैं, कोटिक तीरथ न्हावैं।

दियें सेत मर्हि वारि पषारय, चरन-कमल चित लायें।
तीनि लोक तृन-सम करि लेखत नंद-नैंदन उर आयें।
बंसीबट, बृंदावन, जमुना तजि बैकुंठ न जावै।
सूरदास हरि कौ सुमिरन करि, बहुरि न भव-जल आवै ॥१२४॥

सोइ रसना, जो हरि-गुन गावै।
नैननि की छबि यहै चतुरता जौ मुकुंद-मकरंदहिं ध्यावै।
निर्मल चित तौ सोई साँचौ, कृष्न बिना जिहिं और न भावै।
स्रवननि की जु यहै अधिकाई सुनि हरि-कथा सुधा-रस पावै।
कर तेई जे स्यामहिं सेवैं, चरननि चलि बृंदावन जावै।
सूरदास जैयै बलि ताकी जो हरि जू सौं प्रीति बढ़ावै ॥१२६॥

अपंमी इन लोगनि कौ भावै।
छाँड़ि स्याम-नाम अम्रित फल माया-विष फल भावै।
निंदत मूढ़ मलय चंदन कौं, राख अंग लपटावै।
मानसरोवर छाँड़ि हंस तट, काग-सरोवर न्हावै।
पग तर जरत न जानै मूरख, घर तजि घूर बुझावै।
चौरासी लख जोनि स्वाँग धरि, भ्रमि भ्रमि जमहिं हँसावै।
मृगतृष्ना आचार-जगत-जल, ता सँग मन ललचावै।
कहत जु सूरदास संतनि मिलि, हरि जस काहे न गावै ॥१३७॥

भजन बिनु कूकर-सूकर जैसौ।
जैसैं घर बिलाव के मूसा रहत बिषय-बस वैसौ।
बग-बगुली अरु गीध-गीधिनी, आइ जनम लियौ तैसौ।
उनहूँ कैं गृह, सुत, दारा हैं, उन्हैं भेद कहु कैसौ?
जीव मारि कै उदर भरत हैं, तिनकौ लेखौ ऐसौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनौ ऊँट वृष-भैंसौ ॥१४८॥

जा दिन संत पाहुने आवत।
तीरथ कोटि सनान करें फल जैसौ दरसन पावत।

मयौ नेह दिन-दिन प्रति उनकैं चरन-कमल चित लावत।
मन-बच-कर्म और नहिं जानत, सुमिरत औ सुमिरावत।
मिथ्यावाद-उपाधि रहित ह्वै विमल-विमल जस गावत।
बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत।
संगति रहै साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत।
सूरदास संगति करि तिनकी जे हरि-सुरति करावत ॥१३६॥

हरि-रस तौउब जाइ कहुँ लहियै।
गऐं सोच आएं नहिं आनँद ऐसौ मारग गहियै।
कोमल बचन, दीनता सब सौं सदा अनंदित रहियै।
बाद बिबाद हर्ष-आतुरता, इतौ द्वंद जिय सहियै।
ऐसी जो आवै या मन मैं, तौ सुख कहँ लौं कहियै।
अष्ट सिद्धि नव निधि, सूरज प्रभु, पहुँचै जो कछु चहियै ॥१४०॥

जौ लौं मन कामना न छूटै।
तौ कहा जोग-जज्ञ-ब्रत कीन्हैं बिनु कन तुस कौं कूटै।
कहा सनान कियैं तीरथ के अंग भस्म जट-जूटै ?
कहा पुरान जु पढ़े अठारह ऊर्ध्व धूम के घूटैं।
जग सोभा की सकल बड़ाई, इनतैं कछू न खूटै।
करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि टूटै।
काम, क्रोध, मद, लोभ सत्रु हैं, जो इतननि सौं छूटै।
सूरदास तबहीं तम नासै, ज्ञान-अगिनि-झर फूटै ॥१४१॥

सबै दिन एकै से नहिं जात।
सुमिरन-भजन कियौ करि हरि कौ, जब लौं तन कुसलात।
कबहुँ कमला चपल पाइ कै, टेढ़ैं टेढ़ैं जात।
कबहुँ मग-मग धूरि बटोरत, भोजन कौं बिललात।
या देही कौ गरब करत, धन-जौबन के मदमात।
हौं मद हौं बड़ बहुत कहावत, सूधैं कहत न बात।

खान-पियत मरै दिन बीतै खेलत ही भइ स्यात।
ज्ञान न जुक्ति ध्यान नहिं पूजा बिरध भएँ पछितात।
तातैं कहत सँभारहि रे नर काहे कौं इतरात ?
सूरदास भगवंत भजन बिनु कहूँ नाहिं सुख गात ॥१५२।

विषया जात हरष्यौ गात।
ऐसे अंध जानि निधि लूटत परतिय सँग लपटात।
बरजि रहे सब कह्यौ न मानत करि-करि जतन उड़ात।
परै अचानक त्यौं रस-लंपट, तनु तजि जमपुर जात।
यह तौ सुनी ब्यास के मुख तैं पर-दारा दुखदात।
रुधिर-मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर गंध गंधात।
तन-धन जौबन ता हित खोवत नरक की पाछैं बात।
जो नर भलौ चहत तौ सो तजि सूर स्याम गुन गात ॥१५३॥

सो धौं मन-मधुप नहिं सूझत।
ज्यौं ज्यौं मृग-मद नाभि बिसारे फिरत सकल बन बूझत।
अपनौ मुख मसि-मलिन मंदमति देखत दर्पन माहीं।
ता कालिमा मेटिबे कारन पचत पखारत छाहीं।
तेल-तूल पावक पुट भरि धरि बनै न बिना प्रकासन।
कहत बनाइ दीप की बतियाँ कैसें धौं तम नासन।
सूरदास यह मति आए बिन सब दिन गए अलेखे।
कहा जानै दिनकर की महिमा अंध नैन बिन देखे ॥१५४॥

अपुनपौ आपुन ही बिसर्‍यौ।
जैसे स्वान काँच-मंदिर मैं भ्रमि भ्रमि भूँकि मर्‍यौ।
ज्यौं सौरभ मृग-नाभि बसत है द्रुम तृन सूँघि फिर्‍यौ।
ज्यौं सपने मैं रंक भूप भयौ तसकर अरि पकर्‍यौ।
ज्यौं केहरि प्रतिबिंब देखि कै आपुन कूप पर्‍यौ।
जैसैं गज लखि परिदर्पन मैं दसननि जाइ अर्‍यौ।

मर्कट मूँठि छाँड़ि नहीं दीनी घर-घर-द्वार फिरयौ।
सूरदास नलिनी कौ सुवटा, कहि कौनैं जकरयौ ॥१४५॥

हरि जू की आरती बनी।
अति बिचित्र रचना रचि राखी परति न गिरा गनी।
कच्छप अध आसन अनूप अति, डाँड़ी सहस फनी।
मही सराव सप्त सागर घृत बाती सैल घनी।
रबि-ससि-ज्योति जगत परिपूरन, हरति तिमिर रजनी।
उड़त फूल उड़गन नभ अंतर अंजन घटा घनी।
नारदादि सनकादि प्रजापति सुर-नर-असुर-अनी।
काल-कर्म-गुन-ओर-अंत नहिं, प्रभु इच्छा रचनी।
यह प्रताप दीपक सुनिरंतर, लोक सकल भजनी।
सूरदास सब प्रगट ध्यान मैं, अति बिचित्र सजनी ॥१४६॥

सकल तजि भजि मन चरन मुरारि।
स्रुति-सुम्रिति मुनि जन सब भाषत, मैं हूँ कहत पुकारि।
जैसैं सुपनैं सोइ देखियत तैसैं यह संसार।
जात बिलै ह्वै छिनक मात्र मैं उघरत नैन किवार।
बारंबार कहत मैं तोसौं जनम-जुआ जनि हारि।
पाछैं भई सु भई सूर जन, अजहूँ समुझि सँभारि ॥१४७॥

अजहूँ सावधान किन होहि।
माया बिषम भुजंगिनि कौ बिष, उतरयौ नाहिंन तोहि।
कृष्न सुमंत्र जियावन मूरी, जिन जन मरत जिवायौ।
बारंबार निकट स्रवननि ह्वै गुरु गारुड़ी सुनायौ।
बहुतक जीव देह अभिमानी देखत ही इन खायौ।
कोउ-कोउ उबरयौ साधु-संग जिन स्याम सँजीवनि पायौ।
जाकौ मोह मैर अति छूटै सुजस गीत के गायैं।
सूर मिटै अग्यान-मूरछा ग्यान-सुभेषज खायैं ॥१४८॥

अपुनपौ आपुन ही मैं पायौ।
सब्दहि सब्द भयौ उजियारौ सतगुरु भेद बतायौ।
ज्यौं कुरंग-नाभी कस्तूरी ढूँढ़त फिरत भुलायौ।
फिरि चितयौ जब चेतन ह्वै करि, अपनै ही तन छायौ।
राजकुमारि कंठ-मनि-भूषन भ्रम भयौ कहूँ गँवायौ।
दियौ बताइ और सखियनि तब, तनु कौ ताप नसायौ।
सपने माहिं नारि कौं भ्रम भयौ, बालक कहूँ हिरायौ।
जागि लख्यौं, ज्यौं की त्यौं ही है ना कहुँ गयौ न आयौ।
सूरदास समुझे की यह गति, मनहीं मन मुसुकायौ।
कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौं गूँगैं गुर खायौ ॥१४६॥

गुरु बिनु ऐसी कौन करै।
माला-तिलक मनोहर बाना लै सिर छत्र धरै।
भवसागर तैं बूड़त राखै, दीपक हाथ धरै।
सूर स्याम गुरु ऐसो समरथ छिन मैं लै उधरै ॥१४७॥

— o —

## (ख) पौराणिक प्रसंग

भक्त जमुने सुगम अगम आरैं।
प्रात ही न्हात अघ जात ताके सकल
जाहि जमहू रहत हाथ जोरैं।
अनुभवी जानही, बिना अनुभव कहा
प्रिया जानै नहीं चित्त चोरैं।
प्रेम के सिंधु को मर्म जान्यौ नहीं
सूर कहि कहा भयौ देह बोरैं ?॥१५१॥

कह्यौ सुक श्री भागवत बिचार।
जाति-पाँति कोउ पूछत नाहीं श्रीपति कैं दरबार।
श्री भागवत सुनै जो हित करि तरै सो भव-जल पार।
सूर सुमिरि सो रटि निसि-बासर राम-नाम निज सार॥१५२

'सुनि राजा दुर्जोधना हम तुम पै आए।
पांडव-सुत जीवत मिले दै कुसल पठाए।
छेम-कुसल अरु दीनता दंडवत सुनाई।
कर जोरे बिनती करी दुरजन-सुखदाई।
पाँच गाउँ पाँचौ जननि, किरपा करि दीजे।
ये तुम्हरे कुल-बंस हैं, हमरी सुनि लीजे।'
उनकी ऐसी दीनता कोउ कहि न सुनावै।
'पांडव-सुत अरु द्रौपदी कौ मारि गड़ावौ।

'राजनीति जानौ नहीं गो-सुत चरवारे।
पीवौ छाँछ अघाइ कै कब के रथवारे।
गाइ-गाइ के बरसला मेरे आदि सदाई।
इनकी लज्जा नहिं हमैं तुम राज-बड़ाई।
भीषम-द्रोन-करन सुनैं कोउ मुखहु न बोलै।
ये पोषक क्यों गाड़िये धरनी-पर डोलैं।
हम कछु लिये न देत हैं ये धार निहारे।'
सूरदास प्रभु उठि चले कौरव-सुत हारे ॥१३४॥

हरि आइ रथ चढ़े दुवारे।
तुम बालक, आगे हो डेरौ भक्त भवन किधौं भवन तिहारे '
सुनि सुंदरि उठि उत्तर दीन्हौ 'भारत सुत कछु काम हँकारे।
तहँ आए जदुपति सुनियत है, कमल-नयन हरि हितू हमारे।'
तिनकौ मिलन गए पति मेरे मो ठाकुर य तिहिँन तुम्हारे।
सूर सुनत सभ्रम उठि धायौ प्रेम मगन, तन दसा बिसारे ॥१३५॥

"क्यौं दासी-सुत कैं पग धारे?
भीषम करन द्रोन-मंदिर तजि मम गृह गमने मुरारे।
सुनियत हीन दीन दासी-सुत, जाति-पाँति तैं न्यारे।
तिनकै आइ कियौ तुम भोजन, जदु-कुल लाजनि मारे।
हरि सौं कह्यौ "सुनौ दुरजोधन, सत्य सुबचन हमारे।
सोइ निरधन सोइ दुरबल दीन है जिन मम चरन बिसारे।
तुम मारग है भगत भागवत राग-द्वेष तैं न्यारे।"
सूरदास प्रभु नंदनँदन कहैं हम ग्वालनि-जुठिहारे ॥१३६॥

हम तैं बिदुर कहा है नीचौ?
जाकैं नृपति सौं भोजन कीन्हौ दासिन सुत दासी कौ।
"कहै बिधि भोजन कीजै राजा बिपति परैं कै प्रीति।
तेरे प्रीति न मोहि आपदा यहै बड़ी बिपरीति।

'ऊँचे मंदिर कौन काम के, कनक-कलस जो चढ़ाए।
'भक्त-भवन मैं हौं जु बसत हौं जद्यपि तृन करि छाए।
'अंतरजामी नाउँ हमारौ हौं अंतर की जानौं।
तदपि सूर मैं भक्त बछल हौं भक्तनि हाथ बिकानौ' ॥१४६॥

हरि तुम क्यौं न हमारैं आए ?
'षट-रस व्यंजन छाँड़ि रसोई, साग बिदुर घर खाए।
ताकी झुगिया मैं तुम बैठे, कौन बड़प्पन पायौ ?
'जाति पाँति कुलहू तैं न्यारौ है दासी कौ जायौ।'
"मैं तोहि सत्य कहौं दुरजोधन सुनि तू बात हमारी।
बिदुर हमारौ प्रान पियारौ तू बिषया अधिकारी।
जाति-पाँति सबकी हौं जानौं बाहिर छाक मँगाई।
ग्वालनि के सँग भोजन कीन्हौं कुल कौ लाज लगाई।
जहँ अभिमान तहाँ मैं नाहीं यह भोजन बिष लागै।
सत्य पुरुष सो दीन गहत है अभिमानी कौं त्यागै।
जहँ जहँ भीर परै भक्तनि कौ, तहाँ तहाँ उठि धाऊँ।
भक्तनि के हौं संग फिरत हौं भक्तनि हाथ बिकाऊँ।
भक्तबछल है बिरद हमारौ बेद सुमृतिहूँ गावैं"।
सूरदास प्रभु यह निज महिमा, भक्तनि काज बढ़ावैं ॥१४७॥

राखौ पति गिरिवर गिरि-धारी।
अब तौ नाथ, रह्यौ कछु नाहिन उघरत माथ अनाथ पुकारी।
बैठी सभा सकल भूपनि की भीषम-द्रोन-करन ब्रतधारी।
कहि न सकत कोउ बात बदन पर, इन पतितनि मो अपति बिचारी।
पांडुकुमार पवन से डोलत, भीम गदा कर तैं महि डारी।
रही न पैज प्रबल पारथ की, जब तैं धरम-सुत धरनी हारी।
अब तौ नाथ न मेरौ कोई बिनु श्रीनाथ मुकुंद-मुरारी।
सूरदास अवसर के चूकैं फिरि पछितैहौ देखि उघारी ॥१४८॥

जब गहि राजसभा मैं आनी।
द्रुपद-सुता पट-हीन करन कौं दुस्सासन अभिमानी।
परे बज्र या नृपति-सभा पै कहति प्रजा अकुलानी।
बैठे हँसत करन दुर्जोधन रोवति द्रौपदि रानी।
जित देखति तित कोउ नाहीं टेरि कहति मृदु बानी।
हा जदुनाथ कमल दल-लोचन करुनामय सुखदानी।
गरुड़ चढ़े देखे नँदनंदन ध्यान चरन-लपटानी।
सूरदास प्रभु कठिन बिपति सौं राखि लियौ जग जानी ॥१४६॥

प्रभु, मोहि राखियै इहिं ठौर।
केस गहत कलेस पाऊँ करि दुसासन जोर।
करन भीषम द्रोन मानत नाहिं कोउ निहोर।
पाँच पति हित हारि बैठे रावरै हित भोर।
धनुष-बान सिरान कैधौं गरुड़ वाहन चोर।
चक्र काहु चोरायौ कैधौं भुजनि बल भयौ थोर।
सूर के प्रभु कृपा सागर चितै लोचन-कोर।
बढ़यौ बसन प्रवाह जल ज्यौं होत जय जय सोर ॥१६७॥

जौ मेरे दीनदयाल न होते।
तौ मेरी अपत करत कौरव-सुत होत पंडवनि ओते।
कहा भीम के गदा धरें कर कहा धनुष धरें पारथ!
काहु न अरहरि करी हमारी कोउ न आयौ स्वारथ।
समुझि-समुझि गुरु-आरति अपनी धर्मपुत्र मुख जोवै।
सूरदास प्रभु नँद-नंदन-गुन गावत निसि-दिन रोवै ॥२६१॥

हम भक्तनि के भक्त हमारे।
सुनि अर्जुन परतिज्ञा मेरी, यह ब्रत टरत न टारे।
भक्तनि काज लाज हिय धरि कै, पाइ पियादे धाऊँ।
जहँ-जहँ भीर परै भक्तनि कौं, तहँ तहँ जाइ छुड़ाऊँ।

जो भक्तनि सौं बैर करत है सो बैरी निज मेरौ।
देखि बिचारि भक्त हित कारन हाँकत हौं रथ तेरौ।
जीतैं जीति भक्त अपने कै हारैं हारि बिचारौं।
सूरदास सुनि भक्त-बिरोधी चक्र सुदरसन जारौं ॥१६२॥

गोबिंद कोपि चक्र कर लीन्हौ।
छाँड़ि आपनौ प्रन जादवपति जन कौ भायौ कीन्हौ।
रथ तैं उतरि अवनि आतुर ह्वै चले चरन अति धाए।
मनु संचित भू भार उतारन चपल भए अकुलाए।
कटुक अंग तैं उड़त पीतपट, उन्नत बाहु बिसाल।
स्रवत स्रोनकन तन साभा छबि-घन बरसत मनु लाल।
सूर सु भुजा समेत सुदरसन देखि बिरंचि भ्रम्यौ।
मानौं आन सृष्टि करिबे कौं अंबुज नाभि जम्यौ ॥१६३॥

बरु मेरी परतिज्ञा जाउ।
इत पारथ कोप्यौ है हम पर उत भीषम भट-राउ।
रथ तैं उतरि चक्र धर लीन्हौ सुभट सामुहैं आए।
ज्यौं कंदर तैं निकसि सिंह झुकि गज-जूथनि पर धाए।
आइ निकट श्रीनाथ निहारे, परी तिलक पर दीठि।
सीतल भई चक्र की ज्वाला हरि हँसि दीन्ही पीठि।
जय जय जय चिंतामनि स्वामी सांतनु-सुत यौं भाषै।
तुम बिनु ऐसौ कौन दूसरौ, जौ मेरौ प्रन राखै।
साधु-साधु सुरसरी-सुवन तुम मैं प्रन लागि डराऊँ।
सूरजदास भक्त दोऊ दिसि कापर चक्र चलाऊँ ॥१६४॥

या पट पीत की फहरानि।
कर धरि चक्र, चरन की धावनि नहिं बिसरति वह बानि।
रथ तैं उतरि अवनि आतुर ह्वै कच रज की लपटानि।
मानौ सिंह सैल तैं निकस्यौ, महा मत्त गज जानि।

जिन गोपाल मेरी प्रन राख्यौ, मेटि बेद की कानि।
सोइ सूर सहाइ हमारे निकट भए हैं आनि ॥१६५॥

प्रभु जू विपदा भली बिचारी।
धिक यह राज बिमुख चरननि तैं कहति पांडु की नारी।
लाखा-मंदिर कौरव रचिभै तहँ राखे बनवारी।
अंबर हरत सभा मैं कृष्ना, सोक-सिंधु तैं तारी।
अतिथि रिषीस्वर सापन आए सोच भयौ जिय भारी।
स्वल्प साग तैं तृप्त किए सब, कठिन आपदा टारी।
जन अर्जुन की रच्छा कारन सारथि भए मुरारी।
सोई सूर सहाइ हमारे संतनि के हितकारी ॥१६६॥

अब वे विपदा हू न रहीं।
मनसा करि सुमिरत है जब-जब मिलते तब तबहीं।
अपने दीन दास कैं हित लगि फिरते सँग-सँगहीं।
लेते राखि पलक गोलक ज्यौं संतत तिन सबहीं।
रन अरु बन बिग्रह डर आगैं आवत जहीं-तहीं।
राखि लियौ तुमहीं जग-जीवन त्रासनि तैं सबहीं।
कृपा-सिंधु की कथा एकरस, क्यौं करि जाति कही।
कीजै कहा सूर सुख संपति जहँ जदुनाथ नहीं? ॥१६७॥

हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ?
मीड़त हाथ, सीस धुनि ढोरत रुदन करत नृप, पारथ।
थाके हस्त चरन-गति थाकी अरु थाक्यौ पुरुषारथ।
पाँच बान मोहिं संकर दीन्हे, तेऊ गए अकारथ।
जाकैं संग सेत-बँध कीन्हौ, अरु जीत्यौ महभारथ।
गोपी हरी सूर के प्रभु बिनु रहत प्रान किहिं स्वारथ ॥१६८॥

कह्यौ सुक श्रीभागवत बिचारि।
हरि की भक्ति जुगै जुग बिरधै आन धर्म दिन चारि।

सिवा सखौ परीछित राजा सुनि सिख मानि हमार।
कमल-नैन की लीला गावत, कटत अनेक बिकार।
सतजुग सत, त्रेता तप कीजै द्वापर पूजा चारि।
सूर भजन करि केवल कीजै कलजुग कानि निवारि ॥१६६॥

नमो नमो हे कृपानिधान।
चितवत कृपा कटाच्छ तुम्हारैं मिटि गयौ तम अज्ञान।
मोह निसा कौ लेस रह्यौ नहिं, भयौ बिवेक-बिहान।
आतम-रूप सकल घट दरस्यौ उदय कियौ रवि ज्ञान।
मैं-मेरी अब रही न मेरैं छुट्यौ देह अभिमान।
भावै परौ आजुही यह तन भावै रहौ अमान।
मेरैं जिय अब यहै लालसा लीला श्री भगवान।
स्रवन करौं निसि-बासर हित सौं सूर तुम्हारी आन ॥१७०॥

पढ़ौ भाइ राम-मुकुंद-मुरारि।
चरन कमल मन-सनमुख राखौ कहूँ न आवै हारि।
कहै प्रहलाद सुनौ रे बालक लीजै जनम सुधारि।
को है हिरनकसिप अभिमानी तुम्हैं सकै जो मारि।
जनि डरपौ जड़मति काहू सौं भक्ति करौ इकसारि।
राखनहार अहै कोउ औरै, स्याम धरे भुज चारि।
सत्य स्वरूप देव नारायन देखौ हृदय बिचारि।
सूरदास प्रभु सबमैं ब्यापक, ज्यौं धरनी मैं बारि ॥१७१॥

तब लगि हौं बैकुंठ न जैहौं।
सुनि प्रहलाद प्रतिज्ञा मेरी जब लगि तब सिर छत्र न दैहौं।
मन-बच कर्म जानि जिय अपने जहाँ-जहाँ जन तहँ-तहँ पैहौं।
निगु न-सगुन होइ सब देख्यौ तोसौं भक्त कहूँ नहिं पैहौं।
मो देखत मौ दास दुखित भयौ, यह कलंक हौं कहाँ गँवैहौं।
हृदय कठोर कुलिस तैं मेरौ, अब नहिं दीनदयालु कहैहौं।

गहि नख हिरनकसिप की पीठी फारि उदर तिहिं रुधिर नहैहौं।
यह हित मनै कहत सूरज प्रभु, इहिं कृत को फल तुरत चखैहौं ॥१५२

इरवर चक्र धरे हरि धावत।
गरुड़ समेत सकल सेनापति, पाछैं लागे आवत।
जानि नहिं भावत गरुड़ मन हरषत पुनि बल पगहिं बढ़ावत।
मनहुँ न अति बेग अधिक करि, हरिजू चरन पलावत।
को जाने प्रभु कहाँ चले हैं, काहूँ कछु न जनावत।
अति व्याकुल गति देखि देव-गन सोचि सकल दुख पावत।
गज हित धावत जन-सुखदायक वेद विमल जस गावत।
सूर समुझि समुझाइ अनाथनि इहिं बिधि नाम छुड़ावत ॥१५३

ज्यौं न मिटत धाइ, आप हरि आतुर ह्वै,
जान्यौ जब गज ग्राह लिए जात जल मैं।
जादौपति जदुनाथ छाँड़ि खगपति-साथ
जानि जन बिहबल, छुड़ाइ लीन्हौं पल मैं।
भीरहू तैं न्यारौ कीनौ चक्र नक्र-सीस छीनौ
देवकी के प्यारे लाल ऐंचि लाए थल मैं।
कहै सूरदास, देखि नैननि की मिटी प्यास
कृपा कीन्ही गोपीनाथ आप भुज-बल मैं ॥१५४॥

जब ही सब दिसि देखि रह्यौ।
गगन माहिं कोउ करुनानिधि अति पल माहँ गह्यौ।
सुर, नर सब स्वारथ के गाहक, कत स्रम आनि करैं।
उग्गन उदित तिमिर नहिं नासत बिन रवि रूप धरैं।
इतनी बात सुनत करुनामय चक्र गहैं कर धाए।
हति गज-सत्रु सूर के स्वामी, तातछन सुख उपजाए ॥१५५॥

हरि हाँते हैं द्विज बावन।
चारौ बेद पढ़त मुख आगर अति सुकंठ-सुर गावन।

बानी सुनी बलि पूछन लागे, इहाँ बिप्र कत आवन ?
अरचित अंबुज नील कलेवर, बरसति बूँदनि सावन।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, कह्यौ माँगु मन-भावन।
तीनि पैंड़ बसुधा हौं चाहौं, परनकुटी कौं छावन।
इतनौ कहा बिप्र तुम माँग्यौ, बहुत रतन देउँ गाँवन।
सूरदास प्रभु बोलि छले बलि, धरयौ पीठि पद पावन ॥१७६॥

जन की हौं आधीन सदाई।
दुरबासा बैकुंठ गए जब, तब यह कथा सुनाई।
निदित बिरत अनन्य देव तुम करुनामय सुखदाई।
आरत है मोहिं चक्र सुदरसन, हा प्रभु लेहु बचाई।
जिन तन-धन मोहिं प्रान समरपे सीस सुभाव, सदाई।
ताकौ बिषम बिषाद कहो मुनि मोपै सह्यौ न जाई।
उलटि जाहु नृप चरन-सरन मुनि वहै राखिहै भाई।
सूरजदास दास की महिमा श्रीपति श्रीमुख गाई ॥१७७॥

पिउ पद-कमल की मकरंद।
मलिन-मति मन-मधुप परिहरि, बिषय नीरस मंद।
अमृत हूँ तें अमल अति गुन, स्रवत निधि आनंद।
परम सीतल जानि संकर, सिर धरयौ हित चंद।
नाग-नर-पसु सपनि पायौ सुरसरी कौ बुंद।
सूर तीनौ लोक परस्यौ सुरसरी जस-छंद ॥१७८॥

जय जय, जय जय माधव बेनी।
जग हित प्रगट करी करुनामय अगतिनि की गति देनी।
जानि कठिन कलिकाल कुटिल नृप संग सजी अघ-सेनी।
जनु ता लागि तरवारि त्रिबिक्रम, धरि करि कोप उपैनी।
मेरु मूठि, बर-बारि पाल-छिति, बहुत बित्त की लैनी।
सोभित अंग तरंग त्रिसंगम धरी धार अति पैनी।

जा परसैं भीतैं जम-सैनी अमन कपालिक, जैनी।
एकै नाम लेत सब भाजैं पीर भी भव-भय-सैनी।
जा जस सुख निरखि सन्मुख ह्वै, सुन्दरि सरसिज-नैनी।
सूर परसपर करत कुलाहल, गर मृग पहरावैनी ॥१७९॥

गंग-तरंग बिलोकत नैन

सरिहिं पुनीत बिष्नु पादोदक, महिमा निगम पढ़त गुनि चैन।
परम पवित्र, मुक्ति की दाता भागीरथहिं भव्य बर दैन।
आवत तप खेद निसिबासर, तब संकर भाषी है लैन।
त्रिभुवन हार सिंगार भगवती सलिल चराचर जाके ऐन।
सूरदास बिधाता के तप प्रगट भई संतनि सुख दैन ॥१८०॥

—:(*):—

## (ग) रामचरित

आजु दसरथ कैं आँगन भीर।
ये भू-भार उतारन कारन प्रगटे स्याम सरीर।
फूले फिरत अजोध्या-बासी, गनत न त्यागत चीर।
परिरंभन हँसि देत परस्पर आनँद-नैननि नीर।
त्रिदस-नृपति रिषि ब्योम बिमाननि देखत रहे न धीर।
त्रिभुवन-नाथ दयालु दरस दै हरी सबनि की पीर।
देत दान राख्यौ न भूप कछु महा बड़े नग हीर।
भए निहाल सूर सब जाचक जे जाँचे रघुबीर।।१७।।

अजोध्या बाजति आजु बधाई।
गर्भ मुच्यौ कौसिल्या माई रामचंद्र निधि आई।
गावैं सखी परस्पर मंगल रिषि अभिषेक कराई।
भीर भई दसरथ कैं आँगन, सामबेद धुनि छाई।
पूछत रिषिहिं अजोध्या कौ पति, कहियै जनम गुसाईं।
सीस बार सौंपी निधि लीन्ही पावन भुवन बड़ाई।
चारि पुत्र दसरथ कैं उपजे तिहूँ लोक ठकुराई।
सदा सर्बदा राज राम कौ, सूर दास तहँ पाई ।।१८ ।।

करतल-सोभित बान धनुहियाँ।
खेलत फिरत कनकमय आँगन पहिरे लाल पनहियाँ।

दसरथ कौसिल्या के आगैं, लसत सुमन की छहियाँ।
मानौ चारि हंस सरवर तैं बैठे आइ सदेहियाँ।
रघुकुल कुमुद चंद चिंतामनि प्रगटे भूतल महियाँ।
आए ओप देन रघुकुल कौं आनँद-निधि सब कहियाँ।
यह सुख तीन लोक मैं नाहीं जो पाए प्रभु पहियाँ।
सूरदास हरि बोलि भगत कौं निरबाहत गहि बहियाँ ॥१८३॥

धनुही-बान लए कर डोलत।
चारौ बीर संग इक सोभित बचन मनोहर बोलत।
लछिमन भरत सत्रुहन सुंदर, राजिवलोचन राम।
अति सुकुमार, परम पुरुषारथ मुक्ति-धर्म-धन धाम।
कटि-तट पीत पिछौरी बाँधे काकपच्छ धरे सीस।
सर-क्रीड़ा दिन देखन आवत, नारद सुर तैंतीस।
सिव-मन सकुच इंद्र-मन आनँद सुख-दुख बिधिहिं समान।
दिति दुर्बल अति अदिति हृष्टचित देखि सूर संधान ॥१८४॥

कर कंपै, कंकन नहिं छूटै।
राम सिया कर परस मगन भए, कौतुक निरखि सखी सुख लूटै।
गावत नारि गारि सब दै दै तात भ्रात की कौन चलावै।
तब कर-डोरि छुटै रघुपति जू जब कौसिल्या माइ बुलावै।
पूँगी-फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जो कनक की ॥
खेलत जूप सकल जुवतिनि मैं हारे रघुपति जिती जनक की ॥
धरे निसान अजिर गृह मंगल, बिप्र बेद-अभिषेक करायौ।
सूर अमित आनंद जनकपुर सोइ सुकदेव पुराननि गायौ ॥१८५॥

परसुराम तिहिं औसर आए।
कठिन पिनाक कहौ किन तोर्यौ क्रोधित बचन सुनाए।
बिप्र जानि रघुबीर धीर दोउ, हाथ जोरि सिर नायौ।
बहुत दिननि कौ हुतौ पुरातन हाथ छुवत उठि आयौ।

तुम तौ द्विज कुल-पूज्य हमारे, हम तुम कौन लराई ?
कोपवंत कछु सुन्यौ नहीं लियौ सायक धनुष चढ़ाई।
तबहूँ रघुपति क्रोध न कीन्हौ धनुष न बान सँभारयौ।
सूरदास प्रभु-रूप समुझि, बन परसुराम पग धारयौ ।।१८६।।

महाराज दसरथ मन धारी।
अवधपुरी कौ राज राम दै लीजै व्रत बनधारी।
यह सुनि बोली नारि कैकई अपनौ बचन सँभारी।
चौदह बर्ष रहैं बन राघव छत्र भरत सिर धारी।
यह सुनि नृपति भयौ अति व्याकुल, कहत कछू नहिं आई।
सूर रहे समुझाइ बहुत पै कैकइ-हठ नहिं जाई ।।१८७।।

महाराज दसरथ यौं सोचत।
हा रघुनाथ लछन बैदेही सुमिरि नीर दृग मोचत।
त्रिया चरित मतिमंत न समुझत उठि प्रछालि मुख धोवत।
अति बिपरीत रीति कछु औरै बार-बार मुख जोवत।
परम कुबुद्धि कह्यौ नहिं समुझति राम-लखन हँकराए।
कौसिल्या सुनि परम दीन ह्वै नैन नीर ढरकाए।
बिह्वल तन-मन, चकृत भई सो यह प्रतच्छ सुपनाए।
गदगद कंठ सूर कोसलपुर सोर सुनत दुख पाए ।।१८८।।

रघुनाथ पियारे, आजु रहौ।
चारि जाम बिस्राम हमारैं छिन-छिन मीठे बचन कहौ।
वृथा होहु वर बचन हमारौ कैकइ जीव कलेस सहौ।
आतुर ह्वै अब छाँड़ि अवधपुर, प्रान जिवन कित चलन कहौ।
बिछुरत प्रान पयान करैंगे, रहौ आजु पुनि पंथ गहौ।
अब सूरज दिन दरसन दुरलभ कलित कमल कर कंठ गहौ ।।१८९।।

तुम जानकी जनकपुर जाहु।
कहा आनि हम संग भरमिहौ गहवर बन दुख सिंधु अथाहु।

तजि गृह जनक-राज-भोजन-सुख, कत तनु-ताप, बिपिन फल खाहु।
ग्रीषम कमल-बदन कुम्हिलैहै, तजि सर निकट दूरि कित न्हाहु।
जनि कछु प्रिया सोच मन करिहौ मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु।
तुम घर रहौ सीख मेरी सुनि नाहक बन चलिकै पछिताहु।
हौं पुनि मानि करम कृत रेखा करिहौं ताल-भवन निरबाहु।
सूर सत्य जौ पतिब्रत राखौ, चलौ संग जनि, उतहीं जाहु ॥१६०॥

ऐसी जिय न धरौ रघुराइ।
तुम-सौ प्रभु तजि मो-सी दासी अनत न कहूँ समाइ।
तुम्हरौ रूप अनूप भानु ज्यौं जब नैननि भरि देखौं।
ता छिन हृदय कमल प्रफुलित ह्वै जनम सफल करि लेखौं।
तुम्हरैं चरन कमल सुख-सागर यह ब्रत हौं प्रतिपलिहौं।
सूर सकल सुख छाँड़ि आपनौ बन-बिपदा-सँग चलिहौं ॥१६१॥

तुम लछिमन निज पुरहिं सिधारौ।
बिछुरन-भेंट देहु लघु बंधू जियत न जैहै सूल तुम्हारौ ॥
यह मारग कछु और काज है को जौ याकौ मेटनहारौ।
याकौ कहा परेखौ निरखौ मधु दीजर सरितापति खारौ।
तुम मति करौ अवज्ञा नृप की यह दुख तौ आगे कौ मारौ।
सूर सुमित्रा अंक दीजियौ कौसिल्याहिं प्रनाम हमारौ ॥१६२॥

फिरि-फिरि नृपति चलावत बात।
कहु री ! सुमति कहा तोहिं पलटी, प्रान-जियन कैसैं बन जात !
दै बिरंच, सिर जटा धरैं, द्रुम बसन भस्म सब गात।
हा हा राम लछमन अरु सीता, फल भोजन जु हम्यावैं पात।
बिन रथ सूर, दुसह दुख मारग, बिन पद त्रान चलैं दोउ भ्रात।
इहि बिधि सोच करत अतिहीं नृप जानकि-ओर निरखि बिलखात।
रजनी सुनत सिमिटि सब आप प्रेम सहित धारे अँसुपात।
ता दिन सूर सहर सब पथिक मधुर-सनेह तज्यौ पितु मात ॥१६३॥

आसु रघुनाथ पयानो देत।
विह्वल भए स्रवन सुनि पुरजन, पुत्र पिता को हेत।
ऊँचे चढ़ि दसरथ लोचन भरि सुत-मुख देखे लेत।
रामचंद्र से पुत्र बिना मैं भूँजब क्यों यह खेत।
देखत गमन नैन भरि आए गात गह्यौ ज्यौं केत।
तात-तात कहि बैन उचारत ह्वै गए भूप अचेत।
कटि तट तून हाथ सायक-धनु सीता बंधु समेत।
सूर गमन गह्वर को कीन्हौ जानत पिता अचेत॥१६४॥

नौका हौं नाहीं लै आऊँ।
प्रगट प्रताप चरन को देखौं, ताहि कहाँ पुनि पाऊँ।
कृपासिंधु पै केवट आयौ, कंपत करत सो बात।
चरन परसि पाषान उड़त हैं, कत मेरी उड़ि जात?
जौ यह बधू होइ काहू की दारु स्वरूप धरै।
छूटै देह, जाइ सरिता तजि पग सौं परस करै।
मेरी सकल जीविका यामैं रघुपति मुक्त न कीजै।
सूरजदास चढ़ौ प्रभु पाछैं रेनु पखारन दीजै॥१६५॥

मेरी नौका जनि चढ़ौ त्रिभुवनपति राई।
मो देखत पाहन तरे मेरी काठ की नाई।
मैं खोई ही पार कौं तुम आटि मँगाई।
मेरी जिय यौंही डरै, मति होहि सिलाई।
मैं निरधन किछु धन नहीं, जौ और गढ़ाऊँ।
मो कुटुम्ब याही लग्यौ ऐसी कहँ पाऊँ?
मैं निर्धन, कछु धन नहीं, परिवार घनेरौ।
मेसर डाढ़हिं काटि कै, बाँधौ तुम बेरौ।
बार बार श्रीपति कहैं, धीवर नहिं मानै।
मन प्रतीत नहिं आवई, उड़िबौ ही जानै।

मेरैं ही अवधार है, भली तुम्हैं बताऊँ।
सूरदास की बिनती नीकैं पहुँचाऊँ ॥१९६॥

भली भली सुन्दरि नारि सुहागिनि लागौं तेरैं पाउँ।
किहिं धौं के तुम बीर बटाऊ, कौन तुम्हारौ गाउँ।
उत्तर दिसि इक नगर अजोध्या है सरजू के तीर।
अज कुल बड़े भूप दसरथ सखि बसौ नगर गंभीर।
कौनैं गुन बन चली बधू तुम कहि मोसौं सखि माइ।
गृह घर-द्वार छाँड़ि के सुन्दरि चली पियारे पाउँ।
सासु की सौति सुहागिनि सो सखि, अतिही पिय की प्यारी।
अपने सुत कौ राज दिवायौ हमकौं देस निकारी।
यह बिपरीति सुनी जब सबहीं, नैननि ढारयौ नीर।
आजु सखी बसु भवन हमारैं, सहित दोउ रघुबीर।
बरष चतुर्दस भवन न पैसिहैं आज्ञा दीन्ही माइ।
इनके बचन सत्य करि सजनी बहुरि मिलैंगे आइ।
बिनती बिहँसि सरस मृदु सुंदरि सिय सौं पूछी गाथ।
कौन बरन तुम देवर सखि री, कौन तिहारौ नाथ।
कटि तट पट पीतांबर काछे, धारे धनु-तूनीर।
गौर बरन मेरै देवर री सखि, पिय मम स्याम सरीर।
तीनि बने सोभा त्रिलोक की, छाँड़ि सकल पुरधाम।
सूरदास-प्रभु-रूप चकित भए, पंथ चलत नर बाम ॥१९७॥

कहि धौं सखी बटाऊ को हैं ?

अद्भुत एक सिय सँग सोभित, देखत त्रिभुवन माहिँ।
परम सुसील सुलच्छन जोरी बिधि की रची न होई।
काकी तिनकौ उपमा दीजै, देह धरे धौं कोई।
इनमैं को पति आहि तिहारे, पुरजनि पूछैं आइ।
राजिवनैन मैन की मूरति, नैननि दियौ बताइ।

गईं सकल मिलि संग दूरि लौं, मन न फिरत पुर पास।
सूरदास स्वामी के बिछुरत, भरि भरि लेति उसाँस ॥१९८॥

रामहिं राखौ कोऊ जाइ।
जब लगि भरत अयोध्या आवैं, कहति कौसिल्या माइ।
पठयौ दूत भरत कौं ल्यावन, बचन कह्यौ बिलखाइ।
दसरथ बचन राम बन गवने, यह कहियौ अरथाइ।
आए भरत, दीन ह्वै बोले, कहा कियौ कैकइ माइ?
हम सेवक वै त्रिभुवन के पति, कत स्वान सिंह-बलि खाइ
आजु अजोध्या जल नहिं अँचवौं, मुख नहिं देखौं माइ।
सूरदास राघव बिछुरन तैं मरन भलौ दुख जाइ ॥१९९॥

तैं कैकई कुमंत्र कियौ।
अपने कर करि काल हँकारयौ, हठ करि नृप अपराध लियौ।
श्रीपति चलत रह्यौ कहि कैसैं तेरौ पाहन कठिन हियौ।
मो अपराधी के हित कारन, तैं रामहिं बनबास दियौ।
कौन काज यह राज हमारैं इहिं पावक परि कौन जियौ?
लोटत सूर धरनि दोउ बंधु, मनौ तपत बिष-बिषम पियौ ॥२००

राम जू कहाँ गए री माता?
सूनौ भवन, सिंहासन सूनौ नाहीं दसरथ ताता।
धृग तव जन्म जियन धृग तेरौ कही कपट मुख बाता।
सेवक राज नाथ बन पठए यह कब लिखी बिधाता।
मुख अरबिंद देखि हम जीवत ज्यौं चकोर ससि राता।
सूरदास श्रीरामचंद्र बिनु कहा अजोध्या नाता ॥२०१॥

भरत-मुख निरखि राम बिलखाने।
मुंडित केस सीस, बिहबल दोउ उमँगि कंठ लपटाने।
तात-मरन सुनि स्रवन कृपानिधि धरनि परे मुरझाइ।
मोह मगन लोचन जल धारा बिपति न हृदय समाइ।

लोटति धरनि परी सुनि सीता समुझति नहिं समुझाई।
दारुन दुख दवारि ज्यौं तृन-बन, नाहिंन बुझति बुझाई।
दुरलभ भयौ दरस दसरथ कौ, सो अपराध हमारे।
सूरदास स्वामी करुनामय नैन न जात उघारे॥२०१॥

तुमहिं बिमुख रघुनाथ कौन बिधि जीवत कहा बनै।
चरन-सरोज बिना अवलोके, को सुख धरनि गनै।
हठ करि रहे, चरन नहिं छाँड़े नाथ तजौ निठुराई।
परम दुखी कौसल्या जननी, चलौ सदन रघुराई।
चौदह बरष तात की आज्ञा मोपै मेटि न जाई।
सूर स्वामि की पाँवरि सिर धरि, भरत चले बिलखाई॥२०३

बंधू, करियौ राज सँभारे।
राजनीति अरु गुरु की सेवा गाइ-बिप्र प्रतिपारे।
कौसल्या कैकई सुमित्रा दरसन साँझ सवारे।
गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं परजा-हेतु बिचारे।
भरत गात सीतल ह्वै आयौ, नैन उमँगि जल ढारे।
सूरदास प्रभु दई पाँवरी अवधपुरी पग धारे॥२०४॥

काम बिबस ब्याकुल-उर-अंतर, राच्छसि एक तहाँ चलि आई।
हँसि करि कह्यौ राम सीता सौं विहिं लछिमन के निकट पठाई।
भृकुटी कुटिल अरुन अति लोचन भगिनि-सिरताज-मुख कह्यौ फिराई
री बौरी, सठ भई मदन-बस मेरैं स्याम चरन रघुराई।
बिरह बिथा तन गई लाज छुटि, बारंबार उठै अकुलाई।
रघुपति कह्यौ निर्लज्ज त्रिपर्न तू, मारि राच्छसी यौं तैं आई।
सूरदास प्रभु इक पतिनीव्रत, कटी नाक गई खिसिआई॥२०५॥

राम धनुष अरु सायक साँधे।
सिय हित मृग पाछैं उठि धाए, बलकल बसन, फेंट दृढ़ बाँधे।

नव घन, नील-सरोज बरन बपु बिपुल बाहु केहरि-कंध काँधे।
इंदु-बदन राजीव-नैन बर, सीस जटा सिव-सम सिर बाँधे।
पालत सुव्रत सदारत, मेटत बंध अनेक अवधि पग साधे।
सूर भजन-महिमा दिखरावत, इमि अति सुगम चरन आराधे ।२०६

इहिं बिधि बन बसे रघुराइ।
जासि कै तृन भूमि सोवत द्रुमनि कै फल खाइ।
जगत-जननी करी बारी मृगा चरि चरि जाइ।
कोपि कै प्रभु बान लीन्हौ, तबहिं धनुष चढ़ाइ।
जनक-तनया धरी अगिनि मैं, छाया-रूप बनाइ।
यह न कोऊ भेद जानै बिना श्री रघुराइ।
कह्यौ अनुज सौं रहौ ह्याँ तुम छाँड़ि जनि कहुँ जाइ।
कनक-मृग मारीच मार्यौ, गिर्यौ लखन सुनाइ।
गयौ सौ दै रेख सीता कह्यौ सो कहि नहिं आइ।
तबहिं निसिचर गयौ छल करि, लई सीय चुराइ।
गीध ताकौं देखि धायौ लर्यौ सूर बनाइ।
पंख काटैं गिर्यौ असुर तब गयौ लंका धाइ ॥२०७॥

सीता पुहुप-बाटिका लाई।
बारंबार सराहत तरुवर प्रेम-सहित सींचे रघुराई।
अंकुर मूल भए सी पोपे क्रम-क्रम लगे फूल फल आई।
नाना भाँति भाँति सुंदर मनौ कंचन की है लता बनाई।
मृग-स्वरूप मारीच धर्यौ तब फेरि चल्यौ वा रुख यौं दिखाई।
श्रीरघुनाथ धनुष कर लीन्हौ, लागत बान देव-गति पाई।
हा लछिमन सुनि टेर जानकी, बिकल भई, आतुर उठि धाई।
रेखा खैंचि चारि बंधन मय, हा रघुबीर कहाँ हौ भाई।
रावन तुरत बिभूति लगाए, कहत आइ भिच्छा दै माई।
दीन जानि सुधि आनि भजन की, प्रेम सहित भिच्छा लै आई।

हरि सीता सौं चल्यौ डरत जिय, मानौ रंक महानिधि पाई ।
सूर सीय पतिव्रति चरे कहि, करम-रेख मेटी नहिं जाई ॥२०८॥

सुनौ अनुज इहिं बन इतननि मिलि जानकी प्रिया हरी ।
कछु इक अंगनि की सहिदानी मेरी दृष्टि परी ।
कटि केहरि, कोकिल कल बानी, ससि मुख प्रभा धरी ।
मृग मूसी नैननि की सोभा जाति न गुप्त करी ।
चंपक-बरन, चरन-कर कमलनि, दाड़िम दसन लरी ।
गति मराल अरु बिंब अधर-छबि अहि अनूप कबरी ।
अति करुना रघुनाथ गुसाईं, जुग ज्यौं जाति घरी ।
सूरदास प्रभु प्रिया प्रेम-बस, निज महिमा बिसरी ॥२०९॥

फिरत प्रभु पूछत बन-द्रुम-बेली ।
अहो बंधु, काहूँ अवलोकी इहिं मग बधू अकेली ?
अहो बिहंग पन्नग-नृप, या कंदर के राइ ।
अबकैं मेरी बिपति मिटावौ जानकि देहु बताइ ।
चंपक-पुहुप-बरन-तन-सुंदर, मनौ चित्र अवरेखी ।
हो रघुनाथ निसाचर कैं सँग अबै जात हौं देखी ।
यह सुनि धावत धरनि चरन की प्रतिमा पथ मैं पाई ।
नैन-नीर रघुनाथ सानि सी सिव ज्यौं गात चढ़ाई ।
कहुँ हिय हार, कहूँ कर कंकन कहुँ नूपुर कहुँ चीर ।
सूरदास बन-बन अवलोकत, बिलख बदन रघुबीर ॥२१०॥

तुम लछिमन या कुंज-कुटी मैं देखौ जाइ निहारि ।
कोउ इक जीव नाम मम लै-लै उठत पुकारि-पुकारि ।
इतनी कहत कंध तैं कर गहि लाम्यौ धनुष सँभारि ।
कृपानिधान नाम हित धाए, अपनी बिपति बिसारि ।
अहो बिहंग, कहौ अपनी दुख, पूछत ताहि खरारि ।
किहिं मतिमूढ़ हत्यौ तनु तेरौ, किधौं बिरोधी मारि ?

सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोरयौ निमिष महीं।
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं।
जिन रघुनाथ-हाथ खर-दूषन प्रान हरे सरहीं।
कै रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ जोगिनि दसा गही।
कै रघुनाथ दुखित कानन तैं कै नृप भए रघुकुलहीं।
कै रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकंधर डरहीं।
छाँड़ी नारि बिचारि पवन सुत लंक बाग बसहीं।
कै हौं कुटिल कुचील कुलच्छनि, तजी कंत तबहीं।
सूरदास स्वामी सौं कहियौ अब बिरमाहि नहीं ॥७१९॥

यह गति देखे जात, सँदेसी कैसैं कै जु कहीं ?
सुनु कपि अपने प्रान कौ पहरौ, कब लगि देति रहीं ?
ए अति चपल चल्यौ चाहत हैं करत न कछू बिचार।
कहि धौं प्रान कहाँ लौं राखौं रोकि देह दुख द्वार ?
इतनी बात जनावति तुमसौं, सकुचति हौं हनुमंत।
नाहीं सूर सुन्यौ दुख कबहूँ प्रभु करुनामय कंत ! ॥७२०॥

मैं परदेसिनि नारि अकेली।
बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु पिता न सहेली।
रावन भेष धरयौ तपसी कौ, कत मैं भिच्छा मेली।
अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी राम रेख पग पेली।
बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसैं दव द्रुम-बेली।
सूरदास प्रभु बेगि मिलावौ प्रान जात हैं खेली ॥७२१॥

तू जननी जब दुख जनि मानहि।
रामचंद नहिं दूरि कहूँ पुनि सूझिहु चित चिंता नहिं आनहि।
अबहिं मिलाइ जाउँ सब रिपु हति करपत दी आज्ञा-अपमानहि।
राख्यौ सुकुल सँभारि सान पै कैसैं निफल करौं वा पानहि ?

हैं केतिक ये तिमिर निसाचर उदित एक रघुकुल के भानहिं।
काटन दै दस सीस बीस भुज अपनी छत्र चेड़ जो भानहिं।
देहिं दरस सुभ नैननि कहुँ प्रभु रिपु कौं नासि सहित संतानहिं।
सूर सपथ मोहिं इनहिं विननि मैं लै जु आइहौं कृपानिधानहिं २२२

मंत्रिनि नीकौ मंत्र बिचारयौ
रावन कह्यौ दूत काहू कौ कौन नृपति है मारयौ?
इतनी सुनत बिभीषन बोले बंधु पाइ परौं।
यह अनरीति सुनी नहिं स्रवननि, अब नई कहा करौ?
हरी बिधाता बुद्धि सबनि की, अति आतुर ह्वै आप।
सन अरु सूत चीर-पाटंबर लै लंगूर बँधाए।
तेल तूल पावक पुट भरिकै देखन चाहैं जरौ।
कपि मन कह्यौ, भली मति दीनी रघुपति-काज करौ।
कंचन तोरि मोरि सुख असुरनि ज्वाला प्रगट करी।
रघुपति चरन प्रताप सूर तब, लंका सकल जरी ॥२२३॥

सोचि हिय पवन-पूत पछिताइ।
अगम अपार सिंधु दुस्तर तरि, कहा कियौ मैं आइ?
सेवक कौ सेवापन यहै आज्ञाकारी होइ।
बिन आज्ञा मैं भवन पजारे अपजस करिहैं लोइ।
वै रघुनाथ चतुर कहियत हैं, अंतरजामी सोइ।
या भयभीत देखि लंका मैं सीय जरी मति होइ।
इतनी कहत गगनबानी भई हनू सोच कत करई?
चिरंजीवि सीता तरुवर तर, अटल न कबहूँ टरई।
फिरि अवलोकि सूर सुख लीजै, पुहुमी रोम न परई।
जाकैं हिय अंतर रघुनंदन, सो क्यौं पावक जरई ॥२२४॥

मेरी कैसी बिनती करनी
पहिलैं करि परनाम, पाइनि परि, मनि रघुनाथ हाथ लै धरनी।

श्री रघुनाथ रमनि जग-जननी जनक-नरेस कुमारि।
ताकौ हरन कियौ दसकंधर हौं तिहिं लाग्यौ गुहारि।
इतनी सुनि कृपालु कोमल प्रभु दियौ धनुष कर डारि।
मानौ सूर प्रान सौं रावन गयौ देह कौं हारि ॥२११॥

मिले हनु पूछी प्रभु यह बात।
महा मधुर प्रिय बानी बोलत साखामृग तुम किहिं के तात ?
अंजनि कौ सुत केसरि कैं कुल पवन गवन उपजायौ गात।
तुम को बीर, नीर भरि लोचन, मीन हीन-जल ज्यौं मुरझात ?
दसरथ-सुत कोसलपुर-बासी, त्रिया हरी तातैं अकुलात।
इहिं गिरि पर कपिपति सुनियत है, बालि त्रास कैसैं दिन जात !
महादीन, बलहीन बिकल अति पवन-पूत देखे बिललात।
सूर सुनत सुग्रीव चले उठि, चरन गहे पूछी कुसलात ॥२१२॥

बिछुरी मनौ संग तैं हिरनी।
चितवत रहत चकित चारौं दिसि, उपजी बिरह तन जरनी।
तरुवर-मूल अकेली ठाढ़ी, दुखित राम की घरनी।
बसन कुचील, चिहुर लपटाने, बिपति जाति नहिं बरनी।
लेति उसाँस नयन जल भरि-भरि, धुकि सो परै धरि धरनी।
सूर सोच जिय पोच निसाचर, राम नाम का सरनी ॥२१३॥

सो दिन त्रिजटी, कहु कब ऐहै ?
जा दिन चरनकमल रघुपति के हरषि जानकी हृदय लगैहै।
कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा माइ-माइ कहि मोहिं सुनैहै।
कबहुँक कृपावंत कौसिल्या बधू-बधू कहि मोहिं बुलैहै।
जा दिन कंचनपुर प्रभु ऐहैं बिमल ध्वजा रथ पर फहरैहै।
ता दिन जनम सफल करि मानौं। मेरी हृदय-कालिमा जैहै।
जा दिन राम रावनहिं मारैं ईसहिं लै दस सीस चढ़ैहैं।
ता दिन सूर राम पै सीता सरबस वारि बधाई दैहै ॥२१४॥

मैं तो राम चरन चित दीन्हौं।
मनसा बाचा और कर्मना बहुरि मिलन को आगम कीन्हौं।
डुलै सुमेरु सेष-सिर कंपै पच्छिम उदै करै बासर-पति।
सुनि त्रिजटी तौहूँ नहिं छाड़ौं मधुर मूर्ति रघुनाथ-गात-रति।
सीता करति बिचार मनहिं मन आजु काल्हि कोसलपति आवैं।
सूरदास स्वामी करुनामय सो कृपालु मोहिं क्यौं बिसरावैं ॥२१५॥

जननी हौं अनुचर रघुपति को।
मति माता करि कोप सरापै, नहिं दानव ठग मति को।
आज्ञा होइ देउँ कर-मुँदरी कहौं सँदेसौ पति को।
मति हिय बिकल करौ सिय रघुबर हतिहैं कुल दैयत को।
कहौ तौ लंक उखारि डारि देउँ, जहाँ पिता संपति को।
कहौ तौ मारि-सँहारि निसाचर, रावन करौं अगति को।
सागर-तीर भीर बनचर की, देखि कटक रघुपति को।
अबै मिलाऊँ तुम्हैं सूर प्रभु राम-रोष डर अति को ॥२१६॥

तुम्हैं पहिचानति नाहीं बीर।
इन नैननि कबहूँ नहिं देख्यौ, रामचंद्र के तीर।
लंका बसत दैत्य अरु दानव उनके अगम सरीर।
तोहिं देखि मेरौ जिय डरपत, नैननि आवत नीर।
तब करि काढ़ि अँगूठी दीन्ही, जिहिं जिय उपज्यौ धीर।
सूरदास प्रभु लंका कारन, आए सागर-तीर ॥२१ ॥

बनचर, कौन देस तैं आयौ !
कहाँ वै राम कहाँ वै लछिमन क्यौं करि मुद्रा पायौ ?
हौं हनुमंत राम कौ सेवक तुम सुधि लैन पठायौ।
रावन मारि तुम्हैं लै जातौ रामाज्ञा नहिं पायौ।
तुम जनि डरपौ मेरी माता, राम जोरि दल ल्यायौ।
सूरदास रावन कुल-खोवन सोवत सिंह जगायौ ॥२१८॥

सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोरयौ निमिष महीं।
जिन रघुनाथ फैरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं।
जिन रघुनाथ-हाथ खर-दूषन प्रान हरे सरहीं।
के रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ, जोगिनि दसा गही।
के रघुनाथ दुखित कानन तैं के नृप भए रघुकुलहीं।
कै रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकंधर डरहीं।
छाँड़ी नारि बिचारि पवन सुत लंक बाग बसहीं।
कै हौं कुटिल, कुचील, कुलच्छनि तजी कंत तबहीं।
सूरदास स्वामी सौं कहियौ अब बिरमाहिं नहीं ॥२१६॥

यह गति देखे जात, सँदेसी कैसें कै जु कही ?
सुनु कपि अपने प्रान कौ पहरौ कब लगि देति रही ?
ये अति चपल चल्यौ चाहत हैं करत न कछू बिचार।
कहि धौं प्रान कहाँ लौ राखौं रोकि देह दुख द्वार ?
इतनी बात जनावति तुमसौं, सकुचति हौं हनुमंत।
नाहीं सूर सुन्यौ दुख कबहूँ प्रभु करुनामय कंत ! ॥२२०॥

मैं परदेसिनि नारि अकेली।
बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु पिता न सहेली।
रावन भेष धरयौ तपसी कौ कत मैं भिच्छा मेली।
अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी राम रेख पग पेली।
बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसैं दव द्रुम-बेली।
सूरदास प्रभु बेगि मिलावौ, प्रान जात हैं खेली ॥२१८॥

तू जननी मन दुख जनि मानहि।
रामचंद्र नहिं दूरि कहूँ पुनि भूमिहु चित चिंता नहिं आनहिं।
अबहिं मिलाइ जाउँ सब रिपु हति डरपत हौं आज्ञा-अपमानहिं।
राख्यौ सुफल मँवारि सात दे कैसें निफल करौं था मानहिं ?

ह्वै केतिक यं तिमिर निसाचर उदित एक रघुकुल के मानहिं।
कानन दै दस सीस बीस भुज आपनी कुल येउ ओ जानहिं।
केहिं बरस सुभ नैननि कहुँ प्रभु रिपु को नामि महित मंत्रानहिं।
सूर सपथ मोहिं इनहिं दिननि मैं लै जु आइहौ कृपानिधानहिं २२०

मंत्रिनि नीकी मंत्र बिचारयौ
राजन कहौ, दूत काहू को कौन नपति है मारयौ ?
इतनी सुनत बिभीषन बोले, बंधू पाइ परौ।
यह अनरीति सुनी नहिं स्रवननि अब नई कहा करौ ?
हरी बिधाता बुद्धि सबनि की, अति आतुर ह्वै धाए।
सन अरु सूत चीर पाटंबर लै लंगूर बँधाए।
तैल तूल पावक पुट भरिकै, देखन चहैं जरौ।
कपि मन कह्यौ, भली मति दीन्ही रघुपति-काज करौ।
बंधन तोरि मोरि मुख असुरनि ज्वाला प्रगट करी।
रघुपति चरन प्रताप सूर तब, लंका सकल जरी ॥२२३॥

सोचि जिय पवन-पूत पछिताइ।
अगम अपार सिंधु दुस्तर तरि कहा कियौ मैं आइ ?
सेवक को सेवापन इहै आज्ञाकारी होइ।
बिन आज्ञा मैं भवन पजारे अपजस करिहै लोइ।
वे रघुनाथ चतुर कहियत हैं, अंतरजामी सोइ।
या सपमील देखि लंका मैं सीय जरी मति होइ।
इतनी कहत गगनबानी भई हनू सोच कत करई ?
चिरंजीवि सीता तरुवर तर, अटल न कबहूँ टरई।
फिरि अवलोकि सूर सुख लीन्हौ पुहुमी रोम न परई।
जाकैं हिय अंतर रघुनंदन सो क्यौं पावक जरई ॥२२४॥

मेरी कैंती बिनती करनी
पहिलैं करि परनाम पाइनि परि मनि रघुनाथ हाथ लै धरनी।

मंदाकिनि-तन फटिक-सिला पर, मुख-मुख जोरि तिलक की करनी।
कहा कहौं, कछु कहत न आवै सुमिरत प्रीति होइ उर भरनी।
तुम हनुमंत पवित्र पवन-सुत कहियौ जाइ जोइ मैं बरनी।
सूरदास प्रभु आनि मिलावहु मूरति दुसह दुःख-भय-हरनी।।२२५।

कैसैं पुरी जरी कपिराइ।
बड़े दैत्य कैसैं कै मारे, अंतर आप बचाइ?
प्रगट कपाट बिकट दीन्हे है बहु माया रखवारे।
तैंतिस कोटि देव बस कीन्हे ते तुमसौं क्यौं हारे?
तीन लोक डर जाकै काँपैं, तुम हनुमान न पेखे?
तुम्हरैं क्रोध स्राप सीता कैं, दूरि करत हम देखे।
हौ जगदीस कहा कहौं तुमसौं, तुम बल-तेज मुरारी।
सूरजदास सुनौ सब संतौ अबिगत की गति न्यारी।।२२६।।

जौं प्रभु जू की आयसु पाऊँ।
अबहीं जाइ उपारि लंक गढ़, उदधि-पार लै आऊँ।
अबहीं अंबु द्वीप इहाँ तैं लै लंका पहुँचाऊँ।
सोखि समुद्र उतारौं कपि-दल छिनक बिलंब न लाऊँ।
अब आवैं रघुबीर जोति दल तौ हनुमंत कहाऊँ।
सूरदास सुभ पुरी अजोध्या, राघव सुबस बसाऊँ।।२२७।।

रघुपति बेगि जतन अब कीजै।
बाँधैं सिंधु सकल सैना मिलि आपुन आयसु दीजै।
तब लौं तुरत एक तौ बाँधौ, द्रुम-पाषाननि छाइ।
द्वितीय सिंधु सिय-नैन-नीर ह्वै, जब लौं मिलै न आइ।
यह बिनती हौं करौं कृपानिधि बार बार अकुलाइ।
सूरजदास अकाल प्रलय प्रभु मेटौ दरस दिखाइ।।२२८।।

तब ही नगर अजोध्या जैहौं।
एक बात सुनि निस्चय मेरी राज बिभीषन दैहौं।

कपि-दल जोरि भीर सब सेना, सागर-सेतु बँधैहौं।
काटि दसौं सिर, बीस भुजा तब दसरथ-सुत जु कहैहौं।
छिन इक माहिं लंक गढ़ तोरौं, कंचन-कोट ढहैहौं।
सूरदास प्रभु कहत बिभीषन, रिपु हति सीता लैहौं ॥२२६॥

काहे कौं परतिय हरि आनी ?
यह सीता जो जनक की कन्या रमा आपु रघुनंदन-रानी।
रावन ! मुग्ध करम कौ हीनी, जनक-सुता तैं तिय करि मानी !
जिनकैं क्रोध पुहुमि नभ पलटैं, सूखै सकल सिंधु कर पानी।
मूरख सुख निद्रा नहिं आयी, लैहैं लंक बीस भुज मानी।
सूर न मिटै भाल की रेखा अल्प मृत्यु तुव आइ तुलानी ॥२३०॥

रे पिय लंका बनचर आयौ।
करि परपंच हरी तैं सीता कंचन कोट ढहायौ।
तब तैं मूढ़ मरम नहिं जान्यौ, जब मैं कहि समुझायौ।
बेगि न मिलौ जानकी लै कै, रामचंद्र चढ़ि आयौ।
ऊँचा भुजा टेकि र ऊपर, लछिमन धनुष चढ़ायौ।
गहि पद सूरदास कहै भामिनि राज बिभीषन पायौ ॥ ३१॥

सिंधु-तट उतरे राम उदार।
रोष बिषम कीन्हौ रघुनंदन, सिय की बिपति बिचार।
सागर पर गिरि गिरि पर अंबर कपि घन कैं आकार।
गरज-किलक आघात उठत मनु दामिनि पावक झार।
परत फिराइ पयोनिधि भीतर, सरिता उलटि बहाई।
मनु रघुपति भयभीत सिंधु पत्नी प्यौसार पठाई।
बाला बिरह दुसह सबही कौं जानी राजकुमार।
बानवृष्टि, स्रौनित करि सरिता, ब्यावत लगी न बार।
सुबरन लंक-कलस आभूषन मनि-मुक्ता-गन हार।
सेतु-बंधु करि बिभव ... [illegible]

मूरख रघुपति-सत्रु कहावत ?
जाके नाम, ध्यान, सुमिरन तें कोटि जग्य-फल पावत।
नारदादि सनकादि महामुनि सुमिरत मन-बच ध्यावत।
असुर तिलक प्रह्लाद भक्तवरनि,निगम नेति जस गावत।
जाकी घरनि हरि छल-बल करि लायौ बिलँब न लावत।
दस अरु आठ पदुम बनचर लै लीला सिंधु बँधावत।
जाइ मिलौ कौसल नरेस कौं मन अभिलाष बढ़ावत।
दै सीता अवधेस पाइँ परि रहु लंकेस कहावत।
तू मूरुखौ दससीस बीस भुज मोहिं गुमान दिखावत।
कँध उपारि डारिहै भूतल, सूर सकल सुख पावत ॥१२३॥

रे कपि क्यौं पितु-बैर बिसारयौ ?
तौ समतुल कन्या बिन उपजी, जौ कुल-सत्रु न मारयौ!
ऐसौ सुभट नहीं महिमंडल देख्यौ बालि-समान।
तासौं बैर कियौ मैं हारयौ कीन्ही पैज प्रमान।
ताकौ बध कीन्हौ इहिं रघुपति, तुव देखत विद्यमान।
ताकौं सरन रह्यौ क्यों भावै, सब्द न सुनियै कान।
"रे दसकंध, अंध-मति, मूरख क्यौं भूल्यौ इहिं रूप ?
सूझत नहीं बीसहूँ लोचन परयौ तिमिर कैं कूप!
धन्य पिता जापर परपूरित राघव भुजा अनूप।
वा प्रताप की मधुर बिलोकनि पर वारौं सब भूप"।
"जौ तोहिं नाहिं बाहु बल-पौरुष, अर्ध राज देउँ लंक।
मौ समेत य सकल निसाचर अरत न मानें संक।
जब रथ साजि चढ़ौ रन सन्मुख जीय न आनौं तंक।
राघव सैन समेत सँहारौं, करौं रुधिरमय पंक"।
"श्रीरघुनाथ चरन-व्रत उर धरि क्यौं नहिं लागत पाइ ?
सबके ईस परम करुनामय, सबही कौ सुखदाइ।

तौ जु कहत, लै चलौ जानकी छाँड़ौ सबै ढिठान।
सनमुख होइ सूर के स्वामी, भक्तनि कृपा निधान ॥१३४॥

लंकपति इंद्रजित कौं बुलायौ।
कह्यौ तिहिं जाइ रनभूमि दल साजि कै, कहा भयौ राम कपि
जोरि ल्यायौ।
कोपि अंगद कह्यौ धरौ धर चरन मैं टारि जो सकै कोऊ उठाई।
तौ बिना जुद्ध किये जाहिं रघुबीर फिरि सुनत यह उठे जोधा रिसाइ
रहे पचि हारि, नहिं टारि काऊ सक्यौ, उठ्यौ तब आपु रावन
खिस्याई।
कह्यौ अंगद कहा मम चरन कौं गहत, चरन रघुबीर गहि क्यौं
न जाइ।
सुनत यह सकुचि कियौ गवन निज भवन कौं, बालि-सुतहू तहाँ
तैं सिधायौ।
सूर के प्रभू कौं नाइ सिर यौं कह्यौ बंध दसकंध कौ काल
आयौ ॥१३५॥

रघुपति जौं न इंद्रजित मारौं।
तौ न होउँ चरननि कौ चेरौ जौं न प्रतिज्ञा पारौं।
यह दृढ़ बात जानियै प्रभू जू, एकहिं बान निवारौं।
सपथ राम परताप तिहारैं खंड खंड करि डारौं!
कुंभकरन दससीस बीसभुज दानव-दलहिं बिडारौं।
तबै सूर संधान सफल हौं रिपु कौ सीस उतारौं ॥१३६॥

मेघनाद ब्रह्मा बर पायौ।
आहुति अगिनि जिवाइ संतोषी, निकस्यौ रथ बहु रतन बनायौ।
आयुध धरैं समस्त कवच सजि, गरजि चढ्यौ रन-भूमिहिं आयौ।
मनौ मेघनायक रितु पावस बान-बृष्टि करि सैन कँपायौ।

कीन्हौ कोप कुँवर कौसलपति, पंथ अकास सायकनि छायौ।
हँसि-हँसि नाग-फाँस सर साँधत, बंधु-समेत बँधायौ।
नारद स्वामी कह्यौ निकट ह्वै गरुड़ासन काहैं बिसरायौ?
भयौ कोप दसरथ के सुत कौं सुनि नारद कौ ज्ञान सम्हायौ।
सुमिरन ध्यान जानि कै अपनौ नाग-फाँस तैं सैन छुड़ायौ।
सूर बिमान चढ़े सुरपुर सौं आनँद अभय-निसान बजायौ ॥२४७

रावन चल्यौ गुमान भरयौ।
श्रीरघुनाथ अनाथबंधु सौं सनमुख खेत अर्‌यौ।
कोप करयौ रघुबीर धीर तब, लछिमन पाइ परयौ।
तुम्हरैं तेज प्रताप नाथ जू, मैं कर धनुष धरयौ।
सारथि सहित अस्व बहु मारे, रावन कोप जरयौ।
इंद्रजीत लीन्ही तब सक्ती, देवनि हहा करयौ।
छूटी बिज्जु-रासि वह मानौ, भूतल बंधु परयौ।
करुना करत सूर कौसलपति नैननि नीर ढरयौ ॥२४८॥

निरखि मुख राघव धरत न धीर।
भए अति अरुन बिसाल कमल-दल-लोचन मोचत नीर।
बारह बरष नींद है साधी तातैं बिकल सरीर।
बोलत नहीं मौन कहा साध्यौ बिपति-बँटावन बीर।
दसरथ-मरन हरन सीता कौ रन बैरिनि की भीर।
दूजौ सूर सुमित्रा-सुत बिनु, कौन धरावै धीर? ॥२४९॥

अब हौं कौन कौ मुख हेरौं?
रिपु-सैना-समूह जल उमड्यौ काहि संग लै फेरौं?
दुख-समुद्र जिहिं वार-पार नहिं तामैं नाव चलाई।
केवट थक्यौ रही अधबीचहिं कौन आपदा आइ?
नाहीं भरत-सत्रुघन सुंदर जिनसौं चित्त लगायौ।
बीचहिं भई और की औरै भयौ सत्रु कौ भायौ।

मैं निज प्रान तजौंगी सुनि कपि तजिहिं जानकी सुनिकै।
ह्वै है कहा बिभीषन की गति यहै सोच जिय गुनि कै।
बार बार सिर लै लछिमन कौ, निरखि गोद पर राखै।
सूरदास प्रभु दीन बचन यौं हनूमान सौं भाखै ॥२५०॥

कहाँ गयौ मारुत पुत्र कुमार।
ह्वै अनाथ रघुनाथ पुकारे, संकट मित्र हमार।
इतनी बिपति भरत सुनि पावैं आवैं साजि बरूथ।
कर गहि धनुष जगत कौं मारैं कितिक निसाचर जूथ।
नाहिन और बियौ कोउ समरथ जाहि पठावौं दूत।
को अब ह्वै पारथ बिसरावै बिना पौन के पूत?
इतनौ बचन स्रवन सुनि हरष्यौ फूल्यौ अंग न मात।
लै-लै चरन रेनु निज प्रभु की रिपु कैं स्रोनित न्हात।
अहो पुनीत मीत केसरि सुत तुम हित बंधु हमारे।
जिह्वा रोम-रोम प्रति नाहीं पौरुष गनौं तुम्हारे!
जहाँ जहाँ जिहिं काल सँभारे तहँ-तहँ त्रास निवारे।
सूर सहाइ कियौ बन बसि कै, बन बिपदा दुख टारे ॥२५१॥

रघुपति मन संदेह न कीजै।
मो देखत लछिमन क्यौं मरिहैं मोकौं आज्ञा दीजै।
कहौ तौ सूरज उगन देउँ नहिं, दिसि दिसि बाढ़ै ताम।
कहौ तौ गन समेत ग्रसि खाऊँ, जमपुर जाइ न राम।
कहौ तौ कालहिं खंड-खंड करि टूक टूक करि काटौं।
कहौ तौ मृत्युहिं मारि डारि कै खोदि पतालहिं पाटौं।
कहौ तौ चंद्रहिं लै अकास तें लछिमन मुखहिं निचोरौं।
कहौ तौ पैठि सुधा कैं सागर जल समस्त मैं घोरौं।
श्री रघुबीर, मोसौं जन जाकैं, ताहि कहा सँकराई।
सूरदास मिथ्या नहिं भाषत, मोहिं रघुनाथ-दुहाई ॥ ४ ॥

कही कपि रघुपति कौ संदेस।
कुसल बंधु लछिमन, बैदेही, श्रीपति सकल-नरेस।
जनि पूछौ तुम कुसल नाथ की, सुनौ भरत बलवीर।
बिलखत-बदन दुखित मरे सिया कै, हैं जलनिधि कैं तीर।
बन मैं बसत निसाचर छल करि हरी सिया मम मात।
ता कारन लछिमन सर लाग्यौ भए राम बिनु भ्रात।
यह सुनि कौसिल्या सिर ढोरयौ सबनिपुहुमि तन जोयौ।
त्राहि त्राहि कहि पुत्र-पुत्र कहि, मातु सुमित्रा रोयौ।
धन्य सुपुत्र पिता पन राख्यौ धनि सुबंधु कुल लाज।
सेवक धन्य अंत अवसर जो आवै प्रभु कैं काज।
पुनि धरि धीर कह्यौ धनि लछिमन राम काज जो आवै।
सूर जियै तौ जग जस पावै, मरि सुरलोक सिधावै ॥१४३॥

धनि जननी जो सुभटहिं जावै।
भीर परैं रिपु कौ दल दलि-मलि कौतुक करि दिखरावै।
कौसिल्या सौं कहति सुमित्रा जनि स्वामिनि दुख पावै।
लछिमन जनि हौं भई सपूती, राम काज जो आवै।
जीवै तौ सुख बिलसै जग मैं कीरति लोकनि गावै।
मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै।
लोह गहैं लालच करि जिय कौ औरौ सुभट लजावै।
सूरदास प्रभु प्रीति सत्रु कौं कुसल-क्षेम घर आवै ॥१४४॥

सुनौ कपि कौसिल्या की बात।
इहिं पुर जनि आवहिं मम बत्सल बिनु लछिमन लघु भ्रात।
छाँड़यौ राज-काज माता-हित तुम चरननि चित लाइ।
ताहि बिमुख जीवन धिक रघुपति, कहियौ कपि समुझाइ।
लछिमन सहित कुसल बैदेही आनि राज पुर कीजै।
नातरु सूर सुमित्रा-सुत पर वारि अपुनपौ दीजै ॥१४५॥

बिनती कहियौ जाइ पवनसुत तुम रघुपति के आगे।
या पुर जनि आवहु बिनु लछिमन जननी लाजनि लागे।
मारुतसुतहिं सँदेस सुमित्रा ऐसे कहि समुझायौ।
सेवक जूझि परै रन भीतर ठाकुर तउ घर आवै।
जब तैं तुम गवने कानन कौं भरत भोग सब छाँड़े।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु दुख समूह उर गाड़े ॥५४६॥

हमरे कर बान न लैहौं।
सुनि सुग्रीव प्रतिज्ञा मेरी एकहिं बान असुर सब हैहौं।
सिव-पूजा जिहिं भाँति करी है सोइ पद्धति परतच्छ दिखैहौं।
दैत्य प्रहारि पाप फल प्रेरित सिर माला सिव-सीस चढ़ैहौं।
मनौ तूल-गन परत अगिनि मुख जारि जड़नि जम-पंथ पठैहौं।
करिहौं नाहिं बिलंब कछू अब उठि रावन सन्मुख ह्वै धैहौं।
इमि दमि दुष्ट देव द्विज मोचन लंक बिभीषन तुमकौं दैहौं।
लछिमन सिया समेत सूर कपि सब सुख सहित अजोध्या जैहौं।

रघुपति अपनौ प्रन प्रतिपारयौ।
तोरयौ कोपि प्रबल गढ़ रावन टूक-टूक करि डारयौ।
कहुँ भुज कहुँ धर कहुँ सिर लोटत मानौ मद-मतवारौ।
भभकत तरफत स्रोनित मैं तन नाहीं परत निहारौ।
डोरे बीर सरस सुख-सागर बाँधि उदधि स्रम न्यारौ।
सुर-नर-मुनि सब सुजस बखानत दुष्ट दसासन मारौ।
रावन मरन कुबेर इंद्र-जम महा सुभट पन धारौ।
रह्यौ मांस कौ पिंड प्रान लै गयौ बान अनियारौ।
सब मद पी रहे पाटी-नर कूरहिं काम उमारौ।
सो रावन रघुनाथ छिनक मैं कियौ गीध कौ चारौ।
सिर सँभारि लै गयौ उमापति, रह्यौ रुधिर कौ गारौ।
दियौ बिभीषन राज सूर प्रभु कियौ सुरनि निस्तारौ ॥५४८॥

लछिमन सीता देखी जाइ।
अति कृस दीन छीन तन प्रभु बिन, नैननि नीर बहाइ।
जामवंत सुग्रीव बिभीषन करी दंडवत आइ।
आभूषन बहुमोल पटंबर पहिरौ मातु बनाइ।
बिनु रघुनाथ मोहि सब फीके, आज्ञा मेटि न जाइ।
पुहुप बिमान बैठे बैदेही त्रिभुवन मन पहिराइ।
देखत दरस राम मुख मोरयौ सिया परी मुरझाइ।
सूरदास स्वामी तिहुँ पुर के जग उपहास डराइ॥ ४६॥

लछिमन, रचौ हुतासन भाई।
यह सुनि हनूमान दुख पायौ मोपै लख्यौ न जाई।
आसन एक हुतासन बैठे ज्यौं कुंदन अरुनाई।
जैसें रवि इक पल घन भीतर बिनु मारुत दुरि जाई।
लै उछंग उपसंग हुतासन निहकलंक रघुराई।'
लई बिमान चढ़ाइ जानकी कोटि मदन छबि छाई।
दसरथ कह्यौ देवह भाष्यौ ध्यौम बिमान दिखाई।
सिया राम लै चले अवध कौं सूरदास बलि जाई॥१२०॥

बैठी जननि करति सगुनौती।
लछिमन राम मिलैं अब मोकौं दोउ अमोलक मोती।
इतनी कहत सुकाग उहाँ तैं हरी डार उड़ि बैठ्यौ।
अंचल गाँठि दई, दुख भाज्यौ सुख जु आनि उर पैठ्यौ।
जब लौं हौं जीवौं जीवन भर, सदा नाम तव जपिहौं।
दधि ओदन दौना भरि दैहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं।
अबकैं जौ परचौ करि पावौं अरु देखौं भरि आँखि।
सूरदास सोने कै पानी मढ़ौं चोंच अरु पाँखि॥१२१॥

हमारी जन्मभूमि यह गाउँ।
सुनहु सखा सुग्रीव-बिभीषन अवनि अजोध्या नाउँ।

देखत बन-उपबन-सरिता-सर, परम मनोहर ठाउँ।
अपनी प्रकृति लिए बोलत हौं सुरपुर मैं न रहाउँ।
ह्याँ के बासी अवलोकत हौं, आनँद उर न समाउँ।
सूरदास जौ बिधि न सँकोचै तौ बैकुंठ न जाउँ ॥२५२॥

देखौ कपिराज भरत वै आए।
मम पाँवरी सीस पर जाकैं, कर अँगुरी रघुनाथ बताए।
छीन सरीर बीर के बिछुरैं, राज-भोग चित तैं बिसराए।
तप अरु लघु-दीरघता सेवा, स्वामि-धर्म सब जगहिं सिखाए।
पुहुप बिमान दूरिहीं छाँड़े चपल चरन आवत प्रभु धाए।
आनद-मगन पगनि कैकइ-सुत कनक-दंड ज्यौं गिरत उठाए।
भेंटत आँसु परे पीठि पर बिरह अगिनि मनु जरत बुझाए।
ऐसेहिं मिले सुमित्रा-सुत कौं, गदगद गिरा नैन जल छाए।
जथाजोग भेंटे पुरबासी, गए सूल, सुख सिंधु नहाए।
सिया-राम-लछिमन मुख निरखत सूरदास के नैन सिराए ॥२५३॥

अति सुख कौसिल्या उठि धाई।
उदित बदन मन मुदित सदन तैं, आरति साजि सुमित्रा ल्याई।
जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु, परबस, पसुपति की बहराई।
चली साँझ समुहाइ स्त्रवत थन उमँगि मिलन जननी दोउ आई।
दधि-फल-दूब कनक-कोपर भरि, साजत सौंज बिचित्र बनाई।
अमी-बचन सुनि होत कुलाहल देवनि दिवि दुंदुभी बजाई।
बरन बरन पट परत पाँवड़े, बीथिनि सकल सुगंध सिंचाई।
पुलकित रोम, हरष-गदगद-स्वर, जुबतिनि मंगल-गाथा गाई।
निज मंदिर मैं आनि तिलक दै, द्विज-गन मुदित असीस सुनाई।
सिया-सहित सुख बसौ इहाँ तुम, सूरदास नित उठि बलि जाई।

देखन कौं मंदिर आनि चढ़ी।
रघुपति-पूरनचंद बिलोकत मनु पुर-जलधि-तरंग बढ़ी।

प्रिय-दरसन-प्यासी अति आतुर, निसि बासर गुन-ग्राम रही ।
रही न लोक-लाज मुख निरखत सीस नाइ आसीस लही ।
भई देह जो खेह करम-बस जनु तट गंगा अनल दही ।
सूरदास प्रभु दृष्टि सुधानिधि मानौ फेरि बनाइ गही ॥२५५॥

मनिमय आसन आनि धरे ।
दधि मधु-नीर कनक के कोपर आपुन भरत भरे ।
प्रथम भरत बैठाइ बंधु कौं यह कहि पाइ परे ।
हौं पावौं प्रभु-पाइ पखारन रुचि करि सो पकरे ।
निज कर चरन पखारि प्रेम-रस आनँद आँसु ढरे ।
जनु सीतल सौं तप्त सलिल दै सुखित समीर करे ।
परसत पानि चरन पावन दुख अंग-अंग सकल हरे ।
सूर सहित आमोद चरन-जल लै करि सीस धरे ॥२५६॥

बिनती किहिं बिधि प्रभुहिं सुनाऊँ ।
महाराज रघुबीर धीर कौं समय न कबहूँ पाऊँ ।
जाम रहत जामिनि के बीतें, तिहिं औसर उठि धाऊँ ।
सकुच होत सुकुमार नींद मैं कैसें प्रभुहिं जगाऊँ ।
दिनकर-किरन-उदित ब्रह्मादिक-रुद्रादिक इक ठाऊँ ।
अगनित भीर अमर-मुनिगन की, तिहिं तैं ठौर न पाऊँ ।
उठत सभा दिन मध्य सियापति भीर देखि फिरि आऊँ ।
न्हात-खात सुख करत साहिबी कैसें करि अनखाऊँ ।
रजनी-मुख आवत गुन-गावत नारद तुंबुर नाऊँ ।
तुमही कहौ कृपानिधि रघुपति किहिं गिनती मैं आऊँ ।
एक उपाउ करौं कमलापति, कहौ तौ कहि समुझाऊँ ।
पतित उधारन नाम सूर प्रभु यह रुक्का पहुँचाऊँ ॥२५७॥

## ( घ ) बाल-लीला

हरि-मुख देखि हो बसुदेव।
कोटि-काम-स्वरूप सुंदर, कोउ न जानत भेव।
चारि भुज जिहिं चारि आयुध, निरखि कै न पत्याउ।
अजहुँ मन परतीति नाहीं नंद-घर लै जाउ।
स्वान सूते पहरुवा सब नींद उपजी गेह।
निसि अँधेरी बीजु चमकै सघन बरषै मेह।
बंदि बेरी सबै छूटी, खुले बज्र कपाट।
सीस धरि श्रीकृष्न लीने, चले गोकुल-बाट।
सिंह आगैं, सेष पाछैं, नदी भई भरिपूरि।
नासिका लौं नीर बाढ़यौ पार पैलौ दूरि।
सीस तैं हुंकार कीनी जमुन जान्यौ भेव।
चरन परसत थाह दीन्ही पार गए बसुदेव।
महरि-ढिग उन आइ राखे अमर अति आनंद।
सूरदास बिलास ब्रज-हित प्रगटे आनँद-कंद ॥२४८॥

आनँदे आनँद बढ़यौ अति।
देवनि दिवि दुंदुभी बजाई सुनि मथुरा प्रगटे जादवपति।
बिद्याधर-किंनर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति।
गावत गुन गंधर्व पुलकि तन नाचति सब सुर-नारि रसिक अति।

बरषत सुमन सुदेस सूर सुर जय-जयकार करत, मानत रति ।
सिव-बिरंचि इंद्रादि अमर-मुनि फूले सुख न समात मुदित मति ।

देवकी मन-मन चकित भई ।
देखहु आइ पुत्र-मुख काहे न ऐसी कहुँ देखी न दई ।
सिर पर मुकुट पीत उपरैना भृगु पद उर, भुज चारि धरे ।
पूरब कथा सुनाइ कही हरि तुम माँग्यौ इहिं भेष करे ।
छोरे निगड़ सोआए पहरू, द्वारे कौ कपाट उघरयौ ।
तुरत मोहिं गोकुल पहुँचावहु यह कहिकै सिसु भेष धरयौ ।
तब बसुदेव उठे यह सुनतहिं हरषवंत नँद भवन गए ।
बालक धरि लै सुरदेवी कौ आइ सूर मधुपुरी ठए ।।२६०।।

कहौ पति सौं, उपाइ कछु कीजै ।
जिहिं उपाइ अपनौ यह बालक राखि कंस सौं लीजै ।
मनसा बाचा, कहत कर्मना, नृप कबहूँ न पतीजै ।
बुधि, बल छल कैसेहु करिकै, काढ़ि अनतहीं दीजै ।
नाहिंन इतनौ भाग जो यह रस नित लोचन पुट पीजै ।
सूरदास ऐसे सुत कौ जस, स्रवननि सुनि-सुनि जीजै । ६१।

सुनि देवकी कौ हितू हमारे ।
असुर कंस अपवंस बिनासन, सिर ऊपर बैठे रखवारे ।
ऐसौ को समरथ त्रिभुवन मैं, जो यह बालक नैंकु उबारै ।
खड्ग धरे आवैं दुव देखत आनैं कर छिन माहँ पछारैं ।
यह सुनतहिं अकुलाइ गिरी धर नैन नीर भरि-भरि ढारे ।
दुखित देखि बसुदेव-देवकी प्रगट भए धरि कै भुज चारे ।
बोलि उठे परतिज्ञा करि प्रभु, मातैं डरपै तब मोहिं मारे ।
बाति दुहुनमैं सुनइ पितु-मातहिं सूरज प्रभु नँद-भवन सिधारे ।

भादौं की अधरात अँध्यारी ।
द्वार कपाट कोटि भट रोके दस दिस कंत कंस भय भारी ।

गरजत मेघ, महा डर लागत, बीच बही जमुना जल भारी।
तातैं यह सीस लिये मोरैं क्यौं गुरि है समि मदन ग्वारी।
तब फल कंस रीति रारयौ विय बड़ बारी जिन काहैं न मारी।
कहि काहैं ऐसौ सुत बिछुरै सो कैसैं जीवै महतारी ?
सुनि-सुनि दीन बचन जननी के दीनबंधु भक्तनि भयहारी।
डारे निगड़ कपाट उघारे, सूर सु मथुरा दृष्टि निवारी ॥२६४॥

गोकुल प्रगट भए हरि आइ।
अमर उधारन असुर-संहारन, अंतरजामी त्रिभुवन राइ।
माथैं धरि बसुदेव जु ल्याए, नंद महर घर गए पहुँचाइ।
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, पुलकि अंग उर मैं न समाइ।
गदगद कंठ, बोलि नहिं आवै, हरषवंत ह्वै नंद बुलाइ।
आवहु कंत देव परसन भए पुत्र भयौ मुख देखौ धाइ।
दौरि नंद गए सुत-मुख देख्यौ सो सुख मोपै बरनि न जाइ।
सूरदास पहिलैं ही माँग्यौ, दूध पियावन जसुमति माइ ॥२६५॥

छठी सखी सब मंगल गाइ।
जागु जसोदा तेरैं बालक उपज्यौ कुँवर कन्हाइ।
जो तू रच्यौ-सच्यौ या दिन कौं, सो सब देहि मँगाइ।
देहि दान बंदी जन गुनि-गन, ब्रज-बासिनि पहिराइ।
तब हँसि कहत जसोदा ऐसैं महरहिं लेहु बुलाइ।
प्रगट भयौ पूरब तप कौ फल, सुत मुख देखौ आइ।
आए नंद हँसत तिहिं औसर, आनँद उर न समाइ।
सूरदास ब्रज बासी हरषे गनत न राजा राइ ॥ ६४॥

नंदराइ कैं नवनिधि आइ।
माथैं मुकुट स्रवन मनि कुंडल पीत बसन, भुज चारि सुहाइ।
बाजत ताल मृदंग जंत्र गति चरचि अरगजा अंग चढ़ाई।
अच्छत दूब लिये रिषि ठाढ़े बारनि बंदनवार बँधाई।

निरखत दरस-चही, हिय हरषत, गिरत अंक भरि लेत उठाई।
सूरदास सब मिलत परस्पर, दान देत नहिं नंद अघाई ॥२६६॥

आजु बन कोऊबै जनि जाइ।
सब गाइनि बछरनि समेत लै आनहु चित्र बनाइ।
ढोटा है रे भयौ महर कैं, कहत सुनाइ सुनाइ।
सबहिं घोष मैं भयौ कुलाहल, आनँद उर न समाइ।
कत हौ गहर करत बिन काजैं बेगि चलौ उठि धाइ।
अपने अपने मन कौ चीत्यौ, नैननि देखौ आइ।
एक फिरत-दधि दूध भरत सिर एक रहत गहि पाइ।
एक परस्पर देत बधाई, एक उठत हँसि गाइ।
बालक-बृद्ध तरुन नरनारिनि बढ़यौ चौगुनौ चाइ।
सूरदास सब प्रेम-मगन भए, गनत न राजा-राइ ॥२६७॥

हौ सखि नई चाह इक पाई।
ऐसे दिननि नंद कैं सुनियत उपज्यौ पूत कन्हाई।
बाजत पनव निसान पंचबिधि, रुंज मुरज सहनाई।
महर महरि ब्रज-हाट लुटावत आनँद उर न समाई।
चलौ सखी हमहूँ मिलि जैए, नैंकु करौ चतुराई।
कोउ भूषन पहिरयौ कोउ पहिरति कोउ वैसहिं उठि धाई।
कंचन थार दूब दधि रोचन, गावति चारु बधाई।
भाँति-भाँति बनि चलीं जुबतिजन, उपमा बरनि न जाई।
अमर बिमान चढ़े सुख देखत जै धुनि-सब्द सुनाई।
सूरदास प्रभु भक्त हेत हित, दुष्टनि के दुखदाई ॥२६८॥

सखि री काहैं गहरु लगावति?
सब कोऊ ऐसी सुख सुनिकै, क्यौं नाहिंन उठि धावति।
आजु सौ बात बिधाता कीन्ही मन जो हुती अति भावति।
सुत कौ जन्म जसोदा कैं गृह ता लगि तुम्हैं बुलावति।

कनक थार भरि, दधि-रोचन सौं, बेगि चली मिलि गावति ।
मोपैंहि सुत भयौ नंद-नायक कैं, हौं नाहीं बौरावति ।
आनँद उर अंचल न समावति सीस सुमन बरषावति ।
सूरदास सुनि जहाँ तहाँ तैं आवत सोभा पावति ।।२६९।।

आजु नंद के द्वारैं भीर ।
इक आवत, इक जात बिदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर कैं तीर ।
कोउ केसरि कौ तिलक बनावति कोउ पहिरति कंचुकी सरीर ।
एकनि कौं गौ-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर ।
एकनि कौं भूषन-पाटंबर, एकनि कौं जु देत नग-हीर ।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर ।
एकनि माथैं दूब रोचना एकनि कौं बोधति दै धीर ।
सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य सरीर ।।२७०।।

सोभा-सिंधु न अंत रही री ।
नंद-भवन भरिपूरि उमँगि चलि ब्रज की बीथिनि फिरति बही री ।
देखी जाइ आजु गोकुल मैं घर-घर बेंचति फिरति दही री ।
कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत बिधि कहत न मुख सहसहुँ निबही री ।
जसुमति उदर अगाध उदधि तैं उपजी ऐसी सबनि कही री ।
सूरस्याम प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री ।। ७१।।

(माई) आजु तौ बधाई बाजै मंदिर महर कै,
फूले फिरैं गोपी ग्वाल ठहर ठहर कै ।
फूली फिरैं धेनु धाम फूली गोपी अँग अँग ।
फूले फले तरुवर आनँद लहर कै ।
फूले बंदीजन द्वारे, फूले फूले बंदनवारे,
फूले जहाँ जोइ सोइ गोकुल सहर कै ।
फूले फिरैं जादौकुल आनँद समूल मूल
अंकुरित पुन्य फूले पाछिले पहर कै ।

उमँगी जमुन-जल प्रफुलित कुंज पुंज
गरजत कारे भारे जूथ जलधर के।
नृत्यत मदन फूले, फूली रति अंग अंग
मन के मनोज फूले हलधर बर के।
फूले द्विज संत वेद, मिटि गयौ कंस खेद
गावत बधाई सूर भीतर बाहर के।
फूली है जसोदा रानी सुत जायौ सारँगपानी
भूपति उदार फूले भाग फरे घर के ॥७२॥

जसोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै।
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं बेगहिं आवै तोकौं कान्ह बुलावै।
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि करि करि सैन बतावै।
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरैं गावै।
जो सुख सूर अमर-मुनि दुरलभ सो नँद-भामिनि पावै ॥७३॥

रूप मोहिनी धरि ब्रज आई।
अद्भुत सजि सिंगार मनोहर असुर कंस दै पान पठाई।
कुच बिष बाँटि लगाइ कपट करि बाल घातिनी परम सुहाई।
बैठी हुती जसोदा मंदिर, दुलरावति सुत कुँवर कन्हाई।
प्रगट भई तहँ आइ पूतना, प्रेरित काल अवधि नियराई।
आवत पीढ़ा बैठन दीनी कुसल बूझि अति निकट बुलाई।
पौढ़ाए हरि सुभग पालनैं, नंद घरनि कछु काम सिधाई।
बालक लियौ उछंग दुष्टमति, हरषित अस्तन पान कराई।
बदन निहारि प्रान हरि लीनौ परी राच्छसी जोजन ताइ।
सूरज दै जननी-गति ताकौं, कृपा करी निज धाम पठाई ॥७४॥

नैंकु गोपालहिं मोकौं दै री।
देखौं कमल बदन नीकैं करि, ता पाछैं तू कनियाँ लै री।
अति कोमल कर चरन-सरोरुह, अधर दसन-नासा सोहै री।
लटकन सीस कंठ मनि भ्राजत मनमथ कोटि वारनैं गै री।
बासर निसा बिचारति हौं सखि यह सुख कबहुँ न पायौ मैं री।
निगमनि धन सनकादिक-सरबस बड़े भाग्य पायौ है तैं री।
जाकौ रूप जगत के लोचन कोटि चंद्र-रबि लाजत भै री।
सूरदास बलि जाइ जसोदा गोपिनि प्रान पूतना बैरी ॥ ७५॥

कन्हैया हालरौ हलरोइ।
हौं वारी तव इंदु बदन पर, अति छबि अलग भरोइ।
कमल-नयन कौं कपट किए माई इहिं ब्रज आवै जोइ।
पालागौं बिधि ताहि बकी ज्यौं तू तिहिं तुरत बिगोइ।
सुनि देवता बड़े जग पावन, तू पति या कुल कोइ।
पद पूजिहौं बेगि यह बालक करि दै मोहिं बड़ोइ।
दुतिया के ससि लौं बाढ़ै सिसु, देखै जननि जसोइ।
यह सुख सूरदास कैं नैननि, दिन-दिन दूनौ होइ ॥२७६॥

काग-रूप इक दनुज धर्यौ।
नृप-आयसु लै धरि माथे पर, हरषवंत उर गरब भर्यौ।
कितिक बात प्रभु तुम आयसु तैं यह जानौ मो जात मर्यौ।
इतनी कहि गोकुल उड़ि आयौ, आइ नंद-घर-छाज रह्यौ।
पलना पर पौढ़े हरि देखे तुरत आइ नैननिहिं अर्यौ।
कंठ चापि बहु बार फिरायौ गहि पटक्यौ नृप पास पर्यौ।
तुरत कंस पूछन तिहिं लाग्यौ, क्यौं आयौ नहिं काज सर्यौ।
बीतैं जाम चेति तब भाष्यौ, सुनहु कंस तब आइ सर्यौ।
धरि अवतार महाबल कोऊ एकहिं कर मेरौ गर्ब हर्यौ।
सूरदास प्रभु कंस-निकंदन भक्त-हेत अवतार धर्यौ ॥२७७॥

मथुरापति जिय अतिहिं डरान्यौ।
सभा माँझ असुरनि कै आगैं, सिर धुनि-धुनि पछितान्यौ।
ब्रज-भीतर उपज्यौ मेरौ रिपु, मैं जानी यह बात।
दिनहीं दिन यह बढ़त जात है, मोकौं करिहै घात।
दनुज-सुता पूतना पठाई, छिनकहिं माँझ सँहारी।
बीच मरोरि दियौ कागासुर, मेरैं ढिग फटधरी।
अबहीं तैं यह त्रास करत है, दिन दिन होत प्रकास।
सेनापतिनि सुनाइ बात यह, नृप मन भयौ उदास।
ऐसौ कौन मारिहै ताकौं मोहिं कहै सो आइ।
ताकौं मारि अपुनपौ राखै, सूर प्रगटहिं सो आइ॥७५८॥

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले हरषि-हरषि अपनैं रँग खेलत।
सिव सोचत बिधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़्यौ सागर-जल झेलत।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत।
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित सेष सकुचि सहसौ फन पेलत।
उन ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत॥७५९॥

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत।
नंद घरनि गावति हलरावति पलना पर हरि खेलत।
जे चरनारबिंद श्री भूषन उर तैं नैंकु न टारति।
देखौं धौं का रस चरननि मैं मुख मेलति करि आरति।
जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद।
सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ, तातैं लेत सवाद।
उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ।
सेष सहसफन डोलन लागे हरि पीवत जब पाइ।
बढ़्यौ वृच्छ बट, सुर अकुलाने गगन भयौ उतपात।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात।

करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस ।
सूरदास प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस ॥१८०॥

जसुदा मदन गुपाल सोवावै ।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै ।
असित अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि आवैं ।
जनु रबि गत संकुचित कमल जुग निसि अलि उड़न न पावैं ।
स्वाँस उदर उरसत यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै ।
नाभि-सरोज प्रगट पदमासन उतरि नाल पछितावै ।
कर सिर-तर करि स्याम मनोहर अलक अधिक सोभावै ।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै ॥१८१॥

अजिर प्रभातहिं स्याम कौं, पलिका पौढ़ाए ।
आप चली गृह-काज कौं, तहँ नंद बुलाए ।
निरखि हरषि मुख चूमि कै, मंदिर पग धारी ।
आतुर नंद आए तहाँ जहँ ब्रह्म मुरारी ।
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग-चतुराई ।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई ।
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई ।
निरखि चरित गोपाल के सूरज बलि जाई ॥१८२॥

महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी ।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी ।
एक पाख त्रय-मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई ।
पटकि रान उलटौ पर्‌यौ, मैं करौं बधाई ।
नंद-घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी ।
यह सुख सुनि आईं सबै सूरज बलिहारी ॥१८३॥

जो सुख ब्रज मैं एक घरी ।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं धनि यह घोष-पुरी ।

असुरापति अति अतिहिं गरान्यौ ।
सभा माँझ असुरनि कै आगैं, सिर धुनि-धुनि पछितान्यौ ।
ब्रज-भीतर उपज्यौ मेरौ रिपु, मैं जानी यह बात ।
दिनहीं दिन वह बढ़त जात है, मोकौं धरिहै घात ।
बकुम-सुता पूतना पठाई, छिनकहिं माँझ सँहारी ।
पीछैं मरारि दियौ कागासुर, मेरैं ढिग फटकारी ।
अबहीं तैं यह त्रास करत है, दिन दिन होत प्रकास ।
सेनापतिनि सुनाइ बात यह, नृप मन भयौ उदास ।
ऐसौ कौन, मारिहै ताकौं मोहिं कहौ सो आइ ।
ताकौ मारि अपुनपौ राखै, सूर अबहिं सो आइ ॥ ७८॥

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत ।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले हरषि हरषि अपनैं रँग खेलत ।
सिव सोचत विधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़्यौ सागर-जल झेलत ।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत ।
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सेष सकुचि सहसौ फन पेलत ।
उन ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत ॥ ७९॥

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत ।
नंद घरनि गावति हलरावति, पलना पर हरि खेलत ।
जे चरनारबिंद श्री भूषन, उर तैं नैंकु न टारति ।
देखौं धौं का रस चरननि मैं मुख मेलत करि आरति ।
जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद ।
सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ, तातैं लेत सवाद ।
उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ ।
सेष सहसफन डोलन लागे हरि पीवत जब पाइ ।
बढ़्यौ वृक्ष बट सुर अकुलाने गगन भयौ उतपात ।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात ।

करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस।
सूरदास प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस ॥१८०॥

जसुदा मदन गुपाल सोवावै।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै।
असित अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि आवै।
जनु रबि गत संकुचित कमल जुग निसि अलि उड़न न पावै।
स्वाँस उदर उरसत यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै।
नाभि-सरोज प्रगट पदमासन उतरि नाल पछितावै।
कर सिर-तर करि स्याम मनोहर, अलक अधिक सोभावै।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै ॥१८१॥

अजिर प्रभातहिं स्याम कौं पलिका पौढ़ाए।
आप चली गृह-काज कौं तहँ नंद बुलाए।
निरखि हरषि मुख चूमि कै मंदिर पग धारी।
आतुर नंद आए तहाँ जहँ ब्रह्म मुरारी।
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग चतुराई।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई।
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई।
निरखि चरित गोपाल के, सूरज बलि जाई ॥ ८२॥

महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी।
एक पाख त्रय-मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई।
पटकि रान उलटौ पर्‌यौ, मैं करौं बधाई।
नंद-घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी।
यह सुख सुनि आईं सबै सूरज बलिहारी ॥१८३॥

जो सुख ब्रज मैं एक घरी।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं, धनि यह घोष-पुरी।

अष्टसिद्धि नवनिधि कर जोरे, द्वारैं रहति खरी।
सिव-सनकादि-सुकादि अगोचर, ते अवतरे हरी।
धन्य धन्य बड़भागिनि जसुमति, निगमनि सही परी।
ऐसैं सूरदास के प्रभु कौं लीन्हौ अंक भरी ॥८८४॥

जसुमति भाग सुहागिनी हरि कौं सुत जानै।
मुख-मुख जोरि बत्यावइ, सिसुताई ठानै।
मो निधनी कौ धन रहै किलकत मन मोहन।
बलिहारी छबि पर भई ऐसी बिधि जोहन।
लटकति बेसर जननि की इकटक चख लावै।
फरकत बदन उठाइ कै, मनही मन भावै।
महरि मुदित हित उर भरै यह कहि मैं वारी।
नंद-सुवन के चरित पर, सूरज बलिहारी ॥८८५॥

गोद लिए हरि कौं नँदरानी अस्तन पान करावति है।
बार-बार रोहिनि कौं कहि कहि, पलिका अजिर मँगावति है।
प्रात समय रवि किरनि कोंवरी सो कहि सुतहिं बतावति है।
आउ घाम मेरे लाल कै आँगन, बाल-केलि कौं गावति है।
रुचिर सेज लै गइ मोहन कौं भुजा उछंग सोवावति है।
सूरदास प्रभु सोए कन्हैया, हलरावति मल्हरावति है ॥८८६॥

नान्हरिया गोपाल लाल तू बेगि बड़ौ किन होहि।
इहिं मुख मधुर बचन हँसि कै धौं जननि कहै कब मोहि।
यह लालसा अधिक मेरैं जिय जो जगदीस कराहिं।
मो देखत कान्हर इहिं आँगन, पग द्वै धरनि धराहिं।
खेलहिं हलधर-संग रंग रुचि, नैन निरखि सुख पाऊँ।
छिन-छिन छुधित जानि पय कारन हँसि-हँसि निकट बुलाऊँ।
जाकौ सिव बिरंचि सनकादिक मुनिजन ध्यान न पावै।
सूरदास जसुमति ता सुत-हित, मन अभिलाष बढ़ावै ॥८८७॥

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरौ लाल घुटुरुवनि रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दाँत दूध के देखौं, कब तोतरैं मुख बैन झरै।
कब नंदहिं बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै।
कब मेरौ अँचरा गहि मोहन, जोइ सोइ कहि मोसौं झगरै।
कब धौं तनक-तनक कछु खैहै, अपने कर सौं मुखहिं भरै।
कब हँसि बात कहैगौ मौसौं, जा छबि तैं दुख दूरि हरै।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े, आपु गई कछु काज घरै।
इहिं अंतर अँधवाह उठ्यौ इक, गरजत गगन सहित घहरै।
सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि, जो जहँ-तहँ सब अतिहिं डरै।

अति बिपरीत तृनावर्त आयौ।
बात-चक्र-मिस ब्रज ऊपर परि, नंद-पौरि कैं भीतर धायौ।
पौढ़े स्याम अकेले आँगन, लेत उड़यौ, आकास चढ़ायौ।
अंधाधुंध भयौ सब गोकुल, जो जहँ रह्यौ सो तहीं छपायौ।
जसुमति धाइ आइ जौ देख्यौ, स्याम-स्याम कहि टेर लगायौ।
धावहु नंद गोहारि लगौ किन, तेरौ सुत अँधवाह उड़ायौ।
इहिं अंतर अकास तैं आवत, परबत सम कहि सबनि बतायौ।
मारयौ असुर सिला सौं पटक्यौ, आपु चढ़यौ ता ऊपर आय।
दौरे नंद, जसोदा दौरी, तुरतहिं लै हित कंठ लगायौ।
सूरदास यह कहति जसोदा, मैं जान्यौ बिपिनहिं को मायौ।२८८

उबरयौ स्याम, महरि बड़भागी।
बहुत दूरि तैं आइ परयौ धर, धौं कहुँ चोट न लागी।
रोग लेउँ बलि जाउँ कन्हैया, यह कहि कंठ लगाइ।
तुमहीं हौ ब्रज के जीवन-धन, देखत नैन सिराइ।
भली भई यह महरि जसोदा, छाँड़ि करैयो आनि।
सूर जो काम इनहिं तैं प्यारौ, नैंकहुँ भारि डरानि।

भली भई अबकैं हरि बाँचे, अब लौं सुरति सम्हारि।
सूरदास सिखि कहति ग्वालिनी, मन मैं महरि बिचारि ।२९०

हरि किलकत जसुदा की कनियाँ।
निरखि निरखि मुख कहति लाल सौं मो निधनी के धनियाँ।
अति कोमल तन चितै स्याम कौ बार बार पछितात।
कैसैं बच्यौ, जाउँ बलि तेरी तृनावर्त कैं घात।
ना जानौं धौं कौन पुन्य तैं को करि लेत सहाइ।
वैसौ काम पूतना कीन्हौ, इहिं ऐसौ कियौ आइ।
माता दुखित जानि हरि बिहँसे, नान्ही दँतुलि दिखाइ।
सूरदास प्रभु माता चित तैं दुख डारयौ बिसराइ ॥२९१॥

सुत-मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दँतिया, प्रेममगन तन की सुधि भूली।
बाहिर तैं तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुन्दर सुखदाई।
तनक-तनक सी दूध-दँतुलियाँ, देखौ नैन सफल करौ आई।
आनँद सहित महर तब आए मुख चितवत दोउ नैन अघाई।
सूर स्याम किलकत द्विज देख्यौ मनौ कमल पर बिज्जु जमाई।

हरि किलकत जसुमति की कनियाँ।
मुख मैं तीनि लोक दिखराए चकित भई नँद-रनियाँ।
घर घर हाथ दिवावति डोलति, बाँधति गरैं बघनियाँ।
सूर स्याम की अदभुत लीला नहिं जानत मुनिजनियाँ ॥२९२॥

कान्ह कुँवर की करहु पासनी, कछु दिन घटि षट मास गए।
नंद महर यह सुनि पुलकित जिय, हरि अनप्रासन जोग भए।
बिप्र बुलाइ नाम लै बूझ्यौ रासि सोधि इक सुदिन धरयौ।
आछौ दिन सुनि महरि जसोदा सखिनि बोलि सुभ गान करयौ।
जुवति महरि कौं गारी गावति और महर कौ नाम लिए।
ब्रज घर घर आनंद बढ़यौ अति प्रेम पुलक न समात हिए।

जाकौं नेति-नेति स्रुति गावति ध्यावत सुर-मुनि ध्यान धरे ।
सूरदास तिहिं कौं ब्रज-बनिता, झकझोरति उर अंक भरे ॥७६४॥

आजु भोर तमचुर के रोल ।
गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल धुनि महराने ढोल ।
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ हरषि मँगावत फूल-तमोल ।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल ।
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर तनक चरन, पोंछति पट झोल ।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला अंग अभूषन अँगुरिनि गोल ।
सिर चौतनी, डिठौना दीन्हौ आँखि आँजि पहिराइ निचोल ।
स्याम करत माता सौं झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल ।
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति बरष-दिवस कहि करति कलोल ।
सूर स्याम ब्रज-जन-मोहन बरष-गाँठि कौ डोरा लोल ॥७६५॥

सोभित खात माखन खात ।
अरुन लोचन भौंह टेढ़ी, बार बार जँभात ।
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात ।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत नैन जल भरि आत ।
कबहुँ तोतर बोल बोलत कबहुँ पीवत तात ।
सूर हरि की निरखि सोभा निमिष तजत न मात ॥७६६॥

अरी, मेरे लालन की आजु बरष-गाँठि, सबै
सखिनि कौं बुलाइ मँगल-गान करावौ ।
चंदन आँगन लिपाइ मुतियनि चौकैं पुराइ,
उमँगि अँगनि आनँद सौं तूर बजावौ ।
मेरे कहैं बिप्रनि बुलाइ एक सुभ घरी धराइ
बागे चीरे बनाइ, भूषन पहिरावौ ।
अछत-दूब दल बँधाइ लालन की गाँठि जुराइ,
इहै मोहिं लाहौ नैननि दिखरावौ ।

पँचरँग सारी मँगाइ, बधू जननि पहिराइ,
नाचैं सब उमँगि अंग, आनँद बढ़ावौ।
नँदरानी ग्वारिनि बुलाइ दई रीति करि सुनाइ
बेगि करौ जिन बिलँब काहे लगावौ।
जसुमति तब नँद बुलावति, लाल लिए कनियाँ खिलावति,
अगन धरी आवति पावैं न्हवाइ बनावौ।
सूर स्याम छबि निहारति तन-मन जुवतिजन वारति
अतिहीं सुख पावति, बरष गाँठि जुरावौ ॥२१७॥

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए।
चारु कपोल, लोल लोचन गोरोचन-तिलक दिए।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिं पिए।
कठुला कंठ, वज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख का सत कल्प जिए ॥२१८॥

(गाई) बिहरत गोपाल राइ, मनिमय रचे अँगनाइ,
लरकत परिंगनाइ घुटुरुनि डोलै।
निरखि निरखि अपनौ प्रतिबिंब, हँसत किलकत औ,
पाछैं चितै फेरि फेरि मैया मैया बोलै।
ज्यौं अलिगन सहित बिमल जलज जलहिं धाइ रहै,
कुटिल अलक बदन की छबि अवनी परि लोलै।
सूरदास छबि निहारि, थकित रहीं घोष नारि
तन मन धन देति वारि, बार-बार ओलै ॥२१९॥

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन बिंब पकरिबैं धावत।
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कौं कर सौं पकरन चाहत।
किलकि हँसत राजति द्वै दतियाँ, पुनि पुनि तिहिं अवगाहत।

कनक-भूमि पर कर-पग छाया, यह उपमा इक राजति।
प्रति कर प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति।
बाल दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति।
अँचरा तर लै ढाँकि सूर के प्रभु कौं दूध पियावति ॥१००॥

हरि का बिमल जस गावति गोपँगना।
मनिमय आँगन नंदराइ कौ बाल गोपाल करैं तहँ रंगना।
गिरि गिरि परत घुटुरुवनि टेंगत खेलत हैं दोउ छगना-मगना।
धूसरि धूरि दुहूँ तन मंडित मातु जसोदा लेति उछँगना।
बसुधा त्रिपद करत नहिं आलस तिनहिं कठिन भयौ देहरी उलँघना
सूरदास प्रभु ब्रज-बधु निरखति रुचिर हार हिय सोहत बघना १०१

सिखवति चलन जसोदा मैया।
अरबराइ कर पानि गहावत डगमगाइ धरनी धरै पैया।
कबहुँक सुंदर बदन बिलोकति उर आनँद भरि लेति बलैया।
कबहुँक कुल देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर कन्हैया।
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति इहिं आँगन खेलौ दोउ भैया।
सूरदास स्वामी की लीला अति प्रताप बिलसत नँदरैया ॥१०२

चलि गइ बाल-रूप मुरारि।
पाइ पैंजनि रटति रुन-झुन, नचावति नद-नारि।
कबहुँ हरि कौं लाइ अँगुरी चलन सिखावति ग्वारि।
कबहुँ हृदय लगाइ हित करि, लेति अंचल डारि।
कबहुँ हरि कौं चितै चूमति, कबहुँ गावति गारि।
कबहुँ लै पीछे दुरावति, ह्याँ नहीं बनवारि।
कबहुँ अँग भूषन बनावति, राइ-लोन उतारि।
सूर सुर-नर सबै मोहे, निरखि यह अनुहारि ॥१०३॥

चाहत चलत पग द्वै-द्वै धरनी।
जो मन मैं अभिलाष करति ही सो देखति नँद घरनी।

रुनुक झुनुक नूपुर पग बाजत, धुनि अतिहीं मन-हरनी।
बैठि जात पुनि उठत तुरतहीं सो छबि जाइ न बरनी।
ब्रज-जुवती सब देखि थकित भईं, सुंदरता की सरनी।
चिरजीवहु जसुदा कौ नंदन, सूरदास कौं तरनी ॥२०४।

भीतर तैं बाहर लौं आवत।
घर-आँगन अति चलत सुगम भए, देहरि अँटकावत।
गिरि-गिरि परत, जात नहिं उलँघी अति स्रम होत नँघावत।
अहुँठ पैग बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत।
मनहीं मन बलबीर कहत हैं, ऐसे रंग बनावत।
सूरदास-प्रभु अगनित महिमा, भगतनि कैं मन भावत ॥२०५॥

चलत देखि जसुमति सुख पावै।
ठुमुकि ठुमुकि पग धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावै।
देहरि लौं चलि जात, बहुरि फिरि फिरि इतहीं कौं आवै।
गिरि-गिरि परत बनत नहिं लाँघत सुर-मुनि सोच करावै।
कोटि ब्रह्मंड करत छिन भीतर, हरत बिलंब न लावै।
ताकौं लिए नंद की रानी, नाना खेल खिलावै।
तब जसुमति कर टेकि स्याम कौ, क्रम क्रम करि उतरावै।
सूरदास प्रभु देखि-देखि सुर-नर-मुनि-बुद्धि भुलावै ॥२०६॥

हरि हरि हँसत मेरौ माधैया।
देहरि चढ़त परत गिरि गिरि कर पल्लव गहति जु मैया।
भक्ति-हेत जसुदा के आगैं, धरनी चरन धरैया।
जिनि चरननि छलियौ बलि राजा, नख गंगा जु बहैया।
जिहिं सरूप मोहे ब्रह्मादिक, रबि-ससि कोटि उगैया।
सूरदास तिन प्रभु चरननि की बलि-बलि मैं बलि जैया ॥२०७

रुनुक झुनुक स्याम की पैजनियाँ।
जसुमति-सुत कौं चलन सिखावति, अँगुरी गहि-गहि दोउ जनियाँ

स्याम करन पर पीत अँगुलियाँ, सीस कुलहिया चौतनियाँ।
जाकौ ब्रह्मा पार न पावत ताहि खिलावति ग्वालिनियाँ।
दूरि न जाहु निकटहीं खेलौ मैं बलिहारी रेंगनियाँ।
सूरदास जसुमति बलिहारी, सुतहिं खिलावति लै कनियाँ ॥२०८॥

आँगन स्याम नचावहीं जसुमति नँदरानी।
तारी दै दै गावहीं, मधुरी मृदु बानी।
पाइनि नूपुर बाजई, कटि किंकिनि कूजै।
नान्ही एड़ियनि अरुनता, फल-बिंब न पूजै।
जसुमति गान सुनै स्रवन, तब आपुन गावै।
तारि बजावति देखई पुनि आपु बजावै।
केहरि-नख उर पर रुरै सुठि सोभाकारी।
मनौ स्याम घन मध्य है, नव ससि-उजियारी।
गभुआरे सिर केस हैं, बर घूँघरवारे।
लटकन लटकत भाल पर, बिधु मधि गन तारे।
कठुला कंठ चिबुक-तरैं मुख दसन बिराजैं।
खंजन बिच सुक आनि कै मनु परयौ दुराजैं।
जसुमति सुतहिं नचावई छबि देखति जिय तैं।
सूरदास प्रभु स्याम कौ मुख टरत न हिय तैं ॥२०९॥

जसोदा तेरौ चिरजीवहु गोपाल।
बेगि बढ़ै बल सहित बिरध लट महरि मनोहर बाल।
उपजि परयौ सिसु कर्म-पुन्य-फल, समुद सीप ज्यौं लाल।
सब गोकुल कौ प्रान-जीवन धन, बैरिनि कौ उर साल।
सूर कितौ सुख पावत लोचन, निरखत घुटुरुनि चाल।
न्यारति रज लागै मेरी अँखियनि रोग-दोष-जंजाल ॥२१०॥

जब दधि-मथनी टेकि अरै।
आरि करत मटुकी गहि मोहन बासुकि संभु डरै।

मंदर डरत, सिंधु पुनि काँपत फिरि जनि मथन करै।
प्रलय होइ जनि गहौ मथानी प्रभु मरजाद टरै।
सुर अरु असुर ठाढ़े सब चितवत, नैननि नीर ढरै।
सूरदास मन मुग्ध जसोदा, मुख दधि बिंदु परै ॥२११॥

नंद जू के बारे कान्ह, छाँड़ि दै मथनियाँ।
बार-बार कहति मातु जसुमति नँदरनियाँ।
नैकु रहौ माखन देउँ मेरे प्रान धनियाँ।
आरि जनि करौ बलि-बलि जाउँ हौं निधनियाँ।
जाकौ ध्यान धरैं सबै, सुर-नर-मुनिजनियाँ।
ताकौ नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ।
सेष सहस आनन गुन गावत नहिं बनियाँ।
सूर स्याम देखि सबै भूली गोप-धनियाँ ॥२१२॥

जसुमति दधि मथन करति बैठी घर धाम अजिर,
ठाढ़े हरि हँसत नान्ह दँतियनि छबि छाजै।
चितवत चित लै चुराइ सोभा बरनी न जाइ,
मनु मुनि-मन-हरन काज मोहनि दल साजै।
जननि कहति नाचौ तुम दैहौं नवनीत मोहन,
रुनुक-झुनुक चलत पाँइ, नूपुर धुनि बाजै।
गावत गुन सूरदास बढ़यौ जस भुव अकास,
नाचत त्रैलोकनाथ माखन के काजै ॥२१३।

(माधव) तनक सौ बदन तनक से चरन-भुज
तनक से कर पर तनक सौ माखन।
तनक मी बात कहै तनक तनकि रहै,
तनक मौं रीझि रहै तनक से साधन।
तनक कपोल, तन तनक सी दँतुली,
तनक हँसनि पर दरत सबनि मन।

तनकहिं तनक जु सूर निरट आवै
तनक कृपा कै दीजै तनकहिं सरन ॥ १४॥

छोटी-छोटी गोड़ियाँ अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-ज्योति, मोती मानौ कमल-दलनि पर।
ललित आँगन खेलै, ठुमुकि-ठुमुकि डोलै,
झुनुक-झुनुक बोलै पैंजनी मृदु मुखर।
किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि
मृदु कर कमलनि पहुँची रुचिर वर।
पियरी पिछौरी झीनी और उपमा न भीनी,
बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारौ बारि-धर।
उर बघ-नहाँ कंठ कठुला, झँडूले बार
बेनी लटकन मसि बुंदा मुनि-मनहर।
अंजन रंजित नैन, चितवनि चित चोरै,
मुख-सोभा पर वारौं अमित असम सर।
चुटकी बजावति नचावति जसोदा रानी,
बाल-केलि गावति मल्हावति सुप्रेम भर।
किलकि-किलकि हँसै द्वै-द्वै दँतुरियाँ लसैं
सूरदास मन बसैं तोतरे बचन वर ॥११५॥

कहन लगे मोहन मैया-मैया।
नंद महर सौं बाबा-बाबा अरु हलधर सौं भैया।
ऊँचे चढ़ि चढ़ि कहति जसोदा लै-लै नाम कन्हैया।
दूरि खेलन जनि जाहु लला रे मारैगी काहु की गैया।
गोपी-ग्वाल करत कौतूहल घर घर बजति बधैया।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं चरननि की बलि जैया ॥११६॥

माखन खात हँसत किलकत हरि, पकरि स्वच्छ घट देख्यौ।
निज प्रतिबिंब निरखि रिस मानत जानत आन परेख्यौ।

मन मैं माप करत, कछु बोलत, नंद बाबा पै आयौ।
या घट मैं काहू कै लरिका, मेरौ माखन खायौ।
महर कंठ लावत मुख पोंछत चूमत तिहिं ठाँ आयौ।
हिरदै दिए लख्यौ वा सुत कौं, तातैं अधिक रिसायौ।
कह्यौ जाइ जसुमति सौं ततछन, मैं जननी सुत तेरौ।
आजु नंद सुत और कियौ, कछु कियौ न आदर मेरौ।
जसुमति बाल बिनोद जानि जिय उहीं ठौर लै आई।
दोउ कर पकरि डुलावन लागी घट मैं नहिं छबि पाई।
कुँवर हँस्यौ आनंद प्रेम बस सुख पायौ नँदरानी।
सूरज प्रभु की अद्भुत लीला जिन जानी तिन जानी॥११७॥

बाल गुपाल खेलौ मेरे तात।
बलि-बलि जाउँ मुखारबिंद की अमिय बचन बोलौ तुतरात।
दुहुँ कर माट गह्यौ नँदनंदन छिटकि बूँद-दधि परत अघात।
मानौ गज-मुक्ता मरकत पर सोभित सुभग साँवरे गात।
जननी पै माँगत जग-जीवन, दै माखन-रोटी उठि प्रात।
लोटत सूर स्याम पुहुमी पर चारि पदारथ जाकैं हाथ॥११८॥

पलना झूलौ मेरे लाल पियारे।
सुसुकनि की बारी हौं बलि बलि हठ न करहु तुम नंद दुलारे।
काजर हाथ भरौ जनि मोहन ह्वै हैं नैना अति रतनारे।
सिर कुलही पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नंद बबा रे।
देखत यह बिनोद धरनीधर, मात पिता बलभद्र ददा रे।
सुर-नर-मुनि कौतूहल भूले देखत सूर सबै जु कहा रे॥११९॥

क्रीड़त प्रात समय दोउ बीर।
माखन माँगत बात न मानत, झँखत जसोदा जननी-तीर।
जननी मधि सनमुख संकर्षन खैंचत कान्ह खस्यौ सिर चीर।
मनहुँ सरस्वति संग उभय दुज, कल मराल अरु नील कँठीर।

सुँदर स्याम गही कबरी कर, मुक्ता माल गही बलबीर।
सूरज भए ढोउ अप अपनी मानहुँ लेत निबेरे सीर ॥१२०॥

गोपालराइ दधि माँगत अरु रोटी।
माखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक सुकोमल मोटी।
कत हौ आरि करत मेरे मोहन तुम आँगन मैं लोटी?
जो चाहौ सौ लेहु तुरतहीं छाँड़ौ यह मति खोटी।
करि मनुहारि कलेऊ दीन्हौ मुख चुपरयौ अरु चोटी।
सूरदास कौ ठाकुर ठाढ़ौ हाथ लकुटिया छोटी ॥१२१॥

कजरी कौ पय पियहु लाल जासौं तेरी बेनि बढ़ै।
जैसैं देखि और ब्रज बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै।
यह सुनि कै हरि पीवन लागे ज्यौं त्यौं लयौ लड़ै।
अँचवत पय तातौ जब लाग्यौ रोवत जीभि डढ़ै।
पुनि पीवत ही कच टकटोरत झूठहिं जननि रढ़ै।
सूर निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै ।१२२।

मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी?
किती बार मोहिं दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं ह्वै है लाँबी-मोटी।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै नागिनि सी भुइँ लोटी।
काचौ दूध पियावति पचि पचि देति न माखन-रोटी।
सूरज चिरजीवौ दोउ मैया हरि-हलधर की जोटी ॥१२३॥

मैया मोहिं बड़ौ करि लै री।
दूध-दही घृत-माखन-मेवा जो माँगौं सो दै री।
कछू हौंस राखै जनि मेरी, जोइ-जोइ मोहिं रुचै री।
होउँ बेगि मैं सबल सबनि मैं सदा रहौं निरभै री।
रंगभूमि मैं कंस पछारौं घीसि बहाऊँ बैरी।
सूरदास स्वामी की लीला मथुरा राखौं जै री ॥१२४॥

हरि अपनैं आँगन कछु गावत ।
तनक-तनक चरननि सौं नाचत, मनहीं मनहिं रिझावत ।
बाँह उठाइ काजरी धौरी गैयनि टेरि बुलावत ।
कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत ।
माखन तनक आपनैं कर लै, तनक बदन मैं नावत ।
कबहुँक चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए खवावत ।
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढ़ावत ।
सूर स्याम के बाल चरित नित नितही देखत भावत ॥१२५॥

बलि बलि जाउँ मधुर सुर गावहु ।
अबकी बार मेरे कुँवर कन्हैया नंदहि नाचि दिखावहु ।
तारी देहु आपने कर की परम प्रीति उपजावहु ।
आन जंतु-धुनि सुनि कत डरपत मो भुज कंठ लगावहु ।
जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु ।
बाँह उचाइ कालिह की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु ।
नाचहु नैंकु, जाउँ बलि तेरी मेरी साध पुरावहु ।
रतन-जटित किंकिनि पग-नूपुर, अपनैं रंग बजावहु ।
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु ।
सूर स्याम मेरे उर तैं कहुँ टारे नैंकु न भावहु ॥१२६॥

कान्ह कुँवर की कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की ।
बिधि बिहँसत,हरि हँसत हेरि हरि,जसुमति की धुकधुकी सु उर की
रोचन भरि लै देत सीक सौं, स्रवन निकट अतिही चातुर की ।
कंचन के द्वै दुर मँगाइ लिए कहौ कहा छेदनि आतुर की ।
लोचन भरि-भरि दोऊ माता कनछेदन देखत जिय मुरकी ।
रोवत देखि जननि अकुलानी, दियौ तुरत नौआ कौं घुरकी ।
हँसत नंद, गोपी सब बिहँसी, झमकि चली सब भीतर दुरकी ।
सूरदास नँद करत बधाई, अति आनंद बाल ब्रज-पुर की ॥१२७॥

जसुमति जबहिं कह्यौ अन्हवावन रोइ गए हरि लोटत री।
तेल उबटनौ लै आगैं धरि, लालहिं चोटत-पोटत री।
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन कत रोवत बिनु काजैं री।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कै उबटन तेल समाजैं री।
महरि बहुत बिनती करि राखति मानत नहीं कन्हैया री।
सूर स्याम अतिहीं बिरुझाने, सुर-मुनि अंत न पैया री ॥१९८॥

देखि माई हरि जू की लोटनि।
यह छबि निरखि रही नँदरानी अँसुवा ढरि-ढरि परत करोटनि।
परसत आनन मनु रवि कुंडल अंबुज स्रवत सीप-सुत जोटनि।
चंचल अधर चरन-कर चंचल मंचल अंचल गहत मचोटनि।
भेंटि छुड़ाइ महरि कर सौं कर दूरि भई रहसति दुरि ओटनि।
सूर निरखि मुसुकाइ जसोदा मधुर-मधुर बोलति मुख होटनि ॥

ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैं हरिहिं लिए चंदा दिखरावति।
रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी देखौ धौं भरि नैन जुड़ावत।
चितै रहे तब आपुन ससि-तन अपने कर लै-लै जु बतावत।
मीठौ लगत किधौं यह खाटौ देखत अति सुन्दर मन भावत।
मनहीं मन हरि बुद्धि करत हैं माता सौं कहि ताहि मँगावत।
लागी भूख चंद मैं खैहौं देहि देहि रिस करि बिरुझावत।
जसुमति कहति कहा मैं कीनौ, रोवत मोहन, अति दुख पावति।
सूर स्याम कौं जसुमति बोधति गगन चिरैया उड़त दिखावति ॥

( बाढ़ै मेरे ) लाल हो ऐसी आरि न कीजै।
मधु मेवा पकवान मिठाई जोइ भावै सोइ लीजै।
सद माखन घृत दह्यौ सजायौ, अरु मीठौ पय पीजै।
पालागौं हठ अधिक करौ जनि, अति रिस तैं तन छीजै।
आन बतावति, आन दिखावति बालक तउ न पतीजै।
खसि-खसि परत कान्ह कनियाँ तैं, सुसुकि-सुसुकि मन खीजै।

जल-पुट आनि धर्यौ आँगन मैं, मोहन नैंकु तौ लीजै।
सूर स्याम हठि चंदहि माँगै, सु तौ कहाँ तैं दीजै ॥१२१॥

( मेरी माई ) ऐसौ हठी बाल गोविंदा।
अपने कर गहि गगन बतावत, खेलन कौं माँगै चंदा।
बासन मैं जल धर्यौ जसोदा, हरि कौं आनि दिखावै।
रुदन करत, ढूँढ़त नहिं पावत, चंद धरनि क्यौं आवै।
मधु मेवा पकवान मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना।
चकई-डोरि पाटि के लटकन, लेहु मेरे लाल खिलौना।
संत-उबारन असुर-सँहारन, दूरि करन दुख-दंदा।
सूरदास बलि गई जसोदा, उपज्यौ कंस निकंदा ॥१२२॥

मैया मैं तौ चंद-खिलौना लैहौं।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं, तेरी गोद न ऐहौं।
सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं।
ह्वैहौं पूत नंद बाबा कौ, तेरौ सुत न कहैहौं।
आगैं आउ, बात सुनि मेरी, बलदेवहि न जनैहौं।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं।
तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं।
सूरदास ह्वै कुटिल बराती, गीत सुमंगल गैहौं ॥१२३॥

लै लै मोहन, चंदा लै।
कमल-नैन बलि जाउँ सुचित ह्वै, नीचैं नैंकु चितै।
जा कारन तैं सुनि सुत सुंदर, कीन्ही इती अरै।
सोइ सुधाकर देखि कन्हैया, भाजन माहिं परै।
नभ तैं निकट आनि राख्यौ है, जल-पुट जतन जुगै।
लै अपनै कर काढ़ि चंद कौं, जो भावै सो कै।
गगन-मँडल तैं गहि आन्यौ है, पंछी एक पठै।
सूरदास प्रभु इती बात कौं, कत मेरौ लाल हठै ॥१२४॥

जसुमति लै पलिका पौढ़ावति।
मेरी आजु अतिहिं बिरुझानी, यह कहि कहि मधुरैं सुर गावति।
पौढ़ि गईं हरुएँ करि आपुन अंग मोरि तब हरि जँभुआने।
कर सौं ठोंकि सुतहिं दुलरावति, चटपटाइ बैठे अतुराने।
पौढ़ौ लाल कथा इक कहिहौं, अति मीठी, स्रवननि कौं प्यारी।
यह सुनि सूर स्याम मन हरषे, पौढ़ि गए हँसि देत हुँकारी॥२२४॥

सुनि सुत, एक कथा कहौं प्यारी।
कमल-नैन मन आनँद उपज्यौ चतुर सिरोमनि देत हुँकारी।
दसरथ नृपति हुतौ रघुबंसी, ताकैं प्रगट भए सुत चारी।
तिनमैं मुख्य राम जो कहियत जनक-सुता ताकी बर नारी।
तात-बचन लगि राज तज्यौ तिन अनुज घरनि सँग गए बनचारी
धावत कनक-मृगा के पाछैं राजिवलोचन परम उदारी।
रावन हरन सिया कौ कीन्हौं सुनि नँदनंदन नींद निवारी।
चाप चाप करि उठे सूर प्रभु लछिमन देहु, जननि भ्रम भारी।
जसुमति मन-मन यहै बिचारति।
झझकि उठ्यौ सोवत हरि अबहीं कछु पढ़ि-पढ़ि तन-दोष निवारति।
लोचन मैं काहु डीठ लगाई, लै लै राइ लौन उतारति।
मौंर्हि तैं अबहीं पिरझानी, चंदहिं देति कही कवि भारति।
बार-बार कुलदेव मनावति, दोउ कर जोरि सिरहिं लै धारति।
सूरदास जसुमति नँदरानी, निरखि बदन, त्रय ताप बिसारति।२२७।

जागिए, ब्रजराज कुँवर, कमल-कुसुम फूले।
कुमुद-बृन्द सँकुचित भए भृंग लता भूले।
तमचुर खग-रोर सुनहु, बोलत बनराई।
रांभति गौ खरिकनि मैं बछरा हित धाई।
बिधु मलीन रवि प्रकास गावत नर नारी।
सूर स्याम प्रात उठौ अंबुज कर धारी॥२२८॥

प्रात भयौ जागौ गोपाल।
नवल सुंदरी आई बोलति तुमहिं सबै ब्रजबाल।
प्रगट्यौ भानु, मंद भयौ उड़पति फूले तरुन तमाल।
दरसन कौं ठाढ़ी ब्रजवनिता गूँथि कुसुम बनमाल।
मुखहिं धोइ सुंदर बलिहारी, करहु कलेऊ लाल।
सूरदास प्रभु आनँद के निधि अंबुज-नैन बिसाल ॥२३९॥

जागौ जागौ हो गोपाल।
नाहिंन इतौ सोइयत सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल।
फिरि-फिर जात निरखि मुख छिन छिन सब गोपनि के बाल।
बिन बिकसे कल कमल कोष तैं मनु मधुपनि की माल।
जौ तुम मोहिं न पत्याहु सूर प्रभु, सुंदर स्याम तमाल।
तौ तुमहीं देखौ आपुन तजि निद्रा नैन बिसाल ॥२४०॥

खेलत स्याम ग्वालनि संग।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा करत नाना रंग।
हाथ तारी देत भाजत सबै करि करि होड़।
बरजै हलधर स्याम तुम जनि, चोट लागै गोड़।
तब कह्यौ मैं दौरि जानत बहुत बल मो गात।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात।
उठे बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा धरयौ स्याम हँकारि।
जानिकै मैं रह्यौ ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहिं।
सूर हरि खीजत सखा सौं मनहिं कीन्हौ कोह ॥२४१॥

सखा कहत हैं, स्याम खिसाने।
आपुहि आपु बलकि भए ठाढ़े अब तुम कहा रिसाने ?
बीचहिं बोलि उठे हलधर तब, याके माइ न बाप।
हारि-जीति कछु नैंकु न समुझत, लरिकनि लावत पाप।

आपुन हारि सखनि सौं झगरत, यह कहि दियौ पठाइ।
सूर स्याम उठि चले रोइ कै, जननी पूछति धाइ ॥२४७॥

मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझायौ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तोहिं जसुमति कब जायौ ?
कहा करौं इहि रिस के मारैं खेलन हौं नहिं जात।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात।
गोरे नंद जसोदा गोरी, तू कत स्यामल सरीर।
चुटकी दै-दै हँसत ग्वाल सब, सिखै देत बलबीर।
तू मोहीं कौं मारन सीखी, दाउहिं कबहुँ न खीझै।
मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै।
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।
सूर स्याम मोहिं गोधन की सौं, हौं माता तू पूत ॥२४८

मोहन, मानि मनायौ मेरौ।
हौं बलिहारी नंदनंदन की, नैंकु इतै हँसि हेरौ।
कारौ कहि-कहि तोहिं खिझावत, बरजत खरौ अनेरौ।
इंद्रनील मनि तैं तन सुंदर, कहा कहै बल चेरौ।
न्यारौ जूथ हाँकि लै अपनौ, न्यारी गाइ निबेरौ।
मेरौ सुत सरदार सबनि कौ, बहुतै कान्ह बड़ेरौ।
बन मैं जाइ करौ कौतूहल, यह अपनौ है खेरौ।
सूरदास द्वारैं गावत है, बिमल-बिमल जस तेरौ ॥२४९॥

खेलन अब मेरी जाइ बलैया।
जबहिं मोहिं देखत लरिकनि सँग, तबहिं खिजत बल भैया।
मोसौं कहत तात बसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया।
मोल लियौ कछु दै करि तिनकौं, करि-करि जतन बढ़ैया।
अब बाबा कहि कहत नंद सौं, जसुमति सौं कहै मैया।
ऐसैं कहि सब मोहिं खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया।

पाछैं नंद सुनत हैं ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैया।
सूर नंद बलरामहिं घिरयौ, तब मन हरष कन्हैया ॥२४४॥

खेलन कौं हरि दूरि गयौ री।
संग-संग धावत डोलत हैं, कह धौं बहुत अबेर भयौ री।
पलक ओट भावत नहिं मोकौं, कहा कहौं तोहि बात।
नंदहिं तात-तात कहि बोलत, मोहिं कहत हैं मात।
इतनी कहत स्यामघन आए ग्वाल सखा सब चीन्हें।
दौरि जाइ उर लाइ सूर प्रभु हरषि जसोदा लीन्हें ॥२४६॥

खेलन दूरि जात कत कान्हा?
आजु सुन्यौ बन हाऊ आयौ तुम नहिं जानत नान्हा।
इक लरिका अबहीं भजि आयौ रोवत देख्यौ ताहि।
कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि।
चलौ न बेगि सवारैं जैये भाजि आपनें धाम।
सूर स्याम यह बात सुनत ही बोलि लिए बलराम ॥२४७॥

जसुमति कान्हहिं यहै सिखावति।
सुनहु स्याम अब बड़े भये तुम, कहि स्तन पान छुड़ावति।
ब्रज-लरिका तोहिं पीवत देखत हँसत लाज नहिं आवति।
जैहैं बिगर दाँत ये आछे तातैं कहि समुझावति।
अजहूँ छाँड़ि कह्यौ करि मेरौ, ऐसी बात न भावति।
सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहिं लुकावत ॥२४८॥

नंद बुलावत हैं गोपाल।
आवहु बेगि बलैयाँ लेउँ हौं सुंदर नैन बिसाल।
परस्यौ थार धर्यौ मग जोवत बोलत बचन रसाल।
भात सिरात, तात दुख पावत, बेगि चलौ मेरे लाल।
हौं वारी नान्हे पाइन की, दौरि दिखावहु चाल।
छाँड़ि देहु तुम लाल अटपटी, यह गति-मंद-मराल।

सो राजा जो अगमन पहुँचै, सूर सु भवन उताल।
जो जैहैं बलदेव पहिलैं ही, तौ हँसिहैं सब ग्वाल ॥२४९॥

जेंवत कान्ह नंद इकठौरे।
कछुक खात लपटात दोउ कर बाल-केलि अति भोरे।
बरा कौर मेलत मुख भीतर, मिरिच दसन टकटौरे।
तीछन लगी नैन भरि आए, रोवत बाहर दौरे।
फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी लिए लगाइ अँकोरे।
सूर स्याम कौं मधुर कौर दै कीन्हें तात निहोरे ॥२५०॥

जेंवत स्याम नंद की कनिया।
कछुक खात कछु धरनि गिरावत छबि निरखति नँद-रनिया।
बरी बरा बेसन बहु भाँतिनि, व्यंजन बिविध, अगनिया।
डारत खात लेत अपनैं कर, रुचि मानत दधि-दोनियाँ।
मिस्री दधि माखन मिस्रित करि, मुख नावत छबि धनिया।
आपुन खात, नंद-मुख नावत सो छबि कहत न बनिया।
जो रस नंद जसोदा बिलसत सो नहिं तिहूँ भुवनिया।
भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ, माँगत सूर जुठनिया ॥२५१॥

बोलि लेहु हलधर भैया कौं।
मेरे आगैं खेल करौ कछु, सुख दीजै मैया कौं।
मैं मूँदौं हरि आँखि तुम्हारी, बालक रहैं लुकाई।
हरषि स्याम सब सखा बुलाए खेलन आँखि मुँदाई।
हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै हरि कह्यौ मातु जसोदा।
सूर स्याम लिए जननि खिलावति, हरष सहित मन-मोदा २५२

खेलत बनै घोष निकास।
सुनहु स्याम चतुर सिरोमनि, इहाँ है घर पास।
कान्ह हलधर बीर दोऊ, भुजा बल अति जोर।
सुबल श्रीदामा सुदामा वै भए इक ओर।

और सखा बँटाइ लीन्हे, गोप-बालक-वृंद।
चले ब्रज की खोरि खेलत अति उमँगि नँद-नंद।
बटा धरनी डारि दीनौ लै चले ढरकाइ।
आपु अपनी घात निरखत, खेल जम्यौ बनाइ।
सखा जीतत स्याम जाने तब करी कछु पेल।
सूरदास कहत श्रीदामा कौन ऐसी खेल ॥२४३॥

खेलत मैं को काकौ गुसैयाँ।
हरि हारे, जीते श्रीदामा, बरबस ही कत करत रिसैयाँ।
जाति-पाँति हमतैं बड़ नाहीं, नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातैं हैं कछु अधिक तुम्हारैं गैयाँ।
रूठहि करै तासौं को खेलै, रहे बैठि जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ।
सूरदास प्रभु खेल्योइ चाहत, दाउँ दियौ करि नंद-दुहैया ॥२४४

आँगन मैं हरि सोइ गए री।
दोउ जननी मिलि कै हरुऐं करि, सेज सहित तब भवन लए री।
नैंकु नहीं घर मैं बैठत हैं खेलहि के अब रंग रए री।
इहिं बिधि स्याम कबहुँ नहिं सोए बहुत नींद के बसहिं भए री।
कहति रोहिनी सोवन देहु न, खेलत दौरत हारि गए री।
सूरदास प्रभु कौ निरखति हरषति जिय नित नेह नए री ॥२४५॥

मोहन काहैं न उगिलौ माटी।
बार-बार अनरुचि उपजावति, महरि हाथ लिए साँटी।
महतारी सौं मानत नाहीं कपट-चतुरई ठाटी।
बदन उघारि दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी।
बड़ी बार भई लोचन उघरे भरम-जवनिका फाटी।
सूर निरखि नँदरानि भ्रमित भई, कहति न मीठी-खाटी ॥२४६

नंदहि कहति जसोदा रानी।
माटी कै मिस मुख दिखरायौ तिहूँ लोक रजधानी।

स्वर्ग, पताल, धरनि, बन, पर्बत बदन माँझ रहे आनी।
नदी सुमेर देखि चकित भई, याकी अकथ कहानी।
चितै रहे तब नंद घरनि-मुख मन-मन करत बिनानी।
सूरदास तब कहति जसोदा गर्ग कही यह बानी ॥२५०॥

कहत नंद जसुमति सौं बात।
कहा जानिये कह तैं देख्यौ मेरैं कान्ह रिसात।
पाँच बरष को मेरौ नन्हैया अचरज तेरी बात।
बिनहीं काज साँटि लै धावति ता पाछैं बिललात।
कुसल रहैं बलराम स्याम दोउ, खेलत-खात अन्हात।
सूर स्याम कौं कहा लगावति, बालक कोमल गात ॥२५८॥

देखी री, जसुमति बौरानी।
घर-घर हाथ दिवावति डोलति गोद लिए गोपाल बिनानी।
जानत नाहिं, जगतगुरु माधौ, इहिं आए आपदा नसानी।
जाकौ नाउँ, सक्ति पुनि जाकी, ताकौ देति मंत्र पढ़ि पानी।
अखिल ब्रह्मांड उदर गत जाकैं, जाकी जल-धराहिं समानी।
सूर सकल साँची मोहिं लागति जो कछु कही गर्ग मुख बानी २५६

नंद करत पूजा हरि देखत।
घंट बजाइ देव अन्हवायौ, दल चंदन लै भेटत।
पट अंतर दै भोग लगायौ, आरति करी बनाइ।
कहत कान्ह, बाबा तुम अरप्यौ देव नहीं कछु खाइ।
चितै रहे तब नंद महरि-मुख, सुनहु कान्ह की बात।
सूर स्याम देवनि कर जोरहु कुसल रहै जिहिं गात ॥२६०॥

जसुदा देखति है हरि ठाढ़ी।
बाल-दसा अवलोकि स्याम की, प्रेम-मगन चित बाढ़ी।
पूजा करत नंद रहे बैठे, ध्यान समाधि लगाइ।
चुपरहिं आनि बदन मुख मेल्यौ, देखी देव-बड़ाई।

देखौ माइ मदुकिया रीती मैं राखी कहुँ हेरि।
चकित भई ग्वालिनि मन अपनैं ढूँढ़ति घर फिरि फेरि।
देखति पुनि पुनि घर के बासन मन हरि लियौ गोपाल।
सूरदास रस भरी ग्वालिनी जानै हरि कौ ख्याल ॥२६८॥

ब्रज घर घर प्रगटी यह बात।
दधि-माखन चोरी करि लै हरि, ग्वाल-सखा सँग खात।
ब्रज बनिता यह सुनि मन हरषित, सदन हमारैं आवैं।
माखन खात अचानक पावैं भुज भरि उरहिं छुपावैं।
मनहीं मन अभिलाष करति सब हृदय धरति यह ध्यान।
सूरदास प्रभु कौं घर तैं लै, दैहौं माखन खान ॥२६९॥

चली ब्रज घर-घरनि यह बात।
नंद-सुत, सँग सखा लीन्हे, चोरि माखन खात।
कोउ कहति मेरे भवन भीतर, अबहिं पैठे धाइ।
कोउ कहति, मोहिं देखि द्वारैं, उतहिं गए पराइ।
कोउ कहति किहिं भाँति हरि कौं देखौं अपनैं धाम।
हेरि माखन देउँ आछौ, खाइ जितनौ स्याम।
कोउ कहति मैं देखि पाऊँ भरि धरौं अँकवारि।
कोउ कहति, मैं बाँधि राखौं, को सकै निरवारि!
सूर प्रभु के मिलन कारन, करतिं बुद्धि बिचार।
जोरि कर बिधि कौं मनावति पुरुष नंद-कुमार ॥२७०॥

गोपालहिं माखन खान दै।
सुनि री सखी मौन ह्वै रहिऐ, बदन दही लपटान दै।
गहि बहियाँ हौं लैके जैहौं नैननि तपनि बुझान दै।
याकौ जाइ चौगुनौ लैहौं मोहिं जसुमति लौं जान दै।
तू जानति हरि कछू न जानत सुनत मनोहर कान दै।
सूर स्याम ग्वालिनि बस कीन्हौं राखति तन-मन-प्रान दै ॥२७१

जसुदा कहँ लौं कीजै कानि।
दिन-प्रति कैसैं सही परति है दूध-दही की हानि।
अपने या बालक की करनी, जौ तुम देखौ आनि।
गोरस खाइ, खवावै लरिकनि, भाजत भाजन भानि।
मैं अपने मंदिर के कोनैं राख्यौ माखन छानि।
सोई जाइ तिहारैं ढोटा, लीन्हौ है पहिचानि।
बूझि ग्वालि निज गृह मैं आयौ, नैंकु न संका मानि।
सूर स्याम यह उतर बनायौ, चींटी काढ़त पानि ॥१७॥

आपु गए हरुएँ सूनें घर।
सखा सबै बाहिर ही छाँड़े, देख्यौ दधि-माखन हरि भीतर।
तुरत मथ्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै लात धरत अधरनि पर।
लैन देइ सब सखा बुलाए तिनहिं देत भरि-भरि अपनें कर।
छिटकि रही दधि-बूँद हृदय पर, इत-उत चितवत करि मन मैं डर।
उठत ओट लै लखत सबनि कौं, पुनि लै खात देत ग्वालनि कर।
अंतर भई ग्वालि यह देखति मगन भई अति उर आनँद भरि।
सूर स्याम मुख निरखि थकित भई कहत न बनै रही मन दै हरि॥

गोपाल दुरे हैं माखन खात।
देखि सखी सोभा जु बनी है, स्याम मनोहर गात।
उठि अवलोकि ओट ठाढ़े ह्वै, जिहिं बिधि हैं लखिलेत।
चकित नैन चहुँ दिसि चितवत, और सखनि कौं देत।
सुंदर कर आनन समीप अति राजत इहिं आकार।
जलरुह मनौ बैर बिधु सौं तजि मिलत लए उपहार।
गिरि-गिरि परत बदन तैं उर पर हैं दधि-सुत के बिंदु।
मानहुँ सुभग सुधाकन बरषत प्रियजन आगम इंदु।
बाल-बिनोद बिलोकि सूर प्रभु सिथिल भई ब्रजनारि।
फुरै न बचन बरजिबैं कारन, रहीं बिचारि-बिचारि ॥२०४॥

जो तुम सुनहु जसोदा गोरी !
नंद-नँदन मेरे मंदिर मैं आजु करन गए चोरी।
हौं भई जाइ अचानक ठाढ़ी, कह्यौ, भवन मैं को री।
रहे छपाइ, सकुचि रंचक ह्वै, भई सहज मति भोरी।
मोहिं भयौ माखन पछितावौ, रीती देखि कमोरी।
जब गहि बाँह कुलाहल कीनी, तब गहि चरन निहोरी।
लागे लैन नैन जल भरि-भरि, तब मैं कानि न तोरी।
सूरदास प्रभु देत दिनहिं दिन ऐसियै लरिक-सलोरी ॥१७५॥

महरि तुम मानौ मेरी बात।
ढूँढ़ि-ढाँढ़ि गोरस सब घर कौ हर्यौ तुम्हारैं तात।
कैसैं कहति लियौ छीकै तैं ग्वाल-कंध दै लात।
घर नहिं पियत दूध धौरी कौ, कैसैं तेरैं खात।
असंभाव बोलन आई है, ढीठ ग्वालिनी प्रात।
ऐसौ नाहिं अचगरौ मेरौ, कहा बनावति बात।
का मैं कहौं, कहत सकुचति हौं, कहा दिखाऊँ गात।
हैं गुन बड़े सूर के प्रभु के, ह्याँ लरिका ह्वै जात ॥१७६॥

साँवरेहिं बरजति क्यौं जु नहीं ?
कहा करौं, दिन प्रति की बातैं नाहिन परतिं सही।
माखन खात, दूध लै डारत, लेपत देह दही।
ता पाछैं घरहू के लरिकनि भाजत छिरकि मही।
जो कछु धरहिं दुराइ, दूरि लै जानत ताहि तहीं।
सुनहु महरि तेरे या सुत सौं हम पचि हारि रहीं।
चोरी अधिक चतुराई सीखी, जाइ न कथा कही।
ता पर सूर बछरुवनि ढीलत, बन-बन फिरत बही ॥१७७॥

अब ये झूठहु बोलत लोग।
पाँच बरष अरु कछुक दिननि कौ, कब भयौ चोरी जोग।

इहिं मिस देखन आवति ग्वालिनि मुँह फारे जु गँवारि।
अनदोषा कौं दोष लगावति, दई देइगी टारि।
कैसें करि याकी भुज पहुँची, कौन बेग ह्याँ आयौ?
ऊखल ऊपर आनि पीठि दै, तापर सखा चढ़ायौ।
जौ न पत्याहु चलौ सँग जसुमति, देखौ नैन निहारि।
सूरदास प्रभु नैंकु न बरजौ मन मैं महरि बिचारि॥२७८॥

इन अँखियनि आगैं तैं मोहन, एकौ पल जनि होहु निनारे।
हौं बलि गई दरस देखैं बिनु, तलफत हैं नैननि के तारे।
औरौ सखा बुलाइ आपने इहिं आँगन खेलौ मेरे बारे।
निरखति रहौं फनिग की मनि ज्यौं सुंदर बाल-बिनोद तिहारे।
मधु, मेवा पकवान मिठाई ब्यंजन खाटे मीठे, खारे।
सूर स्याम जोइ-जोइ तुम चाहौ सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे॥२७९॥

चोरी करत कान्ह धरि पाए।
निसि-बासर मोहिं बहुत सतायौ अब हरि हाथहिं आए।
माखन-दधि मेरौ सब खायौ, बहुत अचगरी कीन्ही।
अब तौ घात परे हौ लालन, तुम्हें भलैं मैं चीन्ही।
दोउ भुज पकरि कह्यौ कहँ जैहौ माखन लेउँ मँगाइ।
तेरी सौं मैं नैंकुँ न खायौ सखा गए सब खाइ।
मुख तन चितै बिहँसि हरि दीन्हौ रिस तब गई बुझाइ।
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी सूरदास बलि जाइ॥२८०॥

कब हौ कान्ह काहु कैं जात।
ये सब ढीठ गरब गोरस कैं मुख सँभारि बोलतिं नहिं बात।
जोइ-जोइ रुचै सोइ तुम मोपै माँगि लेहु किन तात।
ज्यौं-ज्यौं बचन सुनौं मुख अमृत त्यौं-त्यौं सुख पावत सब गात।
कैसी टेव परी इन गोपिनि, उरहन कैं मिस आवति प्रात।
सूर सु कत हठि दोष लगावति घरही कौ माखन नहिं खात॥२८१

घर गोरस जनि जाहु पराए।
दूध भात भोजन घृत अंमृत अरु आछौ करि दह्यौ जमाए।
नव लख धेनु खरिक घर तेरैं, तू कत माखन खात पराए।
निलज ग्वालिनी देति उरहनौ वै झूठें करि बचन बनाए।
लघु दीरघता कछु न जानैं, कहुँ बछरा कहुँ धेनु चराए।
सूरदास प्रभु मोहन नागर, हँसि-हँसि जननी कंठ लगाए ॥३८२॥

कान्हहिं बरजति किन नँदरानी।
एक गाउँ के बसत कहाँ लौं करैं नंद की कानी।
तुम जो कहति हौ मेरौ कन्हैया, गंगा जैसौ पानी।
बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट घाट कौ दानी।
बचन बिचित्र कमल-दल-लोचन कहत सरस बर बानी।
अचरज महरि तुम्हारे आगैं भयै जीभ तुतरानी।
कहूँ मेरौ कान्ह कहाँ तुम ग्वारिनि यह बिपरीति न जानी।
आवति सूर उरहने कैं मिस, देखि कुँवर मुसुकानी ॥३८३॥

मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ।
मेरे घर कौ द्वार, सखी री, तब लौं देखति रहियौ।
दधि-माखन द्वै माट अछूते तोहिं सौंपति हौं सहियौ।
और नहीं या ब्रज मैं कोऊ नंद-सुवन सखि लहियौ।
ये सब बचन सुने मन मोहन बहे राह मन गहियौ।
सूर पौरि लौं गई न ग्वालिनि, कूदि परे दै पहिनौ ॥३८४॥

गए स्याम ग्वालिनि घर सूनैं।
माखन खाइ डारि सब गोरस, बासन फोरि किए सब चूनै।
बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ ताहि कियौ दस टूक।
सोवत लरिकनि छिरकि मही सौं हँसत चले दै कूक।
आइ गई ग्वालिनि तिहिं औसर, निकसत हरि धरि पाए।
देखे घर बासन सब फूटे दूध दही ढरकाए।

दोउ भुज भरि गाइँ करि लीन्हे, गई महरि कै आगैं।
सूरदास अब बसे कौन धौं पति रहिहै ब्रज त्यागैं ॥२८५॥

करत कान्ह ब्रज-घरनि अचगरी।
खीझति महरि कान्ह सौं पुनि-पुनि उराहन लै आवति हैं सगरी।
बड़े बाप के पूत कहावत हम वै बास बसत इक बगरी।
नंदहु तैं ये बड़े कहैहैं, फेरि बसैहैं यह ब्रज नगरी।
जननी कैं खीझत हरि रोए, झूठहिं मोहिं लगावति धगरी।
सूर स्याम मुख पोंछि जसोदा कहति सबै जुवती हैं लँगरी ॥२८६

मेरौ माई कौन कौ दधि चोरै।
मेरैं बहुत दई कौ दीन्हौ लोग पियत हैं औरै।
कहा भयौ तेरे भवन गये जौ पियौ तनक लै भोरैं।
ता ऊपर काहैं गरजति है, मनु आई चढ़ि घोरै।
माखन खाइ मह्यौ सब डारे बहुरौ भाजन फोरै।
सूरदास यह रसिक ग्वालिनी नेह नवल सँग जोरै ॥२८७

अपनी गाइँ खेत नँदरानी।
बड़े बाप की बेटा पूतहिं भली पढ़ावति बानी।
सखा-भीर लै पैठत घर मैं आपु खाइ तौ सहिऐ।
मैं जब चली सामुहैं पकरन, तब के गुन कहा कहिऐ।
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ मैं घर पौढ़ी आइ।
हरैं-हरैं बेनी गहि पाछैं बाँधी पाटी लाइ।
सुनु मैया, याके गुन मोसौं इन मोहिं लयौ बुलाई।
दधि मैं पड़ी सेंत की मोपै चींटी सबै कढ़ाई।
टहल करत मैं याके घर की यह पति सँग मिलि सोई।
सूर बचन सुनि हँसी जसोदा ग्वालि रही मुख गोई ॥२८८॥

महरि तैं बड़ी कृपन है माई।
दूध-दही बहु बिधि कौ दीनौ, सुत सौं धरति छपा

बालक बहुत नहीं री तेरैं पक्के कुँवर कन्हाई।
सोऊ तौ घर ही घर डोलतु, माखन खात चोराई।
वृद्ध वयस पूरे पुन्यनि तैं तैं बहुतै निधि पाई।
ताहू के खैबे-पीबे कौं, कहा करति चतुराई।
सुनहुँ न वचन चतुर नागरि के, जसुमति नंद सुनाई।
सूर स्याम कौं चोरी कैं मिस, देखन है यह आई ॥३८९॥

कान्ह सुत गोरस कौं कत जात ?
घर सुरभी कारी धौरी कौ माखन माँगि न खात।
दिन प्रति सबै उराहने कैं मिस आवति हैं उठि प्रात।
अनलहती अपराध लगावतिं, बिकट बनावति बात।
निपट निसंक बिवादहिं सम्मुख, सुनि सुनि नंद रिसात।
मोसौं कहति कृपन तेरैं घर ढौटाहू न अघात।
करि मनुहारि उठाय गोद लै, बरजति सुत कौं मात।
सूर स्याम नित सुनत उराहनौ दुख पावत तेरौ तात ॥३९०॥

हरि सब भाजन फोरि पराने।
हाँक देत पैठे दै पेला नैकु न मनहिं डराने।
सींके छोरि मारि लरिकनि कौं माखन-दधि सब खाइ।
भवन मच्यौ दधिकाँदौ लरिकनि रोवत पाए जाइ।
सुनहु-सुनहु सबहिनि के लरिका, तेरौ सौ कहुँ नाहिं।
हाटनि बाटनि-गलिनि, कहूँ कोउ चलत नहीं डरपाहिं।
रितु आए कौ खेल कन्हैया सब दिन खेलत फाग।
रोकि रहत गहि गली साँकरी, टेढ़ी बाँधत पाग।
बारे तैं सुत ये ढँग लाए, मनहीं मनहिं सिहाति।
सुनै सूर ग्वालिनि की बातैं, सकुचि महरि पछताति ॥३९१॥

कन्हैया तू नहिं मोहिं डरात।
षटरस धरे छाँड़ि कत पर घर चोरी करि करि खात।

बकत-बकत तोसौं पचि हारी नैकहुँ लाज न आई।
ब्रज-परगन-सिकदार महर, तू ताकी करत नन्हाई।
पूत सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बात।
सूर स्याम अब लौं तुहिं बकस्यौ, तेरी जानी घात ॥३६२॥

सुनु री ग्वारि, कहौं इक बात।
मेरी सौं तुम याहि मारियौ जबहीं पावौ घात।
अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी, बहुतै मोहिं खिझायौ।
साटिनि मारि करौं पहुनाई चितवत कान्ह डरायौ।
अजहूँ मानि कह्यौ करि मेरौ, घर घर तू जनि जाहि।
सूर स्याम कह्यौ कहूँ न जैहौं, माता मुख तन चाहि ॥३६३॥

मैया, मैं नहिं माखन खायौ।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि मेरैं मुख लपटायौ।
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचैं धरि लटकायौ।
हौं जु कहत नान्हे कर अपनैं मैं कैसैं करि पायौ।
मुख दधि पोंछि बुद्धि इक कीन्ही दोना पीठि दुरायौ।
डारि साँटि, मुसुकाइ जसोदा स्यामहिं कंठ लगायौ।
बाल-बिनोद-मोद मन मोह्यौ भक्ति-प्रताप दिखायौ।
सूरदास जसुमति कौ यह सुख सिव बिरंचि नहिं पायौ ३६४

तेरी सौं सुनु-सुनु मेरी मैया।
आवत उबटि पर्यौ ता ऊपर, मारन कौं दौरी इक गैया।
ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति हौं पय पियत पतूखिनि लैया।
यहै देखि मोकौं बिजुकानी भाजि चल्यौ कहि दैया दैया।
दोउ सींग बिच ह्वै हौं आयौ जहाँ न कोऊ हो रखवैया।
तेरौ पुन्य सहाय भयौ है, उबर्यौ बाबा नंद-दुहैया।
याके चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया।
सूरदास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि लेति बलैया ॥३६५॥

जसुमति तेरी बारी कान्ह अतिहीं जु अचगरी।
दूध-दही-माखन लै डारि देत सगरी।
भोरहिं नित प्रतिहीं उठि, मोसौं करत झगरी।
ग्वाल-बाल संग लिए घेरि रहे डगरी।
हम-तुम सब बैस एक, कातैं को अगरी।
लियौ दियौ सोई कछु, डारि देहु झगरी।
सूर स्याम तेरी अति गुननि माहिं अगरी।
चोली अरु हार तोरि छोरि लियौ सगरौ ॥२६६॥

सुनि-सुनि री तैं महरि जसोदा, तैं सुत बड़ौ लड़ायी।
इहिं ढोटा लै ग्वाल भवन मैं कछु बिथरयौ कछु खायौ।
काकैं नहीं अनोखौ ढोटा, किहिं न कठिन करि जायौ।
मैं हूँ अपनैं औरस पूतैं बहुत दिननि मैं पायौ।
तैं जु गँवारि, पकरि भुज याकी बदन दह्यौ लपटायी।
सूरदास ग्वालिनि अति झूठी बरबस कान्ह बँधायौ ॥२६७॥

नंद-घरनि सुत भलौ पढ़ायौ।
ब्रज बीथिनि, पुर-गलिनि, घरैं-घर, घाट-बाट सब सोर मचायौ।
लरिकनि मारि भजत काहू के, काहू कौ दधि-दूध लुटायौ।
काहू के घर करत भँड़ाई मैं ज्यौं त्यौं करि पकरन पायौ।
अब तौ इन्हैं जकरि धरि बाँधौं, इहिं सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ।
सूर स्याम भुज गहि नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनै ढँग लायौ ॥२६८

ऐसी रिस मैं जौ धरि पाऊँ।
कैसे हाल करौं धरि हरि के, तुमकौं प्रगट दिखाऊँ।
सँटिया लिए हाथ नँदरानी, थरथरात रिस गात।
मारे बिनु आजु जौ छाँड़ौं लागै मेरैं तात।
इहिं अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति।
भली महरि, सूधौ सुत जायौ, चोली-हार बतावति।

रिस मैं रिस अतिहीं उपजाई जानि जननि अभिलाष।
सूर स्याम भुज गहे जसोदा, अब बाँधौं कहि माष ॥३९९॥

जसोदा यतौ कहा रिसानी।
कहा भयौ जौ अपने सुत पै, महि ढरि परी मथानी ?
रोषहिं रोष भरे दृग तेरे, फिरत पलक पर पानी।
मनहुँ सरद के कमल-कोष पर मधुकर मीन कानी।
स्रम जल किंचित निरखि बदन पर, यह छबि अति मन मानी।
मनौ चंद नव उमँगि सुधा भुव ऊपर बरषा ठानी।
गृह-गृह गोकुल गई जाँवरी बाँधति भुज नँदरानी।
आपु बँधावत भक्तनि छोरत बेद बिदित भइ बानी।
गुन लघु बरषि करति स्रम जितनी निरखि बदन मुसुकानी।
सिथिल अंग सब देखि सूर प्रभु-सोभा-सिंधु-बिरानी ॥४० ॥

बाँधौ आजु, कौन तोहिं छोरै।
बहुत लँगरई कीन्ही मोसौं भुज गहि रजु ऊखल सौं जोरै।
जननी अति रिस जानि बँधायौ निरखि बदन, लोचन जल ढोरै।
यह सुनि ब्रज-जुवती सब धाईं कहति कान्ह अब क्यौं नहिं छोरै।
ऊखल सौं गहि बाँधि जसोदा, मारन कौं साँटी कर तोरै।
साँटी देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरै।
सुनहु महरि ऐसी न बूझिऐ सुत बाँधति माखन दधि थोरै।
सूर स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक परी हम तैं यह भोरै ॥४०१॥

जाहु चली अपनैं अपनैं घर।
तुमहीं सबनि मिलि ढीठ करायौ अब आईं छोरन बर।
मोहिं अपने बाबा की सौंहैं कान्हहिं अब न पत्याऊँ।
भवन जाहु अपनैं-अपनैं सब लागति हौं मैं पाइँ।
मोकौं जनि बरजौ जुवती कोउ, देखौ हरि के ख्याल।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा बड़े नंद के लाल ॥४०२॥

जसुदा, तेरौ मुख हरि जोवै।
कमल नैन हरि हिचिकिनि रोवै, बंधन छोरि जसोवै।
जौ तेरौ सुत खरौ अचगरौ, तऊ कोखि कौ जायौ।
कहा भयौ जौ घर कैं ढोटा, चोरी माखन खायौ।
कोरी मटुकी दह्यौ जमायौ जाख न पूजन पायौ।
तिहिं घर देव-पितर काहे कौ जा घर कान्हर आयौ।
जाकौ नाम लेत भ्रम छूटे, कर्म-फंद सब काटै।
सोई इहाँ जेंवरी बाँधे जननि साँटि लै डाँटै।
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के ऊखल आपु बँधायौ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत ही देह धारि कै आयौ ॥४०३॥

देखौ माई, कान्ह हिलकियनि रोवै।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ डरनि आँसुवनि धोवै।
माखन लागि उलूखल बाँध्यौ सकल लोग ब्रज जोवै।
निरखि कुरुख उन बालनि को दिसि लाजनि अँखियनि गोवै।
ग्वाल कहैं धनि जननि हमारी सुकर सुरभि नित नोवै।
बरबस ही बैठारि गोद मैं, धारै बदन निचोवै।
ग्वालि कहैं या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै?
आनि देहिं अपने घर तैं हम चाहति जितौ जसोवै।
जब जब बंधन छोरयौ चाहति सूर कहै यह को ये।
मन माधौ-तन चित गोरस मैं इहिं बिधि महरि बिलोवै ।४०४

कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत।
बालक बदन बिलोकि जसोदा कत रिस करति अचेत।
छोरि उदर तैं दुसह दाँवरी डारि कठिन कर बेंत।
कहि धौं री तोहिं क्यौं करि आवै सिसु पर तामस एत।
मुख आँसू अरु माखन कनुका निरखि नैन छवि देत।
मानौ स्रवत सुधानिधि मोती उडगन अवलि समेत।

जा जानौं किहिं पुन्य प्रगट भए इहिं ब्रज नँद-निकेत।
तन-मन धन न्यौछावरि कीजै सूर स्याम कैं हेत ॥४०५॥

मुख-छबि देखि हो नँद-घरनि।
सरद निसि कौ अंसु अगनित इंदु आभा हरनि।
ललित श्री गोपाल-लोचन-लोल-आँसू-ढरनि।
मनहुँ बारिज बिथकि बिभ्रम, परे पर बस परनि।
कनक-मनि-मय-जटित-कुंडल-जोति जगमग करनि।
मित्र-मोचन मनहुँ आए, तरल गति द्वै तरनि।
कुटिल कुंतल मधुप मिलि मनु, कियो चाहत लरनि।
बदन कांति बिलोकि सोभा सकै सूर न बरन ॥४०६॥

हरि-मुख देखि हो नँद-नारि।
महरि ऐसे सुभग सुत सौं, इतौ कोह निवारि।
सरद-मंजुल-जलज-लोचन लोल, चितवनि दीन।
मनहुँ खेलत हैं परस्पर मकरध्वज द्वै मीन।
ललित कन-संजुत कपोलनि लसत कज्जल अंक।
मनहुँ राजत रजनि पूरन कलापति सकलंक।
बेगि बंधन छोरि, तन-मन वारि लै हिय लाइ।
नवल स्याम किसोर ऊपर, सूर जन बलि जाइ ॥४०७॥

कहौ तौ माखन ल्यावैं घर तैं।
जा कारन तू छोरति नाहीं लकुट न डारति कर तैं।
सुनहु महरि ऐसी न बूझियै सकुचि गयौ मुख डर तैं।
ज्यौं जलरुह ससि-रस्मि पाइ कै, फूलत नाहिन सर तैं।
ऊखल लाइ भुजा धरि बाँधी, मोहनि मूरति बर तैं।
सूर स्याम-लोचन जल बरसत जनु मुकुता हिमकर तैं ॥४०८॥

बदन लगी अब बढ़ि-बढ़ि बात।
[illegible]

अब मोहिं माखन देति मँगाए, मेरैं घर कछु नाहिं।
उरहन कहि-कहि साँझ सवारैं, तुमहिं बँधायौ याहि।
रिसही मैं मोहीं गहि दीन्हौ, अब लागी पछितान।
सूरदास अब कहति जसोदा बूझ्यौ सबको ज्ञान ॥४०५॥

कहा भयौ जौ घर कैं लरिका चोरी माखन खायौ।
अहो जसोदा, कत त्रासति हौ यहै कोखि कौ जायौ।
बालक अजौं अजान न जानैं केतिक दह्यौ लुटायौ।
तेरौ कहा गयौ? गोरस कौ गोकुल अंत न पायौ।
हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन पास बँधायौ।
रुदन करत दोउ नैन रचे हैं, मनहुँ कमल-कन छायौ।
पौढ़ि रहे धरनी पर तिरछैं बिलखि बदन मुरझायौ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि हँसि करि कंठ लगायौ।

जसुदा देखि सुत की ओर।
बाल बैस रसाल पर रिस इती कहा कठोर।
बार बार निहारि तुव तन नमित मुख दधि चोर।
तरनि किरनहिं परसि मानौ, कुमुद सकुचत भोर।
त्रास तैं अति चपल गोलक सजल सोभित छोर।
मीन मानौ बेधि बंसी, करत जल झकझोर।
देत छबि अति गिरत उर पर अंबु-कन कै जोर।
ललित हिय जनु मुक्त-माला, गिरति टूटैं डोर।
नंद-नंदन जगत बंदन करत आँसू कोर।
दास सूरज मोहि सुख-हित निरखि नंदकिसोर ॥४११॥

कब के बाँधे ऊखल दाम।
कमल-नैन बाहिर करि राखे तू बैठी सुखधाम।
है निरदई दया कछु नाहीं, लागि रही गृह काम।
देखि छुधा तैं मुख कुम्हिलानौ अति कोमल तन स्याम।

छोरहु बेगि भई बड़ी बिरियाँ, बीति गए जुग जाम।
तेरैं त्रास निकट नहिं आवत, बोलि सकत नहिं राम।
जन-कारन भुज आपु बँधाए, बचन कियौ रिषि ताम।
ताही दिन तैं प्रगट सूर प्रभु यह दामोदर नाम ॥४१२॥

( जसोदा ) तेरौ भलौ हियौ है माई।
कमल-नैन माखन कैं कारन, बाँधे ऊखल ल्याई।
जो संपदा देव-मुनि-दुर्लभ सपनेंहु देइ न दिखाई।
याही तैं तू गर्व भुलानी घर बैठैं निधि पाई।
जो मूरति जल-थल मैं व्यापक निगम न खोजत पाई।
सो मूरति तैं अपनैं आँगन, चुटकी दै जु नचाई।
जब कबहूँ सुत रोवत देखति दौरि लेति हिय लाई।
अब अपने घर के लरिका सौं इती करति निठुराई।
बारंबार सजल लोचन करि चितवत कुँवर कन्हाई।
कहा करौं बलि जाउँ छोरि तू, तेरी सौंह दिखाई।
सुर पालक, असुरनि उर सालक, त्रिभुवन जाहि डराई।
सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाई ॥४१३॥

देखि री नंद-नंदन-ओर।
त्रास तैं तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर।
बार बार डरात तोकौं बरन बदनहिं थोर।
मुकुर-मुख दोउ नैन ढारत छनहिं छन छबि-छोर।
सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसैं डोर (डौर)।
रस भरे अंबुजनि भीतर भ्रमत मानौ भौंर।
लकुट कैं डर देखि जैसे भए स्रोनित कोर।
लाइ उरहिं, बहाइ रिस जिय तजहु प्रकृति कठोर।
कछुक करुना करि जसोदा करति निपट निहोर।
सूर स्याम त्रिलोक की निधि भलेहिं माखन-चोर ॥४१४॥

जसुदा यह न बूझि कौ काम।
कमल-नैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैं दाम।
पुत्रहु तैं प्यारी कोउ है री, कुल-दीपक मनि-धाम।
हरि पर वारि डारि सब तन, मन, धन गोरस अरु ग्राम।
देखियत कमल बदन कुम्हिलानौ, तू निरमोही बाम।
बैठी है मंदिर सुख छहियाँ सुत दुख पावत घाम।
येई हैं सब ब्रज के जीवन सुख पावत लिएँ नाम।
सूरदास प्रभु भक्तनि कैं बस यह ठानी घनस्याम ॥४१५॥

ऐसी रिस तोकौं नँदरानी।
भली बुद्धि तेरैं जिय उपजी, बड़ी बैस अब भई सयानी।
ढोटा एक भयौ, कैसैंहुँ करि कौन-कौन करबर बिधि भानी।
क्रम-क्रम करि अब लौं उबर्‌यौ है ताकौं मारि पितर दै पानी।
को निरदई रहै तेरैं घर, को तेरैं सँग बैठै आनी।
सुनहु सूर कहि-कहि पचिहारी, जुबती चलीं घरहिं बिरुझानी ॥४१६॥

हलधर सौं कहि ग्वालि सुनायौ।
प्रातहिं तैं तुम्हरौ लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ।
काहू के लरिकहिं हरि मार्‌यौ भोरहिं आनि तिनहिं गुहरायौ।
तबही तैं बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकौं आनि जनायौ।
हम बरजी, बरज्यौ नहिं मानति, सुनतहिं बल आतुर ह्वै धायौ।
सूर स्याम बैठे ऊखल लगि माता उर तनु अतिहिं त्रसायौ ॥४१७॥

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए।
देखि स्याम ऊखल सौं बाँधे तबहीं दोउ लोचन भरि आए।
मैं बरज्यौ कै बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए।
अजहूँ छाँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए।
स्यामहिं छोरि मोहिं बाँधै बरु, निकसत सगुन भले नहिं पाए।
मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा तिनके भुज मोहिं बँधे दिखाए।

माता सौं कह करौं ढिठाई सो सरूप कहि नाम सुनाए।
सूरदास तब कहति जसोदा दोउ भैया तुम इक मत पाए ॥४१८

काहे कौं कलह नाँध्यौ, दारुन दाँवरि बाँध्यौ
कठिन लकुट लै तैं त्रास्यौ मेरैं भैया।
नाहीं कसकत मन निरखि कोमल तन
तनिक से दधि-काज भली री तू मैया।
हौं तौ न भयौ री घर देखत्यौ तेरी यौं अर
फोरतौ बासन सब जानति बलैया।
सूरदास हित हरि लोचन आए हैं भरि,
बलहू कौ बल जाकौ सोई री कन्हैया ॥४१९॥

काहे कौं हरि इतनौ त्रास्यौ।
सुनि री मैया, मेरैं भैया कितनौ गोरस नास्यौ।
जब रजु सौं कर गाढ़े बाँधे, छर-छर मारी साँटी।
सूनैं घर बाबा नँद नाहीं ऐसैं करि हरि डाँटी।
और नैंकु छूवै देखौ स्यामहिं, ताकौ करौं निपात।
तू जो करै बात सोइ साँची, कहा कहौं तोहिं मात।
ठाढ़े बदत बात सब हलधर, माखन प्यारौ तोहि।
ब्रज-प्यारौ, जाकौं मोहि गारी, छोरत काहे न ओहि।
जाकौ मन माखन-दधि चाखौ, बाँधे जकरि कन्हाई।
सुनत सूर हलधर की बानी जननी सैन बताई ॥४२०॥

सुनहु बात मेरी बलराम।
करन देहु इनकौं मोहिं पूजा चोरी प्रगटत नाम।
तुमहीं कहौ कमी काहे की, नव-निधि मेरैं धाम।
मैं बरजति सुत जाहु कहूँ जनि, कहि हारी दिन जाम।
तुमहूँ मोहिं अपराध लगावत माखन प्यारौ स्याम।
सुनि मैया तोहिं छाँड़ि कहौं किहिं, को राखै तेरैं ताम।

तेरी सौं उरहन लै आवति, झूठहिं ब्रज की बाम ।
सूर स्याम अतिहीं अकुलाने कब के बाँधे दाम ॥४२१॥

तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई ।
जुवती गईं घरनि सब अपनैं, गृह कारज जननी अटकाई ।
आप गए जमलार्जुन-तरु-तर, परसत पात उठे झहराई ।
दिए गिराइ धरनि दोऊ तरु सुत कुबेर के प्रगटे आई ।
दोउ कर जोरि करत दोउ अस्तुति चारि भुजा तिन्ह प्रगट दिखाई
सूर धन्य ब्रज जनम लियौ हरि, धरनी की आपदा नसाई ॥४२२

मोहन हौं तुम ऊपर वारी ।
कंठ लगाइ लिए मुख चूमति, सुंदर स्याम बिहारी ।
काहे कौं ऊखल सौं बाँध्यौ कैसी मैं महतारी ।
अतिहिं उतंग बयारि न लागत, क्यौं टूटे तरु भारी ।
बारंबार बिचारति जसुमति, यह लीला अवतारी ।
सूरदास स्वामी की महिमा कापै जाति बिचारी ॥४२३॥

अब घर काहू कैं जनि जाहु ।
तुम्हरैं आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिं खाहु ।
बरै जेंवरी जिहिं तुम बाँधे परैं हाथ भहराइ ।
नंद मोहिं अतिहीं त्रासत हैं, बाँधे कुँवर कन्हाइ ।
रोग जाउ मेरे हलधर के छोरत हौ तब स्याम ।
सूरदास प्रभु खात फिरौ जनि माखन-दधि तुव धाम ॥४२४

ब्रज-जुवती स्यामहिं उर लावति ।
बारंबार निरखि कोमल तनु कर जोरति बिधि कौं जु मनावति ।
कैसैं बचे अगम तरु कैं तर, मुख चूमति यह कहि पछितावति ।
उरहन लै आवति जिहिं कारन सो सुख फल पूरन करि पावति ।
सुनौ महरि, इनकौं तुम बाँधति, भुज गहि बंधन चिन्ह दिखावति
सूरदास प्रभु अति रति नागर गोपी हरषि हृदय लपटावति ।४२५

भूखौ भयौ आजु मेरौ बारौ।
भोरहिं ग्वारि उरहनौ ल्याईं, उहिं यह किन्यौ पसारौ।
पहिलेहिं रोहिनि सौं कहि राख्यौ तुरत करहु जेवनार।
ग्वाल-बाल सब बोलि लिए, मिलि बैठे नंद-कुमार।
भोजन बेगि ल्याहु कछु मैया, भूख लगी मोहिं भारी।
आजु सबारैं कछु नहिं खायौ, सुनत हँसी महतारी।
रोहिनि चितै रही जसुमति-तन सिर धुनि धुनि पछितानी
परसहु बेगि बेर कत लावति, भूखे सारँगपानी।
बहु व्यंजन बहु भाँति रसोई षटरस के परकार।
सूर स्याम हलधर दोउ भैया और सखा सब ग्वार ॥४२६॥

मोहिं कहत जुवती सब चोर।
खेलत कहूँ रहौं मैं बाहिर, चितै रहति सब मेरी ओर।
बोलि लेति भीतर घर अपनैं मुख चूमति, भरि लेति अँकोर।
माखन हेरि देति अपनैं कर कछु कहि बिधि सौं करति निहोर।
जहाँ मोहिं देखति तहँ टेरति, मैं नहिं जात दुहाई तोर।
सूर स्याम हँसि कंठ लगायौ वै तरुनी कहँ बालक मोर ।४२७।

जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपनैं ही आँगन तुम खेलौ।
बोलि लेहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ।
ब्रज-बनिता सब चोर कहति तोहिं, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ
आजु मोहिं बलराम कहत हे, झूठहिं नाम धरति हैं तेरौ।
जब मोहिं रिस लागति तब त्रासति बाँधति मारति जैसैं चेरौ।
सूर हँसति ग्वालिनि दै तारी चोर नाम कैसैंहु सुत फेरौ ।४२८

महर-महरि कैं मन यह आई।
गोकुल होत उपद्रव दिन प्रति बसिऐ बृंदाबन मैं जाई।
सब गोपिनि मिलि सकटा साजे सबहिनि के मन मैं यह भाई।
सूर जमुन-तट डेरा दीन्हे, पाँच बरस के कुँवर कन्हाई ।४२९।

जननि मथति दधि दुहत कन्हाई।
सखा परस्पर कहत स्याम सौं, हमहूँ सौं तुम करत चँड़ाई।
दुहन देहु कछु दिन अरु मोकौं, तब करिहौ मो समसरि आई।
जब लौं एक दुहौगे तब लौं चारि दुहौंगो नंद दुहाई।
झूठहिं करत दुहाई प्रातहिं, देखहिंगे तुम्हरी अधिकाई।
सूर स्याम कह्यौ कालि दुहैंगे, हमहूँ तुम मिलि होड़ लगाई ।४१४

आजु मैं गाइ चरावन जैहौं।
बृंदावन के भाँति-भाँति फल अपने कर मैं खैहौं।
ऐसी बात कहौ जनि बारे देखौ अपनी भाँति।
तनक-तनक पग चलिहौ कैसैं आवत ह्वैहै राति।
प्रात जात गैया लै चारन घर आवत हैं साँझ।
तुम्हरौ कमल बदन कुम्हिलैहै, रेंगत घामहिं माँझ।
तेरी सौं मोहिं घाम न लागत भूख नहीं कछु नेक।
सूरदास प्रभु कह्यौ न मानत परयौ आपनी टेक ।४१५।

मैया हौं गाइ चरावन जैहौं।
तू कहि महर नंद बाबा सौं बड़ो भयौ न डरैहौं।
रैता पैता मना मनसुखा हलधर संगहिं रैहौं।
बंसीबट तर ग्वालनि कैं सँग, खेलत अति सुख पैहौं।
ओदन भोजन दै दधि काँवरि, भूख लगे तैं खैहौं।
सूरदास है साखि जमुन-जल सौंह देहु जु नहैहौं ।४१६।

चले सब गाइ चरावन ग्वाल।
हेरी टेर सुनत लरिकनि की, दौरि गए नँदलाल।
फिरि इत-उत जसुमति जौ देखै दृष्टि न परे कन्हाई।
जान्यौ जात ग्वाल सँग दौरयौ टेरति जसुमति धाई।
जात चल्यौ गैयन के पाछैं, बलदाऊ कहि टेरत।
पाछैं आवति जननी देखी, फिरि-फिरि इत कौं हेरत।

जब देख्यौ मोहन कौ आवत सखा किए सब ठाढ़े।
पहुँची आइ जसोदा रिस भरि, दोउ भुज पकरे गाढ़े।
हलधर कह्यौ, जान दै मो सँग, आवहिं आज सवारे।
सूरदास बल सौं कहै जसुमति, देखे रहियौ प्यारे ।४३७।

सौंपत कान्ह चले ग्वालनि सँग।
जसुमति यहै कहत घर आई हरि कीन्हे कैसे रँग।
प्रातहि तैं लागी पाछैं ढँग अपनी टेक करयौ है।
देखौ जाइ आजु बन कौ सुख कहा परोसि धरयौ है।
माखन-रोटी अरु सीतल जल, जसुमति दियौ पठाइ।
सूर नंद हँसि कहत महरि सौं, आवत कान्ह चराइ ।४३८।

वृंदावन देख्यौ नँद-नंदन अतिहिं परम सुख पायौ।
जहँ-जहँ गाइ चरति, ग्वालनि सँग तहँ तहँ आपुन धायौ।
बलदाऊ मोकौं जनि छाँड़ौ, संग तुम्हारैं ऐहौं।
कैसेहुँ आजु जसोदा छाँड़्यौ काल्हि न आवन पैहौं।
सोवत मोकौं टेरि लेहुगे बाबा नंद-दुहाई।
सूर स्याम बिनती करि बल सौं, सखनि समेत सुनाई ।४३९।

जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ।
मो कारन कछु आन्यौ है बलि बन-फल तोरि नन्हैया।
तुमहिं मिलैं मैं अति सुख पायौ, मेरे कुँवर कन्हैया।
कछुक खाहु जो भावै मोहन, दै री माखन-रोटी।
सूरदास प्रभु जीवहु जुग-जुग हरि-हलधर की जोटी ।४४०।

मैं अपनी सब गाइ चरैहौं।
प्रात होत बल कैं सँग जैहौं तेरे कहैं न रैहौं।
ग्वाल-बाल गाइनि के भीतर, नैंकहुँ डर नहिं लागत।
आजु न सोवौं नंद-दुहाई, रैनि रहौंगौ जागत।

और ग्वाल सब गाइ चरैहैं मैं घर बैठी रैहौं ?
सूर स्याम तुम सोइ रहौ अब प्रात जान मैं दैहौं ॥४४१॥

मैया री, मोहिं दाऊ टेरत ।
मोकौं बन-फल तोरि देत हैं, आपुन गैयनि घेरत ।
और ग्वाल संग कबहुँ न जैहौं वे सब मोहिं खिझावत ।
मैं अपने दाऊ संग जैहौं बन देखे सुख पावत ।
आगैं दै पुनि ल्यावत घर कौं तू मोहिं जान न देति ।
सूर स्याम जसुमति मैया सौं हा-हा करि कहै केति ॥४४२॥

बोलि लियौ बलरामहिं जसुमति ।
लाल सुनौ हरि के गुन, काल्हिहिं तैं लँगराइ करत अति ।
स्यामहिं जान देहि मेरें सँग तू काहैं डर मानति ।
मैं अपने ढिग तैं नहिं टारौं जियहिं प्रतीति न आनति ।
हँसी महरि बल की बतियाँ सुनि बलिहारी या मुख की ।
जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौं, कहति बीर के रुख की ॥४४३॥

ब्रज मैं को उपज्यौ यह भैया ।
संग सखा सब कहत परस्पर, इनके गुन अगमैया ।
जब तैं ब्रज अवतार धर्यौ इन, कोउ नहिं घात करैया ।
तृनावर्त पूतना पछारी तब अति रहे नन्हैया ।
कितिक बात यह बका बिदार्यौ, धनि जसुमति जिनि जैया ।
सूरदास प्रभु की यह लीला हम कत जिय पछितैया ॥४४४॥

आजु जसोदा जाइ कन्हैया महा दुष्ट इक मार्यौ ।
पन्नग-रूप गसे सिसु गो-सुत इहिं सब साथ उबार्यौ ।
गिरि-कंदरा समान भयानक जब अघ-बदन पसार्यौ ।
निडर गोपाल पैठि मुख-भीतर, खंड-खंड करि डार्यौ ।
याकैं बल हम बदत न काहूहिं, सकल भूमि तृन चार्यौ ।
जीते सबै असुर हम आगैं हरि कबहूँ नहिं हार्यौ ।

हरषि गए सब कहत महरि सौं अबहिं अघासुर मारयौ।
सूरदास प्रभु की यह लीला ब्रज कौ काज सँवारयौ ॥४४५॥

जसुमति सुनि-सुनि चकित भई।
मैं बरजति बन जात कन्हैया का धौं करै दई।
कहाँ-कहाँ तैं उबरयौ मोहन नैंकु न तऊ डरात।
आपुन कहा बनक सौं, बन मैं सुनी बहुत मैं बात।
मेरौ कह्यौ सुनौ जौ स्रवननि कहति जसोदा खीझत।
सूर स्याम कह्यौ बन नहिं जैहौं, यह कहि मन-मन रीझत ॥४४६

बन पहुँचत सुरभी लई जाइ।
जैहौ कहा सखनि कौ टेरत, हलधर संग कन्हाइ।
जेंवत परखि लियौ नहिं हमकौं, तुम अति करी चँडाइ।
अब हम जैहैं दूरि चरावन, तुम सँग रहैं बलाइ।
यह सुनि ग्वाल धाइ तहँ आए स्यामहिं अंकम लाइ।
सखा कहत यह नंद-सुवन सौं, तुम सब के सुखदाइ।
आजु चलौ बृंदावन जैये, गैया चरैं अघाइ।
सूरदास प्रभु सुनि हरषित भए, घर तैं छाँक मँगाइ ॥४४७॥

आजु चरावन गाइ चलौ जू कान्ह, कुमुद बन जैये।
सीतल कुंज कदम की छहियाँ, छाक तहाँ रस खैये।
अपनी-अपनी गाइ ग्वाल सब, आनि करौ इकठौरी।
धौरी, धूमरि, राती रौंछी बोल बुलाइ चिन्हौरी।
पियरी, मौरी गोरी गैनी, खैरी, कजरी जेती।
दुलही फुलही, भौंरी भूरी हाँकि ठिकाई तेती।
बाबा नंद बुरौ मानैंगे और जसोदा मैया।
सूरजदास जनाइ दियौ है, यह कहिकै बल भैया ॥४४८॥

चरावत बृंदावन हरि धेनु।
ग्वाल सखा सब संग लगाए, खेलत हैं करि चैनु।

कोउ गावत, कोउ मुरलि बजावत, कोउ बिषान, कोउ बैनु।
कोउ निरतत कोउ उघटि तार दै जुरी ब्रज बालक-सैनु।
त्रिबिध पवन जहँ बहत निसादिन सुभग कुंज घन ऐनु।
सूर स्याम निज धाम बिसारत, आवत यह सुख लैनु ॥४४९॥

बृंदावन मोकों अति भावत।
सुनहु सखा तुम सुबल, श्रीदामा ब्रज तैं बन गौ-चारन आवत।
कामधेनु सुरतरु सुख जितने रमा सहित बैकुंठ भुलावत।
इहिं बृंदाबन, इहिं जमुना-तट, ये सुरभी अति सुखद चरावत।
पुनि पुनि कहत स्याम श्रीमुख सौं तुम मेरैं मन अतिहिं सुहावत।
सूरदास सुनि ग्वाल चकृत भए यह लीला हरि प्रगट दिखावत ॥
ग्वाल सखा कर जोरि कहत हैं, हमहिं स्याम तुम जनि बिसरावहु।
जहाँ-जहाँ तुम देह धरत हौ तहाँ-तहाँ जनि चरन छुड़ावहु।
ब्रज तैं तुमहिं कहूँ नहिं टारौं यहै पाइ मैं हूँ ब्रज आवत।
यह सुख नहिं कहुँ भुवन चतुर्दस, इहिं ब्रज यह अवतार बतावत।
और गोप जे बहुरि चले घर तिनसौं कहि ब्रज छाक मँगावत।
सूरदास प्रभु गुप्त बात सब, ग्वालनि सौं कहि कहि सुख पावत ॥

छाक लेन जे ग्वाल पठाए।
तिनसौं पूछति महरि जसोदा, छाँड़ि कान्ह कित आए।
हमहिं पठाइ दिए नँद-नंदन, भूखे अति अकुलाए।
धेनु चरावत हैं बृंदाबन, हम इहिं कारन आए।
यह कहि ग्वाल गए अपनें गृह, मन की खबरि सुनाए।
सूर स्याम बलराम प्रातहीं अपजेंवत उठि धाए ॥४५२॥

भरही की इक नारि बुलाई।
छाक सामग्री सबै जोरि कै वाकें कर दै तुरत पठाई।
कह्यौ जाहि बृंदावन जैये, तू जानति सब ग्राउँ कन्हाई।
प्रेम सहित लै चली छाक यह कहँ हैं भूखे दोउ भाई।

तुरत जाइ वृंदावन पहुँची, ग्वाल-बाल कहुँ कोउ न बताई।
सूर स्याम कौं टेरत डोलति, किन हो लाल, छाक मैं लाई ॥४२३॥

बहुत फिरी तुम काज कन्हाई।
टेरि टेरि मैं भई बावरी दोउ भैया तुम रहे लुकाई।
जो सब ग्वाल गए ब्रज घर कौं तिनसौं कहि तुम छाक मँगाई।
लवनी दधि मिष्ठान्न जोरि कै जसुमति मेरैं हाथ पठाई।
ऐसी भूख माँझ तू ल्याई तेरी किहिं बिधि करौं बड़ाई।
सूर स्याम सब सखनि पुकारत आवत क्यौं न छाक है आई ॥४२४

बिहारी लाल आवहु, आई छाक।
भई अबार गाइ बहुरावहु उलटावहु दै हाँक।
अर्जुन भोज अरु सुबल, सुदामा, मधुमंगल इक ताक।
मिलि बैठे सब जेंवन लागे बहुत बने कहि पाक।
अपनी पत्रावलि सब देखत जहँ-तहँ फेनि पिराक।
सूरदास प्रभु खात ग्वाल सँग, ब्रह्मलोक यह धाक ॥४२५॥

ग्वालनि संग जेंवत हरि छाक।
प्रेम सहित मैया दै पठाई, सबै बनाई है इक ताक।
सुबल सुदामा श्रीदामा मिलि, सब सँग भोजन रुचि करि खात।
ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत, मुख लै मेलि सराहत जात।
जो सुख स्याम करत वृंदावन सो सुख नाहीं लोकहुँ सात।
सूर स्याम भक्तनि बस ऐसे ब्रज कहावत हैं नँद तात ॥४२६॥

ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत।
जूठौ लेत सबनि के मुख कौ अपनैं मुख लै नावत।
षटरस के पकवान धरे सब, तिनमैं रुचि नहिं लावत।
हा-हा करि-करि माँगि लेत हैं कहत मोहिं अति भावत।
यह महिमा येई पै जानत जातैं आपु बँधावत।
सूर स्याम सपनैं नहिं दरसत मुनिजन ध्यान लगावत ॥४२७

ब्रज-बासी पटतर कोउ नाहिं।
ब्रह्म सनक सिव, ध्यान न पावैं, इनकी जूठनि लै-लै खाहिं।
धन्य नंद धनि जननि जसोदा धन्य जहाँ अवतार कन्हाइ।
धन्य धन्य बृंदावन के तरु जहँ बिहरत त्रिभुवन के राइ।
हलधर कहत छाक जेंवत सँग मीठी लगत सराहत जाइ।
सूरदास प्रभु बिस्वंभर हरि, सो ग्वालनि के कौर अघाइ ॥४५८॥

ब्रजहिं चलौ, आई अब साँझ।
सुरभी सबै लेहु आगैं करि, रैनि होइ जनि बनहीं माँझ।
भली कही यह बात कन्हाई अतिहीं सघन अरन्य उजारि।
गायौ हाँकि चलाई ब्रज कौं और ग्वाल सब लए पुकारि।
निकसि गए बन तैं जब बाहिर अति आनंद भए सब ग्वाल।
सूरदास प्रभु मुरलि बजावत ब्रज आवत नटवर गोपाल ॥४५९॥

सुनि सखि ये बड़भागी मोर।
जिन पाँखनि कौ मुकुट बनायौ, सिर धरि नंदकिसोर।
ब्रह्मादिक सनकादि महामुनि, कलपत दोउ कर जोर।
बृंदावन के तृन न भए हम, लगत चरन कै कोर।
बड़ौ भाग नंद-जसुमति कौ है कोऊ ठहर न और।
सूरदास गोपिनि हित-कारन, कहियत माखन चोर ॥४६०॥

आजु बने बन तैं ब्रज आवत।
नाना रंग सुमन की माला नंद-नंदन उर पर छबि पावत।
संग गोप गोधन-गन लीन्हे, नाना गति कौतुक उपजावत।
कोउ गावत, कोउ नृत्य करत कोउ उघटत कोउ करताल बजावत।
राँभति गाइ बच्छ हित सुधि करि प्रेम उमँगि थन दूध चुवावत।
जसुमति बोलि उठी हरषित ह्वै, कान्हा धेनु चराए आवत।
इतनी कहत आइ गए मोहन, जननी दौरि हिए लै लावत।
सूर स्याम के कृत्य, जसोमति ग्वाल-बाल कहि प्रगट सुनावत ४६१

मैया बहुत बुरौ बलदाऊ।
कहन लग्यौ बन बड़ौ तमासौ, सब मौड़ा मिलि आऊ।
मोहूँ कौं चुचकारि गयौ लै, जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चलौ कहि, गयौ उहाँ तैं काटि खाइ रे हाऊ।
हौं डरपौं काँपौं अरु रोवौं कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौं, नहिं भागि सकौं, वै भागे जात अगाऊ।
मोसौं कहत मोल कौ लीनौ, आपु कहावत साऊ।
सूरदास बल बड़ौ चवाई, तैसेहिं मिले सखाऊ।४६२।

ब्रह्मा बालक-बच्छ हरे।
आदि-अंत प्रभु अंतरजामी, मनसा तैं जु करे।
सोइ रूप वै बालक गो-सुत, गोकुल जाइ भरे।
एक बरष निसि-बासर रहि सँग, काहु न जानि परे।
त्रास भयौ अपराध आपु लखि, अस्तुति करत खरे।
सूरदास स्वामी मनमोहन, तामैं मन न धरे।४६३।

मैं तौ वे हरे हैं ते तौ सोवत परे हैं, ये करे हैं कौनैं आन,
अँगुरीनि दंत दै रह्यौ।
पुरुष पुरान जानि कियौ चतुरानन, कै सोई प्रभु पूरन प्रगट ह्वै
ह्वै रह्यौ ?
उतै देखि आवै, इत आवै, अचरज पावै, सूर सुरलोक ब्रजलोक
एक ह्वै रह्यौ।
बिबस ह्वै हारि मानी आपु आयौ सरनगामी, देखि गोप मंडली
कमंडली पिछै रह्यौ।४६४।

बिनवै चतुरानन कर जोरे।
तुव प्रताप जान्यौ नहिं प्रभु जू, करौं अस्तुति मद छोरे।
अपराधी मतिहीन नाथ हौं, चूक परी निज ओरे।
हम कृत दोष छमौ करुनामय, ज्यौं भू परसत ओरे।

जुग-जुग बिरद यहै चलि आयौ, सत्य कहत भय होरे।
सूरदास प्रभु पछिले सेवा अब न बनै मुख मोरे ।४६५।

भावै मोहिं करौ बृंदावन-रेनु।
जिहिं चरननि डोलत नँद-नंदन दिन प्रति बन-बन चारत धेनु।
कहा भयौ यह देव-देह धरि, अरु ऊँचे पद पाएँ ऐनु।
सब जीवनि कै उदर माँझ प्रभु महा प्रलय-जल करत ही सैनु।
हम तैं धन्य सदा वे द्रुम-तृन, बालक-बच्छ-बिषान-रु धेनु।
सूर स्याम जिनकैं सँग डोलत, हँसि बोलत, मथि पीवत फेनु ।४६६।

ऐसैं बसिऐ ब्रज की बीथिनि।
ग्वारनि के पनवारे चुनि-चुनि उदर भरीजै सीथिनि।
पैंडे के सब बृच्छ बिराजत छाया परम पुनीतनि।
कुंज-कुंज-प्रति लोटि-लोटि, ब्रज-रज लागै रँग रीतनि।
निसिदिन निरखि जसोदानंदन, अरु जमुना-जल पीतनि।
परसत सूर होत तन पावन दरसन करत अतीतनि ।४६७।

धनि यह बृंदावन की रेनु।
नंद-किसोर चरावत गैयाँ मुखहिं बजावत बेनु।
मन-मोहन कौ ध्यान धरैं जिय अति सुख पावत चैनु।
चलत कहाँ मन और पुरी तन जहाँ कछु लैनु न दैनु।
इहाँ रहहु जहँ जूठनि पावहु, ब्रजबासिनि कै ऐनु।
सूरदास ह्याँ की सरवरि नहिं, कल्पबृच्छ सुर-धेनु ।४६८।

सुनि मैया मैं तौ पय पीवौं मोहिं अधिक रुचि आवै री।
आजु सवारैं धेनु दुही मैं, वहै दूध मोहिं प्यावै री।
और धेनु कौ दूध न पीवौं, जो करि कोटि बनावै री।
जननी कहति, दूध धौरी कौ, पुनि-पुनि सौंह करावै री।
तुम तैं मोहिं और को प्यारौ बारंबार मनावै री।
सूर स्याम कौं पय धौरी कौ माता हित सौं ल्यावै री ।४

पाई पाई है रे भैया, कुंज पुंज मैं टाटी।
अबकैं अपनी हटकि चरावहु, जैहैं भटकी घाटी।
आवहु बेगि सकल चहुँ दिसि तें कत डोलत अकुलाने ?
सुनि मृदु बचन हेरि बदन कर, हरषि सबै समुहाने।
तुम तौ फिरत अनत हीं ढूँढ़त, ये बन फिरतिं अकेली।
हाँकी गाइ कौन पै जैहौ, सघन बहुत द्रुम बेली।
सूरदास प्रभु मधुर बचन कहि, हरषित सबहिं बुलाए।
नृत्य करत आनँद गो चारत सबै कुंज तैं आए ।४७०।

आनँद सहित सबै ब्रज आए।
धन्य जसोदा तेरौ बारौ हम सब मरत जिवाए।
नर-बपु धरे देव यह कोऊ, आइ लियौ अवतार।
गोकुल-ग्वाल-गाइ-गोसुत के येई राखनहार।
पय पीवत पूतना निपाती, तृनावर्त इहिं भाँति।
वृषभासुर-बच्छासुर मार्‌यौ, बक-मोहन दोउ भ्रात।
जब तैं जनम लियौ ब्रज-भीतर, तब तैं यहै उपाइ।
सूर स्याम के बल-प्रताप तैं, बन-बन चारत गाइ ।४७१।

तुम कत गाइ चरावन जात।
पिता तुम्हारौ नंद महर सौ अरु जसुमति सी जाकी मात।
खेलत रहौ आपने घर मैं माखन दधि भावै सो खात।
अंमृत बचन कहौ मुख अपने, रोम-रोम पुलकित सब गात।
अब काहू के जाहु कहूँ जनि ,आवति हैं जुवती इतरात।
सूर स्याम मेरे नैननि आगे तैं, कत कहूँ जात हौ तात ।४७२।

मैया हौं न चरैहौं गाइ।
सिगरे ग्वाल घिरावत मोसौं मेरे पाइ पिराइ।
जौ न पत्याहि पूँछि बलदाउहिं, अपनी सौंह दिवाइ।
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि, गारी देत रिसाइ।

मैं पठवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ।
सूर स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ ॥५०३॥

अंग अभूषन जननि उतारति।
दुलरी ग्रीव माल मोतिनि की, लै केयूर भुज स्याम निहारति।
छुद्रावली उतारति कटि तैं सैंति धरति मनहीं मन वारति।
रोहिनि, भोजन करौ चँड़ाई बार-बार कहि-कहि करि आरति।
भूखे भए स्याम हलधर दोउ, यह कहि अंतर प्रेम बिचारति।
सूरदास प्रभु-मातु जसोदा पट लै, दुहुनि अंग-रज झारति ॥५०४

ये दोऊ मेरे गाइ चरैया।
मोल बिसाहि लियौ मैं तुमकौं जब दोउ रहे नन्हैया।
तुमसौं टहल करावति निसि-दिन और न टहल करैया।
यह सुनि स्याम हँसे कहि दाऊ, झूठ कहति है मैया।
जानि परत नहिं साँच झुठाई चारत धेनु झुरैया।
सूरदास जसुदा मैं चेरी कहि-कहि लेति बलैया ॥५०५॥

सोवत नींद आइ गई स्यामहिं।
महरि उठी पौढ़ाइ दुहुँनि कौं, आपु लगी गृह कामहिं।
बरजति है घर के लोगनि कौं, हरुएँ लै लै नामहिं।
गाढ़ें बोलि न पावत कोऊ डर मोहन बलरामहिं।
सिव सनकादि अंत नहिं पावत ध्यावत अह निसि-जामहिं।
सूरदास-प्रभु ब्रह्म सनातन, सो सोवत नँद-धामहिं ॥५०६॥

देखत नंद कान्ह अति सोवत।
भूखे भए आजु बन-भीतर, यह कहि-कहि मुख जोवत।
कह्यौ नहीं मानत काहू कौ, आपु हठी दोउ बीर।
बार-बार तनु पोंछत कर सौं, अतिहिं प्रेम की पीर।
सेज मँगाइ लई तहँ अपनी, जहाँ स्याम-बलराम।
सूरदास प्रभु कैं ढिग सोए, सँग पौढ़ी नँद-बाम ॥५०७॥

जागि उठे तब कुँवर कन्हाई।
मैया कहाँ गई मो ढिग तैं, सँग सोवत बल भाई।
जागे नंद, जसोदा जागी, बोलि लिए हरि पास।
सोवत झझकि उठे काहे तैं, दीपक कियौ प्रकास।
सपनैं कूदि परयौ जमुना-दह, काहूँ दियौ गिराइ।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, जनि हो लाल डराइ॥४७९॥

मैं बरज्यौ जमुना-तट जात।
सुधि रहि गई न्हात की तेरैं, जनि डरपौ मेरे तात।
नंद उठाइ लियौ कोरा करि, अपनैं सँग पौढ़ाइ।
बृंदावन मैं फिरत जहाँ-तहँ, किहिँ कारन तू जाइ।
अब जनि जैहौ गाइ चरावन, कहूँ को रहति कसाइ।
सूर स्याम दंपति बिच सोए, नींद गई तब आइ॥४८०॥

सपनौ सुनि जननी अकुलानी।
दंपति बात करत आपुस मैं, सोवत सारँगपानी।
या ब्रज कौ जीवन यह ढोटा, कहा देख्यौ हरि आजु।
गाइ चरावन जान न दीजै, याकौ है कछु काजु।
गृह-संपति है तनक ढुटौना, इनहीं सौं सुख-भोग।
सूर स्याम बन जात चरावन, हँसी करत सब लोग॥४८१॥

नारद रिषि नृप सौं यौं भाषत।
वे हैं काल तुम्हारे प्रगटे, काहैं उनकौं राखत।
काली उरग रहै जमुना मैं, तहँ तैं कमल मँगावहु।
दूत पठाइ देहु ब्रज ऊपर, नंदहिं अति डरपावहु।
यह सुनि कै ब्रज लोग डरैंगे, वै सुनिहैं यह बात।
पुहुप लेन जैहैं नँद-ढोटा, उरग करै तहँ घात।
यह सुनि कंस बहुत सुख पायौ, भली कही यह मोहिं।
सूरदास प्रभु कौं मुनि जानत, ध्यान धरत मन जोहि॥४८२॥

कंस बुलाइ दूत इक लीन्हौ।
कालीदह के फूल मँगाए, पत्र लिखाइ ताहि कर दीन्हौ।
यह कहियौ ब्रज जाइ नंद सौं, कंस राज अति काज मँगायौ।
तुरत पठाइ दिऐं ही बनिहै, भली भाँति कहि कहि समुझायौ।
यह अंतरजामी जानी जिय, आपु रहे, बन ग्वाल पठाए।
सूर स्याम, ब्रज-जन-सुखदायक, कंस-काज जिय हरष बढ़ाए ॥४८२

पाती बाँचत नंद डराने।
कालीदह के फूल पठावहु, सुनि सबही घबराने।
जौ मोकौं नहिं फूल पठावहु, तौ ब्रज देहुँ उजारि।
महर गोप, उपनंद न राखौं सबहिनि डारौं मारि।
पुहुप देहु तौ बनै तुम्हारी, मातरु गए बिलाइ।
सूर स्याम-बलराम तिहारे, माँगौं उनहिं धराइ ॥४८३॥

नंद सुनत मुरझाइ गए।
पाती बाँची, सुनी दूत मुख यह सुनि चकित भए।
घर मोहन खेलत वाकैं मन, आजु कही यह बात।
कालीदह के फूल कहाँ धौं को आनै, पछितात।
और गोप सब नंद बुलाए, कहत सुनी यह बात।
सुनहु सूर नृप इहिं ढँग माँग्यौ घर मोहन पर घात ॥४८४॥

आजु परे ब्रज ऊपर काज।
कहाँ निकसि जैऐ, को राखै नंद कहत बेहाल।
मोहिं नहीं जिय को डर मैं कहुँ, दोउ सुत कौ डरपाउँ।
गाउँ तजौं कहुँ जाउँ निकसि लै, इनहीं काज पराउँ।
अब उपाय नहिं दीसत कबहुँ, सरन राखि को लेइ।
सूर स्याम कौ बरजति माता, बाहिर जान न देइ ॥४८५॥

नंद घरनि ब्रज-नारि बिचारति।
ब्रजहिं बसत सब जनम सिरानौ ऐसी करी न कारति।

घन दूर कै दुम मौन्, कर कनै दै उर।
गगधाम नागर मन मारे धीरे सकुच कन्तर।
पठे धरत धौउ नैन टरनै, नंद-नन्दनि दुख दर।
सूर स्याम निरखत माता-मुख, पूरन पन पर ॥४८४॥

पूछौ आइ मात की बात।
मैं बलि जाउँ मुखारबिंद की, तुमहीं धाम कंत अनुपात।
आप स्याम नंद पै धाय आन्यौ मातु-पिता निरखात।
अपही दूरि करौ दुख इनकौ बसहिं पडे हैं उपजात।
मौसौं कही मान बाबा यह बहुत करत तुम मोच-विचार।
कहा कहौं तुमसौं मैं प्यारे, कंस करत तुमसौं बहु मार।
अब तैं जनम भयौ है तुम्हरौ कैते करबर टरे कन्हाइ।
सूर स्याम कुलदेवनि तुमकौं जहाँ तहाँ करि लियौ सहाइ॥४८५॥

तुमहिं कहत कोउ करै सहाइ।
सो देवता संगही मेरैं ब्रज तें अनत कहूँ नहिं जाइ।
यह देवता कंस मारैगौ केस धरे धरनी घिसियाइ।
सो देवता मनावहु सब मिलि तुरत कमाल सो देहु पठाइ।
बाबा नंद झगरत किहिं कारन यह कहि मया-मोह अरुझाइ।
सूरदास प्रभु मातु-पिता कौ, तुरतहिं दुख डारयौ बिसराइ॥४८६॥

खेलत स्याम सखा लिए संग।
इक मारत, इक रोकत गेंदहिं, इक भागत करि नाना रंग।
मार परसपर करत आपु मैं अति आनंद भए मन माहिं।
खेलत ही मैं स्याम सबनि कौं जमुना-तट कौं लीन्हे जाहिं।
मारि भजत जो जाहि ताहि सो मारत लेत आपनौ दाउ।
सूर स्याम के गुन को जानै, कहत और कछु, और उपाउ॥४८७॥

स्याम सखा कौं गेंद चलाई।
श्रीदामा मुरि अंग बचायौ गेंद परी कालीदह जाई।

धाइ गह्यौ तब फेंट स्याम की, देहु न मेरी गेंद मँगाई।
और सखा जनि मोकौं जानौ, मोसौं तुम जनि करौ ढिठाई।
जानि-बूझि तुम गेंद गिराई, अब दीन्हें ही बनै कन्हाई।
सूर सखा सब हँसत परसपर, भली करी हरि गेंद गँवाई ॥४८०॥

फेंट छाँड़ि मेरी देहु श्रीदामा।
काहे कौं तुम रारि बढ़ावत, तनक बात कै कामा।
मेरी गेंद लेहु ता बदलैं बाँह गहत हौ धाइ।
छोटी बड़ौ न जानत काहूँ करत बराबरि आइ।
हम काहे कौं तुमहिं बराबर बड़े नंद के पूत।
सूर स्याम दीन्हें ही बनिहै, बहुत कहावत धूत ॥४८१॥

तोसौं कहा धुताई करिहौं।
जहाँ करी तहँ देखी नाहीं अब तोसौं मैं लरिहौं।
मुँह सम्हारि तू बोलत नाहीं कहति बराबरि बात।
पावहुगे अपनौ कियौ अबहीं रिसनि कँपावत गात।
सुनहु स्याम, तुमहूँ सरि नाहीं, ऐसे गए बिलाइ।
हमसौं सतर होत सूरज प्रभु, कमल देहु अब जाइ ॥४८२॥

रिस करि लीन्हीं फेंट छुड़ाइ।
सखा सबै देखत हैं ठाढ़े आपुन चढ़े कदम पर धाइ।
तारी दै-दै हँसत सबै मिलि, स्याम गए तुम भाजि डराइ।
रोवत चले श्रीदामा घर कौं, जसुमति आगैं कहिहौं जाइ।
सखा-सखा कहि स्याम पुकार्यौ, गेंद आपनी लेहु न आइ।
सूर स्याम पीतांबर काछे कूदि परे दह मैं भहराइ ॥४८३॥

हाय हाय करि सखनि पुकार्यौ।
गेंद काज भह करी श्रीदामा, नंद कौ ढोटा मार्यौ।
जसुमति चली रसोइ भीतर, तबहिं ग्वालि इक छींकी।
ठठकि रही द्वारे पर ठाढ़ी, बात नहीं कछु नीकी।

आइ अजिर निकसी नँदरानी, बहुरी दोष मिटाइ।
मँजारी आगै ह्वै आई, पुनि फिरि आँगन आइ।
व्याकुल भई, निकसि गई बाहिर कहँ धौं गए कन्हाई।
बाएँ काग दाहिनैं खर-स्वर, व्याकुल घर फिरि आई।
छन भीतर, छन बाहिर आवति छन आँगन इहिं भाँति।
सूर स्याम कौं टेरति जननी, नैंकु नहीं मन साँति ॥४८४॥

ऐसे नंद घरै घर आवत।
पैठत पौरि छींक भइ बाएँ, दहिनैं धाह सुनावत।
फटकत स्रवन स्वान द्वारे पर गररी करति लराई।
माथे पर ह्वै काग उड़ान्यौ कुसगुन बहुतक पाई।
आए नंद घरहिं मन मारे, व्याकुल देखी नारि।
सूर नंद जसुमति सौं बूझत, बिनु छबि बदन निहारि ॥४८५॥

नंद घरनि सौं पूछत बात।
बदन झुराइ गयौ क्यौं तेरौ, कहाँ गए बल-मोहन तात?
भीतर चली रसोई कारन छींक परी तब आँगन आइ।
पुनि आगैं ह्वै गई मँजारी, और बहुत कुसगुन मैं पाइ?
मोहिं भए कुसगुन पर पैठत आजु कहा यह समुझि न जाइ।
सूर स्याम गए आजु कहाँ धौं बार-बार पूँछत नँदराइ ॥४८६॥

महर-महरि-मन गई जनाइ।
छन भीतर, छन आँगन ठाढ़े छन बाहिर देखत हैं जाइ।
इहिं अंतर सब सखा पुकारत रोवत आए ब्रज कौं धाइ।
आतुर गए नंद घरही कौं महर-महरि सौं बात सुनाइ।
चकित भए दोउ बूझन लागी कही बात हमकौं समुझाइ।
सूर स्याम खेलतहिं कदम चढ़ि, कूदि परे कालीदह जाइ ॥४८७॥

ब्रज-बासी यह सुनि सब आए।
कहाँ परयौ गिरि कुँवर कन्हैया, बालक लै सो ठौर दिखाए।

सूनौ गोकुल कियौ स्याम तुम, यह कहि लोग उठे सब रोइ ।
नंद रहत सबहिनि धरि राख्यौ, पोंछत बदन नीर सौं धोइ ।
ब्रज बासी सब कहत महर सौं मरन भयौ सब ही कौ आइ ।
सूर स्याम बिनु को बसिहै ब्रज धिक जीवन तिहुँ भुवन कहाइ ॥

महरि पुकारति कुँवर कन्हाई ।
माखन धरयौ तिहारैहि कारन आजु कहाँ अबसेरि लगाई ।
अति कोमल तुम्हरे मुख लायक, तुम खेलहु मेरे नैन जुड़ा ।
धौरी-धूप औटि है राख्यौ अपनैं कर दुहि गए धनाई ।
बरजति ग्वारि जसोदा की मन, यह कहि कहि नीकैं समुझाई ।
सूर स्याम सुत जीव मातु के, यह बियोग सह्यौ नहिं जाई ।३९९

चौंकि परी तन की सुधि आई ।
आजु कहा ब्रज सोर मचायौ तब जान्यौ दह गिरयौ कन्हाइ ।
पुत्र-पुत्र कहिकै उठि धौरी, ब्याकुल जमुना-तीरहिं आई ।
ब्रज-बनिता सब संगहिं लागी आइ गए बल, अनुज भाई ।
जननी ब्याकुल देखि प्रबोधत धीरज करि नीकैं समुझाई ।
सूर स्याम कौ नैकु नहीं डर, जनि तू रोवै जसुमति माई ।४००।

अति कोमल तनु धरयौ कन्हाई ।
गए तहाँ जहँ काली सोवत उरग-नारि देखत अकुलाई ।
कह्यौ, कौन कौ बालक है तू, बार-बार कही, भागि न जाई ।
छनकहिं मैं जरि भस्म होइगौ जब देखै उठि जाग जम्हाई ।
उरग-नारि की बानी सुनि कै, आपु हँसे मन मैं मुसुकाई ।
मौकौं कंस पठायौ देखन तू याकौं अब देहि जगाई ।
कहा कंस दिखरावत इनकौं एक फूँकही मैं जरि जाई ।
पुनि-पुनि कहत सूर के प्रभु कौ तू अब काहे न जाइ पराई ।४०१

झिरकि कै नारि, दै गारि गिरिधारि तब, पूँछ पर लात दै अहि जगायौ।
उठ्यौ अकुलाइ, डर पाइ खगराइ कौ, देखि बालक गरब अति बढ़ायौ।
पूँछ लीन्ही झटकि, धरनि सौं गहि पटकि, फुंकर्‌यौ लटकि करि क्रोध फूलै।
पूँछ राखी चाँपि, रिसनि काली काँपि, देखि सब साँपि-अवसान भूले।
करत फन-घात विष जात उतरात अति, नीर जरि जात नहिं गात परसै।
सूर के स्याम प्रभु लोक-अभिराम बिनु जान अहिराज विष ज्वाल बरसै ।५०२।

उरग लियौ हरि कौं लपटाइ।
गर्व-बचन कहि कहि मुख भाषत, मोकौं नहिं जानत अहिराइ।
लियौ लपेटि चरन तैं सिर लौं, अति इहिं मोसौं करी ढिठाइ।
चाँपी पूँछ लुकावत अपनी, जुवतिनि कौं नहिं सकत दिखाइ।
प्रभु अंतरजामी सब जानत अब डारौं इहिं सकुचि मिटाइ।
सूरदास प्रभु तन बिस्तार्‌यौ काली बिकल भयौ तब जाइ ।५०३।

जबहिं स्याम तन, अति बिस्तार्‌यौ।
पटपटात टूटत अँग जान्यौ सरन-सरन सु पुकार्‌यौ।
यह बानी सुनतहिं करुनामय तुरत गए सकुचाइ।
यहै बचन सुनि द्रुपद-सुता-मुख दीन्हौ बसन बढ़ाइ।
यहै बचन गजराज सुनायौ गरुड़ छाँड़ि तहँ धाए।
यहै बचन सुनि लाखा-गृह मैं पांडव जरत बचाए।
यह बानी सहि जात न प्रभु सौं ऐसे परम कृपाल।
सूरदास प्रभु अंग सकोर्‌यौ ब्याकुल देख्यौ ब्याल ।५०४।

नाथत ब्याल बिलंब न कीन्हौ।
पग सौं चाँपि धींच बल तोरयौ, नाक फोरि गहि लीन्हौ।
कूदि चढ़े ताके माथे पर काली करत बिचार।
स्रवननि सुनी रही यह बानी, ब्रज ह्वैहै अवतार।
तेइ अवतरे आइ गोकुल मैं मैं जानी यह बात।
अस्तुति करन लागी सहसौ मुख, धन्य धन्य जगतात।
बार-बार कहि सरन पुकारयौ राखि-राखि गोपाल।
सूरदास प्रभु प्रगट भए अब, देख्यौ ब्याल बिहाल ॥१२०५॥

जसुमति टेरति कुँवर कन्हैया।
आगैं देखि कहत बलरामहिं, कहाँ रह्यौ तुव भैया।
मेरौ भैया आवत अबहीं तोहिं दिखाऊँ मैया।
धीरज करहु नैंकु तुम देखहु, यह सुनि लेति बलैया।
पुनि यह कहति मोहिं परमोधत धरनि गिरी मुरझैया।
सूर बिना सुत भई अति ब्याकुल, मेरौ बाल नन्हैया ॥१२०६॥

जमुना तोहिं बड़ौ क्यौं भावै।
तोमैं छण्ड ढेलुवा ऐसे, सो सुरत्यौ नहिं आवै।
तेरौ नीर सुधौ जो अब लौं, ब्यार पनार कहावै।
हरि-बियोग कोउ पाउँ न दैहै, को तट धेनु चरावै।
भरि भादौं जो राति अष्टमी, सो दिन क्यौं न मनावै।
सूरदास की ऐसी अछुर, कमल-सूत्र लै आवै ॥१२०७॥

आवत उरग नाथे स्याम।
नद, जसुदा, गोप-गोपी, कहत हैं बलराम।
मोर-मुकुट, बिसाल लोचन, स्रवन कुंडल लोल।
कटि पितंबर, बेष नटवर, नरतत फन प्रति डोल।
देव दिवि दुंदुभि बजावत सुमन-गन बरषाइ।
सूर स्याम बिलोकि ब्रज जन, मातु पितु सुख पाइ ॥१२०८॥

फन-फन प्रति निरतत नँदनंदन।
जल-भीतर जुग जाम रहे, कहुँ मर्‍यौ नहीं तन-चंदन।
उहै काछनी कटि, पीतांबर, सीस-मुकुट अति सोहत।
मानौ गिरि पर मोर अनंदित, देखत ब्रज-जन मोहत।
अंबर थके अमर ललना सँग, जै जै धुनि तिहुँ लोक।
सूर स्याम काली पर निरतत आवत हैं ब्रज-ओक ॥५०९॥

गोपाल राइ निरतत फन-प्रति ऐसे।
गिरि पर आए बादर देखत, मोर अनंदित जैसे।
डोलत मुकुट सीस पर हरि कै, कुंडल-मंडित गंड।
पीत बसन दामिनि मनु घन पर, तापर सुर-कोदंड।
उरग-नारि आगैं सब ठाढ़ीं मुख-मुख अस्तुति गावैं।
सूर-स्याम अपराध छमहु अब, हम माँगैं पति पावैं ॥५१०॥

ठाढ़ देखत हैं ब्रजबासी।
कर जोरे अहि-नारि बिनय करि अस्तुति धन्य अबिनासी।
जे पद-कमल रमा उर-राजति परसि सुरसरी आई।
जे पद-कमल संभु की संपति फन प्रति धरे कन्हाई।
जे पद-परसि सिला उधरि गई पांडव गृह फिरि आए।
जे पद-कमल-भजन महिमा तैं, जन प्रहलाद बचाए।
जे पद ब्रज-जुवतिनि सुखदायक तिहूँ भुवन धरे पावन।
सूर स्याम ते पद फन फन-प्रति, निरतत आदि कियौ पावन ॥५११॥

गरुड़ त्रास तैं जौ ह्याँ आयौ।
तौ प्रभु-चरन-कमल फन-फन-प्रति अपनैं सीस धरायौ।
धनि रिषि साप दियौ खगपति कौं, ह्याँ तब रह्यौ छपाइ।
प्रभु-बाहन-डर भाजि बच्यौ अहि, नातरु लेतौ खाइ।
यह सुनि कृपा करी नँद-नंदन चरन-चिह्न प्रगटाए।
सूरदास प्रभु अभय ताहि करि, उरग-द्वीप पहुँचाए ॥५१२॥

मनौ ब्रज है जमुना कैं तीर।
कालिनाग के फन पर निरतत संकर्षन कौ बीर।
लाग मान थेइ-थेइ करि उघटत ताल मृदंग गँभीर।
प्रेम-मगन गावत गंधर्वगन ब्योम बिमाननि भीर।
उरग-नारि आगैं भईं ठाढ़ी, नैननि ढारति नीर।
हमकौं दान देहु पति छाँड़हु सुन्दर स्याम सरीर।
आए निकसि पहिरि मनि-भूषन, पीत-बसन कटि चीर।
सूर स्याम कौं भुज भरि भेंटत, अंकम देत अहीर॥२१३॥

(तुम) आहु बालक, छाँड़ि जमुना स्वामि मेरौ जागिहै।
अंग कारौ, मुख बिषारौ दृष्टि परै तौहिं लागिहै।
(तुम) केरि बालक जुवा खेल्यौ केरि दुरत दुराइयौ।
कैंडु तुम हीरा पदारथ आगिहै मेरौ साँइयौ।
नाहिं नागिनि जुवा खेल्यौ नाहिं दुरत दुराइयौ।
कंस कारन गेंद लेकारे कमल-कारन आइयौ।
(तब) धाइ धायौ आहि जगायौ मनौं छूटे हाथियौं।
सहस फन फुफकार छाँड़े आइ काली माथियौं।
जब कान्ह काली लै चले, तब नारि बिनवै देव हो।
पेरि कौ अहिवात दीजै करै तुम्हारी सेव हो।
(तब) छाँड़ि पंकज बदयौ बाहिर, भयौ ब्रज-मन-भावना।
मथुरा नगरी कृष्न राजा, सूर मनहिं बधावना॥२१४॥

जय जय पुनि अमरनि नभ कीन्ही।
धन्य-धन्य जगदीस गुसाईं आपनौ करि अहि लीन्ही।
अभय कियौ फन चरन-चिन्ह धरि जानि आपुनौ दास।
जम तैं छाँड़ि कृपा करि पठयौ, मेटि गरुड़ कौ त्रास।
अस्तुति करत अमर-गन चहुँरे, गए आपनें लोक।
सूर स्याम मिलि मातु पिता कौ दूरि कियौ तनु सोक॥२१५॥

सहस सकट भरि कमल चलाए।
अपनी सभमरि और गोप दै, तिनकौं साथ पठाए।
और बहुत काँवरि दधि-माखन, अहिरनि पै जोरि।
नृप कैं हाथ पत्र यह दीजौ, बिनती कीजौ मोरि।
मेरौ नाम नृपति सौं लीजौ, स्याम कमल लै आए।
कोटि कमल आपुन नृप माँगे, तीन कोटि हैं पाए।
नृपति हमहिं अपनौ करि जानौ, तुम लायक हम नाहिं।
सूरदास कहियौ नृप आगैं, तुमहिं छाँड़ि कहँ जाहिं ॥२१६॥

दसहुँ दिसा तैं बरत दवानल, आवत है ब्रज-जन पर धायौ।
ज्वाला उठी अकास बराबरि, घात आपनी सब करि पायौ।
बीरा लै आयौ सन्मुख तैं आदर करि नृप कंस पठायौ।
जारि करौं परलय छिन भीतर, ब्रज चहुँधौ घेरिक अकुलायौ।
धरनि अकास भयौ परिपूरन, नैकु नहीं कहुँ संधि बचायौ।
सूर स्याम बलरामहिं मारन गर्व-सहित आतुर ह्वै आयौ ॥२१७॥

ब्रज के लोग उठे अकुलाइ।
ज्वाला देखि अकास बराबरि दसहुँ दिसा कहूँ पार न पाइ।
झरहरात बन-पात गिरत तरु धरनी तरकि तराकि सुनाइ।
जल बरषत गिरिवर-तर बाँचे, अब कैसैं गिरि होत सहाइ।
लटकि जात जरि-जरि द्रुम-बेली, पटकत बाँस काँस कुस, ताल।
उचटत भरि अंगार गगन लौं सूर निरखि ब्रज-जन बेहाल ॥२१८

अब कैं राखि लेहु गोपाल।
दसहूँ दिसा दुसह दावागिनि उपजी है इहिं काल।
पटकत बाँस, काँस कुस चटकत, लटकत ताल तमाल।
उचटत अति अंगार, फुटत फर, झपटत लपट कराल।
धूम धूँधि बाढ़ी धर अंबर, चमकत बिच-बिच ज्वाल।
हरिन, बराह, मोर चातक, पिक, जरत जीव बेहाल।

अति प्रिय करहु, नैन मूँदहु सब, हँसि बोले नँदलाल ।
सूर अगिनि सब बदन समानी, अभय किए ब्रज-बाल ।४६९।

नंद घरनि यह करति पुकारे ।
कोउ बरजत, कोउ अगिनि बतावत, दई परयौ है स्याम हमारे ।
तब गिरिधर कर धरयौ कन्हैया अब न बाँचिहैं मारत जारे ।
जेंवन करन चली अब भीतर, छींक परी तब आसु सवारे ।
अब सबको संहार होत है छींक किए (ये काज बिगारे ।
कैसेहुँ ये बालक दोउ उबरैं, पुनि-पुनि सोचति परी खभारे ।
सूर स्याम यह कहत जननि सौं, रहि री मा धीरज उर धारे ।४७०।

झहरात झहरात दवा ( नल ) आयौ
घेरि चहुँ ओर, करि सोर अंदोर बन, धरनि आकास चहुँ पास छायौ ।
बरत बन-बाँस, थरहरत कुस काँस, जरि, उड़त है भाँस अति प्रबल धायौ ।
झपटि झपटत लपट, फूल-फल चट चटकि, फटत लटलटकि द्रुम द्रुम नवायौ ।
अति अगिनि-झार, भंभार धुंधार करि, उचटि अंगार झंझार छायौ ।
बरत बन पात भहरात झहरात अररात तरु महा, धरनी गिरायौ ।
भए बेहाल सब ग्वाल ब्रज-बाल तब, सरन गोपाल कहि कै पुकारयौ ।
एना केसी सकट बकी बक अघासुर, बाम कर राखि गिरि ज्यौं उबारयौ ।
नैंकु धीरज करौ, जियहिं कोउ जिनि डरौ कह्यौ हरि सबै लोचन मुँदाय ।
मुठि भरि लियौ, सब नाइ मुखही दियौ, सूर प्रभु पियौ ब्रज-जन उबार ।४७१।

चकित देखि यह कहैं नर-नारी।
धरनि अकास बराबरि ज्वाला झपटति लपट करारी।
नहिं बरज्यौ नहिं छिरक्यौ काहूँ, कहँ धौं गई बिलाइ।
अति आघात करति बन-भीतर कैसैं गई बुझाइ।
तृन की आगि बरतही बुझि गई, हँसि-हँसि कहत गोपाल।
सुनहु सूर यह करनि कहनि यह, ऐसे प्रभु के ख्याल ।४२२।

अति सुंदर नँद महर-ढुटौना।
निरखि-निरखि ब्रजनारि कहति सब यह जानत कछु टौना।
कपट रूप की त्रिया निपाटी तबहिं रह्यौ अति छौना।
द्वार सिला पर पटकि तृना कौं, है आयौ औ पौना।
अघा बकासुर तबहिं सँहारयौ प्रथम कियौ बन-गौना।
सूर प्रगट गिरि धरयौ बाम कर, हम जानतिं यहि बौना ।४२३।

हरि ब्रज-जन के दुख बिसरावन।
कहाँ कंस कब कमल मँगाए, कहाँ दवानल-दावन।
जल कब गिरे, उरग कब नाथ्यौ नहिं जानत ब्रज-लोग।
कहाँ बसे इक दिवस रैनि भरि, कबहिं भयौ यह सोग।
यह जानत हम ऐसैंहि ब्रज मैं ऐसैंहि करत बिहार।
सूर स्याम जननी सौं माँगत, माखन बारंबार ।४२४।

आजु कन्हैया बहुत बच्यौ री।
खेलत रह्यौ घोष के बाहर, कोउ आयौ सिसु-रूप रच्यौ री।
मिलि गयौ आइ सखा की नाईं, लै चढ़ाइ हरि कंध नच्यौ री।
गगन उड़ाइ गयौ लै स्यामहिं आनि धरनि पर आप दच्यौ री।
धर्म सहाइ होत है जहँ-तहँ, स्रम करि पूरब पुन्य पच्यौ री।
सूर स्याम अब कै बचि आए, ब्रज घर-घर सुख-सिंधु मच्यौ री।

बड़े भाग हैं महर महरि के।
लै गयौ पीठि चढ़ाइ असुर इक, कहा कहौं बचरन या हरि के।

नंदघरनि सुमनस मनावति सुत हौ रच्छक घरी-पहर के।
जहँ-तहँ तुमहिं सहाइ सदा हौ, जीवन हैं ये स्याम सहर के।
हरष भए नँद करत बधाइ, दान देत कहा कहौं महर के।
पंच-सब्द-धुनि बाजत, नाचत, गावत मंगलचार घहर के।
अंकम भरि-भरि लेत स्याम कौं, ब्रज-नर-नारि अतिहिं मन हरषे।
सूर स्याम संतनि सुखदायक दुष्टनि के उर सालक करषे ॥५२६॥

रजनी-मुख बन तैं बने आवत, भावति मंद गयंद की मटकनि।
बालक-बृंद बिनोद हँसावत करतल लकुट धेनु की हटकनि।
बिगसित गोपी मनौ कुमुद सर, रूप-सुधा लोचन-पुट घटकनि।
पूरन कला उदित मनु उडुपति तिहिं छन बिरह-तिमिर की फटकनि
लज्जित मनमथ निरखि बिमल छबि रसिक रंग भौंहनि की मटकनि
मोहनलाल, छबीलौ गिरिधर, सूरदास बलि नागर नटकनि ॥५२७॥

गावत मंगलचार महर-घर।
जसुमति भोजन करति चँडाई, नेवज करि-करि धरनि स्याम कर।
ऐसे रहौ न छुवै कन्हैया यह आने यह देव-काज पर।
और नहीं कुलदेव हमारे कै गोधन, कै य सुरपति बर।
करति बिनय कर जोरि जसोदा, कान्हहिं कृपा करौ करुनाकर।
और देव तुम सम कोउ नाहीं सूर करी सेवा चरननि-तर ॥५२८॥

बाजति नंद अवास बधाई।
बैठे खेलत द्वार आपनें सात बरस के कुँवर कन्हाई।
बैठे नंद सहित बृषभानुहिं और गोप बैठे सब आई।
थापैं देत घरनि के द्वारैं गावति मंगल नारि बधाई।
पूजा करत इंद्र की जानी, आए स्याम तहाँ अतुराई।
बार बार हरि बूझत नंदहिं, कौन देव की करत पुजाई।
इंद्र बड़े कुल-देव हमारे, उनतैं सब यह होति बड़ाई।
सूर स्याम तुम्हरे हित कारन, यह पूजा हम करत सदाई ॥५२९॥

नंद कह्यौ, घर जाहु कन्हाई।
ऐसैं मैं तुम जाहु कहूँ जनि, कह्यौ महरि, सुत लेहु बुलाई।
सोइ रहौ मेरे पलिका पर, कहति महरि हरि सौं समुझाई।
बरष दिवस कौ महा महोच्छव, करे आवै धौं कौन सुभाई।
और महर-ढिग स्याम बैठि कै, कीन्ही एक बिचार बनाई।
सुपनैं आजु सिख्यौ मोकौं, इक बड़ौ पुरुष अवतार जनाई।
कहन लग्यौ मो सौं यै बातैं पूजत हौ तुम काहि मनाई।
गिरि गोबर्धन देवनि कौ मनि, सेवहु ताकौं भोग चढ़ाइ।
भोजन करै सबनि कै आगैं, कहत स्याम यह मन उपजाई।
सूरदास प्रभु गोपनि आगैं, यह लीला कहि प्रगट सुनाई ॥४२०॥

मेरौ कह्यौ सत्य करि जानौ।
जौ चाहौ ब्रज की कुसलाई तौ गोबर्धन मानौ।
दूध दही तुम कितनौ लैहौ, गोसुत बढ़ैं अनेक।
कहा पूजि सुरपति सौं पायौ छाँड़ि देहु यह टेक।
मुँह माँगे फल जौ तुम पावहु, तौ तुम मानहु मोहिं।
सूरदास प्रभु कहत ग्वाल सौं सत्य बचन करि तोहिं ॥४२१॥

छाँड़ि देहु सुरपति की पूजा।
कान्ह कह्यौ, गिरि गोबर्धन तैं और देव नहिं दूजा।
गोपनि सत्य मानि यह लीन्ही बड़ौ देव गिरिराज।
मोहिं छाँड़ि ये परबत पूजत, गरब कियौ सुरराज।
पर्बत सहित धोइ ब्रज डारौं, देउँ समुद्र बहाइ।
मेरी बलि औरहिं लै अरपत इनकी करौं सजाइ।
राखौं नहीं इन्हैं भूतल पर, गोकुल देउँ बुहाइ।
सूरदास-प्रभु जाकौ रच्छक, संगहिं संग रहाइ ॥४२२॥

ब्रज-घर घर अति होत कुलाहल।
जहँ-तहँ ग्वाल फिरत उमँगे सब, अति आनंद चमाहल।

मिलवत परस्पर अंकम दै-दै, सकटनि भोजन साजत।
दधि-माखनी-मधु माट परस लै, राम-स्याम सँग राजत।
मंदिर तैं लै भरत अजिर मैं, पटरस की ज्यौनार।
थारनि भरि भरि कलस नए भरि, औरस हैं परकार।
सहस सकट मिष्टान्न भरे बहु नंद महर घरही के।
सूर चले सब लै घर-घर तैं संग सुवन नँद जी के।२३३।

अति आनँद ब्रजवासी लोग।
भाँति-भाँति पकवान सकट भरि लै-लै चले धरें रस-भोग।
तीनि लोक को ठाकुर संगहिं वामीं कहत सखा हम-जोग।
आवत जात डगर नहिं पावत, गोवर्धन-पूजा संजोग।
कोउ पहुँचि, कोउ रेंगत मग मैं कोउ घर तें निकसे, कोउ नाहिं।
कोउ पहुँचाइ सकट घर आवत, कोउ घर तें भोजन लै जाहिं।
मारग मैं कोउ निर्तत आवत कोउ गावत अपने रस माहिं।
सूर स्याम कौ जसुमति टेरति, बहुत भीर है हरि न भुलाहिं।२३४

गिरि पुजाइ गिरि नँदराइ।
प्रथमारंभ जग्य को कीन्ही उठ बेद-धुनि गाइ।
गोवर्धन सिर तिलक चढ़ायौ, मेटि इंद्र ठकुराइ।
अन्नकूट ऐसौ रचि राख्यौ, गिरि की उपमा पाइ।
भाँति-भाँति ब्यंजन परसाए कापैं बरन्यौ जाइ।
सूर स्याम सौं कहत ग्वाल गिरि जेंवहिं कहौ पुजाइ।२३५।

कहत कान्ह नँद बाबा आवहु।
भोजन परसि धरौ सब आगैं प्रेम-सहित गिरिराज मनावहु।
और नंद उपनंद बुलाए सबही सखनि सौं, भोग लगावहु।
मुरते मैं देख्यौ इहिं मूरति यहै रूप धरि ध्यान धियावहु।
दृढ़ मन, दृढ़ चित अरपित करिहैं, प्रगट देव-दरसन तुम पावहु।
सूर स्याम कहि प्रगट सबनि सौं आपैं कर लै कयौ न खिवावहु।

बिनती करत सकल अहीर।
कलस भरि-भरि ग्वाल लै-लै सिखर ढारत छीर।
पर्‌यौ बहि कहुँ पास तैं पय सुरसरी जल ढारि।
बसन-भूषन लै चढ़ाए, भीर अति नर-नारि।
मूँदि लोचन भोग अरप्यौ प्रेम सौं रुचि धार।
सबनि देखी प्रगट मूरति, सहस भुजा पसार।
रुचि सहित गिरि सबनि माँगै, करनि लै-लै खाइ।
नंद-सुत महिमा अगोचर सूर क्यौं कहि जाइ।।८२७।

गिरिधर स्याम की अनुहारि।
करत भोजन अधिक रुचि यह, सहस भुजा पसारि।
नंद की कर गहे ठाढ़े, यहै गिरि कौ रूप।
सखी ललिता राधिका सौं कहति देखि स्वरूप।
यहै कुंडल, यहै माला यहै पीत पिछौरि।
सिखर सोभा स्याम की छबि स्याम-छबि गिरि जोरि।
नारि बदरौला रही, वृषभानु-घर रखवारि।
तहाँ तैं कहि भोग अरप्यौ, लियौ भुजा पसारि।
राधिका-छबि देखि भूली, स्याम निरखैं ताहि।
सूर प्रभु-बस भई प्यारी, कोर-लोचन चाहि।।८२८।

गोपनि सौं यह कहत कन्हाई।
जो मैं कहत रही भयौ सोई सुपनांतर प्रगट्यौ मम आई।
जो माँग्यौ चाहौ सो माँगौ, पावहुगी जो जा मन भाई।
कहत नंद सब तुमहीं लीन्हौ, माँगतु हौं हरि की कुसलाई।
कर जोरे नँद आगैं ठाढ़े, गोबर्धन की करत बड़ाई।
ऐसी देव कहूँ नहिं देख्यौ सहस भुजा धरि खात मिठाई।
सदा तुम्हारी सेवा करिहौं और देव नहिं करौं पुजाई।
सूर स्याम कौं नीकैं राखौ, कहत महर ये हलधर भाई।।८२९।

और नंद माँगौ कछु हमसौं।
जो चाहौ सो देउँ तुरत हीं, कहत सबै गोपनि सौं।
तात मोहन दोऊ सुत तेरे, कुसल सदा ये रहिहैं।
इनकौ कह्यौ करत तुम रहियौ, अब कोई ये कहिहैं।
सेवा बहुत करी तुम मेरी, अब तुम सब घर जाहु।
भोग प्रसाद देहु कछु मेरौ, गोप सबै मिलि खाहु।
सुपनें मैं ही कह्यौ स्याम सौं करौ हमारी पूजा।
सुरपति कौन बापुरो मोतैं और देव नहिं दूजा।
इंद्र आइ बरसै जो ब्रज पर तुम जनि आहु डराइ।
सुनहु सूर सुत बचन्ह तुम्हारौ कहिहै मोहिं सुनाइ ॥५४०॥

बिनती करत नंद कर जोरे, पूजा कहा हम जानैं नाथ।
हम हैं ग्वाल सदा माया बस दरस दियौ मोहिं कियौ सनाथ।
महा पतित मैं तुम पावन प्रभु सरन तुम्हारी आयौ तात।
तुमतैं देव और नहिं दूजौ, कोटि ब्रह्मंड रोम प्रति गात।
तुम दाता अरु तुमहिं भोगता, हरता-करता तुमही सार।
सूर कहा हम भोग लगायौ तुमही मुख दियौ संसार ॥५४१॥

चले ब्रज-घरनि कौं नर-नारि।
इंद्र की पूजा मिटाई, तिलक गिरि कौं सारि।
पुलक अंग न समात उर मैं, महर महरि-समाज।
अब भए हम देव पाए, गिरि गोबर्धन राज।
इनहिं तैं ब्रज चैन रहिहै, माँगि भोजन खात।
चले डेरा चलत ब्रज जन, सबनि सुख यह बात।
सबै सदननि आइ पहुँचे करत केलि बिलास।
सूर प्रभु यह करी लीला, इंद्र-रिस परकास ॥५४२॥

ब्रजबासिनि मोसौं बिसरायौ।
भली करी बलि मेरी जो कछु, सो सब लै परबतहिं चढ़ायौ।

मोसौं गर्व कियौ लघु प्रानी, ना जानियै कहा मन आय।
तैंतिस कोटि सुरनि कौ नायक, जानि-बूझि इन मोहिं भुलायौ।
अब गोपनि भूतल नहिं राखौं, मेरी बलि मोहिं नहिं पहुँचायौ।
सुनहु सूर मेरैं मारत धौं, परबत कैसैं होत सहायौ ॥८४३॥

सुनि मेघवर्त्त सजि सैन आए।
जलवर्त्त, वारिवर्त्त, पौनवर्त्त, वज्र, अगिनिवर्त्तक जलद संग ल्याए।
घहरात, गररात, दररात, हररात, तररात झहरात माथ नाए।
कौन ऐसौ काम बोले हमैं सुरराज, प्रलय के साज हमकौं बुलाए।
बरप-दिन-संयोग, देत हे मोहिं भोग, क्षुद्र-मति ब्रज-लोग, गर्व कीन्हौ।
मोहिं दयौ बिसराइ, पूज्यौ गिरिवर जाइ, परौ ब्रज धाइ आयसहिं दीन्हौ।
कितिक ब्रज के लोग, रिस करी किहिं जोग, गिरि लियौ भोग फल तुरत पैहैं।
सूर सुरपति सुनौ, कहौ तैसौ लुनौ, प्रभु कहा गुनौ, गिरि संग बैहैं ॥८४४॥

बिनती सुनहु देव मघवापति।
कितिक बात गोकुल ब्रजबासी, बार-बार कौ रिस अति।
आपुन बैठि देखिऐ कौतुक, बहुतै आयसु दीन्हौ।
छिन मैं बरसि प्रलय-जल पाटैं, खोज रहै नहिं चीन्हौ।
महा प्रलय हमरे जल बरसैं, गगन रहे भरि छाइ।
जल-बूँदनि पट चलत निरंतर, कहा ब्रज गोकुल गाइ।
चले मेघ माथैं कर धरि कै, मन मैं क्रोध बढ़ाइ।
उमड़त चले इंद्र के पायक, सूर गगन रहे छाइ ॥८४५॥

सैन साजि ब्रज पर चढ़ि धावहिं।
प्रथम बहाइ देहिं गोबर्धन, ता पाछैं ब्रज खोदि बहावहिं।

बहुरिनि करी भावना प्रभु की, सो फल सबकौं तुरत दिखावहिं ।
इंद्रहिं पेलि करी गिरि पूजा सलिल बरसि ब्रज नाउँ मिटावहिं ।
मेघ समेत निसि-बासर बरसहिं, गोकुल बोरि पताल पठावहिं ।
सूरदास सुरपति की आज्ञा, यह भूतल कहुँ रहन न पावहिं ॥८४६

विकल लोग जहँ तहँ बिततानें कोउ हूँ अपने कौन बिराने ।
ग्वाल गए लै धेनु चरावन, तिनहिं परयौ बन-माँझ परावन ।
गाइ बच्छ कोउ न सँभारैं, त्रिय की सबकौं परी सँभारैं ।
भागी आवत ब्रजही तन कौं, बिपति परी अति बल ग्वालनि कौं ।
अंध धुंध मग कहूँ न सूझै, ब्रज भीतर ब्रजही कौं बूझै ।
जैसें-तैसें ब्रज पहिचानत, अटकरहीं अटकर करि आनत ।
सोचत फिरैं आपने घर कौं कहा भयौ इहिं घोष-सहर कौं ।
रोवत डोलैं घरहिं न पावैं घर द्वारे घर कौं बिसरावैं ।
सूर स्याम सुरपति बिसरायौ गिरि कैं पूजें यह फल पायौ ॥८४७

जमुना जलहिं गईं जे नारी ढारि चलीं सिर गागरि भारी ।
ढेरी मैं बालक कत छाँड़यौ एक कहति आँगन दधि माँड़यौ ।
एक कहति मारग नहिं पावति एक सासुरैं बोलि मनावति ।
ब्रजबासी सब अति अकुलाने कालिहिं पूज्यौ फल्यौ बिहाने ।
कहाँ रहे अब कुँवर कन्हाई, गिरि गोबरधन लेहिं बुलाई ।
जेंवन सहस भुजा धरि पायौ अब है भुज हमकौं दिखरावै ।
ये देवता रहत ही कौ के पाछैं पुनि तुम कौन, कहाँ के ।
सूर स्याम सपनौ प्रगटायौ, घर के देव सबनि बिसरायौ ॥८४८।

मेघवर्त मेघनि समुझावत, बार-बार गिरि बनहिं बतावत ।
पर्वत पर बरसहु तुम जाई, जहँ कही हमकौं सुरराई ।
ऐसैं देहु पहार बहाई, नाउँ रहै नहिं ठौर बनाई ।
सुरपति की बलि सब इहिं खाई, ताकौ फल पावै गिरिराई ।
जेंवत कालिह अधिक रुचि पाई, सलिल देहु जिमि तृषा बुझाई ।

बिना बारि रहवे अग ऊपर, अब न रहन पावै या भूपर।
सूर मेघ सुरपतिहिं पठाए, ब्रज के लोगनि तुमहिं बिहाए ॥५४९॥

गिरि पर बरषन लागे बादर।
मेघवर्त, जलवर्त, सैन सजि आए लै-लै आदर।
सलिल अखंड धार धर टूटत किए इंद्र मन सादर।
मेघ परस्पर यहै कहत हैं, धोइ करहु गिरि खादर।
देखि देखि डरपत ब्रजबासी, अतिहिं भए मन कादर।
यहै कहत ब्रज कौन उबारै सुरपति किए निरादर।
सूर स्याम देखै गिरि अपनै मेघनि कीन्हौ बादर।
देव आपनौ नहीं सम्हारत करत इंद्र सौं ठादर ॥५५०॥

बछियाँ कहति हैं ब्रज-नारि।
धरति सैंतति धाम-बासन माहिं सुरति सम्हारि।
पूजि आए गिरि गोबरधन, देति पुरुषनि गारि।
आपनौ कुलदेव सुरपति, धरयौ ताहि बिसारि।
दियौ फल यह गिरि गोबरधन, लेहु गोद पसारि।
सूर कौन उबारि लैहै, बढ़यौ इंद्र प्रचारि ॥५५१॥

ब्रज के लोग फिरत बितताने।
गैयनि लै बन ग्वाल गए ते धाए आवत ब्रजहिं पराने।
कोउ चितवत नभ-तन चकित हो, कोउ गिरि परत धरनि अकुलाने।
कोउ लै रहत ओट वृच्छनि की अंध-धंध दिसि-बिदिसि भुलाने।
कोउ पहुँचे जैसैं-तैसैं गृह, कोउ ढूँढ़त गृह नहिं पहिचाने।
सूरदास गोबर्धन-पूजा कीन्हे कौ फल लेहु बिहाने ॥५५२॥

ब्रज नर-नारि नंद-जसुमति सौं कहत, स्याम ये काज करे।
कुल-देवता हमारे सुरपति तिनकौं सब मिलि मेटि धरे।
इंद्रहिं मेटि गोबर्धन थाप्यौ उनकी पूजा कहा सरे।
सैंतत फिरत जहाँ तहँ बासन, परिकमि लै लै गोद भरे।

को करि लेइ सहाइ हमारी, प्रलय काल के मेघ भरे।
सूरदास सब कहत मारि मर, क्यौं सुरपति-पूजा बिसरे ॥४४३॥

राखि लेहु गोकुल के नायक।
भींजत-ग्वाल-गाइ गोसुत सब, बिषम बूँद लागत जनु सायक।
परपत मुसल्धार सेलापति, महा मेघ मघवा के पायक।
तुम बिनु ऐसौ कौन नंद-सुत, यह दुख दुसह मेटिबे लायक।
अघ-मर्दन बक-बदन-बिदारन, बकी-बिनासन ब्रज-सुखदायक।
सूरदास प्रभु तिनकी यह गति जिनके तुमसे सदा सहायक ॥४४४

राखि लेहु अब नंदकिसोर।
तुम जो इंद्र की मेटी पूजा, बरसत है अति जोर।
ब्रजबासी तुम तन चितवत हैं, ज्यौं करि चंद चकोर।
जनि जिय डरौ, नैन जनि मूँदौ, धरिहौं नख की कोर।
करि अभिमान इंद्र झरि लायौ करत घटा घनघोर।
सूर स्याम कह्यौ, तुमकौं राखौं बूँद न आवै ढोर ॥४४५॥

स्याम लियौ गिरिराज उठाइ।
धीर धरौ हरि कहत सबनि सौं गिरि गोबर्धन करत सहाइ।
नंद गोप ग्वालनि के आगैं, देव कह्यौ यह प्रगट सुनाइ।
काहे कौं ब्याकुल भए डोलत रच्छा करै देवता आइ।
सत्य बचन गिरि-देव कहत हैं कान्ह लेहिं मोहिं कर उचकाइ।
सूरदास नारी-नर ब्रज के, कहत धन्य तुम कुँवर कन्हाइ ॥४४६॥

गिरि जनि गिरै स्याम के कर तैं।
करत बिचार सबै ब्रजबासी भय उपजत अति उर तैं।
लै-लै लकुट ग्वाल सब धाए, करत सहाय जु तुरतैं।
यह अति प्रबल, स्याम अति कोमल, रबकि-रबकि हरबर तैं।
सात दिवस कर पर गिरि धार्‌यौ बरसि थक्यौ अंबर तैं।
गोपी-ग्वाल नंद-सुत राख्यौ मेघ धार जलधर तैं।

जमलार्जुन दोउ सुत कुबेर के तेउ उखारे बर तैं।
सूरदास प्रभु इंद्र-गर्व हरि, ब्रज राख्यौ करवर तैं ॥२२७॥

नीकैं धरौ नंद-नँदन बल-बीर।
गिरि जनि परै टरै कर तैं जनि, कौन सहैगो भीर।
चहुँ दिसि पवन झकोरत, घोरत मेघ-घटा गंभीर।
उनै-उनै बरषत गिरि ऊपर, धार अखंडित नीर।
बुंद-बुंद अंबर तैं गिरि पर परत बज्र के तीर।
चमकि चमकि चपला चकचौंधति, स्याम कहत मन धीर।
कर जोरत, कुल देव मनावत, ब्रज के गोप अहीर।
पय-पकवान-बिहान पूजिहैं, लै दधि-मधु-घृत-खीर।
गोपी-ग्वाल-गाइ-गोसुत सब, रहैं कुसल सहित सरीर।
सूर स्याम गिरि धरयौ बाम कर, मेघ भए अति सीर ॥२२८॥

गिरिवर नीकैं धरौ कन्हैया।
ऐसो रहौ डरै जनि कर तैं भुजा तनक सी भैया।
जब-जब गाइ परत ब्रज-लोगनि, तब करि लेत सहैया।
जननि जसोदा कर लै चौपति, अति स्रम होय नन्हैया।
देखत प्रगट भयौ गोबरधन, चकित भए नँदरैया।
पिता देखि व्याकुल मनमोहन तब इक बुद्धि उपैया।
आवहु तात गहहु गोबरधन गोपनि संग लिवैया।
जहाँ-तहाँ लकुटिनि गिरि टेक्यौ, कान्हहिं ओट देवैया।
स्याम कहत सब नंद गोप सौं सबैं लियौ उठवैया।
सूरदास प्रभु अंतरजामी नंदहिं हरष बढ़ैया ॥२२९॥

बरषि-बरषि हारे सब बादर।
ब्रज के लोगनि चोट चलावहु इंद्र हमहिं कह्यौ आदर।
कहा जाइ कैहैं प्रभु आगैं, करिहैं बहुत निरादर।
हम बरषत बरषत जल सोखत ब्रजबासी सब आदर।

पुनि रिस करत, प्रलय-जल बरषत, कहत भए सब कायर।
सूर गाइ गो-सुत सब राखी, गिरिवर धरि ब्रज-आदर ॥२६०॥

मेघनि आइ कही पुकारि।
दीन ह्वै सुरराज आगैं अस्त्र दीन्हे डारि।
सात दिन भरि बरसि ब्रज पर गई नैंकु न म्यारि।
अखंड धारा सलिल निझर्यौ, मिटी नाहिं लगारि।
धरनि नैंकु न बूँद पहुँची हरषे ब्रज-नर-नारि।
सूर घन सब इंद्र आगैं, करत यहै गुहारि ॥२६१॥

जहाँ-तहाँ तुम हमहिं उबार्यौ।
ग्वाल-सखा सब कहत स्यामसौं, धनि जसुमति अवतार्यौ।
तृनावर्त ब्रज पर चढ़ि आयौ, लाग्यौ रैन उड़ाइ।
अति सिसुता मैं ताहि सँहार्यौ परयौ सिला पर आइ।
बक-अघाइ मारे मेंग खेलत कैसैं आयौ साथ।
ताहि मारि तुम हमहिं उबार्यौ, ऐसे त्रिभुवननाथ।
कागासुर सकटासुर मार्यौ पय पीवत हनु-नारि।
अघा उदर तैं हमहिं बचायौ, बका-बदन धरि फारि।
कालीदह-जल औंचे गए मरि, तब तुम लियौ जिवाइ।
सूर स्याम सुरपति तैं राख्यौ, ऐसौ सबनि बचाइ ॥२६२॥

धरनि धरनि ब्रज होति बधाई।
सात बरष की कुँवर कन्हैया, गिरिवर धरि जीत्यौ सुरराई।
गर्व सहित आयौ ब्रज बोरन यह कहि मेरी भक्ति घटाई।
सात दिवस जल बरषि सिराय्यौ, तब आयौ पाइनि तर धाई।
कहाँ कहाँ नहिं संकट मेटत, नर-नारी सब करत बड़ाई।
सूर स्याम अपनैं ब्रज राख्यौ, ग्वाल करत सब नँद दोहाई ॥२६३

( मेरे ) मोहन जल प्रवाह क्यौं टार्यौ।
पूर्जाव मुदित जसोदा जननी, इंद्र कोप करि हार्यौ।

मेघवर्त जल बरषि निसा-दिन नैंकु न बेग निवारयौ।
बार-बार यह कहति कान्ह सौं, कैसैं गिरि नख धारयौ।
सुरपति आनि परयौ गहि पाइनि ताकीं सरन उबारयौ।
सूर स्याम ब्रज के सुखदाता कर तैं धरनि उतारयौ ॥१६४॥

(तेरैं) भुजन बहुत बल होइ कन्हैया।
बार-बार भुज देखि तनक-से कहति जसोदा मैया।
स्याम कहत नहिं भुजा पिरानी, ग्वालनि कियौ सहैया।
लकुटिनि टेकि सबनि मिलि राख्यौ, अरु बाबा नँदरैया।
मोसौं क्यौं रहतौ गोबरधन, अतिहिं बड़ौ वह भारी।
सूर स्याम यह कहि परबोध्यौ चकित देखि महतारी ॥१६५॥

गिरिवर कैसे लियौ उठाइ।
कोमल कर चाँपति महतारी, यह कहि लेति बलाइ।
महा प्रलय जल, तापर राख्यौ एक गोबर्धन भारी।
नैंकु नहीं टारयौ नख पर तैं, मेरौ सुत अहँकारी।
कंचन-थार दूध-दधि-रोचन सजि समीर लै आई।
हरषित तिलक करति मुख निरखति, भुज भरि कंठ लगाई।
रिस करिकै सुरपति चढ़ि आयौ ऐसौ ब्रजहिं बहाई।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा गिरिधर बड़ौ कन्हाई ॥१६६॥

जननी चापति भुजा स्याम की, ठाढ़े देखि हँसत बलराम।
चौदह भुवन उदर मैं जाके गिरिवर धरयौ कहा यह काम।
कोटि ब्रह्मांड रोम-रोमनि-प्रति, जहाँ-तहाँ निसि-बासर धाम।
जोइ आवत सोइ देखि चहत है, अद्भुत करे हरि ऐसे काम।
नाभि-कमल ब्रह्मा प्रगटायौ देखि अलानँद राख्यौ बिराम।
कातन-जात पीवहीं मन्थ्यौ दुखित भयौ लोजल निज धाम।
तिनसौं कहत सकल ब्रजबासी कैसैं गिरि राख्यौ कर बाम।
सूरदास प्रभु जल-थल व्यापक, फिरि-फिरि जन्म लेत नँद-धाम ॥

मातु पिता इनकै नहिं कोई।
आपुहिं करता, आपुहिं हरता, त्रिगुन रहित हैं सोई।
कितिक बार अवतार लियौ ब्रज, ये हैं ऐसे ओई।
जल-थल, कीट-ब्रह्म के ब्यापक, और न इन सरि होई।
बसुधा-भार उतारन-कारन आपु रहत तनु गोई।
सूर स्याम माता-हित-कारन, भोजन माँगत रोई।।२६८

सुरगन सहित इंद्र ब्रज आवत।
धवल बरन ऐरावत देख्यौ उतरि गगन तैं धरनि धँसावत।
अमरा-मित्र-रबि-ससि चतुरानन, हय-गय बसह-हंस-मृग-जावत।
धर्मराज, बनराज अनल, दिव, सारद, नारद सिव-सुत-भावत।
मैढ़ा महिष मगर गुदरारौ, मोर, आखुस्रम बाहन गावत।
ब्रज के लोग देखि डरपे मन हरि आगैं कहि कहि सु सुनावत।
सात दिवस जल बरषि सिरान्यौ, आवत चल्यौ ब्रजहिं अतुरावत।
घेरौ करत जहाँ तहँ ठाढ़े ब्रजबासिनि कौ नाहिं बचावत।
दूरहिं तैं बाहन सौं उतर्यौ, देवनि सहित चल्यौ सिर नावत।
आइ पर्यौ चरननि तर आतुर सूरदास-प्रभु सीस उठावत।।२६९।

सुरगन करत अस्तुति मुखनि।
दरस तैं धनु-चाप खोयौ मेटि अघ के दुखनि।
अंग पुलकित रोम गदगद कहत बानी सुखनि।
धाम मुख गिरि टेकि राख्यौ, करजलघु के नखनि।
प्रेम कैं बस तुमहिं कीन्हौ, ग्वाल-बालक सखनि।
जोगि जन मन धरत आपनि नहीं पावत मखनि।
धन्य नँद धनि मातु-जसुमति, धरत जाकैं स्तननि।
सूर प्रभु-महिमा अगोचर, जाति कापै लखनि।।२७०।

देखियत दोऊ घन उनए।
इत मघवा-घन भक्त-परम इत दोउ रन रोप रए।

उत सुर चाप, कलाप चंद्र इत, तड़ित पट पीत नए।
उत सैनापति बरषत, ये इत अमृत-धार चितए।
सुगल बीच गिरिराज बिराजत, कलश उठाइ लए।
मनु बिधि मरकत मनि बीच महानग मनी बिचित्र ठए।
लुठत सक्र की सीस चरन तर, जुग-जुग-गत समये।
मानहु कनकपुरी-पति के सिर, रघुपति छत्र दये।
भए प्रसन्न सकल, सुरपुर कौं प्रमुदित फेरि गए।
सूरदास गिरिधर करुनामय, इंद्र थापि पठए ।४०१।

आजु दीपति दिव्य दीपमालिका।
मनहुँ कोटि रबि चंद्र कोटि छबि मिटि जो गई निसि कालिका।
गोकुल सकल बिचित्र मनि मंडित सोभित झलक झल झलालिका।
गज-मोतिन के चौक पुराए बिच बिच लाल प्रवालिका।
घर सिंगार बिरचि राधा जू चली सकल ब्रज-बालिका।
झलमल दीप समीप सौंज भरि लै कर कंचन थालिका।
करिकै प्रगट भवन मोहन पिय चकित बिलोकि बिसालिका।
गावति हँसत गवाय हँसावत पटकि पटकि करतालिका।
नँद-द्वार आनंद बढ़्यौ अति देखियत परम रसालिका।
सूरदास कुसुमनि सुर बरषत कर संपुट करि मालिका ।४०२।

कौन परी मेरे लालहिं बानि।
प्रात समय जागन की बिरियाँ सोवत है पीतांबर तानि।
संग सखा ब्रज-बाल खरे सब मधुबन धेनु चरावन-जान।
मातु जसोदा कब की ठाढ़ी, दधि-ओदन भोजन लिए पान।
तुम मोहन जीवन-धन मेरे, मुरली नैंकु सुनावहु कान।
यह सुनि स्रवन उठे नँदनंदन, बंसी निज सौंप्यौ सखु आनि।
जननी कहति लेहु मनमोहन, दधि-ओदन-घृत आन्यौ सानि।
सूर सुबलि बलि जाउँ धेनु की, जिहिं लगि लाल जगे हित मानि।

तेरौ माई गोपाल रन सूरौ।
जहँ-जहँ भिरत प्रचारि, पैज करि, तहीं परत है पूरौ।
वृषभ-रूप दानव इक आयौ, सो छिन माहिं सँहारयौ।
पाछैं पकरि भुज सौं गहि ताकौ, भूतल माँहिं पछारयौ।
कहत ग्वाल जसुमति धनि मैया बड़ौ पूत तैं जायौ।
यह कोउ आदि पुरुष अवतारी, भाग हमारैं आयौ।
चरन-कमल-रज बंदत रहियै, अनुदिन सेवा कीजै।
बारंबार सूर के प्रभु की, हरषि बलैया लीजै ॥५७४॥

जसुमति बार-बार पछितानी।
सुनी करतूति वृषासुर की जब ग्वाल कही मुख बानी।
गैयनि भीतर आइ समान्यौ कान्हहिं मारन ठान्यौ।
मैं नहिं काहू कौ कछु चाल्यौ पुन्यनि करबर नाक्यौ।
सुनि जसुमति मैया कत खीझति, हरि के माथैं कपाल।
परबत तुल्य देह धारी कौ, पल मैं कियौ बिहाल।
तुम्हरी रच्छा कौ यह नाहीं, यह ब्रज कौ रखवार।
सूरदास मन भोरी समझै मोहन नँद-कुमार ॥५७५॥

हमहिं डर कौन कौ रे भैया।
डोलत फिरत सघन बृंदावन, जाके मीत कन्हैया।
जब जब गाइ चरति हैं हमकौं तब हरि होत सहैया।
चिरजीवहिं जसुमति सुत तेरे, हरि-हलधर दोउ भैया।
इनतैं बड़ौ और नहिं कोऊ, येइ सब देत पठैया।
सूर स्याम सम्मुख ह्वै आए, ते सब स्वर्ग चलैया ॥५७६॥

हँसि जननी सौं बात कहत हरि देख्यौ मैं बृंदावन नीकै।
अति रमनीक भूमि द्रुम बेली कुंज सघन निरखत सुख जी कै।
जमुना कैं तट धेनु चराई, कहत बात माता-मन भीकै।
भूख मिटी बन-फल कै खायैं, मिटी प्यास जमुना-जल पीकै।

सुनति जसोदा सुत की बातैं, अति आनंद मगन तब ही कै।
सूरदास-प्रभु बिस्व-भरन ये, घोर भए ब्रज नायक हरी के ॥८०७॥

कहत जसोदा बात सयानी।
भावी नाहीं मिटै काहू की करता की गति जाति न जानी।
जन्म भयौ जब तैं ब्रज हरि कौ, कहा कियौ करि करि रखवानी।
कहाँ कहाँ तैं स्याम न उबर्यौ फिरि फिरि राख्यौ तिहिं औसर आनी।
केसी सकटऽरु बृषभ पूतना तृनावर्त की कहति कहानी।
को मेरैं पछिताइ मरै अब अनजानत सब करी अयानी।
कै बनाइ बाती सी आए, स्याम-राम हरषित नँद-रानी।
भूखे गए प्रात अथवातहिं, तातैं आजु बहुत पछितानी।
रोहिनि दियौ न्हवाइ दुहुँनि कौं भोजन कौ माता अकुलानी।
ल्याई परसि दुहुँनि की थारी, जेंवत बल-मोहन रुचि मानी।
माँगि लियौ सीतल जल अँचयौ, मुख धोयौ दुहुँनि लै पानी।
बीरा लाव बीर बीरा जब, जननी तब मुख देखि सिहानी।
रत्न-जटित पलिका पर पौढ़े, बरनि न जाइ कृष्ण-रजधानी।
सूरदास कछु जूठनि माँगत पाऊँ कहि दीजै बर बानी ॥८०८॥

## (ख) रूप-चित्रण

कहाँ लौं बरनौं सुंदरताई।
खेलत कुँवर कनक-आँगन मैं नैन निरखि छबि पाई।
कुलही लसति सिर स्यामसुंदर कैं, बहु बिधि सुरँग बनाई।
मानौ नव घन ऊपर राजत मघवा धनुष चढ़ाई।
अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन, मोहन मुख बगराई।
मानौ प्रगट कंज पर मंजुल अलि-अवली फिरि आई।
नील, सेत अरु पीत लाल मनि लटकन भाल रुलाई।
सनि गुरु-असुर, देवगुरु मिलि मनु भौम सहित समुदाई।
दूध-दंत-दुति कहि न जाति कछु अद्भुत उपमा पाई।
किलकत-हँसत दुरति प्रगटति मनु, घन मैं बिज्जु छटाई।
खंडित बचन देत पूरन सुख अलप-अलप जलपाई।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, सूरदास बलि जाई ॥४०५॥

हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि मनोज-सोभा-हरनि।
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि।
रहे बिवरनि, सलिल, नभ उपमा अपर दुरी डरनि।
मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि।
मनहुँ सुभग सिंगार-सिसु-तरु, फरयौ अद्भुत फरनि।

चलत पद-प्रतिबिंब मनि-आँगन घुटुरुवनि करनि।
जलज-संपुट सुभग छबि भरि लेति उर जनु धरनि।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं बिलोकि कै नँद-घरनि।
सूर प्रभु की उर बसी, किलकनि, ललित लरखरनि ॥७८०॥

जब तैं आँगन खेलत देख्यौ, मैं जसुदा कौ पूत री।
तब तैं गृह सौं नातौ टूट्यौ जैसैं काँचौ सूत री।
अति बिसाल बारिज-दल-लोचन राजति काजर-रेख री।
इच्छा सौं मकरंद लेत मनु अलि गोलक के बेष री।
स्रवन सुनत उतकंठ रहति हैं, जब बोलत तुतरात री।
उमँगै प्रेम नैन-मग ह्वै कै, कापै रोक्यौ जात री।
दमकति दोउ दूध की दँतियाँ, जगमग जगमग होति री।
मानौ सुंदरता-मंदिर मैं रूप-रतन की ज्योति री।
सूरदास देखैं सुंदर मुख, आनँद उर न समाइ री।
मानौं कुमुद कामना पूरन पूरन, इंदुहिं पाइ री ॥७८१॥

अद्भुत इक चितयौ हौं सजनी, नंद महर कैं आँगन री।
सो मैं निरखि अपुनपौ खोयौ, गई मथानी माँगन री।
बाल-दसा मुख-कमल बिलोकत, कछु जननी सौं बोलै री।
प्रगटति हँसत दँतुलि, मनु सीपज दमकि दुरे दल ओलै री।
सुंदर भाल-तिलक गोरोचन, मिलि मसि-बिंदुका लाग्यौ री।
मनु मकरंद अँचै रुचि कै, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री।
कुंडल लोल कपोलनि झलकत, मनु दरपन मैं झाईं री।
रही बिलोकि बिचारि चारु छबि परमिति कहूँ न पाई री।
मंजुल तारनि की चपलाई, चित चतुराई करषै री।
मनौ सरासन धरे कर स्मर, भौंह चढ़े सर बरषै री।
जलधि थकित जनु खग पोत कौ कूल न कबहूँ पायौ री।
ना जानौं किहिं अंग गमन मन चाहि रही नहिं पायौ री।

कहँ लगि कहौं बनाइ बरनि छबि, निरखत मति-गति हारी री।
सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी री ॥१८८२॥

मैं मोही तेरैं लाल री।
निपट निकट ह्वै कै तुम निरखौ, सुंदर नैन बिसाल री।
चंचल दृग अंचल पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झालरी।
मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम चाल री।
मुक्ता-बिद्रुम-नील पीत मनि लटकत लटकन भाल री।
मानौं सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि ससि कैं बीच रसाल री।
उपमा बरनि न जाइ सखी री, सुंदर मदनगोपाल री।
सूर स्याम कैं ऊपर वारैं तन-मन-धन ब्रजबाल री ॥१८८३॥

मेरे माई, स्याम मनोहर जीवनि।
निरखि नैन भूले जु बदन-छबि, मधुर हँसनि पय-पीवनि।
कुंतल कुटिल मकर कुंडल, भ्रुव नैन बिलोकनि-बंक।
सुधा सिंधु तैं निकसि नयौ ससि राजत मनु मृग-अंक।
सोभित सुमन मयूर-चंद्रिका, नील नलिन तनु स्याम।
मनहु नछत्र-समेत इंद्र-धनु, सुभग मेघ अभिराम।
परम कुसल कोबिद लीला नट, मुसुकनि मन हरि लेत।
कृपा-कटाच्छ कमल-कर फेरत सूर जननि सुख देत ॥१८८४॥

बरनौं बाल-भेष मुरारि।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन, नंदलाल निहारि।
केस सिर बिन पवन के चहुँ दिसा छिटके झारि।
सीस पर धरि जटा मनु सिसु-रूप किये त्रिपुरारि।
तिलक ललित ललाट केसरबिंदु सोभाकारि।
रोष अरुन तृतीय लोचन, रह्यौ जनु रिपु जारि।
कंठ कठुला नील मनि, अंभोज-माल सँवारि।
गरल ग्रीव कपाल उर इहिं भाइ भए मदनारि।

कुटिल हरि-नख हिये हरि के हरषि निरखति नारि।
ईस मनु रजनीस राख्यौ भाल तैं जु उतारि।
सदन-रज तन स्याम सोभित, सुभग इहिं अनुहारि।
मनहुँ अंग-बिभूति राजत संभु सौ मधु हारि।
त्रिदस-पति-पति असन कौं अति जननि सौं करै आरि।
सूरदास बिरंचि जाकौं जपत निज मुख चारि॥३८५॥

सखि री, नंद-नंदन देखु।
धूरि-धूसर जटा जुटली, हरि किए हर-भेषु।
नील पाट पिरोइ मनि-गन फनिग धोखैं जाइ।
खुनखुना कर, हँसत हरि, हर नचत डमरु बजाइ।
जलज-माल गुपाल पहिरे, कहा कहौं बनाइ।
मुंडमाला मानौ हर-गर ऐसी सोभा पाइ।
स्वाति-सुत-माला बिराजत स्याम तन इहिं भाइ।
मनौ गंगा गौरि-डर हर लई कंठ लगाइ।
केहरी-नख निरखि हिरदैं रही नारि बिचारि।
बाल-ससि मनु भाल तैं लै उर धरयौ त्रिपुरारि।
देखि अंग अनंग झझक्यौ नंद-सुत हर जान।
सूर के हिरदै बसौ नित स्याम-सिव कौ ध्यान॥३८६॥

हरि के बाल-चरित अनूप।
निरखि रहीं ब्रजनारि इकटक अंग-अंग-प्रति रूप।
बिथुरि अलकैं रहीं मुख पर बिनहिं बपन सुभाइ।
देखि कंजनि चंद के बस मधुप करत सहाइ।
सजल लोचन चारु नासा परम रुचिर बनाइ।
जुगल खंजन करत अबिनति, बीच कियौ बनराइ।
अरुन अधरनि दसन झाईं कहौं उपमा थोरि।
नील पुट बिच मनौ मोती धरे बंदन बोरि।

सुभग नासा मुकुंद की छवि बरनि कापै जाइ।
भृकुटि पर मसि-बिंदु सोहै सकै सूर न गाइ ॥४८७॥

लोचन स्याम अपनैं रंग।
नंदलाल निहारि सोभा, निरखि थकित अनंग।
चरन की छवि देखि डरप्यौ अरुन, गगन छपाइ।
जानु करभा की सबै छवि निदरि, लई छड़ाइ।
जुगल जंघनि खंभ-रंभा नाहिं समसरि ताहि।
कटि निरखि केहरि लजाने रहे घन बन चाहि।
हृदय हरि नख अति बिराजत छबि न बरनी जाइ।
मनौ बालक बारिधर नव चंद दियौ दिखाइ।
मुक्त-माल बिसाल उर पर, कछु कहौं उपमाइ।
मनौ तारागननि बेष्टित गगन निसि रह्यौ छाइ।
अधर अरुन, अनूप नासा निरखि जन-सुखदाइ।
मनौ सुक, फल बिंब कारन, लेन बैठ्यौ आइ।
कुटिल अलक बिना बपन के मनौ अलि-सिसु-आस।
सूर प्रभु की ललित सोभा, निरखि रही ब्रज-बाल ॥४८८॥

मुख-छवि कहा कहौं बनाइ।
निरखि निसि पति बदन-सोभा, गयौ गगन दुराइ।
अमृत अलि मनु पिवन आए, आइ रहे लुभाइ।
निकसि सर तैं मीन मानौ, लरत कीर छुराइ।
कनक-कुंडल-स्रवन बिभ्रम कुमुद निसि सकुचाइ।
सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ ॥४८९॥

सुभग साँवरे गात की मैं, सोभा कहत लजाउँ।
मोर-चँदा सिर-मुकुट की, मुख-मटकनि की बलि जाउँ।
कुंडल लोल कपोलनि झाईं बिहँसनि चितहिं चुरावै।
दसन-दमक, मोतिनि-लर ग्रीवा सोभा कहत न आवै।

उर उर पदिक, कुसुम बनमाला, अंगद खरे बिराजैं।
चित्रित बाँह पहुँचिया पहुँचे हाथ मुरलिया छाजै।
कटि पट पीत, मेखला मुकुलित पाइनि नूपुर सोहै।
आस पास बर ग्वाल-मंडली देखत त्रिभुवन मोहै।
सब मिलि आनँद प्रेम बढ़ावत, गावत गुन गोपाल।
यह सुख देखत स्याम-संग कौ, सूरदास सब ग्वाल ॥४६०॥

देखि सखी, बन तैं जु बने ब्रज आवत हैं नँद-नंदन।
सिखी सिखंड सिर, मुख मुरली, बन्यौ तिलक उर चंदन।
कुटिल अलक मुख, चंचल लोचन, निरखत अति आनंदन।
कमल मध्य मनु द्वै खग खंजन बँधे आइ उड़ि फंदन।
अरुन अधर-छबि दसन बिराजत, जब गावत कल मंदन।
मुक्त मनौ नील-मनिमय-पुट, धरे मुरकि बर बंदन।
गोप बेष गोपाल गो चारत हैं हरि असुर-निकंदन।
सूरदास प्रभु सुजस बखानत नेति नेति स्रुति छंदन ॥४६१॥

सोभा कहत कही नहिं आवै।
अँचवत अति आतुर लोचन-पुट, मन न तृप्ति कौ पावै।
सजल मेघ घनस्याम सुभग बपु, तड़ित बसन बनमाल।
सिखि-सिखंड बन-धातु बिराजत सुमन सुगंध प्रवाल।
कछुक कुटिल कमनीय सघन अति गो-रज मंडित केस।
सोभित मनु अंबुज-पराग-रुचि-रंजित मधुप सुदेस।
कुंडल-किरनि कपोल लोल छबि, नैन कमल-दल-मीन।
प्रति प्रति अंग अनंग-कोटि-छबि, सुनि सखि परम प्रबीन।
अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर करति मदन मन हीन।
सूरदास जहँ दृष्टि परति है, होति तहीं लवलीन ॥४६२॥

मेरे नैन निरखि सुख पावत।
संध्या समय गोप-गोधन सँग बन तैं बनि ब्रज आवत।

उर गुंजा बनमाल, मुकुट सिर, बेनु रसाल बजावत।
कोटि किरनि-मनि मुख परकासित उडुपति कोटि लजावत।
नटवर रूप अनूप छबीलौ, सबहिनि के मन भावत।
गोप-सखा सब बदन निहारत, उर आनँद न समावत।
चंदन खौरि, काछनी काछे, देखत ही मन भावत।
सूर स्याम नागर नारिनि कौं, बासर बिरह नसावत ॥४६३॥

साँवरौ मनमोहन माई।
देखि सखी बन तैं ब्रज आवत सुंदर नंद-कुमार कन्हाई।
मोर-पंख सिर मुकुट बिराजत, मुख मुरली धुनि सुभग सुहाई।
कुंडल लोल कपोलनि की छबि, मधुरी बोलनि बरनि न जाई।
लोचन ललित ललाट भृकुटि बिच तिलक मृगमद की रेख बनाई।
मनु मरजाद उलंघि अधिक बल उमँगि चली अति सुंदरताई।
कुंचित केस सुदेस कमल पर मनु मधुपनि-माला पहिराई।
मंद-मंद मुसुक्यानि मनौ घन दामिनि दुरि-दुरि देति दिखाई।
सोभित सूर निकट नासा के अनुपम अधरनि की अरुनाई।
मनु सुक सुरँग बिलोकि बिंब फल चाखन कारन चोंच चलाई॥

नँदनंदन मुख देखौ माइ।
अंग अंग-छबि मनहुँ उये रबि ससि अरु समर लजाइ।
खंजन मीन, भृंग, बारिज मृग पर दृग अति रुचि पाई।
स्रुति मंडल कुंडल मकराकृत बिलसत मदन सदाई।
नासा कीर, कपोत ग्रीव, छबि दाड़िम दसन चुराई।
द्वै सारँग-बाहन पर मुरली आई देति दुहाई।
मोहे थिर चर बिटप बिहंगम, ब्योम बिमान थकाई।
कुसुमांजलि बरषत सुर ऊपर, सूरदास बलि जाई ॥४६४॥

देखि री देखि आनँद कंद।
चित चातक मम घन, लोचनि चकोरनि चंद।

चलित कुंडल गंड-मंडल, झलक ललित कपोल।
सुधा-सर जनु मकर क्रीड़त, इंदु डहडह डोल।
सुभग कर आनन समीपै, मुरलिका इहिं भाइ।
मनु उभै अंभोज-भाजन, लेत सुधा भराइ।
स्याम-देह दुकूल-दुति मिलि, लसत तुलसी-माल।
तड़ित घन संजोग मानौ, सेनिका सुक-जाल।
अलक अविरल, चारु हास बिलास भृकुटी भंग।
सूर हरि की निरखि सोभा, भई मनसा पंग ॥२८६॥

ऐसौ माई, सुंदरता कौ सागर।
बुधि-बिबेक-बल पार न पावत, मगन होत मन नागर।
तनु अति स्याम अगाध अंबु निधि, कटि पट पीत तरंग।
चितवत चलत अधिक रुचि उपजति भँवर परत सँग-अंग।
नैन-मीन मकराकृत कुंडल, भुज सरि सुभग भुजंग।
मुक्ता-माल मिलीं मानौ द्वै सुरसरि एकै संग।
कनक खचित मनिमय आभूषन मुख स्रम-कन सुख देत।
जनु जल-निधि मथि प्रगट कियौ ससि, श्री अरु सुधा समेत।
देखि सरूप सकल गोपीजन रहीं बिचारि-बिचारि।
तदपि सूर तरि सकीं न सोभा रहीं प्रेम पचि हारि ॥२८७॥

बने बिसाल अति लोचन लोल।
चितै-चितै हरि चारु बिलोकनि, मानौ माँगत हैं मन ओल।
अधर अनूप नासिका सुंदर, कुंडल ललित सुदेस कपोल।
मुख मुसुक्यात महा छबि लागति, स्रवन सुनत सुठि मीठे बोल।
चितवति रहति चकोर चंद ज्यौं, नैंकु न पलक लगावति डोल।
सूरदास प्रभु कैं बस ऐसैं दासी सकल भई बिनु मोल ॥२८८॥

देखि री देखि आनँद-कंद।
चित चातक प्रेम-घन लोचनि चकोरनि चंद।

मुकुट लपटि लटकि मन अटके, एक चरन पर धारे।
मनहुँ नील-मनि-खंभ काम रचि, एक लपटि सुधारे।
कबहुँ लकुट तैं जानु फेरि लै, अपने सहज चलावत।
सूरदास मानहुँ करभा, कर बारंबार डुलावत ॥५९९॥

कटि तट पीत बसन सुदेस।
मानौ नव घन दामिनी, तजि रही सहज, सुदेस।
कनक मनि मेखला राजत सुभग स्यामल अंग।
मनौ हंस-कलरव पंगति नारि-बालक-संग।
सुभट कटि काछनी राजति, जलज केसरि-खंड।
सूर प्रभु-अँग निरखि माधुरि, मदन-तन परयौ दंड ॥६००॥

तरुनी निरखि हरि प्रति अंग।
कोउ निरखि नख इंदु भूली कोउ चरन-जुग रंग।
कोउ निरखि नूपुर रही थकि, कोउ निरखि जुग जानु।
कोउ निरखि जुग जंघ सोभा करति मन अनुमान।
कोउ निरखि कटि पीत कछनी मेखला रुचिकारि।
कोउ निरखि हृद-नाभि की छबि डारयौ तन मन वारि।
रुचिर रोमावली हरि कैं चारु उदर सुदेस।
मनौ अलि-श्रेनी विराजति बनी एकहिं भेस।
रही इकटक नारि ठाढ़ी करति बुद्धि बिचार।
सूर आगम कियौ नभ तैं जमुन-सूच्छम-धार ॥६०१॥

राजति रोम राजी-रेख।
नील घन मनु धूम-धारा रही सूच्छम भेष।
निरखि सुंदर हृदय पर भृगु पाद परम सुलेख।
मनहुँ सोभित अभ्र अंतर, संभु-भूषन भेष।
मुक्त-माल नछत्र-गन सम, अर्द्ध चंद्र विसेष।
सजल उज्जल जलद-मलयज, प्रबल बनिनि कलेष।

केकि कच सुर चाप की छबि दसन तड़ित सुपेख ।
सूर प्रभु की निरखि सोभा, तजे नैन निमेष ॥६०२॥

चतुर नारि सब कहति बिचारि ।
रोमावली अनूप बिराजति, जमुना की अनुहारि ।
उर-कलिंद तैं धँसि जल-धारा, उदर-धरनि परवाह ।
जाति चली धारा ह्वै अध कौं, नाभी-ह्रद अवगाह ।
भुजा दंड तट, सुभग घाट घन बनमाला तरु कूल ।
मोतिनि-माल दुहूँघाँ मानौ, फेन लहरि रस-फूल ।
सूर स्याम-रोमावलि की छबि देखति करति बिचार ।
बुद्धि रचति तरि सकति न सोभा, प्रेम बिबस ब्रजनार ॥६०३॥

रोमावली-रेख अति राजति ।
सूच्छम बेष धूम की धारा नव घन ऊपर भ्राजति ।
भृगु-पद-रेख स्याम उर सजनी कहा कहौं क्यौं छाजति ।
मनहुँ मेघ-भीतर दुतिया-ससि कोटि-काम-दुति साजति ।
मुक्ता-माल नंद-नंदन-उर, अर्द्ध सुधा घट भ्राजति ।
तनु श्रीखंड मेघ उज्ज्वल अति, देखि महाबलि साजति ।
बरही-मुकुट इन्द्र धनु मानहुँ तड़ित दसन-छबि लाजति ।
इकटक रही बिलोकि सूर प्रभु, निमिषनि की कह लाजति ॥६०४

मुख-छबि कहौं कहाँ लगि माई ।
भानु उदै ज्यौं कमल प्रकासित, रवि ससि दोउ जोति छपाई ।
अधर बिंब नासा ऊपर, मनु सुक चाखन कौं चोंच चलाई ।
बिकसित बदन दसन अति चमकत, दामिनि-दुति दुरि देति दिखाई
सोभित अति कुंडल की डोलनि मकराकृत की, सरस बनाई ।
निसि दिन रटति सूर के स्वामिहिं, ब्रज-बनिता देतीं बिसराई ॥६०५

सखी री, सुंदरता कौ रंग
छिन छिन माँहि परति छबि औरै कमल-नैन कैं अंग ।

परमिति करि राख्यौ चाहति है, लागी डोलति संग।
चलत निमेष विसेष जानियत, भूलि भई मति-भंग।
स्याम सुभग कैं ऊपर वारी आली, कोटि अनंग।
सूरदास कछु कहत न आवै भई गिरा-गति पंग ॥१०६॥

स्याम-भुजनि की सुंदरताई।
चंदन-खौरि अनूपम राजति, सो छबि कही न जाई।
बड़े बिसाल जानु लौं परसत, इक उपमा मन आई।
मनौ भुजंग गगन तैं उतरत अधमुख रह्यौ झुलाई।
रतन जटित पहुँची कर राजति अँगुरी सुंदर भारी।
सूर मनौ फनि सिर मनि सोभित फन-फनकी छबि न्यारी ॥१०७

गोपी तजि लाज संग स्याम-रंग भूलीं।
पूरन मुख-चंद देखि नैन-कोइ फूलीं।
कैधौं नव जलद-स्वाति चातक मन लाए।
किधौं वारि-बूँद सीप हृदय हरष पाए।
रबि-छबि कैधौं निहारि पंकज बिकसाने।
किधौं चक्रवाक निरखि पतिहीं रति माने।
कैधौं मृग जूथ जुरे, मुरली-धुनि रीझि।
सूर स्याम-मुख-मंडल-छबि के रस भीजे ॥१०८॥

बड़ी निठुर बिधना यह देख्यौ।
जब तैं आजु नंदनंदन छबि बार-बार करि पेख्यौ।
नख अँगुरी, पग, जानु, जंघ, कटि रचि कीन्हौ निरमान।
हृदय बाहु कर, अंस, अंग अँग, मुख सुंदर अति बान।
अधर, दसन रसना रस, बानी, स्रवन, नैन अरु भाल।
सूर रोम प्रति लोचन देत्यौ, देखत बनत गुपाल ॥१०९॥

स्याम-अँग जुवती निरखि भुलानी।
कोउ निरखति कुंडल की आभा, इतनेहिं माँझ बिकानी।

ललित कपोल निरखि कोउ अटकी, सिथिल भई ज्यौं पानी।
देह-गेह की सुधि नहिं काहूँ, हरषनि कोउ पछितानी।
कोउ निरखित रही ललित नासिका, यह काहू नहिं जानी।
कोउ निरखति अधरन की सोभा फुरति नहीं मुख बानी।
कोउ चकित भई दसन-चमक पर, चकचौंधी अकुलानी।
कोउ निरखति दुति चिबुक चारु की, सूर तरुनि बिततानी ॥६१०॥

स्याम-कर मुरली अतिहिं बिराजति।
परसति अधर सुधारस परसति मधुर मधुर सुर बाजति।
लटकत मुकुट भौंह-छबि मटकति नैन-सैन अति राजति।
ग्रीव नवाइ अटकि बंसी पर कोटि मदन-छबि लाजति।
लोल कपोल झलक कुंडल की, यह उपमा कछु लागति।
मानहुँ मकर सुधा रस क्रीड़त, आपु आपु अनुरागत।
बृंदावन बिहरत नँद-नंदन ग्वाल-सखा सँग सोहत।
सूरदास प्रभु की छबि निरखति सुर-नर-मुनि सब मोहत ॥६११॥

तब लगि सबै सयान रहै।
जब लगि नवल किसोर न मुरली, बदन-समीर गहै।
तबहीं लौं अभिमान, चातुरी, पतिव्रत, कुलहिं चहै।
जब लगि स्रवन-रंध्र-मग मिलि कै नाहिंन मनहिं महै।
तब लगि तरुनि तरल चंचलता बुध-बल-सकुचि रहै।
सूरदास जब लगि वा धुनि सुनि नाहिंन धीर ढहै ॥६१२॥

सुंदर मुख की बलि बलि जाउँ।
लावनि-निधि गुन-निधि सोभा-निधि निरखि-निरखि जीवत सब गाउँ।
अंग अंग प्रति अमित माधुरी प्रगटति रस रुचि ठावहिं ठाउँ।
तामैं मृदु मुसुक्यानि मनोहर न्याइ कहत कबि मोहन नाउँ।

नैन-सैन दै-दै मन हेरत, ता छबि पर बिनु मोल बिकाउँ।
सूरदास प्रभु मदनमोहन-छबि सोभा की उपमा नहिं पाउँ।।११३।।

मैं बलि जाउँ स्याम-मुख-छबि पर।
बलि बलि जाउँ कुटिल कच बिथुरे, बलि भृकुटी लिलाट पर।
बलि-बलि जाउँ चारु अवलोकनि, बलि बलि कुंडल-रवि की।
बलि-बलि जाउँ नासिका सुललित, बलिहारी वा छबि की।
बलि-बलि जाउँ अरुन अधरनि की, बिद्रुम-बिंब लजावन।
मैं बलि जाउँ दसन चमकनि की, वारौं तड़ितनि सावन।
मैं बलि जाउँ ललित ठोढ़ी पर, बलि मोतिनि की माल।
सूर निरखि तन मन बलिहारौं, बलि बलि जसुमति-लाल।।११४।।

अलकनि की छबि अलि-कुल गावत।
खंजन मीन मृगज लज्जित भए, नैननि गतिहिं न पावत।
मुख मुसुक्यानि आनि उर अंतर, अंबुज बुधि उपजावत।
सकुचत अरु बिगसत वा छबि पर, अनुदिन जनम गँवावत।
पूजत नाहिं सुभग स्यामल तन, जद्यपि जलधर धावत।
बसन समान होत नहिं हाटक, अगिनि झाँप दै आवत।
मुक्त-दाम बिलोकि बिलखि करि, अवलि बलाक बनावत।
सूरदास प्रभु ललित त्रिभंगी, मनमथ-मनहिं लजावत।।११५।।

नटवर-बेष काछे स्याम।
पद-कमल नख-इंदु-सोभा, ध्यान पूरन काम।
जानु जंघ सुघटनि करभा, नहीं रंभा तूल।
पीत पट काछनी मानहुँ जलज-केसर झूल।
कनक छुद्रावली पंगति नाभि कटि कैं भीर।
मनहुँ हंस-रसाल-पंगति, रहे हैं हृद तीर।
झलक रोमावली-सोभा, ग्रीव मोतिनि हार।
मनहुँ गंगा-बीच जमुना, चली मिलि त्रय धार।

बाहु दंड बिसाल तट दोउ, अंग चंदन रेनु।
तीर-तरु बनमाल की छबि, ब्रज-जुवति सुख देनु।
चिबुक पर अधरनि, दसन-दुति बिंब बीजु लजाइ।
नासिका सुक, नैन खंजन, कहत कबि सरमाइ।
स्रवन कुंडल कोटि-रबि-छबि, भृकुटि काम-कोदंड।
सूर प्रभु हैं नीप कैं तर, सीस धरे सिखंड।।६११।

उपमा धीरज तज्यौ निरखि छबि।
कोटि मदन अपनौ बल हारयौ कुंडल किरनि छप्यौ रबि।
खंजन कंज मधुप, बिधु, तड़ि, घन दीन रहत कछुवै दबि।
हरि-पटतर दै हमहिं लजावत, सकुच मरहिं खोटे कबि।
अरुन अधर दसननि, दुति निरखत, बिद्रुम सिखर लजाने।
सूर स्याम आछौ बपु काछे पटतर मेटि बिराने।।६१७।

उपमा हरि-तनु देखि लजानी।
कोऊ जल मैं कोउ बननि रहीं दुरि कोउ दुरि गगन समानी।
मुख निरखत ससि गयौ अंबर कौं, तड़ित दसन-छबि हेरि।
मीन कमल कर चरन, नयन डर, जल मैं कियौ बसेरि।
भुजा देखि अहिराज लजाने, बिवरनि पैठे धाइ।
कटि निरखत केहरि डर मान्यौ, बन-बन रहे दुराइ।
गारी देहिं कबिनि कै बरनत, श्री अँग पटतर देत।
सूरदास हमकौं सरमावत, नाउँ हमारौ लेत।।६१८

बनी मोतिनि की माल मनोहर।
सोभित स्याम-सुभग-उर ऊपर, मनु गिरि तैं सुरसरी धँसी धर।
तट भुजदंड भौंर भृगु-रेखा, चंदन चित्र तरंग सु सुंदर।
मनि की किरन मीन कुंडल-छबि मकर मिलन आये त्यागि सर।
जग्योपबीत बिचित्र सूर सुनि, मध्य-धार धारा जु बनी बर।
संख चक्र गदा पद्म पानि मनु कमल कूल हंसनि कीन्हे घर।।६१९।

बने बिसाल कमल-दल नैन।
ताहू मैं अति चारु बिलोकनि, गूढ़ भाव सूचति सखि सैन।
बदन-सरोज निकट कुंचित कच, मनहुँ मधुप आए मधु लैन।
तिलक तरुन ससि कहत कछुक हँसि, बोलत मधुर मनोहर बैन।
मदन नृपति कौ देस महा मद, बुधि बल बसि न सकत उर चैन।
सूरदास प्रभु दूत दिनहिं दिन, पठवत चरित चुनौती दैन ॥६२०॥

मोहन बदन बिलोकत अँखियनि उपजत है अनुराग।
तरनि ताप तलफत चकोर गति पिवत पियूष पराग।
लोचन नलिन नए राजत रति पूरन मधुकर भाग।
मानहुँ अलि आनंद मिले मकरंद पिवत रितु फाग।
भँवरि भाल भृकुटी पर कुमकुम चंदन-बिंदु बिभाग।
चातक साम सक्र-धनु घन मैं निरखत मन बैराग।
कुंचित केस मयूर चंद्रिका-मंडल सुमन सुपाग।
मानहुँ मदन धनुष सर लीन्हे बरषत है बन बाग।
अधर-बिंब तैं अरुन मनोहर मोहन मुरली-राग।
मानहु सुधा-पयोधि घेरि घन ब्रज पर बरषन लाग।
कुंडल मकर कपोलनि झलकत स्रम-सीकर के दाग।
मानहुँ मीन मकर मिलि क्रीड़त सोभित सरद-तड़ाग।
नासा तिल प्रसून पदवी पर चिबुक चारु चित खाग।
दाड़िम दसन मंद-गति मुसुकनि मोहत सुर नर नाग।
श्रीगुपाल रस रूप भरी हैं, सूर सनेह सुहाग।
ऐसी सोभा-सिंधु बिलोकति इन अँखियनि के भाग ॥६२१॥

बिधना-चूक परी मैं जानी।
आजु गुबिंदहिं देखि देखि हौं, यहै समुझि पछितानी।
रचि पचि सोचि, सँवारि सकल अँग चतुर चतुरई ठानी।
दृष्टि न दई रोम-रोमनि प्रति, इतनिहिं कला नसानी।

कहा करौं, अति सुख, द्वै नैना, उमँगि चलत पल पानी।
सूर सुमेरु समाइ कहाँ लौं बुधि-बासनी पुरानी ॥१२२॥

द्वै लोचन तुम्हरैं द्वै मेरैं।
तुम प्रति अंग बिलोकन कीन्हौ मैं भई मगन एक अंग हेरैं।
अपनौ अपनौ भाग्य सखी री, तुम तनमय मैं कछु न मेरैं।
ज्यौं बुधिये सोई पुनि सुनिये, और नहीं त्रिभुवन मझमेरैं।
स्याम-रूप अवगाह-सिंधु तैं, पार होत चढ़ि डोंगनि केरैं।
सूरदास तैसैं ये लोचन, कृपा जहाज बिना क्यौं पैरैं ॥१२३॥

चारु चितौनि सु चंचल डोल।
कहि न जाति मन मैं अति भावति, कछु जु एक उपजति गति गोल।
मुरली मधुर बजावत, गावत चलत करत अति कुंडल लोल।
सब छबि मिलि प्रतिबिंब बिराजत, इंद्रनील-मनि-मुकुर कपोल।
कुंचित केस सुगंध-सुबनि मनु, उड़ि आए मधुपनि के टोल।
सूर सुभग नासिका मनोहर, अनुमानत अनुराग अमोल ॥१२४॥

नँद-नँदन है बालक-चंद।
बसुकुल नभ तिथि द्वितिय देवकी, प्रगटे त्रिभुवन-चंद।
जठर-कुहू तैं बिहरि, बारुनी दिसि मधुपुरी सुछंद।
बसुदेव-संभु सीस धरि आन्यौ, गोकुल आनँद-कंद।
ब्रज प्राची राका-तिथि जसुमति सरस सरद-रितु-नंद।
उडगन सकल सखा संकर्षन तम-कुल-दनुज निकंद।
गोपी-जन चकोर-चित बाँध्यौ, निमि निवारि पल द्वंद।
सूर सुदेस कला षोडस, परिपूरन परमानंद ॥१२५॥

देखि सखी हरि कौ मुख चारु।
मनहुँ छिड़ाइ लियौ नँद-नंदन वा ससि कौ सत-सारु।
रूप तिलक कच कुटिल किरनि-छबि कुंडल कल-बिस्तारु।
पत्रावलि परिवेष सुमन सरि मिल्यौ मनहुँ उड़ चारु।

नैन चकोर बिहंग सूर सुनि पिवत न पावत पार।
अब अंबर ऐसी लागत है, जैसी झूठी थार ॥६२६॥

देखि री, हरि के चंचल तारे।
कमल मीन कौ कहँ एती छबि, खंजन हू न जात अनुहारे।
वह लखि निमिष नचत, मुरली पर, कर मुख नैन भए इक धारे।
मनु जलरुह तजि बैर मिलत बिधु, करत नाद बाहन चुचुकारे।
उपमा एक अनूपम उपजति, कुंचित अलक मनोहर भारे।
बिडरत बिझुकि जानि रथ तैं मृग, जनु ससंकि ससि लंगर सारे।
हरि-प्रति अंग बिलोकि मानि रुचि ब्रज बनितनि प्रान-धन वारे।
सूर स्याम मुख निरखि मगन भई यह बिचारि चित जनत न टारे

हरि-मुख निरखत नैन भुलाने।
ये मधुकर रुचि पंकज-लोभी, ताही तैं न उड़ाने।
कुंडल मकर कपोलनि कैं ढिग जनु रवि रैनि बिहाने।
भ्रुव सुंदर, नैननि गति निरखत खंजन मीन लजाने।
अरुन अधर दुज कोटि बज्र दुति ससि घन रूप समाने।
कुंचित अलक सिलीमुख मिलि मनु लै मकरंद उड़ाने।
तिलक ललाट, कंठ मुक्तावलि भूषन मनिमय साने।
सूर स्याम रस-निधि नागर के क्यौं गुन जात बखाने ॥६२८॥

देखि री, नवल नंद किसोर।
लकुट सौं लपटाइ ठाढ़े, जुवति जन-मन चोर।
चारु लोचन, हँसि बिलोकनि देखि कै चित भोर।
मोहिनी मोहन लगावत लटकि मुकुट-झकोर।
स्रवन धुनि सुनि नाद पोहत करत हिरदै फोर।
सूर अंग त्रिभंग सुंदर छबि निरखि तृन तोर ॥६२९॥

ब्रज-बनिता देखति नँद-नंदन।
नव घन-नील बरन ता ऊपर खौरि किये तनु चंदन।

कनक-बरन तन पीत पिछौरी, उर भ्राजति बनमाल।
निर्मल गगन स्वेत-बादर पर, मनौ दामिनी-माल।
मुक्त-माल बिपुल बग-पंगति, उड़त एक भई ओति।
सूर स्याम-छबि निरखति जुवती, हरष परस्पर होति ॥६२०॥

हरि-तन मोहिनी माई।
अंग-अंग अनंग सत सत, बरनि नहिं जाई।
कोउ निरखि सिर मुकुट की छबि, सुरति बिसराई।
कोउ निरखि बिथुरी अलक मुख, अधिक सुख पाई।
कोउ निरखि रही भाल चंदन एक चित लाई।
कोउ निरखि बिथकी भृकुटि पर, नैन ठहराई।
कोउ निरखि रही चारु लोचन, निमिष भरमाई।
सूर प्रभु की निरखि सोभा कहत नहिं आई ॥६२१॥

नैना ( माई ) भूलेहु अनत न जात।
देखि सखी, सोभा जु बनी है, मोहन कैं मुसुकात।
दाडिम-दसन-निकट नासा-सुक, चोंच चलाइ न खात।
मनु रतिनाथ-हाथ भृकुटी-धनु तिहिं अवलोकि डरात।
बदन प्रभामय चंचल लोचन, आनँद उर न समात।
मानहुँ भौंह-जुवा-रथ जोते ससि नचवत मृग मात।
कुंचित केस, अधर पुनि मुरली सूरदास सुर गात।
मनहुँ कमल पर कोकिल कूजत, अलिगन उपर उड़ात।६२२

स्याम हृदय जल-सुत की माला अतिहिं अनूपम छाजै (री)।
मनहुँ बलाक-पाँति नव-घन पर, यह उपमा कछु भ्राजै (री)।
पीत हरित सित अरुन, माल-बन राजति हृदय बिसाल (री)।
मानहुँ इंद्र-धनुष नभ-मंडल प्रगट भयौ तिहिं काल (री)।
भृगु-पद-चिन्ह उर-स्थल प्रगटे, कौस्तुभ मनि ढिग दरसत (री)।
बैठे मानौ षट बिधु इक सँग, अर्द्ध निसा मिलि हरषत (री)।

भुजा बिसाल स्याम सुंदर की चंदन-खौरि चढ़ाए (री)।
सूर सुभग अँग अँग की सोभा, ब्रज-ललना ललचाए (री) ॥१२१३॥

निरखि निरखि सुंदरता की सींवा।
अधर अनूप मुरलिका राजति, लटकि रहति अध ग्रीवा।
मंद-मंद सुर पूरत मोहन, राग मलार बजावत।
कबहुँक रीझि मुरलि पर गिरिधर, आपुहिं रस भरि गावत।
हँसत लसति दसनावलि-पंगति, ब्रज-बनिता-मन-मोहत।
मरकत-मनि पुट बिच मुक्तावलि, चंदन-भरे मनु सोहत।
मुख बिकसत सोभा इक आवति, मनु राजीव प्रकास।
सूर अरुन आगमन देखि कै, प्रफुलित भए हुलास ॥१२१४॥

गोपी जन हरि बदन निहारतिं।
कुंचित अलक बिथुरि रहे भ्रुव पर, तापर तन मन वारतिं।
बदन-सुधा सरसीरुह लोचन, भृकुटी दोउ रखवारी।
मनौ मधुप मधुपानहिं आवत, देखि डरत जिय भारी।
इक इक अलक लटकि लोचन पर, यह उपमा इक आवति।
मनहुँ पन्नगिनि उतरि गगन तैं, दल पर फन परसावति।
मुरली अधर धरे, कल-पूरत, मद मंद सुर गावत।
सूर स्याम नागरि नारिनि कै, चंचल चितहिं चुरावत ॥१२१५॥

देखि सखी यह सुंदरताई।
चपल-नैन-बिच चारु नासिका, इकटक दृष्टि रही तहँ छाई।
करतिं बिचार परस्पर जुवती, उपमा आनतिं बुद्धि बनाई।
मानहुँ खंजन-बिच सुक बैठ्यौ, यह कहिकै मन आति सचाई।
कछु इक तिल प्रसून की आभा, मन-मधुकर तहँ रही लुभाइ।
सूर स्याम-नासिका मनोहर, यह सुंदरता इन कहँ पाई ॥१२१६॥

मनोहर है नैननि की भाँति।
मानहुँ दूरि करत बल अपनें, सरद-कमल की काँति।

इंदीवर राजीव कुसेसय जीते सब गुन जाति।
अति आनंद सुमौड़ा तातैं, विकसत दिन अरु राति।
खंजरीट मृग मीन बिचारति, उपमा कौ अकुलाति।
चंचल चारु चपल अवलोकनि, चितहिं न एक समाति।
जब कहुँ परत निमिषहु अंतर, जुग समान पल जात।
सूरदास वह रसिक राधिका, निमि पर अति अनखाति ॥६१७

आजु सखि, देखे स्याम नए (री)
निकसे आनि अचानक अबहीं इत फिरि फिरि चितए (री)।
मैं तब तैं पछिताति यहै, उन नैन न बहुत भए (री)।
जौ बिधना इतनी जानत है कत द्रग दोइ दए (री)।
सब दै तैसें लाख लोचन कहुँ जो कोउ करत नए (री)।
हरि प्रति अंग बिलोकन कौं मैं प्रन करिकै पठए (री)।
अपनैं चोप बहुत कहूँ पठये पे हरि-संग गए (री)।
यके परन सुनि सूरि मनी गुन मदन बान बिधए (री) ॥६१८॥

देखि री हरि के चंचल नैन।
खंजन-मीन-मृगज चपलाई नहिं पटतर इक सैन।
राजिव-दल इंदीवर सतदल कमल कुसेसय जाति।
निसि मुद्रित प्रातहिं वै बिकसित ये बिकसित दिनराति।
अरुन स्वेत सित झलक पलक प्रति को बरनैं उपमाइ।
मनु सरसुति, गंगा जमुना मिलि आगम कीन्हौ आइ।
अवलोकनि जलधार तेज अति तहाँ न मन ठहराइ।
सूर स्याम लोचन-अपार-छबि उपमा सुनि सरमाइ ॥६१९॥

देखि सखी मोहन मन चोरत।
नैन-कटाच्छ बिलोकनि मधुरी, सुभग भृकुटि बिबि मोरत।
चंदन-खौरि ललाट स्याम कैं, निरखत अति सुखदाई।
मनौ एक सँग गंग-जमुन नभ तिरछी धार बहाई।

मलयज भाल भ्रुकुटि-रेखा की कवि उपमा इक पाई ।
मानहुँ अर्धचंद्र-तट अहिनी, सुधा चुरावन आई ।
भ्रुकुटि चारु निरखि ब्रज-सुंदरि, यह मन करति बिचार ।
सूरदास प्रभु सोभा-सागर कोउ न पावत पार ।।६४०।।

देखि री देखि कुंडल लोल ।
चारु स्रवननि ग्रहन कीन्हे, झलक ललित कपोल ।
वदन-मंडल सुधा सरवर, निरखि मन भयौ भोर ।
मकर क्रीड़त गुप्त परगट रूप जल झकझोर ।
नैन मीन भुवंगिनी भ्रुव नासिका थल बीच ।
सरस मृग मद-तिलक-सोभा लसित है लगि कीच ।
मुख बिकास सरोज मानहु जुवति-लोचन भृंग ।
बिथुरि अलकैं परीं मानहुँ, प्रेम-लहरि तरंग ।
स्याम तनु-छबि अमृत-पूरन, रच्यौ काम-तड़ाग ।
सूर प्रभु की निरखि सोभा ब्रज-तरुनि बड़भाग ।।६४१।।

हरि-मुख किधौं मोहनी माइ ।
बोलत बचन मंत्र सौ लागत गति-मति जाति भुलाई ।
कुटिल अलक राजति भ्रुव ऊपर जहाँ तहाँ बगराई ।
स्याम फाँसि मन करष्यौ हमरौ अब समुझी चतुराई ।
कुंडल ललित कपोलनि झलकत, इनकी गति मैं पाई ।
सूर स्याम जुवती मनमोहन ये सँग करत सहाई ।।६४२।।

निरखति रूप नागरि नारि ।
मुकुट पर मन अटकि लटक्यौ, जात नहिं निरवारि ।
स्याम तन की झलक, आभा, चंद्रिका झलकाइ ।
बार बार बिलोकि थकि रही, नैन नहिं ठहराइ ।
स्याम-मरकत-मनि महानग सिखा निरतत मोर ।
देखि जलधर हरष उर मैं भरी आनँद घोर ।

कोउ कहति सुर-चाप मानौ गगन भयौ प्रकास।
थकित ब्रज-ललना जहाँ तहँ, हरष कबहुँ उदास।
निरखि को छिबि अंग रीझी तहीं रही भुलाइ।
सूर प्रभु-गुन-रासि-सोभा, रसिक मन सुखदाइ ॥६४२॥

देखि री देखि सोभा-रासि।
काम-पटतर कहा दीजै रमा जिनकी दासि।
मुकुट सीस सिखंड सोहै, निरखि रहीं ब्रज-नारि।
कोटि सुर-कोदंड-आभा झिरकि डारें वारि।
केस कुंचित बियुरि भ्रुव पर, बीच सोभा भाल।
मनौ चंदहिं अवल साम्यौ राहु घेरयौ जाल।
चारु कुंडल सुभग स्रवननि, को सकै उपमाइ।
कोटि कोटि कला तरनि छवि देखि तनु भरमाइ।
सुभग मुख पर चारु लोचन, नासिका इहिं भाँति।
मनौ खंजन बीच सुक मिलि बैठे हैं इक पाँति।
सुभग नासा तर अधर-छबि, रस धरे अरुनाइ।
मनौ बिंब निहारि सुक, भ्रुव धनुष देखि डराइ।
हँसत दसननि चमकताई बज्र कन रची पाँति।
दामिनी, दारिम नहीं सरि, कियौ मन अति भाँति।
चिबुक बर चित-चित चरावत नवल नंद-किसोर।
सूर-प्रभु की निरखि सोभा भई तरुनी भोर ॥६४३॥

तन मन नारि वारति वारि।
स्याम सोभा सिंधु जान्यौ, अंग अंग निहारि।
थकि रहीं मन ज्ञान करि-करि लहति नाहिंन तीर।
स्याम-तन जल-रासि-पूरन, महा गुन गंभीर।
पीतपट फहरानि मानौ लहरि उठति अपार।
निरखि छबि थकि तीर बैठीं, कहूँ वार न पार।

चलत अंग त्रिभंग करिकै, भौंह भाव चलाइ।
मनौ बिच-बिच भँवर डोलत, चित परत भरमाइ।
स्रवन कुंडल मकर मानौ, नैन मीन बिसाल।
सलिल झलकनि-रूप-आभा देखि री नँदलाल।
बाहु दंड भुजंग मानौ, जलधि-मध्य बिहार।
मुक्त-माला मनौ सुरसरि, है चली द्वै धार।
अंग अंग भूषन बिराजत, कनक-मुकुट प्रभास।
जलधि मथि मनु प्रगट कीन्हौ श्री, सुधा-परगास।
चकित भई तिय निरखि सोभा देह-गति बिसराइ।
सूर प्रभु छवि-रासि सागर, जामि आननिराइ ॥६४८॥

बैठी कहा मदन मोहन की, सुंदर बदन बिलोकि।
जा कारन घूँघट पट अबलौं, अँखियाँ राखी रोकि।
छवि रही मोर-चंद्रिका माथैं छवि की उठति तरंग।
मनहुँ अमर-पति-धनुष बिराजत नव जलधर कैं संग।
रुचिर चारु कमनीय भाल पर, कुंकुम-तिलक दिये।
मानहुँ अखिल भुवन की सोभा राजति उदय किये।
मनिमय जटित लोल कुंडल की आभा झलकति गंड।
मनहुँ कमल ऊपर दिनकर की, पसरी किरनि प्रचंड।
भृकुटी कुटिल निकट नैननि कैं, चपल होति इहि भाँति।
मनहुँ तामरस के सँग खेलत बाल भृंग की पाँति।
कोमल स्याम कुटिल अलकावलि, ललित कपोलनि तीर।
मनहुँ सुभग इंदीवर ऊपर, मधुपनि की अति भीर।
अरुन-अधर, नासिका निकाई, बदत परस्पर होड़।
सूर सुमनसा भई पाँगुरी, निरखि डगमगे गोड़ ॥६४९॥

सजनी निरखि हरि कौ रूप।
मनसि बचसि बिचारि देखौ, अंग-अंग अनूप।

कुटिल केस सुदेस अलिगन बदन सरद सरोज।
मकर-कुंडल-किरनि की छबि, दुरत फिरत मनोज।
अरुन अधर कपोल नासा, सुभग ईषद हास।
दसन की दुति तड़ित, नव ससि, भ्रकुटि मदन बिलास।
अंग-अंग अनंग जीते, रुचिर उर बनमाल।
सूर सोभा हृदय पूरन, देत सुख गोपाल ॥६४७॥

नैननि ध्यान नंद-कुमार।
सीस मुकुट सिखंड भ्राजत, नहीं उपमा-पार।
कुटिल केस सुदेस राजत, मनहुँ मधुकर-जाल।
रुचिर केसरि-तिलक दीन्हैं, परम सोभा भाल।
भृकुटि बंकट चारु लोचन, रही जुवती देखि।
मनौ खंजन चाप-डर डरि, उड़त नहिं तिहिं पेखि।
मकर कुंडल गंड झलमल, निरखि लज्जित काम।
नासिका-छबि कीर लज्जित, कबिनि बरनत नाम।
अधर बिद्रुम, दसन दाड़िम, चिबुक है चित-चोर।
सूर प्रभु-मुख चंद पूरन नारि-नैन चकोर ॥६४८॥

नंद-नंदन-मुख देखौ नीकैं।
अंग-अंग प्रति कोटि माधुरी निरखि होत सुख जी कैं।
सुभग स्रवन कुंडल की आभा झलक कपोलनि पी कैं।
दह-दह अमृत मकर क्रीड़त मनु, यह उपमा कछु ही कै।
और अंग की सुधि नहिं जानैं कहीं कहति हैं जी कैं।
सूरदास प्रभु नटवर काछे, रहत हैं रति-पति फीकैं ॥६४९॥

देखि री देखि, कुंडल-झलक।
देह दै छबि अरी कैसैं, लगत चापर पलक।
ललति चारु कपोल दुहुँ बिच सजल लोचन चारु।
मुख सुधा-सर मीन मानौ मकर संग बिहारु।

कुटिल अलक सुभाइ हरि कैं, भ्रुवनि पर रहे आइ।
मनौ मनमथ फाँद फंदनि, मीन बिधि तट ल्याइ।
चपल लोचन, चपल कुंडल, चपल भृकुटी बंक।
सखा व्याकुल देखि अपने, लेत बनत न संक।
सूर प्रभु नँद-सुवन की छबि, बरनि कापै जाइ।
निरखि गोपी-निकर बिथकीं, बिधिहिं अति रिस पाइ ॥६५०

बिधना अतिहीं पोच कियौ री।
कहा बिगार कियौ हम याकौ ब्रज माहीं अवतार लियौ री।
यह तौ मन अपनैं जानत है एते पर क्यौं निठुर हियौ री।
रोम रोम लोचन इकटक करि, जुवतिनि प्रति काहैं न ठियौ री।
अँखियाँ द्वै छबि की चमकनि यह, हम तौ चाहति सबै पियौ री।
सुनि सजनी, यह करनी अपनी अपनैं ही सिर मानि लियौ री।
हम तौ पाप कियौ भुगतै को पुन्य-प्रगट क्यौं जात छियौ री।
सूरदास प्रभु रूप-सुधा-निधि, पुट थोरौ बिधि नहीं दियौ री ६५१

देखि सखी अधरनि की लाली।
मनि मरकत तैं सुभग कलेवर, ऐसे हैं बनमाली।
मनौ प्रात की घटा साँवरी, तापर अरुन प्रकास।
ज्यौं दामिनि बिच चमकि रहत है फहरत पीत सुबास।
कीधौं तरुन तमाल बेलि चढ़ि जुग फल बिंब सुपाके।
नासा कीर आइ मनु बैठ्यौ लेत बनत नहिं ताके।
हँसत दसन इक सोभा उपजति उपमा जदपि लजाइ।
मनौ नीलमनि-पुट मुकुता-गन बंदन भरि बगराइ।
किधौं बज्र-कन, लाल नगनि खँचि तापर बिद्रुम पाँति।
किधौं सुभग बंधूक-कुसुम-तर, झलकत जल कन-काँति।
किधौं अरुन अंबुज बिच बैठी, सुंदरताई आइ।
सूर अरुन अधरनि की सोभा बरनत बरनि न जाइ ॥६५२॥

मुख पर चंद डारौं वारि।
कुटिल कच पर भौंर वारौं, भौंह पर धनु वारि।
भाल-केसरि-तिलक-छवि पर, मदन-सर सत वारि।
मनु चली बहि सुधा-धारा, निरखि मन द्यौं वारि।
नैन सरसिज-जमुन-गंगा, उपम डारौं वारि।
मीन खंजन मृगज वारौं, कमल के कुल वारि।
निरखि कुंडल तरनि वारौं, कूप सतमनि वारि।
मकराक सहित कपोल छवि पर, मुकुर सत-सत वारि।
नासिका पर कीर वारौं, अधर बिद्रुम वारि।
दसन पर कन-बज्र वारौं, बीज-दाड़िम वारि।
चिबुक पर चित-बित्त वारौं, प्रान डारौं वारि।
सूर हरि की अंग सोभा, को सकै निरुवारि ॥६५२॥

---

## ( घ ) राधा-कृष्ण

खेलन हरि निकसे ब्रज-खोरी।
कटि कछनी पीतांबर बाँधे, हाथ लए भौंरा चक, डोरी।
मोर-मुकुट, कुंडल स्रवननि बर, दसन-दमक दामिनि छबि छोरी।
गए स्याम रबि-तनया कैं तट, अंग लसति चंदन की खोरी।
औचक ही देखी तहँ राधा नैन बिसाल भाल दिए रोरी।
नील बसन फरिया कटि पहिरे, बेनी पीठि रुलति झकझोरी।
संग लरिकिनी चलि इत आवति दिन-थोरी अति छबि तन-गोरी।
सूर स्याम देखत हीं रीझे नैन-नैन मिलि परी ठगोरी ॥१२४॥

बूझत स्याम, कौन तू गोरी ?
कहाँ रहति काकी है बेटी देखी नहीं कहूँ ब्रज-खोरी।
काहे कौं हम ब्रज-तन आवतिं, खेलति रहतिं आपनी पौरी।
सुनत रहतिं स्रवननि नँद-ढोटा, करत फिरत माखन-दधि-चोरी।
तुम्हरौ कहा चोरि हम लैहैं, खेलन चलौ संग मिलि जोरी।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि बातनि भुरइ राधिका भोरी ॥१२५॥

प्रथम सनेह दुहुँनि मन जान्यौ।
नैन-नैन कीन्ही सब बातैं, गुप्त प्रीति प्रगटान्यौ।
खेलन कबहुँ हमारैं आवहु नंद-सदन, ब्रज गाउँ।
द्वारैं आइ टेरि मोहिं लीजौ, कान्ह हमारौ नाउँ।

जौ कहियै घर दूरि तुम्हारौ, बोलत सुनियै टेरि।
तुमहिं सौंह वृषभानु बबा की, प्रात-साँझ इक फेरि।
सूधी निपट देखियत तुमकौं तातैं करियत साथ।
सूर स्याम नागर उत नागरि राधा, दोउ मिलि गाथ ॥६२६॥

ठाढ़ी कुँवरि राधिका लोचन मीचत तहँ हरि आए।
अति बिसाल चंचल अनियारे हरि-हाथनि न समाए।
सुभग आँगुरिनि मध्य बिराजत अति आतुर दरसाए।
मानी मनिधर मनि ज्यौं ढाँकयौ फन तर रहत दुराए।
गोसुत भयौ जु गाथि गह्यौ घर एक्यौ जु रवि सँग साए।
अपनै काम न मिलत हरी कौ बिरहा बैत दुखाए।
अम्बुज वारि कुमुद द्वै मिलि कै ज्यौं ससि-बीर गँवाए।
सूरदास अति हरि परसतहीं सकल बिथा बिसराए ॥६२७॥

सैननि नागरी समुझाइ।
खरिक आवहु दोहिनी लै, यहै मिस छल लाइ।
गाइ-गनती करन जैहैं मोहिं लै नँदराइ।
बोलि बचन प्रमान कीन्हौ, दुहुँनि आतुरताइ।
कनक बरन सुढार सुंदरि, सकुचि बदन दुराइ।
स्याम प्यारी-नैन, रीझे, अति बिसाल चलाइ।
गुप्त प्रीति न प्रगट कीन्ही हृदय दुहुँनि छिपाइ।
सूर प्रभु के बचन सुनि-सुनि रही कुँवरि लजाइ ॥६२८॥

गई वृषभानु-सुता अपनैं घर।
संग सखी सौं कहति चली यह, को जैहै इनकैं दर।
बदी बेर गई जमुना आप खीझति ह्वैहै मैया।
बचन कहति मुख,हृदय प्रेम-दुख, मन हरि लियौ कन्हैया।
माता कहति, कहाँ ही प्यारी कहाँ अबेर लगाई।
सूरदास तब कहति राधिका, खरिक देखि हौं आई ॥६२९॥

नागरि मन गई अरुझाइ।
अति बिरह तनु भई ब्याकुल, घर न नैकु सुहाइ।
स्याम सुंदर मदन मोहन, मोहिनी सी लाइ।
चित्त चंचल कुँवरि राधा खान पान भुलाइ।
कबहुँ बिहँसति, कबहुँ बिलपति, सकुचि रहति लजाइ।
मातु-पितु कौ त्रास मानति, मन बिना भई बाइ।
जननि सौं दोहिनी माँगति बेगि दै री माइ।
सूर प्रभु कौं खरिक मिलिहौं गए मोहिं बुलाइ ॥६६०॥

मोहिं दोहिनी दै री मैया।
खरिक माहिं अबहीं ह्वै आई, अहिर दुहत सब गैया।
ग्वाल दुहत तब गाइ हमारी जब अपनी दुहि लेत।
घरिक मोहिं लगिहै खरिका मैं तू जनि आवै हेत।
सोचति चली कुँवरि घर ही तैं खरिक गई समुहाइ।
कब देखौं वह मोहन मूरति जिन मन लियौ चुराइ।
देखे जाइ तहाँ हरि नाहीं, चकित भई सुकुमारि।
कबहूँ इत कबहूँ उत डोलति, लागी प्रीति-खँभारि।
नंद लिए आवत हरि देखे, तब पायौ बिस्राम।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, कीन्हौ पूरन काम ॥६६१॥

नंद गए खरिकहिं हरि लीन्हे।
देखी तहाँ राधिका ठाढ़ी बोलि लिए तिहिं चीन्हें।
महर कह्यौ, खेलौ तुम दोऊ, दूरि कहूँ जिनि जैहौ।
गनती करत ग्वाल गैयनि की मोहिं नियरैं तुम रैहौ।
सुनि बेटी बृषभानु महर की कान्हहिं लेइ खिलाइ।
सूर स्याम कौ देखे रहिहौ, मारै जनि कोउ गाइ ॥६६२॥

नंद बाबा की बात सुनी हरि।
मोहिं छाँड़ि कै कहूँ जाहुगे, ल्याऊँगी तुमकौं धरि।

ऐसी भई तुम्हैं सौंपि गए मोहिं, जान न देहौं तुमकौं।
बाँह तुम्हारी नैंकु न छाँड़ौं, महर खीझिहैं हमकौं।
मेरी बाँह छाँड़ि दै राधा, करत उपरफट बातैं।
सूर स्याम नागर, नागरि सौं, करत प्रेम की घातैं ॥६६३॥

जननी कहति कहा भयौ प्यारी।
अबहीं खरिक गई तू नीकैं, आवत ही भई कौन बिथा री।
एक बिटनियाँ सँग मेरे ही, कारैं खाई ताहि तहाँ री।
मो देखत वह परी धरनि गिरि, मैं डरपी अपने जिय भारी।
स्याम बरन इक ढोटा आयौ, यह नहिं जानति रहत कहाँ री।
कहत सुन्यौ नँद कौ यह बारौ, कछु पढ़ि कै तुरतहिं वहिं झारी।
मेरौ मन भरि गयौ त्रास तैं, अब नीकौं मोहिं लागत मा री।
सूरदास अति चतुर राधिका यह कहि समुझाई महतारी ॥६६४॥

कुँवरि सौं कहति वृषभानु-घरनी।
नैंकु नहिं घर रहति, तोहिं कितनौ कहति,
रिसनि मोहिं दहति, बन भई हरनी।
लरिकिनी सबनि घर तोसी नहिं कोउ निडर,
चलति नभ चितै नहिं तकति धरनी।
अबहिं अरबर टरी, साँप सौं उबरी, बाच,
कै कहत तोहिं लगति जरनी।
लिखी मेटै कौन, करै करता जौन,
सोइ ह्वै है जु होनहारि करनी।
सुता लई उर लाइ, तनु निरखि पछिताइ,
जननि गई कुम्हिलाइ सूर बरनी ॥६६५॥

महर वृषभानु की यह कुमारी।
देवपासी करत द्वार द्वारैं परत,
पुत्र द्वै, तीसरैं यै ...

भई बरष सात की सुभ घरी जात की,
प्यारी दोउ भ्रात की बनी भारी।
कुँवरि दई अन्हवाइ गई तन-सुरझाइ,
बसन पहिराइ कछु कहति का री।
जाहि जनि खरिक-तन, खेलि अपनैं भवन
यह सुनति हँसति मन स्याम नारी।
सूर प्रभु ध्यान धरि, हरषि आनंद भरि,
गौंद पर खेलिहीं कहति का री।॥६६६॥

खेलन कै मिस कुँवरि राधिका नंद महरि कैं आई (हो)।
सकुच सहित मधुरे करि बोली घर हौ कुँवर कन्हाई (हो)।
सुनत स्याम कोकिल सम बानी निकसे अति अतुराई (हो)।
माता सौं कछु करत कलह हे, रिस डारी बिसराई (हो)।
मैया री, तू इनकौं चीन्हति, बारंबार बताई (हो)।
जमुना तीर काल्हि मैं भूल्यौ, बाहँ पकरि लै आई (हो)।
आवति इहाँ तोहिं सकुचति है मैं दै सौंह बुलाई (हो)।
सूर स्याम ऐसे गुन आगर, नागरि बहुत रिझाई (हो)॥६६७॥

देखि महरि मनहीं सु सिहानी।
बोलि लई, पूछति नँदरानी, कहि मधुरे मधु बानी।
ब्रज मैं तोहिं कबूँ नहिं देखी कौन गाउँ है तेरी।
भली काल्हि कान्हहिं गहि ल्याई, भूल्यौ हो सुत मेरौ।
नैन बिसाल, बदन अति सुंदर, देखत नीकी छोरी।
सूर महरि सबिता सौं बिनवति, भली स्याम की जोटी॥६६८

नाम कहा तेरौ री प्यारी।
बेटी कौन महर की है तू को तेरी महतारी।
धन्य कोख जिहिं तोकौं राख्यौ धनि घरि जिहिं अवतारी।
धन्य पिता माता हैं तेरे, छबि निरखति हरि-महतारी।

भली भई तुम्है सौंपि गए मोहिं, जान न देहौं तुमकौं।
बाँह तुम्हारी नैकु न छाँड़ौं, महर खीझिहैं हमकौं।
मेरी बाँह छाँड़ि दै राधा, करत उपरफट बातैं।
सूर स्याम नागर, नागरि सौं, करत प्रेम की घातैं ॥११३॥

जननी कहति कहा भयौ प्यारी।
अबहीं खरिक गई तू नीकैं, आवत ही भई कौन बिथा री।
एक बिटनियाँ संग मेरे ही, कारैं खाई ताहि तहाँ री।
मो देखत वह परी धरनि गिरि, मैं डरपी अपने जिय भारी।
स्याम बरन इक ढोटा आयौ, यह नहिं जानति रहत कहाँ री।
कहत सुन्यौ नँद कौ यह बारौ, कछु पढ़िकै तुरतहिं उहिं झारी।
मेरौ मन भरि गयौ त्रास तैं, अब नीकौ मोहिं लागत ना री।
सूरदास अति चतुर राधिका, यह कहि समुझाई महतारी ॥११४॥

कुँवरि सौं कहति वृषभानु-घरनी।
नैकु नहिं घर रहति, तोहिं कितनौ कहति
रिसनि मोहिं दहति, बन भई हरनी।
लरिकिनी सबनि घर, तोसी नहिं कोउ निडर
चलति नभ चितै नहिं तकति धरनी।
बड़ी करवर टरी, साँप सौं ऊबरी, बात,
कै कहत तोहिं लागति डरनी।
सिखी मेरै कौन, करै करता कौन,
सोइ ह्वैहै जु होनहारि करनी।
सुता लई घर जाइ, तनु निरखि पछिताइ,
बरनि गई कुम्हिलाइ सूर बरनी ॥११५॥

महर वृषभानु की यह कुमारी।
देवपासी करत बार हारैं परत,
पुत्र द्वै, तीसरै यहै बारी।

खेलति रही नंद कैं आँगन, जसुमति कही कुँवरि यौं आ री।
मेरौ नाउँ बूझि बाबा कौ, तेरौ बूझि, दई हँसि गारी।
लिय चौंवरी गोद करि लीनी, फरिया दई फारि नव सारी।
मो-तन चितै, चितै ढोटा-तन, कछु सविता सौं गोद पसारी।
यह सुनि कै वृषभानु मुदित चित, हँसि-हँसि बूझत बात दुलारी।
सूर सुनत रस सिंधु बढ़यौ अति, दंपति पढ़ै बात बिचारी ॥६७२॥

मेरे आगें महरि जसोदा, तोकौं गारी दीन्ही।
वाकौ भाव सबै मैं जानति, वै जैसी मैं चीन्ही।
तोकौं कहि पुनि कह्यौ बबा कौं बड़ौ धूत वृषभान।
तब मैं कह्यौ, ठग्यौ कब तुमकौं हँसि लागी लपटान।
भली कही तू मेरी बेटी, लयौ आपनौ दाउ।
जो मोहिं कह्यौ सबै गुन उनके, हँसि-हँसि कहति सुभाउ।
फेरि-फेरि बूझति राधा सौं सुनत हँसति सब नारि।
सूरदास वृषभानु-घरनि जसुमति कौं गावति गारि ॥६७३॥

कहत अनत जननी समुझाई।
जहँ-तहँ डारे रहत खिलौना राधा मनि लै जाइ चुराई।
साँझ सबारैं आवन लागी, चितै रहति मुरली-धुन आई।
इनही मैं मेरे मन बसत है, तेरे भावैं नैकु न भाई।
राखि छपाइ, कह्यौ करि मेरौ बलदाऊ की जनि पतिआई।
सूरदास यह कहति जसुदा, को सैंहै मोहिं लगी बलाई। ६७४

आसु राधिका भोरही जसुमति कै आई।
महरि मुदित हँसि यौं कह्यौ मथि माखन-दुहाई।
आयसु दै ठाढ़ी भई, कर नेति सुहाई।
रीतौ माट बिलोवई चित जहाँ कन्हाई।
उनके मन की कह कहौं, ज्यौं दृष्टि लगाई।
बैया नोई वृषभ सौं गैया बिसराई।

मैं बेटी वृषभानु महर की मैया तुमकौं जानति।
जमुना-तट बहु बार मिलन भयौ तुम नाहिंन पहिचानति।
ऐसी कहि, वाकौं मैं जानति, वह तौ बड़ी छिनारि।
महर बड़ौ लंगर सब दिन कौ, हँसति देति मुख गारि।
राधा बोलि उठी, बाबा कछु तुमसौं ढीठौ कीन्हौ।
ऐसे समरथ कब मैं देखे हँसि प्यारिहिं उर लीन्हौ।
महरि कुँवरि सौं यह कहि भाषति, आउ करौं तेरी चोटी।
सूरदास हरषित नँदरानी कहति महरि हम जोटी॥६६९॥

जसुमति राधा कुँवरि सँवारति।
बड़े बार सीमंत सीस के, प्रेम सहित निरुवारति।
माँग पारि बेनी जु सँवारति, गूँथी सुंदर भाँति।
गोरैं भाल बिंदु बदन, मनु इंदु प्रात-रवि काँति।
सारी चीरि नई फरिया लै, अपने हाथ बनाइ।
अंचल सौं मुख पोंछि अंग सब, आपुहिं लै पहिराइ।
तिल चाँवरी, बतासे मेवा दियौ कुँवरि की गोद।
सूर स्याम राधा-तनु चितवत, जसुमति मन-मन मोद॥६७०॥

खेलौ आइ स्याम सँग राधा।
यह सुनि कुँवरि हरष मन कीन्हौ मिटि गई अंतर-बाधा।
जननी निरखि चकित रहि ठाढ़ी, दंपति रूप-अगाधा।
देखति भाव दुहुँनि को सोई, जो चित करि अवराधा।
सँग खेलत दोउ झगरन लागे, सोभा बढ़ी अगाधा।
मनहुँ तड़ित घन, इंदु तरनि ह्वै, बाल करत रस-साधा।
निरखत बिधि भ्रमि भूलि परयौ तब मन-मन करत समाधा।
सूरदास प्रभु और रच्यौ बिधि सोच भयौ तन दाधा॥६७१॥

बूझति जननि कहाँ हुती प्यारी।
किन तेरे भाल तिलक रचि कीनौ, किहिं कच गूँथि माँग सिर पारी।

खेलति रही नंद कैं आँगन जसुमति कही कुँवरि यौं प्यारी ।
मेरी नाउँ बूझि बाबा कौ तेरौ बूझि, दई हँसि गारी ।
तिहिं भाँवरी गोद करि लीनी, फरिया दई फारि नव सारी ।
गो-धन भिरै, भिरै खोटा-धन, कछु सकुचा सौं गोद पसारी ।
यह सुनि कै वृषभानु मुदित चित, हँसि-हँसि बूझत बात दुलारी ।
सूर सुनत रस-सिंधु बढ़्यौ अति, दंपति पढ़ै बात बिचारी ॥६७२॥

मेरे आगैं महरि जसोदा तोकौं गारी दीन्ही ।
बाके भाव सबै मैं जानति, वै जैसी मैं चीन्ही ।
तोकौं कहि पुनि कह्यौ बबा कौं बड़ौ धूत वृषभान ।
तब मैं कह्यौ ठग्यौ कब तुमकौं हँसि लागी लपटान ।
भली कही तू मेरी बेटी भयी आपनी बात ।
जो मोहिं कह्यौ सबै गुन उनके, हँसि-हँसि कहति सुभाउ ।
फेरि-फेरि बूझति राधा सौं सुनत हँसति सब नारि ।
सूरदास वृषभानु-घरनि जसुमति कौं गावति गारि ॥६७३॥

कहत कान्ह जननी समुझाई ।
कहाँ-कहाँ धरे रहत खिलौना, राधा जनि लै जाइ चुराई ।
साँझ सबारैं आवन लागी, चितै रहति मुरली-तन भाई ।
इनहीं मैं मेरे प्रान बसत हैं, तेरे आगें नैंकु न माई ।
राखि दुराइ, कह्यौ करि मेरौ पचपाऊ कौं जनि पतियाई ।
सूरदास यह कहति जसोदा, को लैहै मोहिं लगी बलाई । ६७४

आजु राधिका भोरहीं जसुमति कैं आई ।
महरि मुदित हँसि यौं कह्यौ मथि मान-दुहाई ।
आयसु लै ठाढ़ी भई, कर नेति सुहाई ।
रीती माट बिलोवई चित जहाँ कन्हाई ।
उनके मन की कह कहौं ज्यौं दृष्टि लगाई ।
लैया नोई वृषभ सौं गैया बिसराई ।

नैननि मैं जसुमति लखी दुहुँ की चतुराई ।
सूरदास दंपति-दसा, कापै कहि जाई ॥६७५॥

महरि कह्यौ री लाडिली, किन मथन सिखायौ ।
कहूँ मथनी, कहूँ माट है, चित कहाँ लगायौ ।
अपनैं घर यौंही मथै करि प्रगट दिखायौ ।
कै मेरैं घर आइकै, तैं सब बिसरायौ ?
मथन नहीं मोहिं आवई, तुम सौंह दिखायौ ।
तिहिं कारन मैं आइ कै, तुव बोल रखायौ ।
नँद-घरनि तब मथि दह्यौ हरिं भाँति बतायौ ।
सूर निरखि मुख स्याम कौ, तहँ ध्यान लगायौ ॥६७६॥

दुहत स्याम गैया बिसराई ।
नोई लै पग बाँधि वृषभ कै, दोहिनि माँगत कुँवर कन्हाई ।
ग्वाल एक दोहिनि लै दीन्ही दुही स्याम अति करी चँडाई ।
हँसत परस्पर तारी दै दै आजु कहाँ तुम रहे भुलाई ।
कहत सखा हरि सुनत नहीं सो, प्यारी सौं रहे चित अरुझाई ।
सूर स्याम राधा-तन चितवत बड़े चतुर की गई चतुराई ॥६७७॥

राधा ये ढँग हैं री तेरे ।
जैसे हाल मथत दधि कीन्हे, हरि मनु लिखे चितेरे ।
तेरी मुख देखत ससि लाजै और कह्यौ क्यौं जाचै ।
नैना तेरे जलज-जीत हैं, खंजन तैं अति नाचैं ।
चपला तैं चमकति अति प्यारी, कहा करैगी स्यामहिं ।
सुनहु सूर ऐसेहिं दिन खोवति काम नहीं तेरे धामहिं ॥६७८॥

मेरी कह्यौ माहिंन सुनति ।
तबहिं तैं इकटक रही है, कहा धौं मन गुनति ।
अबहिं तैं तू करति ये ढँग, तोहिं अबही होन ।
स्याम कौ तू ऐसैं ठगि लियौ, कछु न जाने कौन ॥

सुता है वृषभानु की री यही उनकी माइँ।
सूर प्रभु नँद-सुवन निरखत, जननि कहति सुभाउ ॥६७६॥

खिलैबी छाँड़ि दै री राधा।
हिलि-मिलि खेलि स्यामसुंदर सौं करति काम की बाधा।
कै बैठी रहि भवन आपनैं काहू कौं मनि भावै।
मृग-नैनी हरि को मन मोहति तब तू देखि दुरावै।
कबहुँक कर तैं गिरति दोहिनी कबहुँक बिसरति सोई।
कबहुँक वृषभ दुहत है मोहन ना जानौं का होई।
कौन मंत्र जानति तू प्यारी, पढ़ि डारति हरि-गात।
सूर स्याम कौं धेनु दुहन दै, कहति जसोदा मात ॥६८०॥

धेनु दुहन दै मेरे स्यामहिं।
जौ आवै तौ सहज रूप सौं, बनि आवति बेकामहिं।
सूधैं आइ स्याम सँग खेलौ, बोलौ बैठे, धामहिं।
ऐसी ढंग मोहिं नहिं भावै सेइ न ताके नामहिं।
घर अपनैं तू जाहि राधिका, कहति महरि मन तामहिं।
सूर जाइ तू करति अचगरी, को चकिहै निसि-जामहिं ॥६८१

बार बार तू जनि ह्याँ आवै।
मैं कहा करौं सुतहिं नहिं बरजति घर तैं मोहिं बुलावै।
मोसौं कहत तोहिं बिनु देखैं, रहत न मेरौ प्रान।
छोह लगत मोकौं सुनि बानी, महरि तुम्हारी आन।
मुँह पावति तबहीं सौं आवति, औरै लावत मोहिं।
सूर समुझि जसुमति उर लाई, हँसत कहति हौं तोहिं।६८२

हँसत कहौं मैं तोसौं प्यारी।
मन मैं कछू बिलग जनि मानै मैं तेरी महतारी।
जहूदैं दिवस आजु तू आई, राधा मेरैं धाम।
महरि बड़ी मैं सुघरि सुनी है, कछु सिखयौ गृह-काम ?

मैया जब मोहिं टहल कहति कछु, खिझत बबा वृषभान।
सूर महरि सौं कहति राधिका मानौ अतिहिं अजान ।।१६८१

या घर प्यारी आवति रहियौ।
महरि हमारौ नाव बतावति ? मिलन हमारौ कहियौ।
एक दिवस मैं गई जमुन तट, तहँ उन देखी आइ।
मोकौं देखि बहुत सुख पायौ मिली अंकम लपटाइ।
यह सुनि कै चली कुँवरि राधिका, मोदा भई अपार।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौ, मोहन नंद-कुमार ।।१६८२।।

मोहिनि-कर तैं दोहिनि लीन्ही, गो-पद बछरा जोरे।
हाथ धेनु-थन, बदन तिया-तन, छीर छींटि चख भोरे।
आनन रही ललित पय छींटैं, छाजति छबि तृन तोरे।
मनौ निकसि निकलंक कलानिधि दुग्ध-सिंधु मथि बोरे।
दै घूँघट पट ओट नील हँसि, कुँवरि मुदित मुख मोरे।
मनहुँ सरद-ससि कौं मिलि दामिनि, घेरि लियौ घन घोरे
इहिं बिधि रहसत-बिलसत दंपति, हेत हियैं नहिं थोरे।
सूर उमँगि आनँद सुधा-निधि, मनु बेला बल फोरे ।।१६८३।।

हरि सौं धेनु दुहावति प्यारी।
करति मनोरथ पूरन मन कौ वृषभानु महर की बारी।
दूध-धार मुख पर छबि लागति, सो उपमा अति भारी।
मानौ चंद कलंकहिं धोवत जहँ-तहँ बूँद सुधारी।
हाव-भाव रस-मगन भए दोउ छबि निरखति ललिता री।
गो-दोहन-सुख करत सूर-प्रभु, तीनिहुँ भुवन कहा री ।।१६८४।।

तुम पै कौन दुहावै गैया।
लिए रहत हौ कनक-दोहिनी, बैठत हौ अधपैया।
अति रस कम की प्रीति जानि कै, आवत जारिक दुहैया।
इत चितवत, उत धार चलावत, यहै सिखायौ मैया ?

तुम प्रीति तासौं करि मोहन, जो है तेरी छैया।
सूरदास प्रभु झगरो सीखयौ ज्यौं पर ससम गुसैयाँ ॥६८७॥

करि प्यारी हरि, आपुनि गैयाँ।
नाहिंन बसत लाल कछु तुम्हरैं तुमसे सबै ग्वाल इक ठैयाँ।
नाहिं आधीन तेरे बाबा के, नाहिं तुम हमरे नाथ-गुसैयाँ।
हम तुम जाति पाँति के एकै, कहा भयो अधिकी द्वै गैयाँ?
जा दिन तैं सँचरे गोपिनि मैं ताही दिन तैं करत लँगरैयाँ।
मानी हार सूर के प्रभु तब बहुरि न करिहौ नंद दुहैयाँ ॥६८८॥

धेनु दुहत अतिहीं रति बाढ़ी।
एक धार दोहिनि पहुँचावत, एक धार जहँ प्यारी ठाढ़ी।
मोहन कर तैं धार चलति परि मोहिनि-मुख अतिहीं छबि गाढ़ी।
मनु जलधर जलधार बृष्टि लघु पुनि पुनि प्रेम चंद पर बाढ़ी।
सखी संग की निरखति यह छबि भईं व्याकुल मनमथ की डाढ़ी।
सूरदास प्रभु के रस-बस सब भवन-काज तैं भईं उचाढ़ी ॥६८९॥

दुहि दीन्ही राधा की गाइ।
दोहिनि लई देत कर तैं हरि, हा हा करि परी पाइ।
ज्यौं ज्यौं प्यारी हा हा बोलति, त्यौं त्यौं हँसत कन्हाइ।
बहुरि कही प्यारी तुम हा हा, दैहौं नंद-दुहाइ।
तब दीन्ही प्यारी-कर दोहिनि, हा हा बहुरि कराइ।
सूर स्याम रस हाव-भाव करि, दीन्ही कुँवरि पठाइ ॥६९०॥

मुरि मुरि चितवति नंद गली।
डग न परत ब्रजनाथ-साथ बिनु बिरह-बिथा मैं जाति चली।
बार-बार मोहन-मुख कारन आवति फिरि-फिरि संग अली।
चली पीठि दै दृष्टि फिरावति अंग-अंग आनंद रली।
धीर-अधीर भीम-गिरि-मारग-केहरि-मृगमी-दबि बहुमी।
सूरदास प्रभु पास दुरावति धनि-धनि की कृपम—

घर दोहिनी चली लै प्यारी।
फिरि चितवत हरि हँसे निरखि मुख, मोहन मोहिनि डारी।
व्याकुल भई गई सखियनि लौं, मन कौं गए चुराई।
और अहिर सब कहाँ तुम्हारे, हरि सौं धेनु दुहाई।
यह सुनि कै चकित भई प्यारी, धरनि परी मुरझाइ।
सूरदास सब सखियनि उर भरि, लीन्ही कुँवरि उठाइ।।६९२।।

क्यौं री कुँवरि गिरी मुरझाई ?
यह बानी कही सखियनि आगैं, मोकौं कारैं खाई।
चली लिवाइ सुता-वृषभानुहिं, घरहीं तन समुहाई।
धरि दियौ भरी दूध दुहनियाँ, अबहीं नीकैं आई।
यह कारौ सुत नंद महर कौ, सब हम फूँक लगाई।
सूर सखिनि मुख सुनि यह बानी तब यह बात सुनाई।।६९३

सखियनि मिलि राधा घर लाई।
देखहु महरि सुता अपनी कौं, कहूँ इहिं कारैं खाई।
हम आगैं आवति, यह पाछैं धरनि परी भहराई।
सिर तैं गई दोहिनी ढरिकै, आपु रही मुरझाई।
स्याम-भुअंग डस्यौ हम देखत ल्यावहु गुनी बुलाई।
रोवति जननि कंठ लपटानी, सूर स्याम गुन राई।।६९४।।

प्रात गई नीकैं उठि घर तैं।
मैं बरजी कहँ जाति री प्यारी तब खीझी रिस-भर तैं।
सीतल अंग स्वेद सौ बूड़ी सोच परयौ मन डर तैं।
अतिहिं हठीली, कह्यौ न मानति, करति आपने बर तैं।
औरै दसा भई छिन भीतर, बोलि गुनी नगर तैं।
सूर गारुड़ी गुन करि थाके मंत्र न लागत थर तैं।।६९५।।

चले सब गारुड़ी पछिताइ।
नैकहूँ नहिं मंत्र लागत, समुझि काहु न जाइ।

बात बूझत संग सखियनि कही हमहिं बुझाइ।
कहा कहि राधा सुनायौ तुम सबनि सौं आइ?
महा बिषधर स्याम अहिवर, डसि सबही धाइ।
फूँक-ज्वाला हमहुँ लागी कुँवरि उर पर आइ।
गिरी धरनी मुरछि तबहीं, लई तुरत उठाइ।
सूर प्रभु कौं बेगि ल्यावहु, वही गारुडि राइ ॥६८६॥

नँद-सुवन गारुडी बुलावहु।
कही हमारी सुनत न कोऊ, तुरत जाहु लै आवहु।
ऐसौ गुनी नहीं त्रिभुवन कहुँ हम जानति हैं नीकैं।
आइ जाइ तौ तुरत जिवावहिं नैकु छुवत उठै जी कैं।
देखौ धौं यह बात हमारी एकहिं मंत्र जिवावै।
नंद महर कौ सुत सूरज कौ कैसहुँ धौं लै आवै ॥६८७॥

वृषभानु की घरनि जसोमति पुकारयौ।
पठै सुत काज कौं कहति हौं लाज तजि पाइ परिकै महरि करति आरयौ।
प्रात खरिकहिं गई, आइ बिहवल भई राधिका कुँवरि कहुँ डस्यौ कारौ
सुनी यह बात मैं आइ अतुरात, हौं गारुडी बड़ौ है सुत तुम्हारौ।
यह बड़ौ धरम नँद घरनि तुम पाइहौ नैकु काहैं न सुत कौं हँकारौ।
सूर सुनि महरि यह कहि उठी सहजहीं, कहा तुम कहति मेरौ अतिहिं बारौ ॥६८८॥

जंत्र-मंत्र कह जानै मेरौ?
यह तुम जाइ गुनिनि कौं बूझौ इहाँ करति कत झेरौ।

आठ बरस कौ कुँवर कन्हैया कहा कहति तुम ताहि ?
किनि बहकाइ दयौ है तुमकौं, ताहि पकरि लै आहि।
मैं हौं चकित भई हौं सुनि कै अति अचरज यह बात।
सूर स्याम गारुड़ी कहाँ कौ कहँ आई बिसरात ॥९९९॥

महरि, गारुड़ी कुँवर कन्हाई।
एक बिटिनियाँ कारैं खाई, ताकौं स्याम तुरतहीं ज्याई।
बोलि लेहु अपने ढोटा कौं, तुम कहि कै देउ नैंकु पठाई।
कुँवरि राधिका प्रात खरिक गई तहाँ कहूँ धौं कारैं खाई।
यह सुनि महरि मनहिं मुसुक्यानी, अबहिं रही मेरैं गृह आई।
सूर स्याम राधहिं कछु कारन, जसुमति समुझि रही अरगाई ॥१०००॥

तब हरि कौं टेरति नँदरानी।
भली भई सुत भयौ गारुड़ी आजु सुनी यह बानी।
जननी-टेर सुनत हरि आए कहा कहति री मैया ?
कीरति महरि बुलावन आई, जाहु न कुँवर कन्हैया।
कहूँ राधिका कारैं खायौ जाहु न आवौ झारि॥
जंत्र-मंत्र कछु जानत हौ तुम सूर स्याम बनवारि ॥१००१॥

हरि गारुड़ी तहाँ तब आए।
यह बानी वृषभानुसुता सुनि मन-मन हरष बढ़ाए।
धन्य-धन्य आपुन कौं कीन्हौ अतिहिं गई मुरझाइ।
तनु पुलकित रोमांच प्रगट भए आनँद अस्रु बहाइ।
बिह्वल देखि जननि भई ब्याकुल अँग बिष गयौ समाइ।
सूर स्याम-प्यारी दोउ जानत अंतरगत कौ भाइ ॥१००२॥

रोवति महरि फिरति बिततानी।
बार-बार लै कंठ लगावति, अतिहिं सिथिल भई पानी।
नंद सुवन कैं पाइ परी लै, दौरि महरि तब आइ।
ब्याकुल भई लाड़िली मेरी, मोहन देहु जिवाइ।

कछु पढ़ि पढ़ि कर अंग परस करि बिष अपनौ लियौ झारि।
सूरदास प्रभु बड़े गारुड़ी सिर पर गाड़ू डारि ॥७०३॥

कहौ मंत्र कियौ कुँवर कन्हाई।
बार-बार लै कंठ लगायौ मुख चूम्यौ दियौ घरहिं पठाई।
धन्य कोखि जिहिं यहिं जसोमति जहाँ अवतरयौ यह सुत आई।
ऐसौ चरित तुरतहीं कीन्हौं कुँवरि हमारी मरी जिवाई।
मनहीं मन अनुमान कियौ यह, बिधिना जोरी भली बनाई।
सूरश्याम-प्रभु बड़े गारुड़ी ब्रज-घर घर यह पैंड चलाई ॥७०४॥

तुम सौं कहा कहौं सुंदर घन।
या ब्रज मैं उपहास चलत है सुनि सुनि स्रवन रहति मन हीं मन।
जा दिन सबनि पछारि, नौई करि, मोहिं दुहि दई धेनु बंसीबन।
तुम गही बाँह सुभाइ आपनैं हौ चितई हँसि नैंकु बदन-तन।
ता दिन तैं घर-मारग जित तित, करत चवाउ सकल गोपी-जन।
सूर-स्याम अब साँच पारिहौं यह पतिव्रत तुम सौं नँद-नंदन ।७०५

बात यह तुमसौं कहत लजाऊँ।
सुनि न जात घर घर की घैरा, कहूँ मुख न समाऊँ।
नर नारी सब यहै चलावत राधा मोहन एक।
मातु पिता सुनि-सुनि अति त्रासत मैं डरु है सु अनेक।
आपु बचै डारें हैं निकसत, हैलत सबै सुगात।
निदत तुमहिं सुनावत मोकौं सुनत न नैंकु सुहात।
धिक नर, धिक नारी धिक जीवन, तुमहिं बिमुख धिक देह।
सूर स्याम यह कोउ न जानत पन है है जरि जैह ॥७०६॥

स्याम यह तुम सौं क्यौं न कही।
जहाँ तहाँ घर घर घैरा कीनी भाँति सही।
पिता कोपि करवास गहत कर बंधु बधन कौं धावै।
मातु कहै, कन्या कुल की दुख जनि कोऊ जग जावै।

बिनती एक करौं कर जोरे, इन गोपिनि जनि आवहु।
जौ आवहु तौ मुरलि-मधुर धुनि, मो जनि कान सुनावहु।
मन-क्रम-बचन कहति हौं साँची, मैं मन तुमहिं लगायौ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी क्यौं न करौ मन भायौ ॥१०७॥

हँसि बोले गिरिधर रस-बानी।
गुरुजन खिझत कहति रिस पावति काहे कौं पछितानी।
देह धरे कौ धर्म यहै है, स्वजन-कुटुँब-गृह प्रानी।
कहन देहु कहि कहा करैंगे, अपनी सुरत हिरानी।
लोक लाज काहू धौं छाँड़ति, जबही बसैं भुलानी।
सूरदास घट द्वै हैं मन इक, भेद नहीं कछु जानी ॥१०८॥

मन बसि काके बोल सही।
तुम बिनु स्याम, और नहिं जानौं सकुचि न तुमहिं कही।
कुल की कानि कहा लै करिहौं, तुमकौं कहाँ लही।
धिक माता धिक पिता बिमुख तुव भावै तहाँ बही।
कोउ कछु करै, कहै कछु कोऊ, हरष न सोक गही।
सूर स्याम तुमकौं बिनु देखैं तनु मन जीव दही ॥१०९॥

मनहिं बसै आपुहिं बिसरायौ।
प्रकृति पुरुष एकहि करि जानहु बातनि भेद करायौ।
जल थल जहाँ रहौ तुम बिनु नहिं बेद उपनिषद गायौ।
द्वै तन जीव एक हम दोऊ, सुख-कारन उपजायौ।
ब्रह्म-रूप द्वितिया नहीं कोऊ, तब मन तिया जनायौ।
सूर स्याम-मुख देखि अलप हँसि आनँद-पुंज बढ़ायौ ॥११०॥

तब नागरि मन हरष भई।
नेह पुरातन जानि स्याम कौ अति आनंद मई।
प्रकृति-पुरुष नारी मैं वे पति काहे भूलि गई।
को माता, को पिता बंधु को, यह तौ भेंट नई।

जन्म-जन्म जुग-जुग, यह लीला, प्यारी जानि लई ।
सूरदास प्रभु की यह महिमा, यातैं बिबस भई ॥७११॥

सुनहु स्याम मेरी बिनती ।
तुम हरता तुम करता प्रभु जू, मातु-पिता कौनैं गिनती ।
गए घर भेंटि, पढ़ावत राखत प्रभुता मेटि, करत बिनती ।
भय की करी लोक-मरजादा मानी मोरैं ही चित की ।
बहुरि बहुरि भ्रम जनम लेत हौ, यह लीला जानी जिन ती ।
सूर स्याम चरननि तैं मोकौं राखत यह कहा भिन ती ॥७१२॥

देह धरे की यह फल प्यारी ।
लोक-लाज-कुल-कानि मानियै, डरियै बंधु-पिता-महतारी ।
श्रीमुख कह्यौ, जाहु घर सुंदरि, बड़े महर वृषभानु-कुमारी ।
तुव अवसेर करत सब ह्वैहैं जाहु बेगि ह्वैहैं पुनि गारी ।
हमहूँ जाहिं भवन तुमहूँ जाहु अब, गेह-नेह कबौं सोभै चारी ।
सूरदास-प्रभु कहत प्रिया सौं, नैंकु नहीं मोतैं तुम न्यारी ॥७१३॥

अब कैसैं दूजै हाथ बिकाउँ ।
मन-मधुकर कीन्हौ वा दिन तैं चरन-कमल निज ठाउँ ।
जौ जानौं औरै कोउ करता तऊ न मन पछिताउँ ।
जो जाकौ सोई सो जानै नर-अघ-तारन नाउँ ।
जो परतीति होइ या जग की परमिति छुटत डराउँ ।
सूरदास प्रभु-सिंधु-सरन तजि, नदी-सरन कत जाउँ ॥७१४॥

घरहिं जाति मन हरष बढ़ायौ ।
दुख डार्‌यौ सुख अंग भार भरि, चली लूट सौ पायौ ।
भौंह सकोरति मंद मंद गति नैंकु बदन मुसुकायौ ।
तहँ इक सखी मिलि राधा कौं, कहति भयौ मनभायौ ।
कुंज-भवन हरि-संग बिलसि रस मन कौ सुफल करायौ ।
सूर सुगंध चुरावनहारी कैसैं दुरत दुरायौ ॥७१५॥

मोसौं कहा दुरावति राधा।
कहाँ मिली नँद-नंदन कौं, जिनि पुरई मन की साधा।
व्याकुल भई फिरति ही अबहीं काम बिथा तनु बाधा।
पुलकित रोम रोम गदगद अब, अँग-अँग रूप अगाधा।
नहिं पावत जो रस जोगी जन, जप-तप करत समाधा।
सुनहुँ सूर तिहिं रस परिपूरन दूरि कियौ तनु बाधा ॥७१६॥

कहा कहति, तू भई बावरी।
तू हँसि कहति, सुनै कोउ औरै कह कीन्हौ चाहति उपाव री।
सौ सौ सौंह मानि यह लैहै हमहिं तुमहिं बातैं सुभाव री।
मेरी प्रकृति महौं करि जानति मैं तोसौं करिहौं दुराव री?
ऐसी कैसे यह होइ सकी री पर पुनि मेरौ है सचाव री?
सूर कहत राधा मनहि आगैं, चकित भई सुनि कथा रावरी ॥७१७॥

स्याम कौन, कारे की गोरे।
कहाँ रहत काके वै ढौटा वृद्ध तरुन कीधौं हैं भोरे।
यहँई रहत कि और गाउँ कहुँ मैं देखे नाहिंन कहुँ उनकौं।
कहे नहीं समुझाइ बात यह, मोहिं लगावति ही तुम जिन कौं
कहाँ रहीं मैं वै धौं कहँ के, तुम मिलवति ही काहैं ऐसी।
सुनहु सूर मोसी भोरी कौं, जोरि जोरि लावति हौ कैसी ॥७१८

जाहि सखी, मैं जानति तोकौं।
ज्ञानहिं पढ़ि लीन्हीं चतुराई, कहा दुरावति मोकौं।
इहिं ब्रज हम तुम नंद-नँदनहू, दूरि कहूँ नहिं जैहैं।
मेरैं फंद कबहुँ तौ परिहौ मुजरा तबहीं दैहैं।
उनहिं मिलै बिरमाय भई अब वे दिन गए भुलाइ।
सूर स्याम-सँग तैं उठि आई, मोसौं कहति दुराइ ॥७१९॥

राधे तेरौ बदन बिराजत नीकौ।
जब तू इत उत बंक बिलोकति, होत निसा पति फीकौ।

भृकुटी धनुष, नैन सर साँधे, सिर केसरि को टीको ।
मनु घूँघट-पट मैं दुरि बैठ्यौ, पारधि रति पति ही कौ ।
गति मैमंत नाग ज्यौं नागरि, करे कहति हौ लीकौ ।
सूरदास प्रभु विविध भाँति करि, मन रिझयौ हरि पी को ।७७०

काहे को पर-घर छिनु छिनु जाति ।
घर मैं डाँटि, देति सिख जननी नाहिंन नैंकु डराति ।
राधा कान्ह कान्ह-राधा ब्रज है रह्यौ अतिहिं लजाति ।
अब गोकुल की जैबो छाँड़ौ अपजस हू न अघाति ।
तू वृषभानु बड़े की बेटी उनके जाति न पाँति ।
सूर सुता समुझावति जननी सकुचति नहिं, मुसुकाति ।।७७१

खेलन को मैं जाउँ नहीं ?
और लरिकिनी घर घर खेलहिं मोहीं कौं पै कहत तुहीं ।
उनकै मातु पिता नहिं कोई खेलत डोलति जहीं तहीं ।
तोसी महतारी यहि जाइ न, मैं रैहौं तुमहीं बिनुहीं ।
कबहुँ मोकौं कछू लगावति, कबहुँ कहति जनि जाहु कहीं ।
सूरदास बातैं अनखौंहीं, नाहिंन मो पै जाति सही ।।७७२।।

मनहीं मन रीझति महतारी ।
कहा भई जौ बाढ़ि तनक गई अबहीं तौ मेरी है बारी ।
झूठें ही यह बात उड़ी है राधा-कान्ह कहत नर-नारी ।
रिस की बात सुता के मुख की सुनत हँसति मनहीं मन भारी ।
अब लौं नहीं कछू इहिं जान्यौ खेलत देखि लगावै गारी ।
सूरदास जननी उर लावति, मुख-चूमति पोंछति रिस टारी ।।७७३

सुता लए जननी समुझावति ।
संग बिटिनिअनि कैं मिलि खेलौ, स्याम-साथ सुनि-सुनि रिस पावति ।

सखी, तू राधेहिं दोष लगावति।
तेरौ स्याम कहौं इन देखे बातनि बैर बढ़ावति।
हम आगैं झूठी नहिं कैहैं, सखियनि सैन बतावति।
ऐसी बात भरी मुख मेरैं, कैसैं धौं कहि आवति।
भेदहिं भेद कहति है बातैं, ऐसैं मनहिं जनावति।
सूर स्याम तैं देखे नाहीं, सौंधी हमहिं दुरावति॥७२०॥

अपनी अपनी मुख माई बातनि कौं गहियै।
पाँच की सात लगायौ, झूठी-झूठी कै बनायौ, साँची जौ तनक होइ, तौऊ सब सहियै।
बातनि गह्यौ अकास, सुनत न आवै साँस, बोलि तौ कछु न आवै, तातैं मौन गहियै।
ऐसें कहैं नर-नारि, जिमा भीति चित्रकारि, काहे कौं देखे मैं अपनु, कहा कहौ कहियै।
घर घर यहै घेर, वृथा मौसी करै बैर, यह सुनि सुनि लौन-हिरदय दहियै।
सूरदास प्रभु उपहास होइ फिर मेरैं, नँद कौ सुवन मिलै तौ पै कहा चहियै॥७२१॥

सुरत नहिं मेह भरु सुगँध-चोरी।
कहा चोर कहै, तू सुनति काहैं न री, मनहिं कत दहै, सुनि सीख मोरी।
लोग तोहिं कहत हैं, पाप की गहत हैं, कहाँ धौं लहत हैं, सुनहु भोरी।
तारिकहूँ नहिं मिलि, कहैं सब ममसकी करत है मिलि तू किमनि धोरी।
नंद को सुवन अरु सुता वृषभानु की हँसत सब कहैं चिरजीव जोरी।

सूर प्रभु कहाँ, तू कहाँ अपनैं भवन मैं सखी तोहिं तोसी न भोरी ॥७१४॥

कैसे हैं नँद-सुवन कन्हाई।
देखे नाहीं नैन-भरि कबहूँ ब्रज मैं रहत सदाई।
सकुचति हौं इक बात कहति तोहिं, सो नहिं आलि सुनाई।
कैसेहुँ मोहिं दिखावहु उनकौं यह मेरैं मन आई।
अतिहीं सुंदर कहियत हैं वै, मोकौं देहु बताई।
सूरदास राधा की बानी, सुनत सखी भरमाई ॥७१५॥

सुनहु सखी राधा की बानी।
ब्रज बसि हरि देखे नहिं कबहूँ, लोग कहत कछु अकथ कहानी।
यह अब कहति, दिखावहु हरि कौं, देखहु री यह अतिहि(अ)यानी।
सो हम सुनति रहीं सो नाहीं, ऐसैं हो यह आपु बखानी।
ब्याह न देत बनै काहू सौं, मन मैं यह काहू नहिं मानी।
सूर सबै सजनी मुख चाहति, चतुर-चतुर सौं चतुरई ठानी ॥७१६॥

सुनि राधे, तोहिं स्याम दिखैहैं।
महरि यहीं ब्रज-गलिनि फिरत हैं अब इहिं मारग ऐहैं।
जबहीं हम उनकौं देखैंगी, तबहीं तोहिं बुलैहैं।
उनहूँ कैं लालसा बहुत यह, तोहिं देखि सुख पैहैं।
दरसन तैं धीरज' जब रैहै, तब हम तोहिं पत्यैहैं।
तुमकौं देखि स्याम सुंदर घन मुरली मधुर बजैहैं।
तनु त्रिभंग करि अंग अंग सौं नाना भाव जनैहैं।
सूरदास-प्रभु नवल कान्ह वर, पीतांबर फहरैहैं ॥७१७॥

यह सुनि हँसि चली ब्रज-नारि।
अतिहिं भाईं गरब कीन्हे, गईं घर मन मारि।
कबहुँ ती हम देखिहैं, इक संग राधा-कान्ह।
भेद हमकौं कियौ राधा निठुर भई निदान।

आवै निंदा होइ आपनी, आवै कुल कौं गारी आवति ।
सुनि सावित्री कहति यह तौमौं तौकौं मावै रिस करि भावति ।
अब समुझी मैं बात सबनि की झूठैं ही यह बात उड़ावति ।
सूरदास सुनि सुनि ये बातैं राधा मन अति हरष बढ़ावति ॥७२४॥

राधा बिनय करति मनहीं मन, सुनहु स्याम अंतर के जामी ।
मातु पिता कुल-कानिहिं मानत, तुमहिं न जानत हैं जग-स्वामी ।
तुम्हरी मारैं लेत सकुचत हैं, ऐसैं ठौर रही हौं आनी ।
गुरु परिजन कुल कानि मानियौ, बारंबार कही मुख बानी ।
कैसैं संग रहौं बिमुखनि कैं, यह कहि-कहि नागरि पछितानी ।
सूरदास प्रभु कौं हिरदैं धरि गृह-जन देखि-देखि मुसुकानी ॥७२५॥

सखियनि मांह बिचार परयौ ।
राधा कान्ह एक भए दोऊ, हमसौं गोप करयौ ।
बृंदावन तैं अबहीं आई कहति जिय हरष बढ़ाए ।
औरै भाव अंग-छबि औरै स्याम मिलै मन भाए ।
तब यह सखी कहति मैं बूझौ मो तन फिरि हँसि हेरयौ ।
जबहिं कही सखि मिली हौहिं हरि तब रिस करि मुख फेरयौ ।
औरै बात चलावन लागी, अब मैं बाकौं पहिचानी ।
सूर स्याम कैं मिलत आजुहीं, ऐसी भई सयानी ॥७२६॥

सुनहु सखी राधा की बातैं ।
मोसौं कहति स्याम हैं कैसे ऐसी मिलई घातैं ।
की गोरे, की कारे-रँग हरि की जोबन, की भोरे ।
की इहिं गाउँ बसत की अनतहिं, दिननि बहुत की थोरे ।
की तू कहति बात हँसि मोसौं, की बूझति सति-भाउ ।
सपनेहुँ मैं उनकौं नहिं देखे, बाके सुनहु उपाउ ।
मोसौं कही, कौन तोसी प्रिय तोसौं बात दुरैहौं ।
सूर कही राधा मो आगैं, कैसैं मुख दरसैहौं ॥७२७॥

सुनि-सुनि बात सखी मुसुकानी।
अब ही आइ प्रगट करि दैहैं कहा रहै यह बात अपानी ?।
औरनि सौं दुराव जौ करती, तौ हम कहती भई सयानी।
हाई आगैं पेट दुरावति, वाकी बुद्धि आजु मैं जानी।
हम आवहिं यह उघरि परैगी, दूध दूध पानी सौ पानी।
सूरदास अब करति चतुराई हमहिं दुरावति बातनि ठानी ॥७२८

अपनी भेद तुम्हैं नहिं कैहै।
देखहु आइ चरित तुम वाके जैसैं गाल बजैहै।
बड़े गुरू की बुद्धि पढ़ी यह, काहू कौं न पत्यैहै।
एकौ बात मानिहै नाहीं, सबकी सौंहैं खैहै।
मैं नीकैं करि बूझि रही हौं अब बूझैं रिस पैहै।
सुनहु सूर रस-लुब्धी राधिका बातनि बैर बढ़ैहै ॥७२९॥

जुवती जुरि राधा ढिग आई।
लखि लीन्ही तब चतुर नागरी, ये मोपर सब हैं रिसहाई।
अंतर सही छिपी काहू की मन मैं एक बुद्धि उपजाई।
मौन गह्यौ नहिं बोलति किनसौं बैठि रही करिकै निठुराई।
आपुहिं बैठि गईं ढिग सिगरी, अब जानी यह वौ चतुराई।
सूरदास ये सखी सयानी और कहूँ की बात चलाई ॥७३०॥

राधिका, मौन-व्रत किनि सधायौ।
धन्य ऐसौ गुरू, कान कैं लागतहीं मंत्र दै आजुहीं यह सिखायौ।
अतिहिं कछु और,आवहिं कछू औरहीं,भवहिं कछु और ह्वै गई प्यारी
सुनत इहिं बात कौं दौरि आईं सबैं दीठि देखत भई चकृत भारी
अब कही बात, या मौन कौ फल कहा सुनि जु भीजै कछू हमहुँ जानैं
एकही सँग भईं सबै जोबन भई, दोउ अब गुरू हम तुमहिं मानैं।
देहु उपदेस हमहूँ धरैं मौन सब मंत्र अब लियौ तब हम न बोली
सूर-प्रभु की नारि राधिका नागरी, चरचि लीन्ही मोहिं करत ठोली॥

बीस बिरियाँ चोर की तौ, कबहुँ मिलिहै साहु।
सूर सब दिन चोर की कहुँ होत है निरवाहु ॥७३८॥

कहा कहति तू बात अयानी।
तुम यह कहति, सबै यह जानति हम सबतैं वह बड़ी सयानी।
सात बरष तैं पै हँग सीखे, तुम तौ यह जानुहिं है जानी।
वाके छंद-भेद को जानै, मीन करहिं धौं पीवत पानी।
हरि के चरित सबै सहिं सीखी, दोऊ हैं पै बारहबानी।
कहिए गई वाके घर सब मिलि, कैसी मुसुकि मौन की ठानी।
केती कही, नैकु नहिं बोली, फिर आई तब हमहिं खिसानी।
सूर स्याम-संगति की महिमा, काहू की नैकुहु न पत्यानी ॥७३९॥

तब राधा सखियनि मैं आई।
आवत हँसि सबनि मुख मोर्‍यो अहँ-तहँ रही भरगाई।
मुख देखत सब सकुचि गईं, यह कहा अचानक आई।
करति रहीं चुगुली हम याकी तरुनी गई लजाई।
अति आदर सौं बैठक दीन्ही, कही, कहाँ तुम आई।
कहा आजु सुधि करी हमारी, सूर स्याम-सुखदाई ॥७४०॥

मैं कह आजु नयी री आई।
बहुतै आदर करति सबै मिलि, पहुने की पहुनाई।
कैसी बात कहति तू राधा बैठन कौ नहिं कहियै।
तुम आईं अपने घर तैं धौं हमहूँ मौन धरि रहियै।
जानि लई वृषभानु-सुता हँसि, तरक कही तुम कीन्ही।
सूरदास ता दिन की बदली, बातैं आपनी लीन्ही ॥७४१॥

राधा जल बिहरति सखियनि सँग।
ग्रीव प्रजंत नीर मैं ठाढ़ी छिरकति जल अपनैं अपनैं रँग।
मुख भरि नीर परसपर डारति, सोभा अतिहि अनूप बढ़ी तब।
मनहु चंद-गन सुधा गँडूषनि डारत हैं आनंद भरे सब।

धाई निकसि नागु कटि की सब, अँगुरिनि तैं लै लै जल डारति ।
मानहुँ सूर कनक-बल्ली जुरि, अमृत-बूँद पवन-मिस झारति ७४२

जमुना-जल बिहरति ब्रज-नारी ।

तट ठाढ़े देखत नँद-नंदन मधुर मुरलि कर धारी ।
मोर मुकुट स्रवननि मनि-कुंडल, जलज-माल उर भ्राजत ।
सुंदर सुभग स्याम तन नव घन बिच बगपाँति बिराजत ।
उर बनमाल सुमन बहु भाँतिनि, सेत, लाल सित, पीत ।
मनहुँ सुरसरी तट बैठे सुक बरन बरन तजि भीत ।
पीतांबर कटि तट छुद्रावलि, बाजति परम रसाल ।
सूरदास मनु कनकभूमि ढिग, बोलत रुचिर मराल ॥७४३॥

राधा निरखि भूली अंग ।

नंद-नंदन-रूप पर, गति-मति भई तनु पंग ।
इत सकुच अति सखिनि कौ उत होति अपनी हानि ।
ज्ञान करि अनुमान कीन्हौ, अबहिं लैहैं जानि ।
चतुर सखियनि परखि लीन्ही समुझि भई गँवारि ।
सबै मिलि इक ध्यान ठान्यौ, ताहि दियौ बिसारि ।
नागरी मुख-स्याम निरखति कबहुँ सखियनि हेरि ।
सूर राधा लखति नाहीं, इन दई अवसेरि ॥७४४॥

चितवनि रोकैं हूँ न रही ।

स्याम सुंदर-सिंधु-सनमुख, सरित उमँगि बही ।
प्रेम-सलिल प्रवाह भँवरनि, मिति न कबहूँ लही ।
लोभ-लहर-कटाच्छ, घूँघट-पट-करार ढही ।
थके पल-पथ, नाव-धीरज परति नहिंन गही ।
मिली सूर सुभाव स्यामहिं, फेरिहूँ न चही ॥७४५॥

चितै रही राधा हरि कौ मुख ।

भृकुटि बिकट, बिसाल नैन लखि, मनहिं भयौ रति-पति दुख ।

चितवहिं स्याम इकटक प्यारी-छबि, अंग अंग अवलोकत।
रीझ रहे इत हरि, उत राधा, अरस-परस दोउ नीकत।
सखिनि कह्यौ वृषभानु-सुता सौं, देखे कुँवर कन्हाई।
सूर स्याम येई हैं, ब्रज मैं जिनकी होति बड़ाई॥७४६॥

हमहिं कह्यौ हो, स्याम दिखावहु।
देखहु दरस नैन भरि नीकैं, पुनि-पुनि दरस न पावहु।
बहुत लालसा करति रही तुम ये तुम कारन आए।
पूरी साध मिली तुम उनकौं पाछैं हमहिं भुलाए।
नीकैं सगुन अबसु हौं आईं, भयौ तुम्हारौ काज।
सुनहु सूर हमकौं कछु देहौ, तुमहिं मिले ब्रजराज॥७४७॥

राधा कह्यौ, आजु इन जानी।
बार-बार मैं हरि-तन चितई, तबहीं ये मुसुकानी।
काल्हि कही मैं इनसौं जैसे, अब लौं बात न छानी।
यह चतुराई परी मोही पर, मन मन अतिहिं सयानी।
मेरी बात गई इन आगैं अबहिं करति बिनु पानी।
सूरदास-प्रभु कहा कहौं मैं अब तुम हाथ बिकानो॥७४८॥

राधा चलहु भवनहिं जाहिं।
कबहिं की हम जमुन आईं कहहिं अरु पछिताहिं।
लिख्यौ दरसन स्याम कौ तुम, चलौगी की नाहिं।
बहुरि मिलिहौ कीन्हि राखहु कहत, सब मुसुकाहिं।
हम चली घर तुमहुँ आवहु सोच भयौ मन माहिं।
सूर राधा सहित गोपी चली ब्रज-समुहाहिं॥७४९॥

कहि राधा, हरि कैसे हैं।
तेरैं मन भाए की नाहीं की सुंदर, की जैसे हैं।
की पुनि हमहिं दुराव करौगी, की कैसौ वे जैसे हैं।
की हम तुमसौं कहति रही ज्यौं, सौंच कहौ की वैसे हैं।

नटवर भेष काछनी काछे, अंगनि रति-पति-से हो हैं।
सूर स्याम तुम नीकैं देखे, हम जानत हरि ऐसे हैं॥७२०॥

राधा मन मैं यहै बिचारति।
ये सब मेरैं ख्याल परी हैं, अबहीं बातनि मैं निरुवारति।
मोहूँ तैं ये चतुर कहावति, ये मनहीं मन मोकौं नारति।
ऐसे बचन कहौंगी इनसौं, चतुराई इनकी मैं झारति।
जाकै नंद-नंदन सिरसमरथ, बार-बार तन-मन-धन वारति।
सूर स्याम कैं गर्व राधिका सूधैं काहूँ तन न निहारति॥७२१॥

राधा हरि कैं गर्व गहीली।
मंद-मंद गति मत्त मतंग ज्यौं, अंग अंग सुख-पुंज-भरीली।
पग द्वै चलति ठठकि रहै ठाढ़ी मौन धरे हरि कैं रस गीली।
धरनी नख चरननि कुरवारति, सौतिनि भाग-सुहाग-डहीली।
नैंकु नहीं पिय तैं कहुँ बिछुरति तातैं नाहिंन काम-दहीली।
सूर सखी बूझैं यह कहैं, आजु भई यह भेंट पहीली॥७२२॥

तुमकौं कैसे स्याम भरी ?
न्हात रही जल मैं सब तरुनी, तब तुम नैन कहाँ हरी ?
अंग-अंग अवलोकन कीन्हौ कौन अंग पर रहे धरी ?
सुन्यौ न्हात स्याम तनु सुरखी, नंद सुवन मन तैं न टरी।
जानति नहीं कहूँ नहिं देखे, मिलि गइ ऐसे मनहुँ खरी।
सूर स्याम ऐसैं तुम देखे, मैं जानति दुख दूरि करी॥७२३॥

पावै कौन मिलैं बिनु भाल।
काहू की पद रस नहिं भावत कोउ कौतुक करैं बिरह बिहाल।
तुम देख्यौ हरि अंग माधुरी, मैं नहिं देख्यौ कौन गुपाल।
जैसे रंक तनक धन पावै, ताही मैं वह होत निहाल।
तुमहिं मोहि इतनो अंतर है, धन्य-धन्य ब्रज की तुम बाल।
सूरदास-प्रभु की तुम संगिनि, तुमहिं मिले वह परम गुपाल॥७२४

सुनहु सखी राधा की बानी।
हमकौं धन्य कहति आपुन धिक, यह निर्मल अति ज्ञानी।
आपुन रंक भई हरि-धन कौं हमहिं कहति धनवंत।
यह पूरी, हम निपट अपूरी, हम असंत, यह संत।
धिक धिक हम धिक बुद्धि हमारी धन्य राधिका नारि।
सूर स्याम कौं इहिं पहिचान्यौ हम भईं अंत गँवारि ॥७२५॥

अचानक आइ गए तहँ स्याम।
कृष्न-कथा सब कहतिं परस्पर राधा-संग मिली ब्रज-बाम।
मुरली अधर धरे नटवर वपु कटि कछनी पर वारौं काम।
सुभग मोर चंद्रिका सीस पर आइ गए पूरन सुख धाम।
तरु-तमाल तर तरुन कन्हाई, दूरि करन जुवतिनि तनु-ताम,
सूर स्याम बंसी-धुनि पूरत, राधा-राधा लै लै नाम ॥७२६॥

मन-मधुकर पद-कमल लुभान्यौ।
चित चकोर चंद-नख अटक्यौ इकटक पलक भुलान्यौ।
जिनहीं कहँ गए उठि नीकैं, आत नहीं मैं जान्यौ।
अब ऐसौ तनु मैं वै नाहीं, कहा लियाहिं धौं आन्यौ।
तब तैं फेरि बहुर्यौ नहिं मोतन, सरस-चरननि हित मान्यौ।
सूरदास वै आपु स्वारथी पर-वेदन नहिं जान्यौ ॥७२७॥

स्याम सखि नीकैं देखे नाहिं।
चितवत ही लोचन भरि आए बार-बार पछिताहिं।
कैसेहुँ करि इकटक मैं राखति, नैंकहिं मैं अकुलाहिं।
निमिष मनौ छबि पर रखवारे, तातैं अतिहिं डराहिं।
कहा करौं, इनकौ कह दूषन इन अपनी सी कीन्ही।
सूर स्याम-छबि पर मन अटक्यौ, उन सब सोभा लीन्ही ॥७२८॥

पुनि पुनि कहति हैं ब्रज-नारि।
धन्य धन्य बड़भागिनि राधा, तेरैं बस गिरिधारि।

धन्य नंदकुमार धनि तुम, धन्य तेरी प्रीति।
धन्य दोउ तुम नवल जोरी, कोक-कलानि जीति।
हम बिमुख, तुम कृष्न-संगिनि प्रान इक द्वै देह।
एक मन, इक बुद्धि, इक चित दुहुँनि एक सनेह।
एक छिनु बिनु तुमहिं देखैं स्याम धरत न धीर।
मुरलि मैं तुव नाम पुनि पुनि कहत हैं बलबीर।
स्याम मनि तैं परखि लीन्ही, महा चतुर सुजान।
सूर के प्रभु प्रेम ही बस कौन तो सरि आन ॥७५९॥

राधा परम निर्मल नारि।
कहति हौं मन कर्मना करि, हृदय दुबिधा टारि।
स्याम कौं इक तुहीं जान्यौ दुराचारिनि और।
जैसैं घट पूरन न डोलै, अधभरौ डगडौर।
धनी धन कबहूँ न प्रगटै, धरै ताहि छपाइ।
तैं महानग स्याम पायौ प्रगटि कैसैं जाइ।
कहति हौं यह बात तोसौं प्रगट करिहौं नाहिं।
सूर सखी सुजान राधा परसपर मुसकाहिं ॥७६०॥

तैं ही स्याम भले पहिचाने।
साँची प्रीति जानि मनमोहन, तेरैंहिं हाथ बिकाने।
हम अपराध कियौ कहि तुमसौं, हमहीं कुलटा नारि।
तुमसौं उनसौं बीच नहीं कछु, तुम दोऊ नर-नारि।
धन्य सुहाग भाग है तेरौ, धनि बड़भागी स्याम।
सूरदास-प्रभु-से पति जाकैं तोसी जाकैं बाम ॥७६०॥

राधा स्याम की प्यारी।
कृष्न पति सर्वदा तेरे, तू सदा नारी।
सुनत बानी सखी मुख की, जियँ भयौ अनुराग।
प्रेम-गदगद रोम पुलकित समुझि अपनौ भाग।

प्रीति परगट कियौ चाहै, बचन बोलि न जाइ।
नंद नंदन काम-नायक रहे नैननि छाइ।
हृदय तैं कहुँ टरत नाहीं कियौ निहचल बास।
सूर प्रभु-रस भरी राधा दुरत नहीं प्रकास ॥७६२॥

जौ बिधना अपबस करि पाऊँ।
तौ सखि, कह्यौ होइ कछु तेरौ, अपनी साध पुराऊँ।
लोचन रोम-रोम प्रति माँगौं पुनि पुनि त्रास दिखाऊँ।
इकटक रहैं पलक नहिं लागैं, पद्धति नई चलाऊँ।
कहा करौं छवि-रासि स्यामघन, लोचन द्वै नहिं ठाऊँ।
एतौ पर ये निमिष सूर सुनि यह दुख काहि सुनाऊँ ॥७६३॥

स्यामहिं मैं कैसैं पहिचानौं।
क्रम क्रम करि इक अंग निहारति पलक ओट ताकौं नहिं जानौं।
पुनि लोचन ठहराइ निहारति निमिष मेटि वह छवि अनुमानौं।
औरै भाव और कछु सोभा कहौ सखी कैसैं उर आनौं।
छिनु छिनु-अंग अंग छबि अगिनित पुनि देखौं,फिरि कै हठ ठानौं
सूरदास स्वामी की महिमा कैसैं रसना एक बखानौं ॥७६४॥

सुनि री सखी-दसा यह मेरी।
जब तैं मिले स्यामघन सुंदर, संगहिं फिरति भई जनु चेरी।
नीकैं दरस देत नहिं मोकौं अंगनि प्रति अनंग की ढेरी।
चपला तैं अतिहीं चंचलता, दसन चमक चकचौंधि घनेरी।
चमकत अंग पीत पट चमकत, चमकति माला मोतिनि केरी।
सूर समुझि बिधना की करनी, अति रिसि करति सौंह मोहिं तेरी।

इनहुँ मैं घटताई कीन्ही।
रसना स्रवन नैन की होते, की रसनाहीं इनहीं दीन्ही।
बैर कियौ हमसौं बिधना रचि, याकी जाति अबै हम चीन्ही।
निठुर निर्दई यातैं और न स्याम बैर हमसौं है कीन्ही।

या रस ही मैं मगन राधिका, चतुर सखी तबहीं लखि लीन्ही।
सूर स्याम कैं रंगहिं राँची, टरति नहीं अब वै ज्यौं लीन्ही ॥७६६॥

धन्य-धन्य बड़भागिनी राधा।
नीकैं भजी नँद-नंदन कौं, मेटि सकल-जन-बाधा।
नवल स्याम नवला तुमहूँ हौ, दोऊ रूप अगाधा।
मैं जानी यह बात हृदय की, रही नहीं कछु साधा।
संगहिं रहत सदा पिय प्यारी, क्रीड़त करत अबाधा।
कोक-कला बितपन भई हौ, कान्ह रूप-तनु आधा।
प्रेम उमँगि धैरैं मुख प्रगट्यौ, अरस-परस अवराधा।
सूरदास-प्रभु मिले कृपा करि गए दुरति दुख बाधा ॥७६७॥

कहि राधिका बात अब साँची।
तुम अब प्रगट कही मो आगैं, स्याम-प्रेम-रस माँची।
तुमकौं कहाँ मिले नँद-नंदन जब उनकैं रँग राँची।
खरिक मिले, की गोरस बेंचत, की जब बिपहर बाँची।
कहैं बनै छाँड़ौ चतुराई, बात नहीं यह काँची।
सूरदास राधिका सयानी रूप-रासि-रस-खाँची ॥७६८॥

कब री मिले स्याम नहिं जानी।
तेरी सौं करि कहति सखी री अजहूँ नहिं पहिचानी।
खरिक मिले की गोरस बेंचत, की अबहीं की कालि।
नैननि अंतर होत न कबहूँ, कहति कहा री आलि।
एकौ पल हरि होत न न्यारे, नीकैं देखे नाहिं।
सूरदास-प्रभु टरत न टारैं नैनन सदा बसाहिं ॥७६९॥

जा दिन तैं हरि दृष्टि परे री।
ता दिन तैं मेरे इन नैननि दुख-सुख सब बिसरे री।
मोहन अंग गुपाल लाल कैं, प्रेम पियूष भरे री।
बसे कहाँ मुसुकान-चाँदनी सी रचि-रुचि भवन करे री।

पठवति हीं मन तिनहिं मनावन निसिदिन रहत अरे री।
ज्यौं ज्यौं जतन करति उलटावति त्यौं त्यौं हठनि भरै री।
पचिहारी समुझाइ ऊँच-निच पुनि-पुनि पाइ परे री।
सो सुख सूर कहाँ लौं बरनौं, इक टक तैं न टरे री ॥१७७०॥

जब तैं प्रीति स्याम सौं कीन्ही।
ता दिन तैं मेरै इन नैननि, नैकहुँ नींद न लीन्ही।
सदा रहै मन चाक चढ्यौ सौ और न कछू सुहाइ।
करत उपाइ बहुत मिलिबे कौं, यहै बिचारत जाइ।
सूर सकल लागति ऐसीयै, सो दुख कासौं कहियै।
ज्यौं अचेत बालक की बेदन, अपने ही तन सहियै ॥१७७१॥

मैं जानी तबहीं तैं मोकौं स्याम कहा धौं कीन्हौ री।
मेरी दृष्टि परे जा दिन तैं, ज्ञान ध्यान हरि लीन्हौ री।
द्वारैं आइ गए औचक हो, मैं आँगन ही ठाढ़ी री।
मनमोहन-मुख देखि रही तब काम बिथा तनु बाढ़ी री।
नैन-सैन दै-दै हरि मो तन, कछु इक भाव बतायौ री।
पीतांबर उपरैना कर गहि, अपनैं सीस फिरायौ री।
लोक-लाज, गुरुजन की संका, कहत न आवै बानी री।
सूर स्याम मेरैं आँगन आए, जात बहुत पछितानी री ॥१७७२॥

मन हरि लीन्हौ कुँवर कन्हाई।
जब तैं स्याम द्वार ह्वै निकसे तब तैं री मोहिं घर न सुहाई।
मेरैं हेत आइ भए ठाढ़े, मोहिं कछु न भई री माई।
तबही तैं ब्याकुल भई डोलति बैरी भए मातु पितु-भाई।
मो देखत सिर पाग सँवारी, हँसि चितए छबि कही न जाई।
सूर स्याम गिरधर वर नागर, मेरौ मन लै गए चुराई ॥१७७३॥

प्रेम सहित हरि घेरैं आए।
कछु सेवा तैं करी कि गाढ़ी की धौं वैसैहि

काहे तैं हरि पाग सँवारी क्यौं पीतांबर सीस फिराए।
गुप्त भाव तौसौं कछु कीन्हौ पर आए काहैं बिसराए।
अतिही चतुर कहावति राधा बातनि ही हरि क्यौं न भुराए।
सूर स्याम कौं बस करि लेती काहेकौं रहती पछिताये ॥८७४

स्याम अचानक आइ गए री।
मैं बैठी गुरुजन बिच सजनी देखतहीं मेरे नैन नए री।
तब इक बुद्धि करी मैं ऐसी बेंदी सौं कर परस कियौ री।
आपु हँसे उत पाग मसकि हरि, अंतरजामी जानि लियौ री।
लै कर कमल अधर परसायौ, देखि हरषि पुनि हृदय धर्यौ री।
चरन छुए दोउ नैन लगाए, मैं अपनैं भुज अंक भर्यौ री।
ठाढ़े रहे द्वार अति हित करि, तबही तें मन चोरि गयौ री।
सूरदास कछु दोष न मेरौ, उत गुरुजन इत हेत नयौ री ॥८७५॥

राधा भाव कियौ यह नीकौ तुम बेंदी, उन पाग छुई।
ऐसे भेद कहा कोउ जानै तुमही जानी गुप्त दुई।
तुम जुहार उनकौं जब कीन्ही तुमकौं उनहूँ जुहार कियौ।
एकै भाव, देह द्वै कीन्हे तुम वै एकै, नहीं बियौ।
तुम पग परसि नैन पर राख्यौ, उन कर कमलनि हृदय धर्यौ।
सूर स्याम हिरदै तुम राखे, तुम उनकौं लै कंठ भर्यौ ॥८७६॥

मन मेरौ हरि साथ गयौ री।
द्वारैं आइ स्याम मन सजनी हँसि मोहन तिहिं संग भयौ री।
ऐसैं मिल्यौ जाइ मोकौं तजि मानौ उनही पोषि लयौ री।
सेवा चूक परी कौ भी तैं मन उनकौ धौं कहा कियौ री।
मोहीं देखि रिसात बहुत यह मेरैं बिच कछु गर्व भयौ री।
सूर स्याम-छबि संग लुभान्यौ मन-बच-क्रम मोहिं छाँड़ि दयौ री।
मैं मन बहुत भाँति समुझायौ।
कहा करौं दरसन रस-अँटक्यौ, बहुरि नहीं घर आयौ।

इन नैननि के भेद रूप-रस उर मैं आनि दुरायौ।
बरबस ही बेकाज सुपन ज्यौं, पलक्यौ नहिं को सिखायौ।
लोक-बेद-कुल निदरि, निडर ह्वै करत आपनी भायौ।
मुख-छबि निरखि चौंधि निसि लग ज्यौं हठि अपुनपौ बँधायौ।
हरि कौ दोष कहा कहि दीजै यह अपनैं बस धायौ।
अति बिपरीत भई सुनि सूरज सुरझ्यौ मदन जगायौ ॥७७८॥

मैं अपनी मन हरत न जान्यौ ॥
धौं धौं गयौ संग हरि कैं यह कीधौं पंथ भुलान्यौ।
कीधौं स्याम हटकि है राख्यौ, कीधौं आपु रतान्यौ।
काहे तैं सुधि करी न मेरी, मोपै कहा रिसान्यौ।
जबहीं तैं हरि ह्याँ ह्वै निकसे, बैर तबहिं तैं ठान्यौ।
सूर स्याम सँग चलन कह्यौ मोहिं, कह्यौ नहीं तब मान्यौ ॥७७९॥

स्याम करत हैं मन की चोरी।
कैसैं मिलत आनि पहिलैं ही, कहि-कहि बतियाँ भोरी।
लोक-लाज की कानि गँवाई, फिरति गुड़ी बस डोरी।
ऐसे ढंग स्याम अब सीख्यौ, चोर भयौ चित कौ री।
माखन की चोरी सहि लीन्ही बात रही वह थोरी।
सूर स्याम भयौ निडर तबहिं तैं गोरस लेत अँजोरी ॥७८०॥

माई कृष्न-नाम जब तैं स्रवन सुन्यौ है री, तब तैं भूली
री भौन बावरी सी भई री।
भरि भरि आवैं नैन चित न रहत चैन, बैन नहिं सूधौ दसा
औरहि ह्वै गई री।
कौन माता, कौन पिता, कौन भैनी, कौन भ्राता, कौन ज्ञान कौन
ध्यान मनमथ हई री।
सूर स्याम जब तैं परे री मेरी डीठि बाम, काम धाम लोक-लाज
कुल कानि गई री ॥७८१॥

राधा, तैं हरि कैं रँग राँची।
तो तैं चतुर और नहिं कोऊ बात कहौं मैं साँची।
तैं उनकौ मन नहीं चुरायौ ऐसी है तू काँची।
हरि तेरौ मन अबहिं चुरायौ प्रथम तुही है नाँची।
तुम अरु स्याम एक ही दोऊ बाकी नाहीं बाँची।
सूर स्याम तेरैं बस राधा, कहति लीक मैं खाँची ॥१८८०॥

तुम जानति राधा है छोटी।
चतुराई अँग-अँग भरी है, पूरन ज्ञान, न बुधि की मोटी।
हमसौं सदा दुराव कियौ इहिं, बात कहै मुख चोटी पोटी।
कबहुँ स्याम तैं नैकु न बिछुरति किये रहति हमसौं हठ ओटी।
नंद-नँदन याही कैं बस हैं, बिबस देखि बेंदी छबि चोटी।
सूरदास प्रभु वै अति खोटे यह उनहूँ तैं अतिही खोटी ॥१८८१॥

सखी कहति तू बात गँवारी।
याकी सरि कैसैं कोउ ह्वै है जाकै बस हैं श्री बनवारी।
ब्रज-भीतर यह रूप उजागरी अब लीन्ही हर गिरिधर-धारी।
प्रीति गुप्त ही की है नीकी, या पर मैं रीझी ही भारी।
साँची कहौं नेह ऐसोई चाहौं मोकौं दीजौ गारी।
सूरदास राधा की खोटी, तउ देखौ यह कान्ह पियारी ॥१८८२॥

सुनहु सखी राधा हरि को है।
जो हरि हैं रतिपति-मनमोहन, याकौ मुख सो जोहै।
जैसी स्याम नारि यह तैसी, सुंदर जोरी सोहै।
यह द्वादस वहऊ दस है कै ब्रज-जुवतिनि मन मोहै।
मैं इनकौ घटि-बढ़ि नहिं जानति, भेद करै सो को है।
सूर स्याम नागर, यह नागरि, एक प्रान तन दो है ॥१८८३॥

राधा नँद-नंदन अनुरागी।
भय चिंता हिरदै नहिं एकौ स्याम-रंग-रस पागी।

हृदय चून रँग, पय पानी ज्यौं दुविधा दुहुँ की भागी।
तन-मन-प्रान समर्पन कीन्हौ, अंग अंग रति लागी।
ब्रज-बनिता अवलोकन करि करि प्रेम-बिबस तनु त्यागी।
सूरदास-प्रभु सौं चित लाग्यौ सोवत तैं मनु जागी ॥८८६॥

आँखिनि मैं बसै, जिय मैं बसै हिय मैं बसत निसि दिवस प्यारौ।
तन मैं बसै मन मैं बसै, रसना हू मैं बसै नँदवारौ।
सुधि मैं बसै, बुधिहू मैं बसै, अंग-अंग बसै मुकुटवारौ।
सूर बन बसै, घरहु मैं बसै, संग ज्यौं तरंग जल न न्यारौ ॥८८७॥

सासु-ननद घर त्रास दिखावैं।
तुम कुल-बधू लाज नहिं आवति, बार बार समुझावैं।
कब की गई न्हान तुम जमुना, यह कहि कहि रिस पावैं।
राधा कौं तुम संग करति हौ, ब्रज उपहास उड़ावैं।
वै हैं बड़े महर की बेटी, तौ ऐसी कहवावैं।
सुनहु सूर यह उनही फबै, ऐसी बदति डरावैं ॥८८८॥

हम अहीर ब्रजबासी लोग।
ऐसे चलौ हँसै नहिं कोऊ, घर मैं बैठि करौ सुख-भोग।
दही-मही-माखनी-घृत बेचौ, सबै करौ अपने उपयोग।
सिर पर कंस मधुपुरी बैठ्यौ छिनकहिं मैं करि डारै सोग।
फूँक-फूँक धरनी पग धारौ, अब लागी तुम करन अजोग।
सुनहु सूर अब जानौगी तब जब ऐसौ राधा-संजोग ॥८८९॥

तुमैं कुल-बधू, निलज जनि हैहौ।
यह करनी उनहीं कौ छाजे, उनकैं संग न जैहौ।
राधा-कान्ह-कथा ब्रज-घर घर, ऐसी जनि कहवैहौ।
यह करनी उन नई चलाई, तुमैं जनि हमहिं हँसैहौ।
तुम हौ बड़े महर की बेटी कुल जनि नावँ धरैहौ।
सूर स्याम राधा की महिमा यहै जानि सरमैहौ ॥८९०॥

यह सुनि कै हँसि मौन रही री।
ब्रज उपहास कान्ह-राधा कौ यह महिमा जानी इनहीं री।
जैसी बुद्धि हृदय है इनकैं, तैसीयै मुख बात कही री।
रवि कौ तेज उलूक न जानै तरनि सदा पूरन नभहीं री।
बिष कौ कीट बिषहिं रुचि मानै कहा सुधा रसहीं री।
सूरदास तिल-तेल सवादी स्वाद कहा जानै घृतहीं री ॥७८१॥

बिमुख जननि कौ संग न कीजै।
इनके बिमुख बचन सुनि स्रवननि, छिन-छिन देही छीजै।
मोकौं नैंकु नहीं ये भावत, परबस कौं कह कीजै।
धिक जीवन ऐसौ बहु दिन कौ स्याम-भजन पल जीजै।
धिक इहिं घर धिक इन गुरुजन कौं इनमैं नाहीं बसीजै।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, मोहि आनि मन लीजै ॥७८२॥
इततैं राधा जाति जमुन तट उततैं हरि आवत घर कौं।
कटि काछनी, बेष नटवर कौ, बीच मिली मुरलीधर कौं।
चितै रही मुख-इंदु मनोहर, वा छबि पर वारति तन कौं।
दूरिहु तैं देखत ही जाने, प्राननाथ सुंदर घन कौं।
रोम पुलक गदगद बानी कहि कहाँ जात चोरे मन कौं।
सूरदास प्रभु चोरन सीखे, माखन तैं चित-बित धन कौं ॥७८३॥

भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हे।
बाँह मरोरि जाहुगे कैसैं मैं तुम नीकैं चीन्हे।
माखन चोरी करत रहे तुम अब भए मन के चोर।
सुनत रही मन चोरत हैं हरि, प्रगट लियौ मन मोर।
ऐसे ढीठ भए तुम डोलत निदरे ब्रज की नारि।
सूर स्याम मोहूँ निदरौगे देहुँ प्रेम की गारि ॥७८४॥

यह सब कौतिक आहीराइ।
तुम जु हँसति कै मो अबला सौं चली मारै हग्याइ।

कहियत हौ अति चतुर सकल अँग आवत बहुत उपाइ।
तौ जानौं जौ अब एकौ छन सकौ हृदय तैं जाइ।
सूरदास स्वामी श्रीपति कौं भावत अंतर भाइ।
सहि न सके रति-बचन, उलटि हँसि लीन्ही, कंठ लगाइ॥७६५

बीच कियौ कुल-लज्जा आइ।

सुनि नागरी, बकसि यह मोकौं, सनमुख आए धाइ।
चूक परी हरि तैं मैं जानी मन लै गए चुराइ।
ठाढ़े रहे सकुचि तौ आगैं, राख्यौ बदन दुराइ।
तुम हौ बड़े महर की बेटी काहैं गईं भुलाइ।
सूर स्याम हैं चोर तिहारे, लीजै देहु डराइ॥७६६॥

कुल की लाज अकाज कियौ।

तुम बिनु स्याम सुहात नहीं कछु, कहा करौं अति जरत हियौ।
आपु गुप्त करि राखी मोकौं, मैं आयसु सिर मानि लियौ।
देह गेह सुधि रहति बिसारे तुम तैं हितु नहिं और बियौ।
अब मोकौं चरननि तर राखौ हँसि नँद-नंदन अंग छियौ।
सूर स्याम श्रीमुख की बानी, तुम पै प्यारी बसत जियौ॥७६७॥

मातु-पिता अति त्रास दिखावत।

भ्राता मोहिं मारन कौं खिरजै, देखे मोहिं न भावत।
जननी कहति, बड़े की बेटी, तोकौं लाज न आवति।
पिता कहै, कैसी कुल उपजी मनहीं मन रिस पावति।
भगिनी देखि देति मोहिं गारो, काहैं कुलहिं लजावति।
सूरदास प्रभु सौं यह कहि-कहि, अपनी बिपति जनावति॥७६८

सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन।

बिमुख जननि की संगति कौ दुख, कब धौं करिहौ मोचन।
भवन मोहिं भाठी सौ लागत, मरति सोचहीं सोचन।
ऐसी गति मेरी तुम आगैं करत कहा जिय पोचन।

धिक वै मातु-पिता धिक भ्राता देत रहत मोहिं लोचन।
सूर स्याम मन तुमहिं लगाय्यौ, हरद चून-रँग-रोचन ॥७९९॥

कृष्न की बानि कहाँ लगि करिहौं।
तुम आगैं मैं कही जु सौंपी, अब काहू नहिं डरिहौं।
लोग कुटुंब जग के जे कहियत पेला सबहिं निदरिहौं।
अब यह दुख सहि जात न मोपैं, विमुख बचन सुनि मरिहौं।
आपु सुखी तौ सब नीके हैं, उनके सुख कह सरिहौं।
सूरदास प्रभु चतुर-सिरोमनि अबकै ही कछु लरिहौं ॥८००॥

प्राननाथ हो, मेरी सुरति किन करौ।
मैं जु दुख पावति हौं दीनानाथ कृपा करौ मेरी कामदेव-दुख की
बिरह हरौ।
तुम बहु रमनी-रमन, सो तौ जानति हौं, याही के जु धोखे हौ
मोसौं काहैं लरौ।
सूरदास स्वामी तुम हौ अंतरजामी, सुनौ मनसा-बाचा मैं ध्यान
तुम्हरौई धरौ ॥८०१॥

हौं ना माया ही लागी तुम कत तोरत।
मेरौ तौ जिय तिहारै चरननि ही मैं लाग्यौ, धीरज क्यौं रहै रावरे
मुख मोरत।
कोऊ ही बनाइ बातैं मिलवति तुम आगैं सोई किन आइ मोसौं
अब है जोरत।
सूरदास पिय मेरे तौ तुमहिं हौ जु जिय, तुम बिनु देखे मेरौ
हिय कठोरत ॥८०२॥

बिहँसि राधा कृष्न अंक लीन्ही।
अधर सौं अधर जुरि नैन सौं नैन मिलि, हृदय सौं हृदय
लगि हरष कीन्ही।

कंठ भुज-भुज जोरि उछंग लीन्ही नारि, भुवन-दुख टारि, सुख दियौ भारी।
हरषि बोले स्याम कुंज-बन-घन धाम, तहाँ हम तुम संग मिलैं प्यारी।
जाहु गृह परम धन हमहुँ जैहैं सदन, आइ कहुँ पास मोहिं सैन देही।
सूर यह भाव दै तुरत ही गवन करि, कुंज-गृह-सदन तुम जाइ रैही।।८०३।।

मैं जमुना-जल जात रही री।
ब्रज तैं आवत देखि सखिनि कौं इन कारन घर परत नहीं री।
उततैं आइ गए हरि तिरछैं मैं तुमही तन चितै रही री।
पूछन लागे कान्ह ग्वालिनि कौं तुम ती ऐसे बनहिं सही री।
मुख इनसौं बोली नहिं सन्मुख, नाहीं हौं कछुवै न कही री।
सूर स्याम गए ग्वालिनि टेरत, ना जानौं तुम कहा गही री।।८०४।।

सुता सौं कहति वृषभानु घरनी।
कहाँ तू राधिका भोर तैं फिरति है, तेरी गति मोपै नहिं जात बरनी।
तोरि मोतीसरी गुप्त करि धरी कहूँ चाहि मिस सकुचि रही मुख न बोलै।
मनहुँ खंजन चपल चंद-फंदा परयौ, उड़त नहिं बनत इत उतहि डोलै।
कहा तेरी प्रकृति परी री सांकुरी अबहि तैं कहाँ तू जायगी री।
सूर कहै जननि बोली नहीं आज तू, पकसि करिहौं कहीं जायगी री।।८०५।।

जननी अतिहि भई रिसहाई।
बार-बार कहै कुँवरि राधिका मोतिसरि कहाँ गँवाई।

बूझे तै सोहिं ज्वाब न आवै कहा रही अरगाई।
मोतिसरि हार अमोल गरे की, देहु न मेरी माई।
कालिहिं तै रीती गर तेरी बारि कहूँ तू आई।
सुनहु सूर माता रिस देखत, राधा हँसति डराई ॥८०६॥

सुनी री मैया कालिहिं मोतिसरी गँवाई।
सखिनि मिली जमुना गई, धौं उनहिं चुराई।
कीधौं जमुन मैं गई यह सुधि नहिं मेरैं।
तब तै मैं पछिताति हौं कहति न डर तेरैं।
पलक नहीं निसि कहूँ लगी, मोहिं सपथ तिहारी।
हाँ डर तै मैं आजुहीं अति उठी सवारी।
महरि सुनत चकित भई मुख ज्वाब न आवै।
सूर राधिका गुन भरी कोउ पार न पावै ॥८०७॥

जाहु तहीं मोतिसरी गँवाई।
तबहीं तौ घर पैठन पैहौ अब ऐसे ढंग आई।
जो बरजौं आपुन सोई करै, देखौ री गुन माई।
इक इक नग सत सत दामनि कौ, लाख टका दै ल्याई।
जाकै हाथ परयौ सो मागौ घर पैठे निधि पाई।
सूर सुनति री कुँवरि राधिका, तोसौं नहीं भलाई ॥८०८॥

सुनि राधा अब तोहिं न पत्यैहौं।
और हार चौकी हमेल अब तेरे कंठ न नैहौं।
लाख टका की हानि करी तै सो जब तोसौं लैहौं।
हार बिना ल्याये लड़बौरी, घर नहिं पैठन दैहौं।
अब देखौंगी वहै मोतिसरि, तबहीं तौ सचु पैहौं।
नातरु सूर जन्म भरि तेरौ, नाउँ नहीं मुख लैहौं ॥८०९॥

कैहै कहाँ मोतिसरि मोरी।
अब सुधि भई लइ नारी नैं, हँसति चली वृषभानु-किसोरी।

अबहीं मैं लीन्हे आवति हौं मेरैं सँग आवै जनि को री।
देखौ धौं कह करिहौं वाकी, बड़े लोग सीखत हैं चोरी।
मोकौं आजु अबेर लागिहै, ढूँढ़ौंगी घर-घर ब्रज-खोरी।
सूर चली निधरक ह्वै सब सौं चतुर राधिका बातनि भोरी ॥८१०॥

नंद-महर-घर के पिछवारैं, राधा आइ बतानी।
मनौ अंब-दल-मौर देखि कै, कुहुकी कोकिल बानी।
झूठेहिं नाम लेति ललिता की, काहैं आजु परानी।
वृंदावन-मग जाति अकेली, सिर लै दही मथानी।
मैं बैठी परखति हौं तेरी, स्याम तबहिं तिहिं जानी।
कोक-कला-गुन आगरि नागरि, सूर चतुरई ठानी ॥८११॥

सैन दै नागरी गई बन कौं।
तबहिं घर-खोर दियौ डारि, नहिं रहि सकै, ग्वाल सँगत चले, मीठी छनकी।
चले अकुलाइ बन धाइ, ब्याई गाइ देखिहौं जाइ, मन हरष कीन्हौ।
प्रिया निरखति पंथ मिलै कब हरि कंत गए हरि अंत हँसि अंक लीन्हौ।
अतिहिं सुख पाइ अकुलाइ मिले धाइ दोउ मनौ अति रंक नव-निधिहिं पाई।
सूर प्रभु की प्रिया राधिका अति नवल, नवल नँद-लाल के मनहिं भाई ॥८१२॥

दीन्हौ कान्ह, कौंधे कौ अंबर।
नान्ही नान्ही बूँदनि बरषन लाग्यौ, भीजत कुसुँभी अंबर।
बार-बार अकुलाइ राधिका देखि मेघ आडंबर।
हँसि हँसि रीझि बैठि रहे दोऊ, ओढ़ि सुभग पीतंबर।

सिव सनकादिक नारद सारद अंत न पावैं सुंदर।
सूर स्याम-गति लखि न परति कछु, खात ग्वाल सँग संभर ॥८१३

कान्ह कह्यौ बन रैनि न कीजै, सुनहु राधिका प्यारी।
अति हित सौं उर लाइ कह्यौ अब भवन आपनैं जा री।
मातु पिता जिय जानैं न कोऊ, गुप्त प्रीति-रस भारी।
कर तैं कौर डारि मैं आयौ, देखत दोउ महतारी।
तुम जैसी मोहिं प्यारी नागरि, चंद चकोर कहा री।
सूरदास-स्वामी इन बातनि नागरि रिझई भारी ॥८१४॥

मैं बलि जाउँ कन्हैया की।
कर तैं कौर डारि उठि धायौ बात सुनी बन गैया की।
धौरी गाइ आपनी जानी उपजी प्रीति लवैया की।
तातैं अति सकोच पग धोवति स्याम देखि हित मैया की।
जो अनुराग जसोदा कैं उर, मुख की कहनि कन्हैया की।
यह सुख सूर और कहुँ नाहीं सोइ करत बल भैया की ॥८१५

राधा अतिहिं चतुर प्रबीन।
कृष्न कौ सुख दै चली हँसि हंस-गति कटि छीन।
हार कैं मिस इहाँ आई स्याम-मनि कैं काम।
भयौ सब पूरन मनोरथ मिले श्रीब्रजराज।
गाँठि-आँचर छोरि कै, मोतिसरी लीन्ही हाथ।
सखी आवति देखि राधा लई ताकौं साथ।
जुवति बूझति कहाँ नागरि निसि गई इक जाम।
सूर ब्यौरो कहि सुनायौ, मैं गई तिहिं काम ॥८१६॥

इन बातनि कछु पावति री।
बिनु देखैं लोगनि सौं सुनि-सुनि, काहे बैर बढ़ावति री।
मोकौं कहाँ अकेली देखति, तबहिं बात उपजावति री।
ब्रज-जुवतिनि की संगति त्यागी पुनि-पुनि कोप करावति री।

कैसी बुद्धि तुम्हारी सबकी ऐसी तुमकौं भावति री।
सूर सीस धुन दै पूछति हौं, कहति तुमहुँ कहनावति री ॥८१७

करति अनसेर वृषभानु-नारी।

प्रात तैं गई, बासर गयौ बीति सब, जाम निसि गई, धौं कहाँ बारी।
हार कैं त्रास मैं कुँवरि त्रासी बहुत खिझि डरनि अबहुँ नहिं सदन आई।
कहाँ मैं जाउँ, घर धौं रही लसि कै, सखिनि सौं कहति कहुँ मिली माई।
द्वार बहि आइ, भ्रमति गई अकुलाइ कै, सुता कैं भाग इक बारे मेरैं।
सूर यह बात जौ सुनैं अबहीं महर, कहैंगे मोहिं य ढंग तेरे ॥८१८

राधा डर डरति घर आई।

देखत ही कीरति महतारी हरषि कुँवरि उर लाई।
धीरज भयौ सुता-माता जिय दूरि गयौ तनु-सोच।
मेरी कौं मैं काहे त्रासी कहा कियौ यह पोच।
मैं री मैया हार मोतिसरी, या कारन मोहिं त्रासी।
सूर राधिका के गुन ऐसे, मिलि आई अबिनासी ॥८१९॥

परम चतुर वृषभानु-दुलारी।

यह मति रची कृष्न मिलिबे की परम पुनीत महा री।
बत सुख दियौ नंद-नंदन कौं हृदय हरष महतारी।
हार हरौ उपकार करायौ कबहुँ न उर तैं टारी।
जे सिव-सनक-सनातन दुर्लभ ते बस किये कुमारी।
सूरदास प्रभु-कृपा अगोचर निगमनि हू तैं न्यारी ॥८२०॥

प्रीति कैं बस्य ये हैं मुरारी।

प्रीति कैं बस्य नटवर सुभेसहिं धरयौ, प्रीति बस करज गिरिराज धारी।

प्रीति के बस्य ब्रज भए माखन चोर, प्रीति के बस्य दाँवरि बँधाई।
प्रीति कै बस्य गोपी-रमन नाम प्रिय, प्रीति-बस जमल तरु मोच्छदाई।
प्रीति बस नंद-बंधन बरुन-गृह गए, प्रीति के बस्य बन धाम कामी।
प्रीति कै बस्य प्रभु सूर त्रिभुवन बिदित, प्रीति-बस सदा राधिका स्वामी ॥८२१॥

स्याम भए बृषभानु-सुता बस, और नहीं कछु भावै (हो)।
जो प्रभु तिहूँ भुवन कौ नायक, सुर-मुनि अंत न पावै (हो)।
जाकौं सिव ध्यावत निसि-बासर, सहसानन जिहिं गावै (हो)।
सो हरि राधा-बदन चंद कौं नैन चकोर बसावै (हो)।
जाकौं देखि अनंग अनंगत नागरि छबि सरमावै (हो)।
सूर स्याम स्यामा बस ऐसैं ज्यौं सँग छाँह डुलावै (हो)॥८२२॥

कबहुँ स्याम जमुना-तट जात।
कबहुँ कदम चढ़त मग देखत, राधा बिनु अतिहीं अकुलात।
कबहुँ जात बन कुंज-धाम कौं देखि रहत नहिं कछू सुहात।
तब आवत बृषभानु-पुरा कौं अति अनुराग भरे नँद-तात।
प्यारी हृदय प्रगटहीं जानति तब वह मनहीं मौंफ सिहात।
सूरदास नागरि के उर मैं निवसत नागर स्यामल गात॥८२३॥

आजु सखी अरुनोदय मेरे नैननि कौ धोखा भयौ।
की हरि आजु पंथ इहिं गवने स्याम जलद की उनयौ।
की बग-पाँति भाँति उर पर की मुकुत-माल बहु मोल।
कीधौं मोर मुदित नाचत की बरह-मुकुट की डोल।
की घनघोर गँभीर प्रात उठि, की ग्वालनि की टेरनि।
की दामिनि कौंधति चहुँदिसि की सुभग पीत पट फेरनि।
की बनमाला लाल उर राजति की सुरपति-धनु चारु।
सूरदास प्रभु-रस भरि उमँगी, राधा कहति बिचारु॥८२४॥

राधा की लघुता और सुभाव।

हम देखति हरि कौ औरैं अंग, यह निरखति सखि भाइ।
यह है बिधु कलंक की साँची, हम कलंक मैं सानी।
हम हरि की दासी सम नाहीं यह हरि की पटरानी।
याकी अस्तुति हम कह करिहैं, रसना एक न आवै।
सूर स्याम कौं इनहीं जाने भजन प्रताप बढ़ावै॥८२४॥

राधिका हृदय तैं धोखा टारौ।

नंद के लाल देखे प्रात काल तैं मेघ नहिं स्याम-तनु-छबि बिचारौ।
इंद्र धनु नहीं बन दाम बहु सुमन के नहीं बग पाँति बर मोतिमाला
सिखी यह नहीं, सिर मुकुट सीखंड-पख तड़ित नहिं पीत-पट छबि रसाला।
मंद गरजन नहीं चरन नूपुर-सबद भोगही आसु हरि गवन कीन्हौ
सूर प्रभु भामिनी भवन करि गवन मन-रवन दुख के दवन जानि लीन्हौ॥८२५॥

धन्य धन्य बृषभानु-कुमारी।

धनि माता धनि पिता तिहारे, तोसी जाई बारी।
धन्य दिवस धनि निसा तबहिं की, धन्य घरी, धनि जाम।
धन्य कान्ह तेरैं बस जे हैं धनि कीन्हे बस स्याम॥
धनि मति, धनि रति, धनि तेरौ हित धन्य भक्ति, धनि भाउ।
सूर स्याम पति धन्य नारि तू धनि धनि एक सुभाउ॥८२६॥

तोहिं स्याम हम कहा दिखावैं।

तुमतैं न्यारे रहत कहूँ न वै, नैकु नहीं बिसरावैं।
एक जीव देही द्वै राधा, यह कहि कहि जु सुनावैं।
इनकी पटतर तुमकौं दीजे तुम पटतर वै पावैं।
अंसुत कहा अमृत-गुन प्रगटै, सो हम कहा बतावैं।
सूरदास गूँगे कौ गुर ज्यौं, बूझति कहा बुझावैं॥८२७॥

सुनि राधा, यह कहा बिचारै।
वे मेरैं तू उनकैं रँग अपनौ मुख क्यौं न निहारै।
जौ देखै तौ छाँह आपनी स्याम-हृदै की छाया।
ऐसी दसा नंद-नंदन की तुम दोउ निर्मल काया।
नीलांबर स्यामल तनु की छबि, तुम छबि पीत सुबास।
घन-भीतर दामिनी प्रकासित, दामिनि घन चहुँ पास।
सुनि री सखी, बिलच्छ कहौं तोसौं, चाहति हरि कौ रूप।
सूर सुनहु तुम दोउ सम जोरी एक स्वरूप अनूप ॥८२६॥

प्रिय तेरैं बस यौं री माई।
ज्यौं संगहि सँग छाँह देह-बस प्रेम कह्यौ नहिं जाई।
ज्यौं चकोर बस सरद चंद्र कैं, चक्रवाक बस भान।
जैसैं मधुकर कमल-कोस-बस त्यौं बस स्याम सुजान।
ज्यौं चातक बस स्वाति बूँद कैं, तन कैं बस ज्यौं जीय।
सूरदास-प्रभु अति बस तेरैं समुझि देखि धौं हीय ॥८३०॥

तू री छाँड़ि प्रिय हरि राखति।
अपनैं मन तू जानति नीकैं, मुख सौंसी यह भाषति।
अति बस रहत कान्ह री तोसौं मधुर हास सौं देखि।
तैसोयै मनमोहन की गति, कहै भाव मन लेखि।
तू दै बाम अंग दच्छिन वै ऐसैं करि इक-देह।
सूर मीन-मधुकर चकोर कौ, इतनौ नहीं सनेह ॥८३१॥

राधा चकृत भई मन माहीं।
अबहीं स्याम द्वार ह्वै झाँकि, ह्याँ आए क्यौं नाहीं।
आपुन आइ तहाँ लौं देखे, मिले न नंद-कुमार।
आवत ही फिरि गए स्याम-घन, अति ही भयौ बिचार।
सूनैं भवन अकेली मैं हो, नीकैं झाँकि निहारयौ।
मोतैं चूक परी मैं जानी तातैं मोहिं बिसारयौ।

इक अभिमान हृदय करि बैठी एते पर महरानी।
सूरदास प्रभु गए द्वार ह्वै, तब व्याकुल पछितानी ॥८३२॥

मैं अपनैं जिय गर्व कियौ।
वह अंतरजामी सब जानत देखत ही उन चरचि लियौ।
कासौं कहौं मिलावै को अब नैकु न धीरज धरत हियौ।
वै तौ निठुर भए या बुधि सौं, अहंकार फल यहै दियौ।
तब आपुन कौं निठुर करावत प्रीति सुमिरि भरि लेति हियौ।
सूर स्याम प्रभु वै बहुनायक, मोसी उनकै कोटि तियौ ॥८३३॥

महा विरह बन माँझ परी।
चकित भई ज्यौं चित्र-पूतरी, हरि-मारग बिसरी।
संग बटपार-गर्व जब देख्यौ, साथी छोड़ि पराने।
स्याम-सहर सँग-मग माधुरी, तहँ वै आइ लुकाने।
यह बन माँझ अकेली व्याकुल, संपति गर्व छँड़ायौ।
सूर स्याम-सुधि टरति न उर तैं, यह मनु जीव बचायौ ॥८३४॥

राधा-भवन सखी मिलि आईं।
अति व्याकुल सुधि-बुधि कछु नाहीं देह-दसा बिसराई।
बाँह गही तिहिं बूझन लागी कहा भयौ री माई।
ऐसी बिबस भई तू काहैं, कहौ न हमहिं सुनाई।
कालिहि और बरन तोहिं देखी आजु गई मुरझाई।
सूर स्याम देखे की बहुरी उनहिं ठगौरी लाई ॥८३५॥

अब मैं तोसौं कहा दुराऊँ।
अपनी कथा स्याम की करनी, तो आगैं कहि प्रगट सुनाऊँ।
मैं बैठी ही भवन आपनैं आपुन द्वार दियौ दरसाऊ।
जानि लई मेरे जिय की उन गर्व प्रहारन उनकौ नाऊँ।
तबही तैं व्याकुल भई डोलति चित न रहै, कितनौ समुझाऊँ।
सुनहु सूर गृह बन भयौ मोकौं अब देखैं हरि दरसन पाऊँ ॥८३६

मान बिना नहिं प्रीति रहै री ।
चाह मिले की गति तेरी सी प्रगट देखि मोहिं कहा कहै री ।
अपनी चाह मारि उन लीन्ही, तू काहैं अब वृथा चहै री ।
बैठि गयौ काहैं नहिं रहु है फिरि काहैं नहिं मान गहै री ।
अपनी फेर दियौ तैं उनकौं नाक-बुद्धि त्रिय सबै कहै री ।
सूर स्याम ऐसे हैं माई उनकौं बिनु अभिमान लहै री ॥८३७॥

हमरी सुरति बिसारी बनवारी, हम सरबस दै हारी ।
पै न भए अपने सनेह बस सपनेहूँ गिरिधारी ।
वै मोहन मधुकर समान सखि, अनगन बेली चारी ।
व्याकुल बिरह ब्यापि दिन दिन हम नीर जु नैनन ढारी ।
हम तन मन दै हाथ बिकानी वै अति निठुर मुरारी ।
सूर स्याम बहु रमनि-रमन हम इक ब्रत, मदन प्रजारी ॥८३८

मैं अपनी सी बहुत करी री ।
मोसौं कहा कहति तू माई मन कै सँग मैं बहुत लरी री ।
राखी हटकि उतहिं कौं धावत, वाही ऐसिये परनि परी री ।
मोसौं बैर करै रति उनसौं मोकौं राख्यौ द्वार खरी री ।
अजहुँ मान करौं मन पाऊँ, यह कहि इत उत चितै डरी री ।
सुनहुँ सूर पाँचनि मत एकै, मैं ही मोहीं रही परी री ॥८३९॥

बूझि नहीं अब मान करौ री ।
जातैं होइ अकाज आपनौ काहैं वृथा मरौ री ।
ऐसे तन मैं गर्ब न राखौ चिंतामनि बिसरौ री ।
ऐसी बात कहै जौ कोऊ, ताकैं संग लरौ री ।
आरजपंथ चलै कह सरिहै, स्यामहिं संग फिरौ री ।
सूर स्याम कह आपुस्वारथी, दरसन दैन मरौ री ॥८४०॥

चूक परी मोतैं मैं जानी मिलैं स्याम बकसाऊँ री ।
हा हा करि दसननि तृन धरि-धरि लोचन नीर बहाऊँ री ।

कहति पुनि पुनि स्याम आगैं मोहिं देहु मिलाइ।
मुरलि मुख मुख जोरि दोऊ अरस परस बजाइ।
कृष्न पूरत नाद, उघरति प्यारि रिस करि गात।
बार बारि अधर धरि-धरि, बजति नहिं अकुलात।
प्रिया-भूषन स्याम पहिरत, स्याम-भूषन नारि।
सूर प्रभु करि मान बैठे तिय करति मनुहारि ॥८३९॥

निरखि पिय-रूप तिय चकित भारी।
किधौं वै पुरुष मैं नारि की वै नारि मैं ही हौं पुरुष, तन सुधि बिसारी।
आपु तन चितै सिर मुकुट, कुंडल स्रवन, अधर मुरली माल बन बिराजै।
उतहिं पिय-रूप सिर माँग बेनी सुभग, भाल बेंदी बिंदु महा छाजै।
नागरी हठ तजौ, कृपा करि मोहिं भजौ परी कह चूक सो कहौ प्यारी।
सूर नागरी प्रभु-बिरह-रस मगन भई, देखि छबि हँसत गिरिराज-धारी ॥८४०॥

नंद-नँदन तिय-छबि तनु काछे।
मनु गोरी साँवरी नारि दोउ, जाति सहज मैं आछे।
स्याम अंग कुसुमी नई सारी फल गुंजा की भाँति।
इत नागरि नीलांबर पहिरे जनु दामिनि घन काँति।
आतुर चले जात बन-धामहिं मन अति हरष बढ़ाए।
सूर स्याम वा छबि को नागरि निरखति नैन चुराए।८४१

स्यामा स्याम कुंज बन आवत।
भुज भुज-कंठ परस्पर दीन्हे वा छबि उनही पावत।

इततैं चन्द्रावली आवति ब्रज उततैं ये दोउ आए।
दूरिहिं तें चितवति उनहीं तन, इकटक नैन लगाए।
एक राधिका दूसरि को है, याकौं नहिं पहिचानौं।
ब्रज-वृषभानु-पुरा-जुवतिनि कौं इक-इक करि मैं जानौं।
यह आई कहुँ और गाँव तें, छबि साँवरी सलोनी।
सूर आजु यह नई बतानी, एकौ अँग न बिलोनी ॥८८२॥

यह वृषभानु-सुता वह को है।
याकी सरि जुवती कोउ नाहीं, यह त्रिभुवन मन मोहै।
अति आतुर देखन कौं आवति निकट आइ पहिचानी।
ब्रज मैं रहति किधौं कहुँ औरैं बूझे तें तब जानी।
यह मोहिनी कहाँ तें आई, परम सलोनी नारी।
सूर स्याम देखत मुसुक्यानी करी चतुरई भारी ॥८८३॥

कहि राधा ये को हैं री।
अति सुंदरि साँवरी सलोनी, त्रिभुवन-जन-मन-मोहैं री।
और नारि इनकी सरि नाहीं, कही न हम-तन जोहैं री।
काकी सुता, बधू है काकी, काकी जुवती धौं हैं री।
जैसी तुम तैसी हैं येऊ भली बनी तुमसी हैं री।
सुनहु सूर अति चतुर राधिका येइ चतुरनि की गोहैं री ॥८८४

मथुरा तें ये आई हैं।
कछु संबंध हमारी इनसौं तातैं इनहिं बुलाई हैं॥
ललिता संग गई दधि बेचन, उनही इनहिं चिन्हाई हैं।
तहीं सनेह जानि री सजनी आजु मिलन हम आई हैं॥
तब ही की पहिचानि हमारी ऐसी सहज सुभाई हैं।
सूरदास मोहिं आवत देखी आपु संग उठि धाई हैं ॥८८५॥

इनकौं ब्रजही क्यौं न बुलावहु।
की वृषभानुपुरा, की गोकुल निकटहिं आनि बसावहु॥

येऊ नवल, नवल तुमहूँ हौ मोहन कौ चोर भावहु ।
मोकौं देखि कियौ अति घूँघट काहैं न लाज छुड़ावहु ।
यह अचरज देख्यौ नहिं कबहूँ जुवतिहिं जुवति दुरावहु ।
सूर सखी राधा सौं पुनि-पुनि, कहति जु हमहिं मिलावहु ॥८२७॥

मथुरा मैं बस बास तुम्हारी ?
राधा तैं उपकार भयौ यह, दुर्लभ दर्सन भयौ तुम्हारी ॥
बार बार कर गहि गहि निरखति, घूँघट ओट करौ किन न्यारी ।
कबहुँक कर परसति कपोल छुइ चुटकि लेति ह्याँ हमहिं निहारी ॥
कछु मैं हूँ पहिचानति तुमकौं तुमहिं मिलाऊँ नंद-दुलारी ।
काहे कौं तुम सकुचति हौ जू, कहौ कहा है नाम तुम्हारी ।
ऐसी सखी मिली तोहिं राधा तौ हमकौं काहैं न बिसारी ।
सूरदास दंपति मन जान्यौ यातैं कैसैं होत उबारी ॥८२८॥

ऐसी कुँवरि कहाँ तुम पाई ।
राधा हूँ तैं नख-सिख सुंदरि, अब लौं कहाँ दुराई ।
काकी नारि कौन की बेटी कौन गाउँ तैं आई ।
देखी सुनी न ब्रज वृंदावन सुधि-बुधि हरति पराई ।
धन्य सुहाग भाग याकौ, यह जुवतिनि की मनभाई ।
सूरदास-प्रभु हरषि मिले हँसि, लै उर कंठ लगाई ॥८२९॥

नंद-नंदन हँस नागरी-मुख चितै, हरषि चंद्रावली कंठ लाई ।
बाम भुज रवनि, दच्छिन भुजा सखी पर, चले बन-धाम सुख
कहि न जाई ।
मनौ बिबि दामिनी बीच नव घन सुभग देखि छबि काम रति
सहित लाजै ।
किधौं कंचन-लता बीच सु तमाल तरु, भामिनिनि बीच गिरधर
बिराजै ।

गए गृह कुंज अलि गुंज सुमननि पुंज देखि आनँद भरे सूर स्यामी।
राधिका-रवन जुवती-रवन मन-रवन निरखि छवि होत मन-काम कामी ॥८८९॥

नवल स्याम नवला भी स्यामा।
दोऊ रावत साँवगोरी, बनी जात ब्रज भामा।
या छबि की उपमा दीबे की त्रिभुवन नहीं उपामा।
दामिनि घन पटतर दीजे क्यौं, सकुचत कवि लिये नामा।
सुधा सरीर परस्पर दोऊ, सुखदायक दिन-यामा।
सूरदास नागरि नागर प्रभु जीते रति अरु कामा ॥८९०॥

करति सिंगार वृषभानु-बारी।
रही इकटक आदरश मग हेरि कै, स्याम-मन भावती परम प्यारी।
कबहुँ बेनी रचति फूल सौं मिलै कच कबहुँ रचि माँग मोतिनि सँवारै।
कबहुँ रासति सीसफूल लटकाइ कै, कबहुँ बदन बिंदु भाल मारै।
कबहुँ केसरि आड़ रचति दर्पन हेरि, कबहुँ भ्रु व निरखि रिस करि सकोरै।
निरखि अपनो रूप आपु ही बिबस भई सूर परछाँहि कौ नैन जोरै ॥८९१॥

यह सुंदरी कहाँ तैं आई।
बार-बार प्रतिबिंब निहारति नागरि मन-मन रही लुभाई।
कर तैं मुकुर दूरि नहिं डारति हृदय मौंझ कछु रिस उपजाई।
देखौं कहूँ नैन भरि याकौं नागर सुंदर कुँवर कन्हाई।

मेरी कहा चलै या आगैं, यह धौं आमु अरस तैं आई ।
सूरदास याकौ या ब्रज मैं, ऐसी को बैरिनि को ब्याई ।।८६७।।

मुकुर छाँह निरखि देह की दसा गँवाई ।
बोली धौं कौन की आपुन ही गवन कियौ, ऐसी को बैरिनि है
या ब्रज मैं माई ।
जिनकी अँग अग निरखि बार बार रहे परखि, ललिता चंद्रावलि
कहूँ इतनी छबि पाई ।
मन मैं कछु कहन चाहै, देखत ही ठिठकि रहै, सूर स्याम निरखत
बुधि बल सुधि बिसराई ।।८६३।।

कहति छाँह सौं नागरी को है तू माई ।
मिली नहीं ब्रज-गाँव मैं, री कहँ तैं आई ।
नाम कहा है सुंदरी कहि सौंह दिखाई ।
कही न मेरै साथ है, मुख बचन सुनाई ।
दिननि हमहूँ तुम सरबरी तुम छबि अधिकाई ।
श्रीर संग नहिं कोउ लई, यह कहि डरपाई ।
जानति ही, यह नहिं सुनी, धौं की चपमाई ।
अमरन भेद लँकाइ कै, ब्रज ढीठ कन्हाई ।
सबन आहु मेरे कहैं, पर अंग दुराई ।
सूर स्याम जी देखिहैं करिहैं बरियाई ।।८६४।।

नाम कहा सुंदरी तुम्हारी क्यौं मोसौं नहिं बोलति हौ ।
हँसैं हँसति चितयैं चितवति तुम तन डोलैं सम डोलति हौ ।
परम चतुर मैं जानति तुम कौं मो पर भौंह मरोरति हौ ।
लटकति सुभग नासिका बेसरि, पुनि-पुनि बदन सकोरति हौ ।
अरुन अधर चितहरन चिबुक अति दामिनि दसन लजावति हौ ।
ऐसे मुख की बचन माधुरी, काहैं न हमहिं सुनावति हौ ।

कही बचन ताकी तुम परखी जाके मन की चोरति ही।
सुनहु सूर सहजहिं कीधौं रिस, मोसौं लोचन जोरति ही ॥८६५॥

कछु रिस, कछु नागरि जिय धरकी
यह तौ जोबन रूप गहीली संका मानति हरि की।
यह बिपरीत होन अब चाहत ब्रज मैं आइ समानी।
यह तौ गुननि उजागरि नागरि, वै तौ चतुर बिनानी।
कर दर्पन प्रतिबिंब निहारति, चकित भई सुकुमारी।
सूर स्याम निरखत गवाच्छ-मग, नागरि भोरी-भारी ॥८६६॥

नागरि रही मुकुर निहारि।
आनि औचक नैन मूँदे, कमल-कर गिरिधारि।
चौंकि चकित भई मन मैं, स्याम कै जिय जानि।
मैं डरति ही अबहिं आवौं मिलै ताकौं आनि।
तबहिं तन की सुरति आई, लख्यौ तन प्रतिछाँहि।
सकुच मही नमन दुरावति परस्पर मुसुक्याहिं।
समुझि मन मैं चढ़ति मनसिजनि, चिबुक लै लै नाम।
सूर प्रभु कर सीस परसे बीच बेनी स्याम ॥८६७॥

मूँदि रहे पिय प्यारी-लोचन।
अति हित बेनी कर परसाए, बैठ्यौ भुजा अमोचन।
कंचन-मनि-सुमेर बँग दोऊ, सोभा कही न जाइ।
मनौ पन्नगी निकसि बीच रही, हाटक-गिरि लपटाइ,
चपल नैन हीरन मनि सुंदर सोभन तैं अधिकाइ।
अति आतुर मन कारन भाई परत पलनहिं न समाइ।
मन हरषति मुख निरखति संपति कहि चतुर-चतुराई-भाव
सूर स्याम मनमोहनि के फल सुरत दै हरि हाव ॥८६८॥

पियहिं निरखि प्यारी हँसि दीन्ही।
रीझि स्याम अंग अंग निरखत हँसि नागरि उर लीन्ही।

आलिंगन दै अधर दसन खँडि कर गहि चिबुक उठावत।
नासा सौं नासा लै जोरत नैन नैन परसावत।
इहिं अंतर प्यारी उर निरख्यौ झझकि भई तब न्यारी।
सूर स्याम मोकौं बिसरावत, उर ल्याए भरि प्यारी ॥८६६॥

अब जानी पिय बात तुम्हारी।
मोसौं तुम मुख ही की मिलवत भावति है यह प्यारी।
राखी रहत हृदय पर जाकौं धन्य भाग हैं ताके।
ऐसी कहूँ लखी नहिं अब लौं, बस्य भए हौ जाके।
भली करी यह बात जनाई प्रगट दिखाई मोहिं।
सूर स्याम यह प्रान पियारी, उर मैं राखी पोहि ॥८७०॥

मोहिं छुवौ जनि दूर रहौ जू।
जाकौं हृदय लगाइ लयौ है, ताकी बाँह गहौ जू।
तुम सर्वज्ञ और सब मूरख सो रानी हम दासी।
मैं देखत हिरदय वह बैठी हम तुमकौं भई हाँसी।
बाँह गहत कछु सरम न आवति, सुख पावत मन माहीं।
सुनहु सूर मो तन वह इकटक, चितवति डरपति नाहीं ॥८७१॥

कहा भई धनि बावरी, कहि तुमहिं सुनाऊँ।
तुम तैं को है भावती जिहिं हृदय बसाऊँ।
तुमहिं स्रवन तुम नैन हौ, तुम प्रान-अधारा।
वृथा क्रोध तिय क्यौं करौ कहि बारंबारा।
भुज गहि ताहि बताबहु जैहि हृदय बतावति।
सूरज प्रभु कहैं नागरी तुम तैं को भावति ॥८७२॥

स्याम कुंज बैठारि गई।
चतुर दूतिका सखियनि लीन्हैं, आतुरताई जाति भई।
मनहीं मन इक रची चतुराई यहै कहौंगी बात नई।
जबहीं लै आवति ही वाकौं यहै बहुत कछु भई दई।

करि आई हरि सौं परतिज्ञा, कहा कहौं वृषभानु-जाई।
सूर स्याम सौं मान करयौ है आजुहिं ऐसी कहा भई ॥८७३॥

तू पावन हरि बैठे धाम।
आइ कौ गथ हरयौ सबनि कौ कहैं अपनौ कियौ कुनाम।
धरि देहु अब लियौ परायौ मेरौ कह्यौ मानि री बाम।
तबही तैं बन सौर लगायौ, तोकौं बोली है इहिं काम।
चलौ तुरत, जनि बेर लगावहु अबहीं आइ करौ बिस्राम।
सूर स्याम तेरौ धौं अकारत, तू कहैं बिनसौ करै ताम ॥८७४॥

यह कछु नीकी बात सुनावति।
काकौ गथ धौं मैं लीन्हौ है, बार-बार बन मोहिं बुलावति।
मेरौ धौं हरि करत कौन सौं इती मया मोहिं कीन्हौ।
जैसे हैं हरि तेरे माई, मैं नीकै करि चीन्हौ।
की बैठौ की जाहु भवन कौं मैं अनपै नहिं जाऊँ।
सूरदास प्रभु की री सजनी जनम न लैहौं नाऊँ ॥८७५॥

मैं कब तोहिं मनावन आई?
मगन किये सबकौ ब्रज बैठी, कहा करति अधिकाई।
आइ कहौ हौं बोध सबनि कौ मोपर कत सतरानी।
स्याम करत तबही तैं उनसौं तिनपर अतिहिं रिसानी।
बार बार तू कहा कहति री ब्रज काकौ मैं लीन्हौ।
सूरदास राधा सहचरि सौं न्याव निदरि करि दीन्हौ ॥८७६॥

मान करौ तुम और सवाई।
कोटि करौ एकै पुनि है हौ, तुम अरु मोहन माई।
मोहन मो सुनि नाम स्रवनहीं मगन भई सुकुमारी।
मान गयौ रिस गई तुरतहीं, लज्जित भई मन भारी।
आइ मिली दूतिका कंठ सौं धन्य धन्य कहि बानी।
सूर स्याम मन धाम जानि कै, दरसन कौं अतुरानी ॥८७७॥

स्याम नारि कैं बिरह भरे।
कबहुँक बैठत कुंज द्रुमनि तर, कबहुँक रहत खरे।
कबहुँक तनु की सुरति बिसारत, कबहुँक तनु-सुधि आवत।
तब नागरि के गुनहिं बिचारत, तेई गुन गनि गावत।
कहूँ मुकुट, कहूँ मुरलि रही गिरि, कहूँ कटि पीत पिछौरी।
सूर स्याम ऐसी गति भीतर, आई दूतिका दौरी ॥८७८॥

धनि वृषभानु-सुता बड़भागिनि।
कहा निहारति अंग अंग-छबि, धन्य स्याम अनुरागिनि।
और त्रिया नख सिख सिंगार सजि, तेरैं सहज न पूरैं।
रति, रंभा उरबसी रमा सी, तोहिं निरखि मन झूरैं।
ये सब कंत सुहागिनि नाहीं, तू है कंत पियारी।
सूर धन्य तेरी सुंदरता, तो सी और न नारी ॥८७९॥

चली किन मानिनि, कुंज-कुटीर।
तुव बिनु कुँवर कोटि बनिता तजि सहत मदन की पीर।
गदगद स्वर संभ्रम अति आतुर, स्रवत सुलोचन नीर।
क्वासि क्वासि वृषभानु-नंदिनी बिलपत बिपिन अधीर।
बंसी बिसिख, ब्याल मालावलि, पंचानन पिक कीर।
मलयज गरल हुतासन मारुत, साखामृग-रिपु चीर।
हिय मैं हरषि प्रेम अति आतुर, चतुर चली पिय-तीर।
सुनि भयभीत बज्र के पिंजर सूर सुरति-रनधीर ॥८८०॥

संग राजति वृषभानु-कुमारी।
कुंज सदन कुसुमनि सज्या पर, दंपति सोभा भारी।
आलस भरे मगन रस दोऊ, अंग अंग प्रति जोहत।
मनहुँ गौर स्यामल ससि नव तन, बैठे सन्मुख सोहत।
कुंज भवन राधा-मनमोहन, चहुँ पास ब्रजनारी।
सूर रही लोचन इकटक करि, डारति तन मन वारी ॥८८१॥

प्यारी चितै रही मुख पिय कौ।
अंजन अधर, कपोलनि बंदन, लाग्यौ काहू त्रिय कौ॥
तुरत उठी दर्पन कर लीन्हे, देखौ बदन सुधारी।
अपनौ मुख उठि प्रात देखि कै, तब तुम कहूँ सिधारी॥
काजर बंदन, अधर कपोलनि, सकुचे देखि कन्हाई।
सूर स्याम नागरि-मुख जोवत, बचन कह्यौ नहिं आई॥८८२॥

क्यौं मोहन, दर्पन नहिं देखत।
क्यौं धरनी पग-नखनि करोवत क्यौं हम तन नहिं पेखत॥
क्यौं ठाढ़े बैठत क्यौं नाहीं, कहा परी हम चूक।
पीतांबर गहि क्यौं बैठियै रहे कहा ह्वै मूक॥
उपरि गयौ उर तैं उपरैना नख-छत, बिनु गुन माल।
सूर देखि लटपटी पाग पर, जावक की छबि लाल॥८८३॥

ऐसी कहाँ रँगीले लाल।
जावक सौं क्यौं पाग रँगाई, रँगरेजिनी मिली कोउ बाल॥
बंदन रंग कपोलनि दीन्हौ, अरुन अधर भए स्याम रसाल।
जिनि तुम्हरी मन-इच्छा पुरई, धनि धनि पिय, धनि धनि वह बाल॥
माला कहाँ मिली बिनु गुन की उर-छत देखि भई बेहाल।
सूर स्याम छबि सबै बिराजी, यहै देखि मोकौं जंजाल॥८८४॥

काहू कौं कहि गए, आइहैं, काहैं झूठी सौंहैं खाए।
ऐसे मैं नहिं जाने तुमकौं, जे गुन करि तुम प्रगट दिखाए॥
भली करी यह दरसन दीन्हे, जनम जनम के ताप नसाए।
तब चितए हरि नैंकु त्रिया-तन, इतनैहिं सब अपराध छमाए॥
सूरदास सुंदरी सयानी, हँसि लीन्हे पिय अंकम लाए॥८८५॥

तहँइ जाहु जहँ रैनि बसे हौ।
काहे कौं धावन हौ आए अँग अँग चिह्न लसे हौ॥

स्याम नारि कैं बिरह भरे।
कबहुँक बैठत कुंज द्रुमनि तर, कबहुँक रहत खरे।
कबहुँक तनु की सुरति बिसारत, कबहुँक तनु-सुधि आवत।
तब नागरि के गुनहिं बिचारत, तेई गुन गनि गावत।
कहूँ मुकुट, कहूँ मुरलि रही गिरि, कहूँ कटि पीत पिछौरी।
सूर स्याम ऐसी गति भीतर आई दूतिका दौरी ॥८७८॥

धनि वृषभानु-सुता बड़भागिनि।
कहा निहारति अंग अंग-छबि धन्य स्याम-अनुरागिनि।
और त्रिया नख सिख सिंगार सजि, तेरैं सहज न पूरैं।
रति, रंभा, उरबसी रमा सी, तोहिं निरखि मन झूरैं।
ये सब कंत सुहागिनि नाहीं, तू है कंत पियारी।
सूर धन्य तेरी सुंदरता, तोसी और न नारी ॥८७९॥

चली किन मानिनि कुंज-कुटीर।
तुव बिनु कुँवर कोटि बनिता तजि, सहत मदन की पीर।
गदगद स्वर संभ्रम अति आतुर, स्रवत सुलोचन नीर।
क्वासि क्वासि वृषभानु-नंदिनी, बिलपत बिपिन अधीर।
बंसी बिसिष, माल ब्यालावलि, पंचानन पिक कीर।
मलयज गरल, हुतासन मारुत, साखामृग-रिपु चीर।
हिय मैं हरषि प्रेम अति आतुर, चतुर चली पिय-तीर।
सुनि भयभीत बज्र के पिंजर, सूर सुरनि-रनधीर ॥८८०॥

सँग राजति वृषभानु-कुमारी।
कुंज सदन कुसुमनि सेज्या पर दंपति सोभा भारी।
आलस भरे मगन रस दोऊ, अंग अंग प्रति जोहत।
मनहुँ गौर स्यामल ससि नव तन, बैठे सन्मुख सोहत।
कुंज-भवन राधा-मनमोहन, चहूँ पास ब्रजनारी।
सूर रही लोचन इकटक करि, डारति तन मन वारी ॥८८१॥

प्यारी चितै रही मुख पिय कौ।
अंजन अधर, कपोलनि बंदन, लाग्यौ काहू त्रिय कौ॥
तुरत उठी दर्पन कर लीन्हैं देखौ बदन सुधारी।
अपनौ मुख उठि प्रात देखि कै, तब तुम कहूँ सिधारौ॥
काजर बंदन, अधर कपोलनि सकुचे देखि कन्हाई।
सूर स्याम नागरि-मुख जोवत, बचन कह्यौ नहिं जाई॥८८२॥

क्यौं मोहन, दर्पन नहिं देखत।
क्यौं धरनी पग-नखनि करोवत क्यौं हम तन नहिं पेखत॥
क्यौं ठाढ़े बैठत क्यौं नाहीं, कहा परी हम चूक।
पीतांबर गहि क्यौ बैठिये रहे कहा ह्वै मूक॥
उघरि गयौ उर तैं उपरैना नख-छत, बिनु गुन माल।
सूर देखि अटपटी पाग पर, जावक की छबि लाल॥८८३॥

ऐसी कहाँ रँगीले लाल।
जावक सौं कहूँ पाग रँगाइ, रँगरेजिनी मिली कोउ बाल॥
बंदन रंग कपोलनि दीन्ही अरुन अधर मद स्याम रसाल।
जिनि तुम्हरी मन इच्छा पुरई धनि धनि पिय धनि धनि
वह बाल॥
माला कहाँ मिली बिनु गुन की उर-नख देखि भई बेहाल।
सूर स्याम छबि सबै बिराजी, पटै देखि मोकौं जंजाल॥८८४॥

काहे कौं कहि गए, आइहैं, काहैं झूठी सौंहैं खाए।
ऐसे मैं नहिं जाने तुमकौं, जे गुन करि तुम प्रगट दिखाए॥
भली करी यह दरसन दीन्हे, जनम जनम के ताप नसाए।
तब चितए हरि नैंकु तिया-तन, इतनैंहिं सब अपराध छमाए॥
सूरदास सुंदरी सयानी, हँसि लीन्हे पिय अंकम लाए॥८८५॥

वहँइ जाहु जहँ रैनि बसे हौ।
काहे कौं पाहुन ह्वै आए अंग अंग चिह्न लसे हौ॥

अरगज अंग, अरगजी माला, बसन सुगंध भरे हौ।
काजर अधर कपोलनि बंदन, लोचन अरुन भरे हौ॥
पलकनि पीक, मुकुर लै देखौ, ये कौनहीं करे हौ।
सूरदास प्रभु पीठि बलय गड़े नागरि अंग भरे हौ॥८८६॥

तुम रीझे, की उनहिं रिझाए।
हा हा पिय, यह प्रगट सुनावौ, कोटिक सौंह दिवाए॥
जावक-भाल-चिह्न मैं जान्यौ, हठ करि पाइ लगाए।
नैननि पीक यथा तन कीन्ही अंजन अधरनि लाए॥
बिनु-गुन माल मिली कहँ तुमकौं कंकन पीठि दिखावहु।
सूर स्याम हम तौ यौं जानति, तुमहूँ कहि न सुनावहु॥८८७॥

धीर धरहु, फल पावहुगे।
अपनेही सुख के पिय चौंड़े कबहूँ तौ बस आवहुगे॥
हमसौं कहत और की औरै, इन बातनि मन भावहुगे।
कबहुँ राधिका मान करैगी, अंतर बिरह जनावहुगे॥
तब चरित्र हमहीं देखैंगी जैसैं नाच नचावहुगे।
सूर स्याम अति चतुर कहावत, चतुराई बिसरावहुगे॥८८८॥

मैं हरि सौं हो मान कियौ री।
आवत देखि आन बनिता-रत, द्वार कपाट दियौ री॥
अपनैं ही कर साँकर सारी, संधिहिं संधि सियौ री।
जौ देखौं तौ सेज सुमूरति काँप्यौ रिसनि हियौ री॥
जब झुकि चली भवन तैं बाहिर, तब हठि लौटि लियौ री।
कहा कहौं कछु कहत न आवै तहँ गोबिंद कियौ री॥
बिसरि गयौ सब रोष हरष मन पुनि फिरि मदन जियौ री।
सूरदास प्रभु अतिरति नागर छबि मुख अमृत पियौ री॥८८९॥

नंदनदन सुखदायक हैं।
नैन सैन दै हरत नारि-मन, काम काम-तनु दायक हैं॥

कबहूँ रैन बसत काहू कैं, कबहूँ भोर उठि आवत हैं।
काहू को मन आपु चुरावत, काहू कैं मन भावत हैं।
काहू कैं जागत सगरी निसि काहू बिरह जगावत हैं।
सुनहु सूर जोइ जोइ मन भावै, सोइ सोइ रँग उपजावत हैं।।८८०

इनहीं कौं मन राखैं काम।
यौं तुम सौं आप बा नाहीं, बात सुनत ही नाहीं स्याम।
ऐसी अंग अंग-प्रति सीमा, मैं तौ भूली हौं हरि रूप।
धनि पिय बने बनी पैऊ हैं, एक एक तैं रूप अनूप।
सो छबि मोहिं दिखावन आए सखा करी बहुत हरि आजु।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि बैठ रसिकिनी बन्यौ समाजु।।८८१

स्याम तिया सम्मुख नहिं जोवत।
कबहुँ नैन की कोर निहारत कबहुँ बदन पुनि गोवत।
मन-मन हँसत त्रसत तनु परगट सुनत भावती बात।
खंडित बचन सुनत प्यारी के पुलक होत सब गात।
यह सुख सूरदास कछु जाने प्रभु अपने की भाव।
श्रीराधा रिस करति, निरखि मुख तिहिं छबि पर सकुचात।।८८२

मैं जानी पिय-मन की बात।
धरनी पग-नख कहा करोवत, अब सीखी यह घात।
तुम जानत तिय हमहिं सयाने अरु सब लोग अयाने।
रैन बसत कहुँ, भोर हमारैं आवत भली सयाने।
यह चतुराई पढ़ी ताहि पै सो गुन हम तैं न्यारी।
धनि धनि सूरदास के स्वामी, काहैं हम न बिसारी।।८८३।।

नैन चपलता कहाँ गवाँई।
मोसौं कहत दुरावत नागर नागरि रैनि जगाई।
वाही कैं रँग अरुन भए हैं धनि यह सुंदरताई।
मानौ अरुन अंबुज पर बैठे, मत्त भृंग रस पाई।

अरगज अंग, मरगजी माला, बसन सुगंध भरे हौ।
काजर अधर, कपोलनि बंदन, लोचन अरुन भरे हौ॥
पलकनि पीक, मुकुर लै देखौ, ये कौनहीं करे हौ।
सूरदास प्रभु पीठि बलय गड़े, नागरि अंग भरे हौ॥८८६॥

तुम रीझे की बनहिं रिझाए।
हा हा पिय, यह प्रगट सुनावौ कोटिक सौंह दिवाए॥
जावक-भाल-तिलक मैं जान्यौ हठ करि पाइ लगाए।
नैननि पीक मया उन कीन्हीं, अंजन अधरनि लाए॥
बिनु-गुन माल मिली कहँ तुमकौं कंकन पीठि दिखाइहु।
सूर स्याम हम तौ यौं जानति तुमहूँ कहि न सुनाइहु॥८८७॥

पीर परहु, फल पावहुगे।
अपनेहीं सुख के पिय चौंड़े, कबहूँ तौ बस आवहुगे॥
हमसौं कहत और की औरै, इन बातनि मन भावहुगे।
कबहुँ राधिका मान करैगी, अंतर बिरह जनावहुगे॥
तब चरित्र हमहीं देखैंगी, जैसैं नाच नचावहुगे।
सूर स्याम अति चतुर कहावत, चतुराई बिसरावहुगे॥८८८॥

मैं हरि सौं हो मान कियौ री।
आवत देखि आन बनिता-रत, द्वार कपाट दियौ री॥
अपनें ही कर साँकर सारी, संधिहिं संधि सियौ री।
जौ देखौं तौ सेज सुमूरति, काँप्यौ रिसनि हियौ री॥
जब सुकि चली भवन तैं बाहिर, तब हठि लौटि लियौ री।
कहा कहौं कछु कहत न आवै वहँ गोबिंद बियौ री॥
बिसरि गयौ सब रोष हरष मन, पुनि फिरि मदन जियौ री।
सूरदास प्रभु अतिरति नागर छलि मुख अमृत पियौ री॥८८९॥

नंदनंदन सुखदायक हैं।
नैन सैन दै हरत नारि-मन, काम काम-तनु दायक हैं॥

अबहिं जाइ मनाइ लीजै, अवसि कीजै गौन।
सूर के प्रभु जाइ देखौ, चित चौंपी जौन ॥८९८॥

स्यामा तू अति स्यामहिं भावै।
बैठत-उठत चलत गौ चारत, तेरी लीला गावै।
पीत बरन लखि पीत बसन उर पीत धातु अँग लावै।
चंद्राननि सुनि मोर चंद्रिका माथैं मुकुट बनावै।
अति अनुराग नैन संभ्रम मिलि संग परस सुख पावै।
बिछुरति तोहिं क्वासि राधिका कहि, कुंज-कुंज प्रति धावै।
तेरौ चित्र लिखै अरु निरखै बासर बिरह नसावै।
सूरदास रस-रासि रसिक सौं अंतर क्यों करि आवै ॥८९९॥

जब-जब तेरी सुरति करत।
तब तब डबडबाइ दोउ लोचन, उमँगि भरत।
जहँ मीन कमल-दल कौं चलि अधिक अरत।
पलक कपाट न होत, तबहिं तैं निकसि परत।
आँसु परत ढरि-ढरि उर, मुक्त मनहु भरत।
सहज गिरा बोलत न बनत हित हेरि हरत।
राधा, नैन-चकोर बिना-मुख-चंद्र जरत।
सूर स्याम तव दरस बिना नहिं धीर धरत ॥९००॥

राधे हरि तेरौ नाम बिचारैं।
तुम्हरेइ गुन ग्रंथित करि माला, रसना-कर सौं टारैं।
लोचन मूँदि ध्यान धरि, दृढ़ करि पलक न नैंकु उघारैं।
अंग अंग प्रति रूप माधुरी, उर तैं नहीं बिसारैं।
ऐसौ नेम तुम्हारौ पिय कैं कह जिय निठुर बिहारैं।
सूर स्याम मनकाम पुरावहु उठि चलि कहैं हमारैं ॥९०१॥

अति न हठ कीजै री सुनि ग्वारि।
हा। सु कहति तू सुनि, या हठ तैं सरै न एकौ झारि।

चढ़ि न सकत ऐसे मतवारे, लागत पलक जम्हाई।
सुनहु सूर यह अंग माधुरी, आलस भरे कन्हाई ॥८८४॥

यह कहि कै तिय धाम गई।
रिसनि भरी नख-सिख लौं प्यारी जोबन-गर्ब-मई।
सखी चली गृह देखि दसा यह, हठ करि बैठी जाइ।
बोलति नहीं मान करि हरि सौं, हरि अंतर रहे आइ।
इहिं अंतर जुवती सब आईं जहाँ स्याम पर-द्वारैं।
प्रिया मान करि बैठि रही है, रिस करि क्रोध तुम्हारैं।
तुम आवत अतिहीं अतुरानी कहा करी चतुराई।
सुनत सूर यह बात चकित पिय अतिहिं गए मुरझाई ॥८८५॥

बहुरि नागरी मान कियौ।
लोचन भरि भरि ढारि दिये दोउ, अति तनु बिरह छियौ।
देखन ही देखत भए ब्याकुल, पिय अपरा अनुमाने।
पै गुन करत दोष अब कौपै कहियत परम सयाने।
यह सुनि कै दूती हरि पठई देखि जाइ अनुमान।
सूर स्याम यह कहि तिहिं पठई तुरत तजै जिहिं मान ॥८८६॥

नैकु निकुंज कृपा करि आइयै।
अति रिस कृस ह्वै रही किसोरी, करि मनुहारि मनाइयै।
कर कपोल अंतर नहिं पावत, अति उसास तन ताइयै।
छूटे चिकुर बदन कुम्हिलानी सुहथ सँवारि बनाइयै।
इतनी कहा गोठि कौ मागन की पावनि सुख पाइयै।
उठहिं आदर देन सयाने यहै सूर जस गाइयै ॥८८७॥

बैठी मानिनी गहि मौन।
मनौ निठि समाधि सेवत मुनि साधे पौन।
बचन श्रवन, पलक तारी, गुफा घूँघट-भौन।
गौरि कौ ध्यान धारे देत हारैं कौन।

अबहिं जाइ मनाइ लीजै अबसि कीजै गौन ।
सूर के प्रभु जाइ देखौ, चित चापी जौन ॥९९८॥

स्यामा तू अति स्यामहिं भावै ।
बैठत उठत चलत, गौ चारत, तेरी लीला गावै ।
पीत बरन लखि पीत बसन उर पीत धातु अँग लावै ।
चंद्राननि सुनि मोर चंद्रिका माथैं मुकुट बनावै ।
अति अनुराग सैन संभ्रम मिलि संग परम सुख पावै ।
बिछुरति तोहिं क्वासि राधिका कहि, कुंज-कुंज प्रति धावै ।
तेरौ चित्र लिखै अरु निरखै बासर बिरह नसावै ।
सूरदास रस-रासि रसिक सौं अंतर क्यों करि आवै ॥९९९॥

जब-जब तेरी सुरति करत ।
तब तब डबडबाइ दोउ लोचन, उमँगि भरत ।
जैसें मीन कमल-दल कौं अलि अधिक भरत ।
पलक कपाट न होत, तबहिं तैं निकसि परत ।
आँसु परत ढरि-ढरि उर, मुक्ता मनहु झरत ।
सहज गिरा बोलत न बनत हित हेरि हरत ।
राधा, नैन-चकोर बिना-मुख-चंद्र जरत ।
सूर स्याम तब दरस बिना नहिं धीर धरत ॥१०००॥

राधे हरि तेरौ नाम बिचारैं ।
तुम्हरेइ गुन ग्रंथित करि माला, रसना-कर सौं टारैं ।
लोचन मूँदि ध्यान धरि, दृढ़ करि पलक न नैंकु उघारैं ।
अंग अंग प्रति रूप माधुरी, उर तैं नहीं बिसारैं ।
ऐसौ नेम तुम्हारौ पिय कैं, कह जिय निठुर तिहारैं ।
सूर स्याम मनकाम पुरावहु उठि चल कहे हमारैं ॥१००१॥

मानि न हठ कीजै री सुनि ग्वारि ।
ह । जु परनि तू सुनि, या हठ तैं मरै न पची हारि ।

एक समय मोतिनि के धोखैं हंस चुनत है ज्वार।
कीजै कहा काम अपने कौं, जीति मानियै हारि।
ही जु कहति ही मानि सखी री, तन कौ काम सँवारि।
कामी कान्ह कुँवर के ऊपर, सरबस दीजै वारि।
यह जोबन बरषा की नदि ज्यौं बोरति कर्हाहिं करारि।
सूरदास प्रभु अंत मिलहुगी, ये बीते दिन चारि ॥१०२॥

कहा तुम इतनैंहिं कौ गरबानी।
जोबन-रूप दिवस दसही कौ, ज्यौं अँजुरी कौ पानी।
तृन की अगिनि धूम की मंदिर ज्यौं तुषार-कन पानी।
रिसही जरति पतंग ज्योति ज्यौं, जानति लाभ न हानी।
करि कछु ज्ञानऽभिमान जान दै, हैऽब कौन मति ठानी।
तन धन जानि जाम जुग छाया, भूलति कहा अयानी।
नखसे नदी चलति मरजादा सूखियै सिंधु समानी।
सूर इतर ऊसर के बरषैं, थोरैहिं जल इतरानी ॥१०३॥

रहि री मानिनि, मान न कीजै।
यह जोबन अँजुरी कौ जल है, ज्यौं गुपाल माँगैं त्यौं दीजै।
छिनु छिनु घटति बढ़ति नहिं रजनी ज्यौं ज्यौं कला चंद्र की छीजै।
पूरब पुन्य सुकृत फल तेरौ क्यौं न रूप नैन भरि पीजै।
सौंह करति तेरे पाँइन की ऐसी जियनि दसौ दिन दीजै।
सूर सु जीवन सुफल जगत कौ बेरी बाँधि बिबस करि लीजै १०४

राधा सखी देखि हरषानी।
आतुर स्याम पठाई आली अंतरगत की जानी।
वह सोभा निरखत अँग अँग की रही निहारि-निहारि।
चकित देखि नागरि मुख बानी, तुरत सिंगारनि सारि।
ताहि पठी सुख दै चलि हरि पै मैं आवति ही पाछैं।
बैठेहिं फिरी सूर के प्रभु पै जहाँ कुंज गृह आछैं ॥१०५॥

हरषि स्याम तिय बाँह गही।
अपनैं कर सारी अँग साजत, यह इक साध रही॥
सकुचति नारि बदन मुसुकानी, उतकौं चितै रही।
कोक कला परिपूरन दोऊ, त्रिभुवन और नहीं॥
कुंज-भवन सँग मिलि दोउ बैठे, सोभा एक कही।
सूर स्याम स्यामा सिर बेनी अपनैं करनि गुही॥१०६॥

खंजन नैन सुरँग रस माते।
अतिसय चारु बिमल चंचल ये पल पिंजरा न समाते॥
बसे कहूँ सोइ बात सखी कहि रहे इहाँ किहिं नातें।
सोइ संज्ञा देखति औरासी बिकल उदास कला तैं।
चलि चलि जात निकट स्रवननि के उलटि ताटंक फँदाते।
सूरदास अंजन गुन अटके, नतरु कबै उड़ि जाते॥१०७॥

धन्य धन्य बृषभानु-कुमारी गिरिधरबर बस कीन्हे (री)।
और सोइ साध करी पिय रस की सो सब उनकौं दीन्हे (री)॥
तोसी तिया और त्रिभुवन मैं, पुरुष स्याम से नाहीं (री)।
कोक कला पूरन तुम दोऊ अब न कहूँ हरि जाहीं (री)॥
ऐसे हम तुम भए परस्पर, मोसौं प्रेम दुरावै (री)।
सूर सखी आनँद न सम्हारति, नागरि कंठ लगावै (री)॥१०८॥

अतिहिं अरुन हरि नैन तिहारे।
मानहुँ रति-रस भए रँगमगे, करत केलि पिय पलक न पारे।
मंद मंद डोलत संकित से सोभित मध्य मनोहर तारे।
मनहुँ कमल संपुट महँ बीधे, उड़ि न सकत चंचल अलि बारे।
झलमलात रति-रैनि जनावत अति रस-मत्त भ्रमत अनियारे।
मनहुँ सकल जुवती जीवन की काम-बान खरसान सँवारे॥
अटपटात अलसात पलक-पट मूँदत कबहुँ करत उघारे।
मनहुँ मुदित मरकतमनि-आँगन, खेलत खंजरीट चटकारे॥

बार बार अवलोकि कनखियनि, कपट नेह मन हरत हमारे।
सूर स्याम सुखदायक लोचन, दुखमोचन, लोचन रतनारे ॥ ९॥

हरषि स्याम तिय भौंह गही।
चूक परी हमकौं यह बकसी, आवन कौं कहि गए सही ॥
रिसनि उठी झहराइ, झटकि भुज छुवत कहा पिय सरस नहीं।
भवन गई आतुर ह्वै नागरि, ये आई मुख सबै कही ॥
मेरे महल आजु तैं आवहु, भौंह मंद की कौटिक ही।
सूर स्याम तब सौं जग जीवौं, मिली नहीं वह काम दही ॥११०॥

स्याम धरयौ तिय मोहन रूप।
दूती प्रिया संग इक लीन्हें, अंग त्रिभंग अनूप ॥
अंतरद्वार आइ भए ठाढ़े सुनत तिया की बातें।
सहस वचन सु कहति सखि आगें, कहौ मिली किहिं नातें ॥
कपटी, कुटिल, क्रूर कहि आवत यह सुनि सुनि मुसुकात।
सूरदास प्रभु हैं यदुनायक, झूठी कहति यह बात ॥१११॥

जौ लौं माई हौं जीवन भर जीवौं।
तौ लौं मदनगुपाल लाल कैं, पंथ न पानी पीवौं ॥
करौं न अंजन धरौं न मरकत मृगमद तनु न लगाऊँ।
हस्त वलय, कटि ना पट मेचक, कंठ न पोत बनाऊँ ॥
सुनौं न स्रवननि अलि-पिक-बानी नैन न नव घन देखौं।
नील कमल कर धरौं न कबहूँ, स्याम सरीखे लेखौं ॥
इतनी कहत आइ गए मोहन लियें प्रिय दूती संग।
छूटि गई रिमि-टेक मान की निरखि रसिक के अंग ॥
ससि रवि छीन भई भामिनि सँग, तब पिय गहि कर लीन्ही।
सूरदास-प्रभु रसिक सिरोमनि, मिलि जु सुधा-सुख दीन्ही ॥११२॥

छपौहि स्याम देखी आइ।
महा मान दृढ़ाइ बैठी, चितै कापै जाइ।

रिसहिं रिस भई मगन सुंदरि, स्याम अति अकुलात।
चकित ह्वै सखि रहे ठाढ़े कहि न आवै बात॥
देखि ब्याकुल नंद-नंदन, सखी करति बिचार।
सूर दोऊ मिलैं कैसैं करौं सोइ उपचार॥८१३॥

राधे तेरे नैन किधौं मृगबारे।
रहत न जुगल भौंह-जूऐं तें भजत बिलक-रस हारे।
जदपि अलक बंधन गहि बाँधे तऊ चपल गति न्यारे।
घूँघट-पट बाँगुर ज्यौं बिडरत जवन कनात समि हारे।
भृकुटी सुभग मालक मोती मनि मुक्तपंक्ति गरहारे।
डीठ रूक किये दीपिका मानौ, किये जात उँजियारे।
मुरली-नाद सुनत कछु धीरज पिय जानत पुचकारे।
सूरदास-प्रभु रीझि रसिक पिय, उमँगि प्रान धन वारे॥८१४॥

राधे तेरे नैन किधौं बटपारे।
जिहिं देखैं बन के मृग मोहे, मानुष कौन बिचारे॥
खंजन ते पिय कौ मन मोह्यौ खंजन मीन लजारे।
चितवत दृष्टि बान भरि मारत, घूमत ज्यौं मतवारे॥
गिरिधर रूप छिपी सब लोकां कहिए तिन्हैं कहा रे।
सूरदास प्रभु दरसन कारन नाचत ज्यौं मतवारे॥८१५॥

यह रितु रूसिबे की नाहीं।
बरषत मेघ मेदिनी कैं हित, प्रीतम हरष मिलाहीं॥
जे केती ग्रीषम रितु जाहीं ते तरुवर लपटाहीं।
जे जल बिनु सरिता ते पूरन मिलन समुद्रहिं जाहीं॥
जोबन-धन ह्वै दिवस चारि कौ, ज्यौं बदरी की छाहीं।
मैं दंपति-रस-रीति कही है, समुझि चतुर मन माहीं॥
यह चित धरि री सखी राधिका, दै दूती कौं बाहीं।
सूरदास उठि चलि री प्यारी, मेरैं सँग पिय पाहीं॥८१६॥

बार बार अवलोकि कनखियनि, कपट नेह मन हरत हमारे।
सूर स्याम सुखदायक लोचन, दुखमोचन लोचन रतनारे॥ ९॥

हरषि स्याम तिय बाँह गही।
चूक परी हमकौं यह बकसी, आवन की कहि गए सही॥
रिसनि उठी झहराइ, झटकि भुज छुवत कहा पिय सरस मही।
भवन गई आतुर ह्वै नागरि, वै आई मुख सबै कही॥
मेरैं महल आजु तैं आवहु, सौंह नंद की कोटिक ही।
सूर स्याम जब लौं जग जीवौं, मिलौं नहीं यह काम सही॥५१०॥

स्याम धरयौ तिय मोहन रूप।
दूती प्रिया संग इक लीन्हें, अंग त्रिभंग अनूप॥
अंतरद्वार आइ भए ठाढ़े सुनत तिया की बातें।
सरस वचन जु कहति सखि आगैं, कबौं मिलौं फिरि तातैं॥
कपटी, कुटिल, क्रूर कहि भाषत यह सुनि सुनि मुसुकात।
सूरदास प्रभु हैं यदुनायक, दूती कहति यह बात॥५११॥

जौ लौं माई हौं जीवन भर जीवौं।
तौ लौं नंदगुपाल लाल कै पंथ न पानी पीवौं॥
करौं न अंजन, धरौं न मरकत, मृगमद तनु न लगाऊँ।
हस्त वलय, कटि ना पट मेचक, कंठ न पोत बनाऊँ॥
सुनौं न स्रवननि अलि-पिक-बानी, नैन न नभ घन देखौं।
नील कमल कर धरौं न कबहूँ स्याम सरीरै लेखौं॥
इतनी कहत आइ गए मोहन लियें प्रिय दूती संग।
छूटि गइ रिसि-टेक मान की निरखि रसिक के अंग॥
अति रति लीन भई भामिनि सँग, तब पिय गहि कर लीन्हौ।
सूरदास-प्रभु रसिक सिरोमनि, मिलि जु सुधा-सुरस दीन्हौ॥५१२॥

राधेहिं स्याम देखी आइ।
महा मान दृढ़ाइ बैठी, चितै काहैं जाइ।

रत्न जटित के सुभग तरयौना, मनहुँ जात रवि भोरैं हो।
दुलरी कंठ निरखि पिय इकटक दृग भए रहैं चकोरैं हो।
सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन कौं रीझि-रीझि तन तोरैं हो ॥६२१॥

बेरस कीजै नाहिं भामिनी रस मैं रिस की बात।
हौं पठई तोहिं लैन साँवरैं तोहिं बिनु कछु न सुहात॥
हा हा करि तेरे पाइँ परति हौं, छिनु छिनु निसि घटि जात।
सूर स्याम तेरी मग जोवत, अति आतुर अकुलात ॥६२२॥

मानिनि, मानति क्यौं न कह्यौ।
प्रथम स्याम-मन चोरि नागरी, अब क्यौं मान गह्यौ॥
जानत कहा रीति प्रीतम की मन मन जोग मह्यौ।
रुद्र, बिरंचि सेस, सहसानन, तिनहुँ न अंत लह्यौ॥
पैठे सघन कुंज मंदिर मैं, सो रस जात बह्यौ।
सूर सखी मोहन-मुख निरखहु, धीरज नाहिं रह्यौ ॥६२३॥

कुंज भवन मैं ठाढ़े देखौ अँखियनि भरि तब मैं जाऊँ चलि।
मो पै देखि न परैं अकेले नैंकु होइ ठाढ़ी तू ढिग चलि॥
तेरौ बदन प्रफुल्लित अंबुज हरि जू के नैना अति आतुर अलि।
सूर न्यारे नेह-नेंह न कीजे हा हा दूरि करौ मानें मलि ॥६२४॥

समुझि री नाहिंन नई सगाई।
सुनि राधिके, तोहिं माधौ सौं, प्रीति सदा चलि आई।
जब जब मान कियौ मोहन सौं विकल होत अधिकाई।
विरहानल सब लोक जरत हैं, आपु रहत सब साई।
सिंधु मथ्यौ सागर-बस बाँध्यौ रिपु रन जीति मिलाई।
अब सो त्रिभुवन-नाथ नेह-बस, बन बाँसुरी बजाई।
प्रकृति पुरुष श्रीपति सीतापति अनुक्रम कथा सुनाई।
सूर इती रस रीति स्याम सौं, तैं ब्रज बसि बिसराई ॥६२५॥

तोहिं बिन रूठन सिखई प्यारी।
नवल हैंस नव नागरि स्यामा, पै नागर गिरिधारी॥
सिगरी रैन मनावत बीती हा हा करि हौं हारी।
एते पर हठ छाँड़ति नाहीं सु वृषभानु-कुमारी॥
मरन-समय-ससि-तरस समर-सर, लागे तन तन भारी।
मेटहु त्रास दिखाइ बदन बिधु, सूर स्याम हितकारी॥११७॥

हरि मुख राधा-राधा बानी।
धरनी परे अचेत नहीं सुधि सखी देखि अकुलानी॥
वासर गयौ रैनि इक बीती बिनु भोजन बिनु पानी।
बाहँ पकरि तब सखिनि उठायौ, धनि-धनि सारँगपानी॥
हौं तुम बिबस भए हौ ऐसे, हौं तौ मैं बिलसानी।
सूर बने दोउ नारि पुरुष तुम,दुहुँ की अकथ कहानी॥११८॥

सुनि री सयानी तिय हँसिबे की नेम लियौ पावस दिननि कोऊ ऐसौ है करत री।
दिसि दिसि घटा उठी, मिलि री पिया सौं रूठी निडर हियौ है तेरौ नैकु न डरत री।
चलिए री मेरी प्यारी, तोकौं मान देनहारी, प्रानहूँ ते प्यारी पति धीर न धरत री।
सूरदास प्रभु तोहिं हियौ चाहै हित-चित, हँसि क्यौं न मिलै तेरौ नेम है टरत री॥११९॥

माधौ तहाँ बुलाई राधे, जमुना निकट सुसीतल छहियाँ।
आछी भीनी कुसुँभी सारी गोरैं तन फबि हरि पिय पहियाँ॥
दूती एक गई मोहिनि पै आइ कह्यौ यह प्यारी कहियाँ।
सूरदास सुनि चतुर राधिका स्याम रैनि वृन्दावन महियाँ॥१२०॥

कुसुंभ सारी तन गोरैं हो।
जगमग रह्यौ जराइ की टीकौ छबि की उठति झकोरैं हो॥

रत्न जटित के सुभग तरयौना, मनहुँ जात रबि भोरैं हो।
तुम्हारी कंठ निरखि पिय इकटक, दृग भए रहैं चकोरैं हो।
सूरदास प्रभु तुम्हर मिलन कौं, रीझि-रीझि तन तोरैं हो ॥६२१॥

बेरस कीजै नाहिं भामिनी, रस मैं रिस की बात।
हौं पठई तोहिं लैन साँवरैं तोहिं बिनु कछु न सुहात॥
हा हा करि तेरे पाइँ परति हौं छिनु छिनु निसि घटि जात।
सूर स्याम तेरौ मग जोवत, अति आतुर अकुलात ॥६२२॥

मानिनि मानति क्यौं न कह्यौ।
प्रथम स्याम-मन चोरि नागरी अब क्यौं मान गह्यौ॥
जानत कहा रीति प्रीतम की मन-क्रत लोग मह्यौ।
रुद्र, बिरंचि सेस, सहसानन तिनहुँ न भेद लह्यौ॥
बैठे नवल कुंज मंदिर मैं, सो रस जात बह्यौ।
सूर सखी मोहन-मुख निरखहु धीरज नाहिं रह्यौ ॥६२३॥

कुंज भवन मैं ठाढ़े देखौ अँखियनि भरि तब मैं जाऊँ चलि।
मो पै देखि न परैं अकेले नैंकु होइ ठाढ़ी तू ढिग चलि॥
तेरौ बदन प्रफुल्लित पंकज हरि जू के नैना अति आतुर अलि।
सूर प्यारे नेंद-नेंद न कीजै हा हा दूरि करौ मानैं मलि ॥६२४॥

समुझि री नाहिंन नई सगाई।
सुनि राधिके, तोहिं माधौ सौं प्रीति सदा चलि आई।
जब जब मान कियौ मोहन सौं मिथ्या हात अधिकाई।
बिरहानल सब लोक जरत हैं, आपु रहत जल साईं।
सिंधु मथ्यौ सागर-जल बाँध्यौ रिपु रन जीति मिलाई।
अब सो त्रिभुवन-नाथ नेह-बस, बन बाँसुरी बजाई।
प्रकृति पुरुष श्रीपति सीतापति, अनुक्रम कथा सुनाइ।
सूर इती रस रीति स्याम सौं, तैं ब्रज बसि बिसराई ॥६२५॥

राधिका बस्य करि स्याम पाए।
बिरह गयौ दूरि, प्रिय दरस हरि कै भयौ, सहस मुख निगम जिहिं नेति गायौ ॥
मान तजि मानिनी, नैन कौ सुख दयौ करत तनु कंठ सौ त्रास भारी।
कोक-बिद्या निपुन, स्याम स्यामा बिपुल कुंज गृह द्वार ठाढ़े मुरारी ॥
भक्त-हित-हेत अवतारि लीला करत, रहत प्रभु तहाँ नित ध्यान लाएँ।
प्रगट प्रभु-सूर ब्रजनारि कै हित बँधे देत मन-काम-फल संग ताकैं ॥२९॥

भूलत स्याम स्यामा संग।
निरखि दंपति-अंग-सोभा, लजत कोटि अनंग।
मंद त्रिबिध समीर सीतल अंग अंग सुगंध।
मचत उड़त सुबास सँग मन रहे मधुकर बंध ॥
तैसियै जमुना सुभग जहँ रच्यौ रंग हिंडोल।
तैसिय ब्रज-बधू बनि, हरि चितै लोचन-कोर ॥
तैसीई बृंदा बिपिन घन कुंज द्वार-बिहार।
बिपुल गोपी, बिपुल बन गृह, रवन नंदकुमार ॥
नित्य लीला नित्य आनँद, नित्य मंगलगान।
सूर सुर मुनि मुखनि अस्तुति ध्यान गोपी-बान ॥८०॥

नित्य धाम बृंदावन स्याम। नित्य रूप राधा ब्रज धाम ॥
नित्य रास जल नित्य बिहार। नित्य मान, खंडिताऽभिसार ॥
ब्रह्म-रूप येई करतार। करन हरन त्रिभुवन येई सार ॥
नित्य कुंज-सुख नित्य हिंडोर। नित्यहिं त्रिबिध-समीर झकोर ॥
सदा बसंत रहत जहँ बास। सदा हर्ष, जहँ नहीं उदास ॥

कोकिल कीर सदा बहु रोर। सदा रूप मन्मथ चित चोर ॥
बिबिध सुमन बन फूले डार। उन्मत मधुकर भ्रमत अपार ॥
नव पल्लव बन सोभा एक। बिहरत हरि सँग सखी अनेक ॥
कुहू कुहू कोकिला सुनाई। सुनि सुनि नारि परम हरषाई ॥
बार बार सो हरिहिं सुनावहिं। रितु बसंत आयौ समुझावहिं ॥
फागु चरित-रस साध हमारैं। खेलहिं सब मिलि संग तुम्हारैं ॥
सुनि सुनि सूर स्याम मुसुकाने। रितु बसंत आयौ हरषाने ॥१२८

कोकिल बोली, बन बन फूले, मधुप गुँजारन लागे।
सुनि भयौ भोर रोर बंदिनि कौ मदन-महीपति जागे ॥
ते दूने अंकुर द्रुम पल्लव जे पहिले दव लागे।
मानहुँ रति-पति रीझि जाचकनि बरन-बरन दए बागे ॥
नई प्रीति, नई लता, पुहुप नए नयन नए रस पागे।
नव नेह नव नागरि हरषित, सूर सुरँग अनुरागे ॥१२९॥

सुंदर बर सँग ललना बिहरति बसंत सरस रितु आई।
लै लै छरी कुमारि राधिका कमलनैन पर धाई ॥
सरिता सीतल बहत मंद गति रबि उत्तर दिसि आयो।
अति रस-भरी कोकिला बोली बिरहिनि-बिरह जगायौ।
द्रावत बन रतनारे देखियत चहुँ दिसि टेसू फूले।
बौरे अँबुआ अरु द्रुम-बेली मधुकर परिमल-भूले ॥
इत श्रीराधा, उत श्रीगिरिधर, इत गोपी उत ग्वाल।
खेलत फागु रसिक ब्रज-बनिता, सुंदर स्याम तमाल ॥
चोवा चंदन अबिर कुमकुमा छिरकत भरि पिचकारी।
उड़त गुलाल अबीर, भौति रबि दिसि दीपक उँजियारी ॥
ताल मृदंग बीन बाँसुरि डफ, गावत गीत सुहाए।
रसिक गुपाल नवल ब्रज-बनिता निकसि चौहटैं आए ॥
भूम झूम भूमक सब गावहिं बोलहिं मधुरी बानी।

राधिका बस्य करि स्याम पाए।
बिरह गयौ दूरि, बिय हरष हरि कै भयौ, सहस मुख निगम जिहिं नेति गायौ ॥
मान तजि मानिनी, मैन कौ बस भयौ, करत तनु कंठ जी त्रास भारी।
कोक-बिधा निपुन, स्याम स्यामा बिपुल कुंज गृह द्वार ठाए मुरारी ॥
भक्त-हित-हेत अवतारि लीला करत, रहत प्रभु तहाँ निजु ध्यान जाकैं।
प्रगट प्रभु-सूर ब्रजनारि कैं हित बँधे देत मन-काम-फल संग ताकैं ॥२६॥

झूलत स्याम स्यामा संग।
निरखि दंपति-अंग-सोभा, लजत कोटि अनंग।
मंद त्रिबिध समीर सीतल, अंग अंग सुगंध।
मचत उड़त सुबास सँग मन रहे मधुकर बंध ॥
तैसियै जमुना सुभग जहँ रच्यौ रँग हिंडोल।
तैसिय ब्रज-बधू बनि, हरि चितै लोचन-कोर ॥
तैसोई बृंदा बिपिन घन कुंज द्वार-बिहार।
बिपुल गोपी, बिपुल बन गृह, रवन नंदकुमार ॥
नित्य लीला, नित्य आनँद, नित्य मंगलगान।
सूर सुर-मुनि मुखनि अस्तुति ध्यान गोपी-कान्ह ॥२७॥

नित्य धाम बृंदाबन स्याम। नित्य रूप राधा ब्रज बाम ॥
नित्य रास, जल नित्य बिहार। नित्य मान, खंडिताऽभिसार ॥
ब्रह्म-रूप येई करतार। करन हरन त्रिभुवन येई सार ॥
नित्य कुंज-सुख नित्य हिंडोर। नित्यहिं त्रिबिध-समीर झकोर ॥
सदा बसंत रहत जहँ बास। सदा हर्ष जहँ नहीं उदास ॥

हरि-सँग खेलति हैं सब फाग।
इहिं मिस करति प्रगट गोपी, उर-अंतर कौ अनुराग ॥
सारी पहिरि सुरँग कसि कंचुकि, काजर दै-दै नैन।
बनि-बनि निकसि निकसि भई ठाढ़ी, सुनि माधौ के बैन ॥
डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुआरि बाजत ताल-मृदंग ॥
अति आनंद मनोहर बानी, गावत उठति तरंग ॥
एक कोध गोबिंद ग्वाल सब, एक कोध ब्रज-नारि।
छाँड़ि सकुच सब देति परस्पर, अपनी भाई गारि ॥
मिलि दस-पाँच अली चलि कृष्नहिं गहि लावतिं अचकाइ।
भरि अरगजा अबीर कनक-घट, देतिं सीस तैं नाइ ॥
छिरकतिं सखी कुमकुमा केसरि, भुरकतिं बंदन-धूरि।
सोभित है तनु, साँझ-समै घन आए हैं मनु पूरि ॥
दसहूँ दिसा भयौ परिपूरन, सूर सुरँग प्रमोद।
सुर बिमान कौतूहल भूले निरखत स्याम-बिनोद ॥१५४॥

हरि सँग खेलन फगु चली।
चोवा चंदन अगर अरगजा छिरकतिं नगर गली ॥
राती पीरी अँगिया पहिरे, नव तन झूमक सारी।
मुख तमोर, नैननि भरि काजर, देहिं मावती गारी ॥
रितु बसंत आगम रति नायक जोबन भार भरी ॥
देखन रूप मदनमोहन कौ मंद दुवार खरीं ॥
कहि न जाइ गोकुल की महिमा घर-घर बीथिन माँहीं।
सूरदास सी कमी करि बरनै, जो सुख तिहुँ पुर नाहीं ॥१५५॥

खेलत स्याम ग्वालिनि संग।
एक गावत एक नाचत इक करत बहु रंग ॥
बीन मुरज उपंग मुरली झाँझ, झालरि, ताल।
पढ़त होरी बोलि गारी, निरखि कै ब्रज-बाल ॥

देति परस्पर गारि मुदित मन, तरुनी बाल-सयानी।
सुर-पुर, नर पुर, नाग-लोक सब-बस लीला सुख पावै।
प्रथम बसंत पंचमी लीला, सूरदास जस गावै ॥१३०॥

पिय प्यारी खेलैं जमुन-तीर। भरि केसरि कुमकुम अरु अबीर।
घसि मृगमद चंदन अरु गुलाल। रँग भीने अरगज बस्त्र माल॥
कूजत कोकिल कल हंस मोर। ललितादिक स्यामा एक ओर॥
इ दादिक मोहन लई ओर। बाजै ताल मृदंग रबाब घोर॥
प्रभु हँसि कै गेंदुक दई चलाइ। मुख पट दै राधा गई बचाइ॥
ललिता पट-मोहन गह्यौ धाइ। पीतांबर मुरली लई छिड़ाइ॥
हौ सपथ करी छाँड़ौं न तोहिं। स्यामा जू आज्ञा दई मोहिं॥
इक निज सहचरी आई बसोठि। सुनि री ललिता तू भई ढीठि।
पट छाँड़ि दियौ तब नव किसोर। छबि रीझि सूर तृन दियौ तोर।

खेलत नवल किसोर-किसोरी।
नंद नँदन वृषभानु सुता चित लेत परस्पर चोरी॥
चाँरी सखी-आम्र बन सोभित सकल ललित घन गोरी।
तिनकी नख-सीमा देखत हीं, तरनिनाथ मति भोरी॥
एक गुलाल अबीर लिये कर इक चंदन, इक रोरी।
उपरा ऊपरि छिरकि रस-भरि कुम की परिभिति थोरी॥
देति असीस सकल ब्रज-जुवती जुग-जुग अबिचल जोरी।
सूरदास उपमा नहिं सूझत औ कछु कहौं सु थोरी ॥१३१॥

तेरैं आवैगो आजु सखी, हरि, खेलन को फागु री।
सगुन सँदेसौ हौं सुन्यौ तेरैं आँगन बोलै काग री॥
मदनमोहन तेरैं बस माई, सुनि राधे बड़भाग री।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, का सोवै, उठि जाग री॥
चोवा चंदन लै कुमकुम अरु केसरि पैयाँ लाग री।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं राधा अचल सुहाग री ॥१३२॥

हरि-सँग खेलति हैं सब फाग।
इहिं मिस करति प्रगट गोपी, उर-अंतर कौ अनुराग ॥
सारी पहिरि सुरँग कसि कंचुकि काजर दै-दै नैन।
बनि-बनि निकसि निकसि भई ठाढ़ी, सुनि माधौ के बैन ॥
डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुआरि बाजत ताल-मृदंग ॥
अति आनंद मनोहर बानी, गावत उठति तरंग ॥
एक कोध गोबिंद ग्वाल सब एक कोध ब्रज-नारि।
छाँड़ि सकुच सब देति परस्पर अपनी भाई गारि ॥
मिलि दस-पाँच अली चलि कृष्नहिं गहि लावतिं अचकाइ।
भरि अरगजा अबीर कनक-घट देतिं सीस तैं नाइ ॥
छिरकतिं सखी कुमकुमा केसरि, भुरकतिं बंदन-धूरि।
सोभित हैं तनु साँझ-समै घन आए हैं मनु पूरि ॥
दसहूँ दिसा भयौ परिपूरन सूर सुरंग प्रमोद।
सुर बिमान कौतूहल भूले निरखत स्याम-बिनोद ॥३४॥

हरि सँग खेलन फागु चली।
चोवा चंदन अगर अरगजा, छिरकतिं नगर गली ॥
राती पीरी अँगिया पहिरे नव तन झूमक सारी।
मुख तमोर, नैननि भरि काजर, देहिं भावती गारी ॥
रितु बसंत आगम रति नायक, जोबन मार भरी ॥
देखन रूप मदनमोहन कौ नंद दुवार खरी ॥
कहि न जाइ गोकुल की महिमा घर-घर बीथिनि माँहीं।
सूरदास सो क्यौं करि बरनै, जो सुख तिहूँ पुर नाहीं ॥३५॥

खेलत स्याम ग्वालिनि संग।
एक गावत एक नाचत, एक करत बहु रंग ॥
बीन मुरज उपंग मुरली झाँझ, झालरि, ताल।
पढ़त होरी बोलि गारी, निरखि कै ब्रज-बाल ॥

कनक-कलसनि घोरि केसरि, कर लिये ब्रजनारि।
जबहिं आवत देखि तरुनी, भजत हैं किलकारि॥
दुरि रही इक ओरि ललिता, उततैं आवत स्याम।
भरे भरि अँकवारि औचक, धाइ आई बाम॥
बहुत ढीठी है रहे हौ, जानिही अब आजु।
राधिका दुरि हँसति ठाढ़ी निरखि पिय मुख लाज॥
लियौ छाँड़ि मुरलि कर तैं, कोउ गह्यौ पट पीत।
सीस बेनी गूँथि लोचन आँजि करी भतीत॥
गए कर तैं छुटकि मोहन, नारि सब पछितानि।
सीस धुनि कर मीजि बोलति, सखी लै गए भाँति॥
दाउँ हम नहिं लैन पायौ, बसन लीनी लाल।
सूर प्रभु कहँ जाहुगे अब हम परी इहिं ख्याल॥१२६॥

मोहन गए आजु तुम जाहु दाँव हम लेहिंगी हो।
माखन हमहिं करे बेहाल, बदले फल देहिंगी हो॥
आजुहिं दाँव आपनी लैहौं भले गए हौ भागि।
हा हा करते पाइनि परते, लेहु पितंबर माँगि॥
बेनी छोरत हँसत सखा सँग, कहत लेहु पट आइ।
सौंह करत हौ नंद बबा की अपनी अपति कराइ॥
जौ मैं लेहुँ पितांबर अबहीं, कहा देहुगे मोहिं।
इत उत जुवती चितवन लागीं, रही परस्पर जोहि॥
एक समय हरि तिया-रूप करि, पठै दियौ तिन पास।
गयौ तहाँ मिलि संग तियनि कै, हँसत देखि पट-बास॥
मोहिं देहु, राखौं दुराइ कै, स्यामहिं जनि लै देहु।
लियौ दुराइ गोद मैं राख्यौ दाँव आपनी लेहु॥
पितांबर जनि देहु स्याम कौं यह कहि चमक्यौ ग्वाल।
सूर स्याम पट फेरत कर सौं चकित निरखि ब्रज-बाल॥१२७॥

नंद-नँदन वृषभानु-किसोरी मोहन राधा खेलत होरी।
श्रीवृंदावन अतिहिं उजागर, वरन वरन नव दंपति भोरी॥
एकनि कर है अगरु कुमकुमा, एकनि कर केसरि लै घोरी।
एक अर्थ सौं भाव दिखावति नाचति तरुनि-बाल-वृष-भोरी॥
स्यामा उतहिं सकल ब्रज-बनिता इतहिं स्याम रस रूप लसी री।
कंचन की पिचकारी छूटति, छिरकत ज्यौं सचु पावैं गोरी॥
अतिहिं ग्वाल दधि-गोरस मातें गारी देत कही न करौं री।
करत दुहाई नंदराइ की लै जु गयौ कल बल छल जोरी॥
झुंडनि जोरि रही चंद्रावलि गोकुल मैं कछु खेल मच्यौ री।
सूरदास-प्रभु फगुवा दीजै चिरजीवौ राधा वर जोरी॥३९८॥

रूप जोबन आगी हेली।
चलहु चलहु जैयै तहँ री, जहँ खेलत स्याम-सहेली॥
जहँ घन सुंदर साँवरो नहिं मिस पैलन-पाउँ।
ये गुरुजन बैरी भए कीजै कौन उपाउ॥
आवहु चकरा मेलियै मन की दीहि बिसारि।
लै देहिं हसकौं चढ़े देखौं रूप निहारि॥
औचक गागरि डारियै जमुना जल कै काज।
इहिं मिस बाहिर निकरि कै, जाइ मिलैं ब्रजराज॥
राग रंग रँगि मँगि रह्यौ नंदराइ दरबार।
गावति मक्का गुवारिनी, नाचत सखा गुवार॥
घरी घरी आनंद करि जीवन जानि असार।
लाज छाँड़ि हँसि खेलियै फाग बड़ौ त्यौहार॥
मुरली मुकुट बिराजही, कटि पट राजत पीत।
सूरज प्रभु आनंद सौं गावत होरी गीत॥३९९॥

गोकुलनाथ बिराजत डोल।
संग लिये वृषभानु-नंदिनी पहिरे नील निचोल॥

कंचन खचित लाल मनि मोती, हीरा जटित अमोल।
झुलवहिं झूम मिलैं ब्रज-सुंदरि, हरषित करतिं कलोल॥
खेलतिं, हँसति परस्पर गावतिं, बोलतिं मीठे बोल।
सूरदास-स्वामी पिय-प्यारी, झूलत हैं झकझोल॥१४०॥

झूलत नंदनंदन डोल।

कनक-खंभ जराइ पटुली लगे रतन अमोल॥
सुभग सरस सुदेस बाँधी रची बिधना गोल।
मनौ सुरपति सुर-सभा तैं, पठै दियौ हिंडोल॥
जबहिं झोंकत तबहिं कंपति, बिहँसि लगति कपोल।
त्रिदस-पति सखि चढ़ि बिमाननि निरखि दै दै ओल॥
थके मुख कछु कहि न आवै, सकल मघ-छव झोल।
सखी भवसव साज कीन्हे बदति मधुरे बोल॥
मथ्यौ रतिपति देखि यह छबि, भयौ बहु भ्रम मोल।
सूर यह सुख गोप गोपी, पियत अमृत कलोल॥१४१॥

—(*)—

## ( ख ) मुरली-माधुरी

जब हरि मुरली अधर धरत।
थिर चर चर थिर, पवन थकित रहैं जमुना-जल न बहत।
खग मोहैं, मृग-जूथ भुलाहीं निरखि मदन-छबि छरत।
पसु मोहैं, सुरभी बिथकित, तृन दंतनि टेकि रहत।
सुक सनकादि सकल मुनि मोहैं, ध्यान न तनक गहत।
सूरदास भाग हैं तिनके, जे या सुखहिं लहत ॥१४२॥

( कहौं कहा ) अंगनि की सुधि बिसरि गई।
स्याम-अधर मृदु सुनत मुरलिका चकित, नारि भई।
जो जैसैं सो तैसैं रहि गई सुख दुख कह्यौ न जाइ।
लिखी चित्र सी सूर ह्वै रहीं इकटक पल बिसराइ ॥१४३

बंसी री बन कान्ह बजावत।
आनि सुनौ स्रवननि मधुरे सुर, राग मध्य लै नाम बुलावत।
सुर स्रुति तान बँधान अमित अति सप्त अतीत अनागत आवत।
जुरि जुग भुज सिर, सेष सीस मथि बदन-पयोधि, अमृत उपजावत
मनौ मोहिनी भेष धारि कै, मन मोहत मधु पान प्यावति।
सुर-नर-मुनि बस किए राग-रस अधर-सुधा-रस मदन जगावत।
महा मनोहर नाद, सूर थिर चर मोहे, कोउ मरम न पावत।
मान्हौं मूक मिठाई के गुन कहि न सकत मुख, सीस डुलावत ॥

बाँसुरी बजाइ आछे रंग सौं मुरारी।
सुनि कै धुनि छूटि गई, संकर की तारी।
वेद पढ़न भूलि गए, ब्रह्मा ब्रह्मचारी।
रसना गुन कहि न सकै, ऐसी सुधि बिसारी।
इंद्र-सभा थकित भई लगी जब करारी।
रंभा कौ मान मिट्यौ भूली नृतकारी।
जमुना जू थकित भई नहीं सुधि सँभारी।
सूरदास मुरली है तीन-लोक प्यारी ॥१४५॥

बंसी बनराज आजु आई रन जीति।
मेटति है अपने बल, सबहिनि की रीति।
बिडरे गज-जूथ-सील, सैन-लाज भाजी।
घूँघट-पट-कोट टूटे, छूटे दृग ताजी॥
काहूँ पति-गेह तजे, काहू तन प्रान।
काहूँ सुख सरन लयौ, सुनत सुजस गान॥
कोउ पग परसि गए, अपने-अपने देस।
कोउ रस रंक भए, हुते जे नरेस।
देत मदन मारुत मिलि दसौं दिसि दुहाई।
सूर श्रीगुपाल लाल बंसी-बस माई ॥१४६॥

जब तैं बंसी स्रवन परी।
तबहीं तैं मन और भयौ सखि, मो तन-सुधि बिसरी।
हौं अपनैं अभिमान रूप, जोबन कैं गर्ब भरी।
नैंकु न कह्यौ कियौ सुनि सजनी, बादिहिं आइ डरी।
बिनु देखैं अब स्याम मनोहर, जुग भरि जात घरी।
सूरदास सुनि आरज-पथ तैं कछू न चाड़ सरी ॥१४७॥

मुरली धुनि स्रवन सुनत, भवन रहि न परै।
ऐसी को चतुर नारि, धीरज मन धरै।

सुर-नर-मुनि सुनत सुधि न सिव-समाधि टरै।
अपनी गति तजत पवन, सरिता नहिं ढरै।
मोहन-मुख मुरली मन मोहिनि बस करै।
सूरदास सुनत स्रवन सुधा-सिंधु भरै ॥६४८॥

( माई री ) मुरली अति गर्व काहु बदति नाहिं आजु।
हरि के मुख कमल-देस पायौ सुख-राजु।
बैठति कर पीठि ढीठि, अधर-छत्र-छाँहि।
राजति अति चँवर चिकुर, सुरद सभा माँहि।
जमुना कौ जलहिं नाहिं जलधि जान देति।
सुरपुर तैं सुर बिमान यहं बुलाइ लेति।
स्थावर चर, जंगम जड़, करति जीति जीति।
बिधि की बिधि मेटि, करति अपनी नई रीति।
बंसी बस सकल सूर, सुर-नर-मुनि-नाग।
श्रीपति हूँ श्री बिसारी, पाही अनुराग ॥६४९॥

मुरली मोहे कुँवर कन्हाई।
अचवति अधर-सुधा बस कीन्हे अब हम कहा करैं री माई।
नरपस सैं हरि परयौ सपनि कौ आसर देति न होति अघाई।
गाजति, बाजति चढ़ी दुहुँ कर अपने सब्द न सुनत पराइ।
जिहिं तन अनल दह्यौ अपनौ कुल तासौं कैसैं होत भलाई।
अब सुनि सूर कौन बिधि कीजै बन की ब्याधि माँझ घर आई॥

मुरली तऊ गुपालहिं भावति।
सुनि री सखी जदपि नँदलालहिं, नाना भाँति नचावति।
राखति एक पाइ ठाढ़ौ करि, अति अधिकार जनावति।
कोमल तन आज्ञा करवावति, कटि टेढ़ौ ह्वै आवति।
अति आधीन सुजान कनौड़े गिरिधर-नार नवावति।
आपुन पौढ़ि अधर-सज्जा पर, कर पल्लव पलुटावति।

भृकुटी कुटिल नैन नासा-पुट हम पर कोप करावति।
सूर प्रसन्न जानि एकौ छिन, धर तैं सीस डुलावति ॥६२१॥

सखी री, मुरली लीजै चोरि।
जिनि गुपाल कीन्हे अपनैं बस प्रीति सबनि की तोरि।
छिन इक घर-भीतर, निसि-बा र, धरत न कबहूँ छोरि।
कबहूँ कर, कबहूँ अधरनि कटि कबहूँ खोंसत जोरि।
ना जानौं कछु मेलि मोहिनी, राखे अँग-अँग भोरि।
सूरदास प्रभु कौ मन सजनी, बँध्यौ राग की डोरि ॥६२२॥

मुरली कौन सुकृत फल पाए।
अधर-सुधा पीवति मोहन कौ सबै कलंक गँवाए।
मन कठोर तन गाँठि प्रगट ही छिद्र बिसाल बनाए।
अंतर सून्य सदा, देखियति है निज कुल-धर्म सुभाए।
लघुता अंग नहीं कछु करनी, निरखत नैन लगाए।
सूरदास प्रभु पानि परसि नित, काम-केलि अधिकाए ॥६२३॥

जीती जीती है रन बंसी।
मधुकर सूत बदत बंदी पिक मागध मदन प्रसंसी।
मथ्यौ मान-बल-दर्प महीपति, जुवति-जूथ गहि आने।
ध्वनि-कोदंड ब्रह्मंड भेद करि, सुर-सन्मुख सर ताने।
ब्रह्मादिक, सिव, सनक-सनंदन बोलत जै-जै-बाने।
राधा-पति सर्बस अपनौ दै पुनि ता हाथ बिकाने।
खग-मृग-मीन सुमार किये सब जड़ जंगम जित जेव।
छाजन छुटे मद मीद कवच कटि छूटे नैन निमेष।
अपनी अपनिहिं ठकुराइति की काढ़ति हैं गुन रेष।
पैठी पानि पीठि गर्जति है, देति सबनि अवसेष।
रवि कौ रथ लै दियौ सोम कौ, षट-दस कला समेत।
रच्यौ प्रपंच रमन-गाम राजनु, वृंदा बिपिन-निकेत ॥

दान-मान परधान प्रेम-रस बढ़यौ माधुरी देत।
अधिकारी गोपाल तहाँ हैं, सूर सबनि सुख देत ॥१५४॥

रीझत ग्वाल रिझावत स्याम।
मुरलि बजावत, मथनि सुनावत, सुबल सुदामा लै-लै नाम ॥
हँसत सखा सब तारी दै-दै, नाम हमारौ मुरली लेत।
स्याम कहत अब तुमहूँ बुलावहु अपने कहें ग्वालनि देत ॥
मुरली लै-लै सबै बजावत, काहू पै नहिं आवै रूप।
सूर स्याम तुम्हारे मुख बाजत कैसैं देखौ राग अनूप ॥१५५॥

अधर-रस मुरली लूटन लागी।
जा रस कौं षट रितु तप कीन्हौ, सो रस पियति सभागी ॥
कहाँ रही, कहँ तें इह आई, कौनैं याहि बुलाई।
चकित भईं कहति ब्रजबामिनि, यह तौ भली न आई ॥
सावधान क्यौं होति नहीं तुम, उपजी बुरी बलाइ।
सूरदास-प्रभु हम पर ताकौं, कीन्हौ सौति बजाइ ॥१५६॥

मुरली स्याम अधर नहिं टारत।
बारंबार बजावत, गावत, कर तें नहीं बिसारत ॥
यह तौ अति प्यारी है हरि की कहति परस्पर नारी।
याकैं बस्य रहत हैं ऐसे, गिरि-गोबर्धन-धारी।
अटकि रहत मुरली पर ठाड़, राखत ग्रीव नवाइ।
सूर स्याम बस याकैं डोलत पलक नहीं बिसराइ ॥१५७॥

मुरली कैं बस स्याम भए री।
अधरनि तें नहिं करत निनारी याकैं रंग रए री ॥
रहत सदा तन-सुधि बिसराए, कहा करन धौं चाहति ॥
देखौ सुनौ न भई आजु लौं बास बँसुरिया दाहति ॥
स्यामहिं निदरि, निदरि हमहूँ कौं, अबहीं तें यह रूप।
सुनहु सूर हरि कौ मुहँ पाएँ, बोलति बचन अनूप ॥१५८॥

मुरली स्याम कहाँ तें पाई ।
करत नहीं अधरनि तें न्यारी, कहा ठगौरी लाई ॥
ऐसी ढीठि मिलतहीं ह्वै गई, उनके मनहीं भाई ।
हम देखत वह पियत सुधा-रस, ऐसी री अधिकाई ।
कहा भयौ मुँह लागी हरि कैं, बचननि लिये रिझाई ।
सूर स्याम कौं विवस करावति कहा सौति सो भाई ॥६५६॥

स्याम मुरली के रंग ढरे ।
कर-पल्लव ताकौं बैठावत, आपुन रहत खरे ॥
बारंबार अधर-रस प्यावत उपजावत अनुराग ।
ते बस करत देव-मुनि-गंध्रब ते करि मानत भाग ।
बन में रहति परी को जानै, कब आनी धौं लाइ ।
सूरज प्रभु की बड़ी सुहागिनि, उपजी सौति बजाइ ॥६६०॥

मुरली भई सौति बजाइ
कहूँ बन मैं रहति डारी ताहि यह सुधराइ ॥
पवन ही हरि रिझै लीन्हे, अधर पूरत नाद ।
दिनहिं दिन अधिकानि लागी, अब करैगी बाद ॥
सुनहुँ री इहिं दूरि कीजै, यहै करौ बिचार ।
अबहि तें करनी करी यह, बहुरि करा लगार ।
ढंग याके भले नाहीं, बहुत गई डराइ ।
सूर स्याम सुजान रीझे, देह-गति बिसराइ ॥६६१॥

मुरली दूरि कराऐं बनिहै ।
अबही तें ऐसे ढंग याके बहुरि काहि वह गनिहै ।
लागी यह कर पल्लव बैठन दिन-दिन बाढ़ति जाति ।
अपही तैं सुम सजग होहु री, मैं जु कहति अकुलाति ।
यह ब्रज में नहिं भली बात है, देखौ हृदय बिचारि ।
सूर स्याम वाही के ह्वै गए सब ब्रजनारि ॥

अबही तैं हम सबनि बिसारी।
ऐसे बस्य भए हरि वाके जाति न दसा बिचारी॥
कबहूँ कर-पल्लव पर राखत, कबहूँ अधर लै धारी।
कबहूँ लगाइ लेत हिरदै सौं, नैंकहुँ करत न न्यारी॥
मुरली स्याम किए बस अपनैं, जे कहियत गिरिधारी।
सूरदास प्रभु कैं तन-मन-धन, बाँस बँसुरिया प्यारी॥१६३॥

मुरली हरि कौं भावै री।
सदा रहति मुख ही सौं लागी, नाना रंग बजावै री॥
छहौ राग छत्तीसौ रागिनि, इक इक नीकैं गावै री।
जैसेहिं मन रीझत है हरि कौ, तैसेहिं भाँति रिझावै री।
अधरनि कौ अमृत पुनि अँचवति, हरि कै मनहिं चुरावै री।
गिरिधर कौं अपनैं बस कीन्हे नाना भाव नचावै री॥
तनकौ मन अपनौ करि लीन्हौ भरि-भरि बचन सुनावै री।
सूरज प्रभु ढिग तैं कहि काकौ, ऐसौ कौन टगावै री॥१६४॥

मुरली हम कहँ सौति भई।
नैंकु न होति अधर तैं न्यारी जैसैं बपा बई॥
इहै अँचवति, चहैं हारति लै-सी जस-पस-बननि भई।
जा रस कौं ब्रत करि तनु गार्‌यौ कीन्ही दई-दई॥
पुनि-पुनि लेति सकुच नहिं मानति ऐसी भई दई।
कहा धरै बद बाँस साँस की, आस निरास गई॥
ऐसी कहूँ गई नहिं देखी, जैसी भई नई।
सूर बचन याके टोना से, सुनत मनोज अई॥१६५॥

बाँसुरी बिधि हू तैं परबीन।
कहियै काहि आहि को ऐसी कियौ जगत आधीन॥
चारि बदन उपदेस बिधाता थापी थिर चर-नीति।
आठ बदन गरजति गरबीली, क्यौं चलिहै यह रीति॥

बिपुल बिभूति लही चतुरानन एक कमल करि थान।
हरि-कर-कमल जुगल पर बैठी, बाढ़यौ यह अभिमान॥
एक बार श्रीपति के सिखएँ, उन आपौ गुरु ज्ञान।
याकैं तौ नँदलाल लाड़िली लाग्यौ रहत निज ध्यान॥
एक मराल-पीठि आरोहन, बिधि भयौ प्रबल प्रसंस।
इन तौ सकल बिमान किये, गोपी-जन-मानस हंस॥
श्री बैकुंठनाथ पुरबासी, आदरत जा पद रेनु।
ताकौ मुख सुखमय सिंहासन, करि बैठी यह बेनु॥
अधर-सुधा पी कुल ब्रत टारयौ, लही सिखा नहिं ताग।
तदपि सूर या नँद-सुवन कौं, याही सौं अनुराग॥६६६॥

मुरली नहिं करत स्याम अधरनि तैं न्यारी।
ठाढ़े हैं एक पाइ रहत तनु त्रिभंग करत भरत नाद, मुरली सुनि पस्य पुहुमि भारी॥
थावर चर चर थावर जंगम जड़ जड़ जंगम सरिता उलटै प्रवाह, पवन थकित भारी।
सुनि सुनि मुनि थकित तान खेद गए हैं पषान, तरु डोंगर थावर खग-मृगनि सुधि बिसारी॥
उकठे तरु भए पात पाथर पर कमल जात, आरत पय तज्यौ नाद व्याकुल नर-नारी।
रीझे प्रभु सूर स्याम बंसी-रव सुनत बाम, बासरहूँ काम नहीं जाति कतहूँ टारी॥६६७॥

यह मुरली मोहिनी कहावै।
सब सुरनि मधुरी करि मानी जल-थल-जीव रिझावै॥
नहिं रिझए सुर-असुर कपट रचि, तिनकौ बस्य करावै।
पुनि एकै हर मन हर अमृत आपु अँचै अँचवावै॥
याके गुन ये सब सुख पावत हमकौ बिरह बढ़ावै।
सूरदास याकौ यह करनी स्यामहिं नीकें भावै॥६६८॥

मुरली तैं हरि हमहिं बिसारी।
बन की ब्याधि कहा यह आई, देति सबै मिलि गारी।
घर-घर तैं सब निठुर कहाई महा अपत यह नारी।
कहा भयौ जो हरि-मुख लागी अपनी प्रकृति न टारी।
सकुचति ही याकौं तुम आगैं, कहौ न बात उघारी।
नौखी सौति भई यह हमकौं और नहीं कहुँ क्वारी।
इन्हूँ तैं कोउ निठुर कहावति जो आई कुल जारी।
सूरदास ऐसी को त्रिभुवन जैसी यह बनचारी॥१६९॥

सुनहु री मुरली की उतपत्ति।
बन में रहति, बाँस कुल याकौ यह तौ याकी जाति।
जलधर पिता धरनि है माता, अवगुन कहौं उघारि।
बनहूँ तैं याकौ घर न्यारौ निपटहिं जहाँ उजारि।
इक तैं एक गुननि हैं पूरे मातु पिता अरु आपु।
नहिं जानियै कौन फल प्रगट्यौ अतिहीं कृपा प्रतापु।
बिसवासिनि पर-काज न जानै, याकै कुल कौ धर्म।
सुनहु सूर मेघनि की करनी अरु धरनी के कर्म॥१७०॥

सुनहु सखी याके कुल-धर्म।
जैसोइ पिता मातु तैसी अब देखी याके कर्म।
वै बरषत धरनी संपूरन सर सरिता अवगाह।
चातक सदा निरास रहत है, एक बूँद की चाह।
धरनी जनम देति सबही कौं आपुन सदा कुमारी।
उपजत फिरि ताही मैं बिनसत छोह न कहुँ महतारी।
ता कुल मैं यह कन्या उपजी, याके गुननि सुनाऊँ।
सूर सुनत सुख होइ तुम्हारे मैं कहिकै सुख पाऊँ॥१७१॥

मातु-पिता गुन कही बुझाई।
अब याहू के गुन सुनि लेहु न जातैं सकल सिराई।

उनके वै गुन, निठुर कहावत मुरली के गुन देखी।
तब याकौ तुम औगुन मानौ सब कछु अचरज पेखौ।
जा कुल में उपजी वा कुल कौं जारि करत है छार।
उनहीं तन में अगिनि प्रकासति, ऐसी याकौ म्हार।
यह जौ स्याम सुनें स्रवननि भरि, कर तैं देहिं डारि।
सूरदास प्रभु धोखैं याकौं राखति अधरनि धारि ॥१७२॥

हम तप करि तनु गारयौ जाकौं।
सो फल तुरत मुरलिया पायौ, करी कृपा हरि ताकौं।
कपट कुटिल और नहिं कोई, जैसे हैं ब्रजराज।
जो सन्मुख सौ विमुख कहावै, विमुख करै सुखराज।
बूझि बात नंद-नंदन की मुरली कै रस पागी।
सूर अधर रस आहि हमारौ ताकौं बकसन लागी ॥१७३॥

मुरली हम सौं बैर बढ़ायौ।
चली निपट इतराइ मैकुहीं हरि अधरनि परसायौ।
फूली फिरति स्याम-कर बैठी अतिहीं गर्व बढ़ायौ।
ज्यौं निधनी धन पाइ अथामक नैन अकास चढ़ावौ।
सूर स्याम देखत सिहात हैं, ताकौं गाइ रिझयौ।
त्रिभुवन-पति श्रीपति जे कहावत तिन मुरली बस पायौ १७४

मुरली अति चली इतराइ।
अक्षय निधि जिनि छूनि पाई, क्यौं नहीं सतराइ॥
आदि जौ पद बड़ी होती, चलति सीस नवाइ।
सवनि कौं है संग चलतो दौरि मिलती धाइ।
बाँस तैं उत्पत्ति जाकी कहा बुधि ठहराइ।
सूर प्रभु ता बस्य कैसैं, रहे तनु बिसराइ ॥१७५॥

मुरली पर्व पर अति प्यारी।
यद्यपि नाना भाँति नचावति, सुख पावत गिरिधारी।

रहत हजूर एक पग ठाढ़े मानत है अति त्रास।
कर तैं कबहुँ नैकु नहिं टारत सदा रहत ता पास॥
बारंबार देति आयसु हरि पर राजति अधिकार।
सूर स्याम कौं अपबस कीन्हौ, रहत यही मनभार॥१०७६॥

बड़े की मानियै भी कानि।
कहा ओछे की बड़ाई आहि ओछी बानि॥
बड़ी निदरै नाहिं काहूँ, ओछोई इतराइ।
नीर-नारी नीचे ही ज्यौं चलै जैसैं धाइ।
रही बन मैं मरहिं ब्याप महा बुरी बलाइ।
निदरि कै यह सबनि कैसी लीति उपजी आइ॥
दिनहिं दिन अधिकार पाइयौ औंगि रहत कन्हाइ।
सूरदास उपाधि बिधना कहा रची बनाइ॥१०७७॥

मुरली की सरि कौन करै।
नंद-नंदन त्रिभुवन-पति नागर सो जो बस्य करै॥
जबही जब मन आवत तब तब अधरनि पान करै।
रहत स्याम आधीन सदाई आयसु तिनहिं करै।
ऐसी भई मोहिनी माई, मोहन मोह करै।
सुनहु सूर याके गुन ऐसे ऐसी करनि करै॥१०७८॥

मुरली मोहिनी अब भई।
करि सु करनि दैव-अनुमति मति, बहु बिधि फेरि ठई।
उन पय-निधि हम ब्रज-सागर मथि पाई पीयूष नई।
अधर-सुधा हरि-बदन इंदु की हरि छबि छीनि लई॥
आपु अँचै अँचवाइ सकल सुर कीन्हें दिगबिजई।
पलकहिं पुट बच अमृत सुर, इत मदिरा मदन-मई॥१०७९॥

मुरलिया स्यामहिं और कियौ।
औरै दसा, और मति ह्वै गई और बिबेक हियौ॥

जब तैं निठुर भए हरि हमसौं, तब तैं ठाठ ठई ।
निसि दिन हम बन संगहिं रहती, मनु ह्वै गई नई ।
इहिं बौरे करि डारे भारे, हम कहैं दूरि करी ।
घर कौ बन, बन को घर कीन्हौ, सूर सुजान हरी ॥१८०॥

सजनी, स्याम सदाई ऐसे ।
एक अंग की प्रीति हमारी वै जैसे के तैसे ॥
ज्यौं चकोर की चाहै, चंदा नैंकु न मानै ।
जल के तीर मीन तन त्यागै, नीर निठुर नहिं जानै ।
ज्यौं पतंग लहि परै ज्योति तकि, ताकै नैंकु न भावै ।
चातक रटि-रटि जनम गँवावै, जल पै ढारस आवै ।
कबहूँ तें निर्दयी बड़े वै, तेसिये मुरली पाई ।
सूर स्याम जैसे तैसी वह, भली बनी अब माई ॥१८१॥

मुरली कौ मन हरि सौं मान्यौ ।
हरि कौ मन मुरली सौं मिलि गयौ, जैसैं पय जल सान्यौ ।
जैसैं चोर चोर मौं राचै, ठग ठग परखै जानि ।
कुटिल कुटिल मिलि चलैं एक ह्वै, दुहुनि बनी पहिचानि ।
वै बन बन नित धेनु चरावत यह बनही की आहि ।
सूर गई चोरी विधना की, जैसी तैसी ताहि ॥१८२॥

काहैं न मुरली सौं हरि जोरैं ।
काहैं न अधरनि धरैं सु पुनि-पुनि, मिली अचानक भोरैं ॥
काहैं नहीं ताहि कर धारैं, क्यौं नहिं ग्रीव नवावैं ।
काहैं न तनु त्रिभंग करि राखैं, ताके मनहिं चुरावैं ॥
काहैं न यौं आधीन रहैं ह्वै, वै अहीर, वह धेनु ।
सूर स्याम कर तैं नहिं टारत, बन-बन चारत धेनु ॥१८३॥

सजनी, अब हम समुझि परी ।
अंग-अंग उपमा जो हरि के कबिता बनै धरी ॥

नव जलधर तन कहियत सोभा, दामिनि पट फहरी ।
भौंहर कुटिल कुंतल की सोभा सो हम सही फरी ॥
मुख-छवि ससि-पटतर तनि दीन्ही, यह सुनि अधिक डरी ।
सूर सहाइ भई यह मुरली अपनैं कुम्हिं भरी ॥१८४॥

बिधना मुरली सौति बनाई ।
कुटिल बाँस की बंस-बिनासिनि, भास निरास कराई ॥
जौ यह ठाट ठटितौहि राख्यौ, कुल की होती खोड़ ।
तौ इतनी दुख हमहिं न होती औगुन-आगर दोऊ ॥
ये निरदई निठुर वह बन की घर अब भयौ प्रकास ।
सूरदास ब्रजनाथ हमारे तै से भए उदास ॥१८५॥

अब मुरली-पति क्यों न कहावत ।
राधा पति काहे कौं कहियै सुनत लाज जिय आवत ॥
यह अनजाति नाउँ सुनि हमरी इत हमकौं नहिं भावत ।
कै मिलि चलैं फेरि हमही कौं कै बनहीं छिन छावत ॥
काहे कौं ह्वै नाथ कहत हैं, अपनी बिपति कराचत ।
सुनहु सूर यह कौन भलाई हँसि-हँसि बैर बढ़ावत ॥१८६॥

और कहौ हरि सौं समुझाइ ।
अब यह दुबिधा काहें राखत, याही मिलियै जाइ ॥
हम अपनी मन निठुर करायौ बात तुम्हारें हाथ ।
भली भई अब सकुचन लागे, कवि गावत ब्रजनाथ ॥
अब मुरलीपति नाइ कहावहु, यह बाँसी तुम साठ ।
सूरदास प्रभु नई चतुराई, मुरली पढ़ये पाठ ॥१८७॥

सजनो मन सिरत तैं हरि छोटे ।
ये गुन तबहीं तैं जानति हम, अब अननी करै छोटे ॥
भँवर हरे जाइ जमुना तट, राखे कदम चढ़ाइ ।
तब के चरित भये जानति हौ, कीन्ही निलज बनाइ ॥

अब हम तप करि करि तनु गारयौ, अधर-सुधा-रस काम।
सो मुरली निदरे अँचवति है, ऐसे हैं ब्रजराज॥
हमकौं यौ, औरनि कौं ऐसे, निदरक दीन्हौ डारि।
सूर इते पर चतुर कहावत, कहा दीजियै गारि॥१८८॥

यह हमकौं बिधना लिखि राख्यौ।
नाहैं न गाइँ, कहाँ तैं आई स्याम अधर-रस चाख्यौ॥
यह दुख कहैं काहि, को जाने, ऐसौ कौन निवारै।
जा रस धरयौ कृपिन की नाईं सो सब ऐसैंहि डारै॥
यह दूषन याही कौ कहियै की हरिहू कौं दीजै।
सुनहु सूर कछु बच्यौ अधर-रस सो कैसैं करि लीजै॥१८९॥

मुरलिया कपट चतुराई ठानी।
कैसैं मिलि गई नंद-नँदन कौं, उन नाहिंन पहिचानी॥
इक वह नारि बचन मुख मीठे, सुनत स्याम ललचाने।
जाति-पाँति की कौन चलावै वाके रँग भुलाने।
जाकौ मन मानत है जासौं सो तहँई सुख मानै॥
सूर स्याम वाके गुन गावत वह हरि के गुन गानै॥१९०॥

अधर-रस मुरली लूट करावति।
आपुन बार-बार लै अँचवति, जहाँ-तहाँ ढरकावति॥
आजु महा चढ़ि बाजी वाकी जाइ जोइ करै बिराजै।
कर-सिंहासन बैठि अधर सिर-छत्र धरे वह गाजै॥
गनति नहीं अपने बल काहूहिं, स्यामहिं डीठि कराई।
सुनहु सूर बन की बसवासिनि, ब्रज मैं भई रजाई॥१९१॥

सखी री माधौहिं दोष न दीजै॥
जो कछु करि सकियै, सोई सब या मुरली कौं कीजै॥
बार-बार बन बोलि मधुर धुनि अति प्रतीत उपजाई।
मिलि स्रवननि मन मोहि महा रस, तन की सुधि बिसराई॥

मुख मृदु वचन, कपट उर अंतर हम यह बात न जानी।
लोक-वेद-कुल छाँड़ि आपनी कोउ कोउ कहौ सु मानी ॥
अबहूँ वहै प्रकृति याके जिय, लुब्धक-संग ज्यौं माखी ।
सूरदास क्यों हूँ करुना मैं, परति नहीं अपराधी ॥११२॥

स्यामहिं दोष कहा कहि दीजै ।
कहा बात मुरली सौं कहियै सब अपनेहिं सिर लीजै ।
हमहीं कहति बजावहु मोहन, यह नाहीं तब जानी ॥
हम जानी यह बाँस बँसुरिया, को जानै पटरानी ॥
बारे तैं मुँह लागत-लागत अब ह्वै गई सयानी ।
सुनहु सूर हम भोरी भारी याकी अकथ कहानी ॥११३॥

मुरली कहै सु स्याम करैं री ।
वाही के बस भए रहत हैं वाकैं रँग ढरैं री ॥
घर-बन रैन-दिना सँग डोलत कर तैं करत न न्यारी ।
आई मन पछताइ यहै हमकौं कहा दीजियै गारी ॥
अब लौं रहे हमारे माई हरि अपने अब कीन्हे ।
सूर स्याम नागर यह नागरि, दुहुँनि मतौ करि लीन्हे ॥११४॥

मुरली हरि कौं नाच नचावति ।
एते पर यह बाँस बँसुरिया नँद-नँदन कौं भावति ॥
ठाढ़े रहत बस्य ऐसे ह्वै सकुचत बोलत बात ।
यह निदरे आज्ञा करवावति नैंकहुँ नाहिं सकात ॥
जब जानति आधीन भए हैं, देखत ग्रीव नवावत ।
पौढ़ति अधर चलित कर पल्लव रंध्र चरन पलुटावत ॥
हम पर रिस करि-करि अवलोकत नासा-पुट फरकावत ।
सूर-स्याम जब-जब रीझत हैं, तब-तब सीस डुलावत ॥११५॥

ग्वालिनि तुम कत उरहन देहु ?
पूछहु जाइ स्याम सुंदर कौं जिहिं मुख उपज्यौ सनेहु ॥

सम्मत ही तैं भई बिरत चित, तज्यौ गाउँ, गुन गेहु।
एकहिं पाउँ रही हौ ठाढ़ी, हिम ग्रीष्म रितु-मेहु॥
अगिनि सुलाकत मुरयौ न तन मन बिकट बनावत बेहु॥
बकवौं कहा बाँसुरी कहि कहि करि-करि तामस तेहु।
सूर स्याम इहिं भाँति रिझै, किन तुमहूँ अधर-रस लेहु॥११६

मैं अपनें बल रहति स्याम सग, तुम काहें दुख पावति री॥
मो पर रिस पावति हौ पुनि पुनि कछु आपुहिं बतरावति री॥
तुमहूँ क्यौ सुख मैं बरजति हौं, ऐसेहिं सोर लगावति री।
कहा करौं मोहिं स्याम निवाजो काहें न दूरि करावति री॥
वृथा बैर तुम करति निसादिन, आछौ जनम गैंवावति री।
सूर सुनहु ब्रजनारि सयानी मूरख हौ, समुझावति री।॥११७॥

मेरे दुख की और माहीं।
पट रितु सीत उष्न बरषा मैं ठाढ़े पाइ रही॥
कसकी नहीं नैंकहूँ काटत, घामैं राखी डारि।
अगिनि-सुलाक देत नहिं मुरकी बेह बनावत जारि॥
तुम जानति मोहिं बाँस बसुरिया अगिनि-छाप दै आई।
सूर स्याम ऐसैं तुम लेहु न, खिझति कहा हौ माई॥११८॥

स्रम करिहौ तब मेरी सी।
तब तुम अधर-सुधा रस बिलसहु मैं ह्वै रहिहौं चेरी सी॥
बिना कष्ट यह फल न पाइहौ जानति हौ अवडेरी सी।
पट रितु सीत तपनि तन गारौ बास बँसुरिया केरी सी॥
कहा मौन ह्वै ह्वै जु रही हौ, कहा करति अवसेरी सी।
सुनहु सूर मैं न्यारी ह्वैहौं अब देखौं तुम मेरी सी॥११९॥

मुरली सौं अधरनि पर गाजति।
कैसे बैठी तुहूँ करनि चढ़ि, अगुरी रंधनि राजति॥
स्यामहिं मिलि हम सबनि दिखावति नैंकु नहीं मन लाजति।
नाद सवाद मीत सौं उपजत, मधुरे मधुरे बाजति॥

कबहुँ मौन ह्वै रहति कबहुँ कछु भ्रमति, रहति नहिं हारति ।
सूर स्याम ताकौ सुर साजत यह उनहीं सौं भ्राजति ॥१०००॥

मुरली तप कियौ तनु गारि ।
नैकहुँ नहिं अंग मुरकी, सब सुलाकी भारि ।
सरद, ग्रीषम प्रबल पावस रही इक पग मारि ।
कटत हूँ नहिं अंग मोरयौ, साहसिनि अति नारि ।
रिझै लीन्हे स्याम सुंदर, देति ही कत गारि ।
सूर प्रभु बस करे हैं री गुननि कीन्ही प्यारि ॥१००१॥
मुरली जैसैं तप कियौ, तैसैं तुम करिहौ ।
षटरितु इक पग क्यौं रहौ अबहीं भरहरिहौ ।
वह काटत मुरली नहीं तुम तौ मन मरिहौ ।
वह सुलाक कैसैं सही परमव ही जरिहौ ।
तुम अनेक, वह एक है, तासौं जनि अरिहौ ।
सूर स्याम जिहिं हरि मिले नहिं जीतौ हरिहौ ॥१००२॥

मुरली की सरि जनि करौ वह तप अधिकारिनि ।
पवे पर तुम बौलिहौ कह भई बनजारिनि ।
धीर धरै भरमाद] है नाती लघु ह्वैहौ ।
नैंकु दरस की आस है, काहू सौं जैहौ ।
झगरैं झगरोई रहै, तिहिं बदा बड़ाई ।
वह अपनी फल भोगवै, तुम ऐसौ माई ।
ऐसौ ताके भाग की, ताकौं न सराही ।
सूरदास अपनी कहा, मीठैं किन चाही ॥१००३॥

मुरली सौं अब प्रीति करौ री ।
मेरी कही मानि मन राखौ उर-रिस दूरि धरौ री ।
तुमहिं सुनी मुरली की बातैं दीन होइ बतरानी ।
काहै न हरैं स्याम ता ऊपर, क्यौं न होइ पटरानी ।

हम जान्यौ यह गर्व भरी है, साधु न पावै धीर।
रिझै लियौ हरि कौ तप कै बल, वृथा करौ तुम सोर।
सूर स्याम बहुनायक सजनी, यहौ मिलौ इक भाइ।
तुम अपनौ जौ नेम रहौगी नेम न कर तैं जाइ ॥१००४॥

नेमहिं मैं हरि आइ रहैंगे।
मुरली सौं तुम कहू कही जनि, ऐसेहिं तुमहिं मिलैंगे।
पै अंतरजामी सब जानत, घट-घट की जो प्रीति।
जाकौ जैसी भाव सखी री ताहि मिलैं तिहिं रीति।
मातु-पिता-कुलकानि-लाज तजि, भजी जनम तैं जाहि।
काहे कौं मुरली कौं बाहनि, अब लजियै री ताहि।
सोरह सहस एक मन नागरि, नागरि मुरली जानि।
सूर स्याम कौं भजौ निरंतर, दासी है पहिचानि ॥१००५॥

हम तैं तप मुरली न करै री।
कहा सुहाग सखी या इक पल नित प्रति बिरह जरै री।
किरिया सी करि कै भई ठाढ़ी, तुरत अंबर-तर लागी।
हमकौं निसि दिन भवन अराधत नाहीं रस अनुरागी।
यहै बात कबहूँ तैं मोटी, तातैं हम सरि नाहीं।
सूर स्याम की महिमा न्यारी, कृपा करी ता माहीं ॥१००६॥

मुरलिया एकै बात कही।
भाग आपनी अपने माथे, मानी यह मनहिं सही।
हम तैं बहुत तपस्या याकी, बिरह जरी यह नाहीं।
कहा निमिष करि प्रेम सुनावौ रेनु गुनि प्रिय नाहीं।
पाव कहति कछु निवधि नाहीं भाग बड़े हैं याके।
सूरदास प्रभु चतुर सिरोमनि धन्य भए हैं जाके ॥१००७॥

मुरली स्याम बजावन दै री।
स्रवननि सुधा पियनि काहैं न हरि तू जनि बरजै री।

सुनति नहीं यह कहति कहा है, राधा, राधा नाम।
तू जानति, हरि भूलि गए मोहिं, तुम एकै पति बाम।
वाही कै मुख नाम धरावत हमहिं मिलावत ताहि।
सूर स्याम हमकौं नहिं बिसरे, तुम बरजनि ही काहि ॥१००८

जब तब मुरली कान्ह बजावत।
तब-तब राधा-नाम उचारत बारंबार रिझावत।
तुम रमनी वह रमन तुम्हारे, वैसैहिं मोहिं जनावत।
मुरली भई सौति जो माई तेरी टहल करावत।
वह दासी तुम हरि अर्धांगिनि यह मेरैं मन आवत।
सूर प्रगट ताही सौं कहि कहि, तुमकौं स्याम बुलावत।१००९

मुरलिया मोकौं लागति प्यारी।
मिली अचानक आइ कहूँ तैं, ऐसी रही कहाँ री।
धनि याके पितु-मातु, धन्य यह, धन्य-धन्य मृदु बोलनि।
धन्य स्याम गुन गुनि कै ल्याए, नागरि चतुर अमोलनि।
यह निरमोल मोल नहिं याकौ भली न पावै कोई।
सूरदास याके पटतर कौं, तौ दीजै जौ होई ॥१०१०॥

मुरली दिन-दिन भली भई।
बन की रहनि नहीं अब यामैं, मधुरहिं धारि गई।
अमिय समान कहति है बानी, नीकैं बानि भई।
जैसी संगति बुधि तैसीयै है गई सुघराई।
जब आई तब औरै लागी सो निठुराई दई।
सूर स्याम अधरनि कै परसैं सोभा भई नई ॥१०११॥

( माई ) मोहन की मुरली मैं मोहिनि बसत है।
जब तें सुनी स्रवन, परी न परै भवन देह तैं मनहुँ प्रान चाह
निकसत हैं।

कहा करौं आली, बाँसुरी की पुनि साली, माता-पिता-पति-बंधु
अतिही त्रसत हैं।
मदन अगिनि अरु बिरह की ज्वाल जरी जैसें जल-हीन मीन तट
तरसत हैं।
अतिहि तपति छाती लागति है प्रेम काँती फूलनि की माला मनौ
ब्याल ह्वै डसत हैं।
सूर स्याम मिलन कौं आतुर है ब्रज की बाल एक-एक पल जुग-
जुग ज्यौं बसत हैं ॥१०१२॥

---

## (ञ) गोपी-कृष्ण

भवन रवन सबही बिसरायौ।
नंद-नंदन जब तैं मन हरि लियौ, बिरथा जनम गँवायौ॥
जप तप ब्रत संजम साधन तैं, द्रवित होत पाषान।
जैसैं मिलै स्याम सुन्दर बर सोइ कीजै, नहिं आन॥
यहै मंत्र दृढ़ कियौ सबनि मिलि, यातैं होइ सु होइ।
वृथा जनम जग मैं जिनि खोवहु, ह्याँ अपनौ नहिं कोइ।
तब प्रतीति सबहिनि कौं आई कीन्हौ दृढ़ बिस्वास।
सूर स्यामसुंदर पति पावैं यहै हमारी आस॥१०१४॥

गौरी-पति पूजति ब्रजनारि।
नेम-धर्म सौं रहति क्रिया-जुत, बहुत करति मनुहारि॥
यहै कहति पति देहु उमापति गिरिधर नंद-कुमार।
सरन राखि लीजै सिवसंकर तनहिं ग्रसावत मार॥
कमल पुहुप माखन पत्र फल नाना सुमन सुबास।
महादेव पूजति मन-बच करि सूर स्याम की आस॥१०१५॥

सिव सौं बिनय करति कुमारि।
जोरि कर, मुख करति अस्तुति बड़े प्रभु त्रिपुरारि॥
सीत-भीत न करति सुंदरि, कृस भईं सुकुमारि।
छहौं रितु तप करति नीकैं, गेह नेह बिसारि॥

कहा करौं आली, बाँसुरी की धुनि साली, माता पिता-पति बंधु
अतिहीं त्रसत हैं।
मदन भगिनि अरु बिरह की ज्वाल जरी जैसैं जल-हीन मीन त्यौं
तरसत हैं।
अतिहि तपति छाती लागति है प्रेम कौंधी फूलनि की माला मनौ
ब्याल ह्वै डसत हैं।
सूर स्याम मिलन कौं आतुर ह्वै ब्रज की बाल, एक-एक पल जुग-
जुग ज्यौं बरसत हैं ॥१०१२॥

जसुमति माइ, कहा सुत सिखयौ, हमकौ ऐसे हाल किए।
चोली फारि हार गहि तोरे, देखौ उर नख-घात दिए॥
अंचल चीरि, अभूषन तोरे, घेरि घरत उठि भागि गए।
सूर महरि मन कहति स्याम धौं, ऐसे लायक कबहिं भए।।१०१९।

महरि, स्याम कौं बरजति काहैं न।
जैसे हाल किए हरि हमकौं, भए कहूँ जग काहैं न।
और बात इक सुनौ स्याम की, अबहिं भए हैं ढीठ।
बसन बिना अस्नान करति हम आपुन मीड़त पीठ।
आपु कहति, मेरी सुन मारी हियौ उघारि दिखाऊँ।
सुनहु जाइ, कहत नहिं आवै तुमकौ कहा जनाऊँ॥
यह बानी जुबतिनि मुख सुनि कै, हँसि बोली नँदरानी।
सूर स्याम तुम लायक नाहीं बात तुम्हारी जानी।।१०२ ।

बात कहौ जो लहै, बहै री।
बिना भीति तुम चित्र लिखति हौ सो कैसें निबहै री॥
तुम चाहति हौ गगन-तरैयाँ माँगे कैसें पावहु।
आवत ही मैं तुम लखि लीन्ही कहि मोहि कहा सुनावहु।
चोरी रही, छिनारी अब भयौ जान्यौ ज्ञान तुम्हारौ।
औरे गोप-सुतनि नहिं देखौ सूर स्याम है बारौ।।१०२१।

ग्वालिनि हैं घरही की बाढ़ी।
निसि अरु दिन प्रति देखति हौ अपनें ही आँगन ठाढ़ी।
कबहिं गुपाल कंचुकी फारी कब भए ऐसे जोग।
अबहिं नैकु बसन सीखे हैं, यह जानत सब लोग।
नितहीं भगरत है मनमोहन, देख प्रेम रस चाखी।
सूरदास-प्रभु भटक न मानत ग्वाल सबै हैं साखी।।१०२२।

इहिं अंतर हरि आइ गए।
मोर मुकुट पीतांबर काछे, कोमल अंग भए॥

ध्यान धरि, कर जोरि, लोचन मूँदि, इक-इक जाम ।
बिनय अंचल छोरि रबि सौं, करति हैं सब बाम ॥
हमहिं होउ दयाल दिन-मनि, तुम बिदित संसार ।
काम अति तनु दहत दीजै सूर हरि भरतार ॥१०१५॥

रबि सौं बिनय करति कर जोरे ।
प्रभु अंतरजामी यह जानी हम कारन अस कीरे ।
प्रगट भए प्रभु जलहीं भीतर, देखि सबनि कौ प्रेम ।
भीजत पीठि सबनि के पाछैं पूरन कीन्हौ नेम ॥
फिरि देखैं तौ कुँवर कन्हाई भीजत कुचि सौं पीठि ।
सूर निरखि सकुची ब्रज-जुबती परी स्याम-तन दीठि ॥१ १६॥

जानि तप देखि कृपा हरि कीन्हौ ।
तन की जरनि दूर भई सबकी मिलि तरुनिनि सुख दीन्हौ ॥
नवल किसोर ध्यान जुवतिनि मन वहै प्रगट दरसायौ ।
सकुचि गईं अँग-बसन सम्हारति भयौ सबनि मनभायौ ॥
मन-मन कहति भयौ तप पूरन आनँद उर न समाई ।
सूरदास प्रभु लाज न आवति जुवतिनि माँझ कन्हाई ॥१०१७॥

हँसत स्याम ब्रज घर कौं भागे ।
लागनि कहति सुनावति मोहन करन लँगराई लागे ॥
हम असनान करति जल-भीतर भीजत पीठि कन्हाई ।
कहा भयौ जो नंद महर-सुत हमसौं करत ढिठाई ॥
लरिकाई तबही तैं कीन्ही धारि भरप के पाँप ।
सूर जाइ कहिहौं जसुमति सौं, स्याम करत ये माप ॥१०१८॥

प्रेम-बिबस सब ग्वालि भई ।
उरहन देन चलीं जसुमति पैं, मनमोहन के रूप रई ॥
पुलक अंग अँगिया दर दरकी, हार तोरि कर आप लई ।
अंचल चीरि पान उर नख करि, यह मिस करि नँद-सदन गई ॥

सरद ग्रीषम बरषि नाहीं करति तप तनु गारि।
सूर प्रभु सर्बज्ञ स्वामी, देखि रीझे भारि ॥१०२७॥

व्रज-बनिता रबि कौं कर जोरैं।
सीत-भीति नहिं करति छहौं रितु त्रिबिध काल जल खोरैं।
गौरी-पति पूजति, तप साधति करत रहति नित नेम।
भोग-रहित निसि जागि चतुर्दसि, जसुमति-सुत कैं प्रेम।
हमकौं देहु कृष्न पति ईस्वर और नहीं मन आन।
मनसा-बाचा कर्म हमारैं, सूर स्याम कौ ध्यान ॥१०२८॥

नीकैं तप कियौ तनु गारि।
आपु देखत कदम चढ़ि मानि लियौ मुरारि॥
बर्ष भर ब्रत-नेम-संजम, स्रम कियौ मोहिं काज।
कैसेहूँ मोहिं भजै कोऊ, मोहिं बिरद की लाज।
धन्य ब्रत इन कियौ पूरन, सीत तपति निवारि।
काम आतुर भजी मोकौं नव तरुनि ब्रज नारि॥
कृपा नाथ कृपाल भए तब, जानि जन की पीर।
सूर प्रभु अनुमान कीन्हौ हरौं इनके चीर ॥१०२९॥

बसन हरे सब कदम चढ़ाए।
सोरह सहस गोप-कन्यनि के, अंग अभूषन सहित चुराए।
नीलांबर पाटंबर सारी, सेत पीत चुनरी, अरुनाए।
अति बिस्तार नीप तरु तामैं, लै-लै जहाँ-तहाँ लटकाए।
मनि आभरन डार डारनि प्रति, देखत छबि मनहीं अँटकाए।
सूर स्याम जुवतिनि ब्रत-पूरन कौ फल डारनि कदम फराए॥

आवहु निकसि घोष-कुमारि।
कदम पर तैं बसन दीन्हौ गिरिधरन बनवारि॥
नैन भरि ब्रत फलहिं देखौ करयौ है सुभ-चार।
ब्रत तुम्हारौ भयौ पूरन, कह्यौ नंद कुमार॥

जननि बुलाइ चाइँ गहि लीन्ही देखहु री मदमाती।
इनहीं कौं अपराध लगावति, कहा फिरति इतराती।
सुनिहैं लोग मष्ट अबहूँ करि, तुमहिं करौं की लाज।
सूर स्याम मेरौ माखन-भोगी, तुम आवतिं बेकाज ॥१०२३॥

अबहीं देखे नवल किसोर।
घर आवत हीं तनक भए हैं, ऐसे तन के थोर ॥
कछु दिन करि दधि-माखन चोरी अब चोरत मन मोर।
बिबस भई, तन-सुधि न सम्हारति कहति बात भई भोर।
यह बानी कहतहीं लजानी समुझि भई जिय-थोर।
सूर स्याम-मुख निरखि चली घर, आनँद लोचन लोर ॥१०२४॥

घर घर गईं गोप कुमारि।
नैकहूँ कहूँ मन न लागत काम-धाम बिसारि।
मातु-पितु कौ डर न मानतिं, सुनतिं नाहिंन गारि।
हठ करतिं, बिरुझतिं सब जिय जननि जानतिं हारि।
प्रातहीं उठि चलीं सब मिलि जमुन-तट सुकुमारि।
सूर प्रभु ब्रत देखि इनकौ, नहिंन परत सम्हारि ॥१०२५॥

चलत नहीं जमुना की देवी।
सुंदर स्याम घाट पर ठाढ़े, कहौ कौन बिधि जैबी ॥
कैसें बसन उतारि धरैं हम, कैसें जलहिं समैबी।
नंद नँदन हमकौं देखैंगे, कैसैं करि जु अन्हैबी ॥
चोली चीर, हार लै भाजत सो कैसैं करि पैबी।
अंकम भरि भरि लेत सूर प्रभु काल्हि न इहिं पथ ऐबी ॥१०२६॥

करति तप करतिं गोप-कुमारि।
कृष्न पति हम तुरत पावैं, काम आतुर नारि ॥
नैन मूँदतिं दरस-कारन, स्रवन सब्द बिचारि।
भुजा जोरतिं अंक भरि हरि, ध्यान उर अँकवारि ॥

कर धरि सीस गईं हरि-सन्मुख, मन मैं करि आनंद।
दै कृपाल सूरज-प्रभु औसर, दीन्हे परमानंद ॥१०३४॥

दइ बर कियौ मेरैं हेतु।
धन्य धनि कह्यौ नंद-नंदन जाहु सबै निकेतु॥
करौं पूरन काम तुम्हरौ, सरद रास रमाइ।
हरष भईं यह सुनत गोपी, रहीं सीस नवाइ॥
सबनि कौ अँग परसि कीन्हौ सुफल ब्रत-ब्यवहार।
सूर प्रभु सुख दियौ मिलि कै, ब्रज चल्यौ सुकुमार ॥१०३५॥

सिवसंकर हमकौ फल दीन्हौ।
पुहुप पान नाना फल, मेवा, षट-रस अरपंत कीन्हौ॥
पाइ परीं जुवती सब यह कहि, धन्य-धन्य त्रिपुरारी।
तुरतहिं फल पूरन हम पायौ, नंदसुवन गिरिधारी।
बिनय करतिं सबिता, तुम सरि कौ पय अंजलि, कर जोरी।
सूर स्याम पति तुम तैं पायौ यह कहि घरहिं बहोरी ॥१०३६॥

सरद-निसि देखि हरि हरष पायौ।
बिपिन बृंदा रमन, सुभग फूले सुमन, रास रुचि स्याम के मनहिं आयौ॥
परम उज्ज्वल रैनि छिटकि रही भूमि पर, सद्य फल तरुनि प्रति लटकि लागे॥
तैसोई परम रमनीक जमुना-पुलिन त्रिबिध बहै पवन आनंद जागे॥
राधिका-रमन बन-भवन-सुख देखि कै, अधर धरि बेनु सुललित बजाई।
नाम लै लै सकल गोप-कन्यानि के, सबनि कैं स्रवन यह धुनि सुनाई॥

सलिल तैं सब निकसि आवहु, छमा सहति सुपार।
देत हौं, छिन लेहु मोसौं चीर, चोली हार ॥
बाहँ टेकि बिनै करौ मोहिं, कहत बारंबार।
सूर प्रभु के आइ आगैं, करहु सब सिंगार ॥१०३१॥

ग्वालिनि अपने चीरहिं लै री।
जल तैं निकसि-निकसि तट, दोउ कर जोरि सीस दै-दै री।
अब ही सीत सहति ब्रज-सुंदरि, ब्रत पूरन सब भै री।
मेरे कहैं आइ पहिरौ पट, हम तुम हेम भरे री।
हौं अंतरजामी जानत सब, अति यह पैज करे री।
करिहौं पूरन काम तुम्हारौ, रास सरद निसि है री।
संतत सूर स्वभाव हमारौ, कत भै काम करे री।
कौनेहुँ भाव भजै कोउ हमकौं तिन तन ताप हरे री ॥१०३२॥

हमारे अंबर देहु मुरारी।
लै सब चीर कदम चढ़ि बैठे, हम जल-माँझ उघारी।
तट पर बिना बसन क्यौं आवैं, लाज लगति है भारी।
चोली हार तुमहिं कौं दीन्हौ चीर हमहिं द्यौ डारी।
तुम यह बात अचंभी भाषत, नाँगी आवहु नारी।
सूर-स्याम कछु छोह करौ जू, सीत गई तनु मारी ॥१०३३॥

हमारे देहु मनोहर चीर।
काँपति, सीत तनहिं अति व्यापत हिम सम जमुना-नीर ॥
मानहिंगी उपकार रावरौ, करौ कृपा बलबीर।
अतिहीं दुखित प्रान, बपु परसत प्रबल प्रचंड समीर ॥
हम दासी तुम नाथ हमारे, बिनवति जल मैं ठाढ़ी।
मानहु बिकच कुमुदिनी ससि सौं अधिक प्रीति उर बाढ़ी ॥
जौ तुम हमैं नाथ कै जान्यौ यह हम माँगैं देहु।
जल तैं निकसि आइ बाहर ह्वै, बसन आपने लेहु ॥

एक उफनात ही चली उठि, धरयौ नाहिं उतारि।
एक जेंवन करत त्याग्यौ, चली चूर्ने ढारि॥
एक भोजन करि सँपूरन, गई वैसैंहि त्यागि।
सूर प्रभु कैं पास तुरतहिं, मन गयौ उठि भागि॥१०४१॥

जबहिं बन मुरली स्रवन परी।
चकित भईं गोप-कन्या सब, काम धाम बिसरी॥
कुल मर्जाद बेद की आज्ञा नैंकहुँ नहीं डरी।
स्याम-सिंधु, सरिता-ललना-गन, जल की ढरनि ढरी॥
अँग-मरदन करिबे कौं लागीं उबटन तेल धरी।
जो जिहिं भाँति चली सो तैसैंहिं, निसि बन कौं जु खरी॥
सुत पति नेह, भवन-जन-संका, लज्जा नाहिं करी।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौ नागर नवल हरी॥१०४२॥

मुरली सब्द सुनि ब्रज-नारि।
करत अँग-सिंगार भूलीं काम गयौ तनु मारि॥
चरन सौं गहि हार बाँध्यौ नैन देखति माहिं।
कंचुकी कटि साजि, लँहगा धरति हिरदय माहिं॥
चतुरता हरि चोरि लीन्ही, भई भोरी बाल।
सूर प्रभु अति काम मोहन, रच्यौ रास गोपाल॥१०४३॥

चली बन बेनु सुनत जब धाइ।
मातु पिता-बांधव अति त्रासत, जाति कहाँ अकुलाइ।
सकुचि नहीं संक कछु मानी, रैनि कहाँ तुम जाति।
जननी कहति, दई की घाली, काहे कौं इतराति॥
मानति नहीं और रिस पावति, निकसी नातौ तोरि।
जैसैं जल प्रवाह भादौं कौ, सो को सकै बहोरि॥
ज्यौं केंचुरी भुअंगम त्यागत, मात पिता यौं त्यागे।
सूर स्याम कैं हाथ बिकानी, अलि अंबुज अनुरागी॥१०४४॥

सुनत चपल्यो बैन, परत काहूँ न चैन, सब्द सुनि स्रवन भई बिकल भारी।
सूर-प्रभु ध्यान धरि कै चली उठि सबै, भवन-जन-नेह तजि घोष नारी ॥१०३७॥

सुनहु, हरि मुरली मधुर बजाई।
मोहे सुर-नर-नाग निरंतर, ब्रज बनिता उठि धाई॥
जमुना-नीर प्रवाह थकित भयौ पवन रह्यौ मुरझाई।
खग-मृग-मीन अधीन भए सब, अपनी गति बिसराई॥
द्रुम-बेली अनुराग-पुलक तनु, ससि थक्यौ निसि न घटाई
सूर स्याम वृंदावन बिहरत, चलहु सखी सुधि पाई ॥१०३८॥

सुनि कै कुंज कानन बैन।
ब्रज बधू सब बिसरि मंदिर चली गृह तजि चैन॥
सब्द इहिं बिधि भयौ मोहन सूझि और परै न।
थकित जमुना भई इहिं बिधि मनहुँ जल कियौ सैन।
मगन मुनि जन भए इहिं बिधि पूजियौ पद रैनु।
सूर स्याम सु रसिक नागर, सुभट सुर नर चैनु ॥१०३९॥

आजु बन बेनु बजावत स्याम।
यह कहि-कहि चकित भई गोपी, सुनत मधुर सुर-ग्राम।
कोउ ज्यौनार करति, कोउ बैठी, कोउ ठाढ़ी ही धाम।
कोउ जेंवति कोउ पतिहिं जिंवावति, कोउ सिंगार मैं बाम।
मनौ चित्र कैसी लिखि काढ़ी सुनत परस्पर नाम।
सूर सुनत मुरली भई बौरी, मदन कियौ तन वाम ॥१०४०॥

हरि-मुख सुनत बेनु रसाल।
बिरह ब्याकुल भ‍ई बाला चली जहँ गोपाल।
पथ दुरावत तजि चली कोउ, रही धीरज नाहिं।
एक छोरिनि रूप आवन की सिरावत जाहिं॥

गई रही दधि बेचन मथुरा तहाँ आजु अबसेर लगाई ।
अति भ्रम भयौ बिपिन क्यौं आई, मारग यह कहि सबनि बताई ॥
धातु-धातु पर तुरत कुसुमबिसन, कीन्हे गुरुजन कहि दरसाई ।
की गोकुल तैं गमन कियौ तुम, इनि बातनि है नहीं भलाई ॥
यह सुनि कै ब्रज-बाम कहत भई कहा करत गिरिधर चतुराई ।
सूर नाम लै लै जन जन कै, मुरली बारंबार बजाई ॥१०४८॥

यह जानि कही गोप-कुमारि ।
चतुराई हम नहीं कीन्हीं तुम चतुर सब ग्वारि ॥
कहौ हम कहँ तुम रही ब्रज कहौ मुरली-नाद ।
करति हौ परिहास हमसौं तजौ यह रस बाद ॥
बड़े की तुम बहू-बेटी, नाम लै क्यौं जाइ ।
ऐसेही निसि दौरि आईं हमहिं दोष लगाइ ॥
अब यह तुम करी नाहीं अजहुँ घर फिरि जाहु ।
सूर प्रभु क्यौं बिसरि आईं नहीं तुम्हरे नाहु ॥१०४९॥

मातु पिता तुम्हरे धौं नाहीं ।
बारंबार कमल-दल-लोचन, यह कहि कहि पछिताहीं ॥
उनकैं लाज नहीं, बन तुमकौं आवन दीन्ही राति ।
सब सुंदरी सबै नवयौवन निठुर अहिर की जाति ॥
की तुम कहि आईं की ऐसेहिं कीन्ही कैसी रीति ।
सूर तुमहिं यह नहीं बूझियै करी बड़ी बिपरीति ॥१०५०॥

अब तुम कहौ हमारी मानी ।
बन मैं आइ रैनि-सुख देख्यौ यहै बड़ौ सुख मानी ॥
अब ऐसी कीबौ जनि कबहूँ जानति हौ मन तुमहूँ ।
यह धौं सुनै कहूँ जो कोऊ, तुमहिं लाज अरु हमहूँ ॥
हम तौ आजु बहुत सरमाने, मुरली टेरि बजायौ ।
जैसौ कियौ भली फल तैसौ, हमहीं दूषन आयौ ॥

मुरली धुनि करी बलबीर।
सरद निसि कौ इंदु पूरन, देखि जमुना तीर॥
सुनत सो धुनि भईं ब्याकुल, सकल घोष-कुमारि।
अंग अभरन उलटि साजे, रही कछु न सम्हारि॥
गईं सोरह सहस हरि पै, छाँड़ि सुत पति नेह।
एक सखी रोकि कै पति, सो गई तजि देह॥
दियौ तिहिं निर्बान पद हरि, चितै लोचन-कोर।
सूर भजि गोबिंद यौं जग-मोह बंधन तोर॥१०४४॥

सुनत बन बेनु धुनि चलीं नारी।
लोक-लज्जा निदरि, भवन तजि सुंदरि मिलीं बन आइकै बन-बिहारी॥
दरस कैं लहत मन हरष सबकौं भयौ, परस की लाभ अति करति भारी।
यहै मन-मच-करम ठग्यौ सुत-पति-धरम, मेटि भव-भरम, सहि लाज-गारी॥
भजै जिहिं भाव जो मिलै हरि ताहि त्यौं, भेद-भेदा नहीं पुरुष नारी।
सूर-प्रभु स्याम ब्रज-बाम आतुर काम मिलीं बन-धाम गिरिराज-धारी॥१०४५॥

देखि स्याम मन हरष बढ़ायौ।
तैसियै सरद चाँदनी निर्मल तैसोई रास-रंग उपजायौ॥
तैसियै कनक-बरन सब सुंदरि, इहिं सोभा पर मन ललचायौ।
तैसियै हंस-सुता पवित्र तट, तैसोइ कल्पवृच्छ सुख-दायौ॥
करौं मनोरथ पूरन सबके, इहिं अंतर इक खेल उपायौ।
सूर स्याम रचि कपट चतुराई जुवतिनि कैं मन यह भरमायौ॥

निसि काहैं बन कौं उठि धाई।
हँसि-हँसि स्याम कहत हैं सुंदरि, कौ तुम मज्ज-मारगहिं भुलाइ॥

मनु तुषार कमलनि परयौ ऐसैं कुम्हिलानी।
मनौ महानिधि पाइ कै, खोयै पछितानी।
ऐसी ह्वै गई तनु-दसा प्रिय की सुनि बानी।
सूर बिरह ब्याकुल भई बूड़ी बिनु पानी ॥१०५५॥

स्याम उर प्रीति, मुख कपट-बानी।
जुवति ब्याकुल भई धरनि सब गिरि गई, स्वास गई टूटि नहिं भेद जानी।
हँसत नँदलाल मन-मन करत ख्याल ये भई बेहाल ब्रज-बाल भारी।
रुदन जल नदी-सम बहि चल्यौ उरज बिच मनौ गिरि फोरि सरिता पनारी।
अंग थकि पथिक नहिं चलत और पंथ कै, नाद-रस-भाव हरि नहीं जानै।
सूर प्रभु निठुर करिया कहा ह्वै रहे, तनहिं बिनु और को मोह जानै ॥१०५६॥

निठुर बचन जनि बोलहु स्याम।
आस निरास करौ जनि हमरी, बिकल कहति है बाम।
अंतर कपट दूरि करि डारौ हम तन कृपा निहारौ।
कृपा सिंधु तुमकौं सब गावत अपनौ नाम सम्हारौ।
हमकौं सरन और नहिं सूझै, कापै हम अब जाहिं।
सूरदास प्रभु निज दासिनि की चूक कहा पछिताहिं ॥१०५७

तुम पावत हम घोष न जाहिं।
कहा जाइ कैहैं हम ब्रज, पर दरसन त्रिभुवन नाहिं।
तुमहूँ तैं ब्रज हितू न कोऊ, कोटि कहौ नहिं मानैं।
काके पिता मातु हैं काकौ काहूँ हम नहिं मानैं।

अब तुम भवन जाहु, पति पूजहु परमेस्वर की नाईं ।
सूर स्याम जुवतिनि सौं यह कहि, करी अपराध छमाई ॥१०२१॥

यह जुवतिनि कौ धरम न होइ ।
धिक सो नारि पुरुष जो त्यागै धिक सो पति जो त्यागै सोइ ॥
पति की धर्म यहै प्रतिपालै जुवती सेवा ही कौ धर्म ।
जुवती सेवा तऊ न त्यागै जौ पति करै कोटि अपकर्म ॥
बन मैं रैनि-बास नहिं कीजै देख्यौ बन बृंदाबन आइ ।
बिबिध सुमन सीतल जमुना जल त्रिबिध समीर-परम सुखदाई ॥
घरही मैं तुव धर्म सदाई सुत-पति दुखित होत तुम जाहु ।
सूर स्याम यह कहि परमोधत, सेवा करहु जाइ घर नाहु ॥१०२२॥

इहिं बिधि बेद-मारग सुनौ ।
कपट तजि पति करौ पूजा, कहा तुम जिय गुनौ ॥
कंत मानहु भव तरौगी, और नाहिं उपाइ ।
ताहि तजि क्यौं बिपिन आईं कहा पायौ आइ ॥
बिरध अरु बिन भागहूँ को पतित जौ पति होइ ।
जऊ मूरख होइ रोगी, तजै नाहीं सोइ ॥
यहै मैं पुनि कहत तुमसौं जगत मैं यह सार ।
सूर पति-सेवा बिना क्यौं तरौगी संसार ॥१०२३॥

कहा भयौ जौ हम पै आईं कुल की रीति गँवाइ ।
हमहूँ कौं बिधि कौ डर भारी, अजहूँ जाउ पँराइ ॥
तजि भरतार और जौ भजियै, सो कुलीन नहिं होइ ।
मरैं नरक, जीवत या जग मैं, भलौ कहै नहिं कोइ ॥
हम जौ कहत सबै तुम जानतिं तुमहूँ चतुर सुजान ।
गुनहु सूर घर जाहु, हमहुँ पर औरै होत बिहान ॥१०२४॥

निठुर बचन सुनि स्याम के, जुवती बिलखानी ।
चकित भईं सब सुनि रहीं नहिं आवति बानी ॥

दीन बानी स्रवन सुनि-सुनि, द्रवे परम कृपाल।
सूर प्रभु अँग न काँची, धन्य-धनि ब्रज-बाल ॥१०६१॥

हरि सुनि दीन बचन रसाल।
बिरह ब्याकुल देखि बाला भरे नैन बिसाल॥
चारु आनन नीर धारा ढरनि अर्घ बहाइ।
मनहुँ सुधा मयंक उमगी, प्रेम प्रगट दिखाइ॥
चंद मुख पर सिखर बैठे, सुभग जोर चकोर।
पियत मुख भरि-भरि सुधा-रस गिरत तापर मोर॥
हरष-बानी स्रवत पुनि-पुनि, धन्य-धनि ब्रज-बाल।
सूर प्रभु करि कृपा बोली सदय भए गोपाल ॥१०६२॥

स्याम हँसि बोले प्रभुता डारि।
बारंबार बिनय कर ओरत कटि-पट गोद पसारि॥
तुम सनमुख, मैं बिमुख तुम्हारी मैं असाधु, तुम साध।
धन्य-धन्य कहि कहि जुवतिनि कौं आप करत अनुराध॥
मोकौं भजी एक चित ह्वै कै निदरि लोक-कुल कानि।
सुत-पति-नेह तोरि तिनुका सौं मोहीं निज करि जानि॥
जाकै हाथ पेड़ फल ताकौ सो फल लेहु कुमारि।
सूर कृपा पूरन सौं बोले गिरि-गोबरधन-धारि ॥१०६३॥

हरि-मुख देखि भूले नैन।
हृदय-हरषित प्रेम गदगद, मुख न आवत बैन॥
काम आतुर भजी गोपी, हरि मिले तिहिं भाइ।
प्रेम-बस्य कृपाल केसव जानि तेउ सुभाइ॥
परसपर मिलि हँसत रहसत हरषि करत बिलास।
उमँगि आनँद-सिंधु उछल्यौ स्याम कै अभिलाष॥
मिलति इक-इक भुजनि भरि-भरि, रास-रुचि जिय आनि।
तिहिं समय सुख स्याम-स्यामा सूर क्यौं कहै गानि ॥१०६४॥

काके पति, सुत-मोह कौन कौ, घरही कहा पठावत।
कैसौ धर्म, पाप है कैसौ, आस निरास करावत।
हम जानैं केवल तुमही कौं, और वृथा संसार।
सूर स्याम निठुराई तजियै, तजियै वचन विकार ॥१०४८॥

भवन नहीं भय जाहिं कन्हाई।
स्वजन बंधु तैं भई बाहिरी, वै क्यौं करैं बड़ाई।
जौ कबहूँ वै छोहिं कृपा करि धिक वै, धिक हम नारि।
तुम बिमुखनि जीवन राखैं धिक, कहौ न आपु बिचारि।
धिक यह लाज बिमुख की संगति, धनि जीवन तुम-हेत।
धिक माता धिक पिता गेह धिक, धिक सुत पति की चेत
हम चाहतिं मृदु हँसनि-माधुरी जातैं उपज्यौ काम।
सूर स्याम अधरनि-रस सींचहु, जरतिं बिरह सब बाम ॥१०४९

आस जनि तोरहु स्याम, हमारी।
बेनु-नाद धुनि सुनि उठि धाईं प्रगटत नाम मुरारी।
क्यौं तुम निठुर नाम प्रगटायौ काहैं बिरह भुलाने?
दीन आजु हम तैं कोउ नाहीं, जानि स्याम मुसकाने।
अपने भुज-दंडनि करि गहिऐ, बिरह सलिल मैं भासी।
बार-बार कुल-धर्म बतावत, ऐसे तुम अविनासी।
प्रीति-बचन-नौका करि राखौ, अंकम भरि बैठावहु।
सू स्याम, तुम बिनु गति नाहीं जुवतिनि पार लगावहु १०५०

चित दै सुनौ अंबुज-नैन।
कपन की गथ भयौ तुमकौं, सरस अंमृत बैन।
हम गुनी सब धाम अच्युत तुम तरुन घन-रासि।
कैसहूँ सुख-दान दीजै, बिरह-बारिधि नासि।
करहु यह जस जगत त्रिभुवन निठुर कोठी खोसि।
कृपा चितवनि भुज उठावहु प्रेम-बचननि पासि।

धनि ब्रज-लोग धन्य ब्रज-बाला, बिहरत रास गुपाल ।
धनि बंसीबट, धनि जमुना-तट, धनि धनि लता-तमाल ॥
सब तें धन्य-धन्य वृंदावन जहाँ कृष्न को बास ।
धनि धनि सूरदास के स्वामी अद्भुत रच्यौ रास ॥१०६८॥

नैन सफल अब भए हमारे ।
देव लोक नीसान बजाए बरषत सुमन सुधारे ॥
जे जे धुनि किन्नर-मुनि गावत निरखत जोग बिसारे ।
सिव-सारद-नारद यह भाषत, धनि-धनि नंद-दुलारे ॥
सुर-ललना पति-गति बिसराए रहीं निहारि-निहारि ।
आप न बनै देखि सुख हरि कौ भाई लोक बिसारि ॥
यह छबि तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं जो वृंदावन धाम ।
सुंदरता-रस-गुन की सीवाँ सूर राधिका स्याम ॥१०६९॥

हमकौं बिधि ब्रज-बधू न कीन्ही कहा अमरपुर बास भयें ।
बार-बार पछितात यहै कहि, सुख होतौ हरि संग रहें ॥
कहा जनम जौ नहीं हमारौ फिरि-फिरि ब्रज अवतार भलौ ।
वृंदावन द्रुम-लता हूजियै, करता सौं माँगियै चलौ ॥
यह कामना होइ क्यौं पूरन दासी ह्वै बरु ब्रज रहियै ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी तिनहिं बिना काकौं कहियै ॥१०७०॥

मानौ माई धन घन-अंतर दामिनि ।
घन दामिनि दामिनि घन अंतर, सोभित हरि-ब्रज-भामिनि ॥
जमुना पुलिन, मल्लिका मनोहर सरद सुहाई जामिनि ।
सुंदर ससि गुन-रूप-राग-निधि, अंग अंग अभिरामिनि ॥
रच्यौ रास मिलि रसिक राइ सौं मुदित भई गुन-ग्रामिनि ।
रूप-निधान स्याम सुंदर तन, आनँद मन बिस्रामिनि ॥
खंजन मीन मयूर हंस पिक, भाइ-भेद गज गामिनि ।
को गति गनै सूर मोहन सँग काम बिमोह्यौ कामिनि ॥१०७१॥

रास-रुचि जबहिं स्याम मन आनी।
करहु सिंगार सँवारि सुन्दरी कहत हँसत हरि बानी॥
जब देखैं अँग उलटे भूषन, तब तरुनी मुसुकयानी।
बार-बार पिय देखि-देखि मुख, पुनि-पुनि सुमति लजानी॥
नख-सख साजि भई सब ठाढ़ी, को छबि सकै बखानी।
वह छबि निरखि अधीर भए प्रभु, काम नारि बिततानी॥
कुच भुज परसि करी मन इच्छा कछु तनु-तपा बुझानी।
सुनहु सूर रस-रास नायिका सुंदरि राधा रानी॥१०६५॥

चंचल चंचल स्याम गही।
लै गए सुभग पुलिन जमुना कैं, अग-अँग भेष सही॥
कल्पतरोवर तर बंसीबट, राधा रति-गृह धाम।
तहाँ रास-रस-रंग उपायौ सँग सोभित ब्रज-बाम॥
मध्य स्याम घन, तड़ित-भामिनी अति राजति सुभ गोरी।
सूरदास प्रभु नवल छबीले नवल छबीली गोरी॥१०६६॥

रास-मंडल बने स्याम स्यामा।
नारि दुहुँ पास गिरिधर बने दुहुँनि बिच, ससि सहस-बीस द्वादस उपामा॥
मुकुट की छबि निरखि कहा उपमा कहौं, चैन जाने नहीं मैन मानै॥
सुभग नव मेघ, ता बीच चपला चमक निरखि, नृत्यत मोर हरष मानै॥
करत आनंद पिय-संग-ललना-पुंज, बढ़त रस-रंग छिन छिनहिं औरै॥
सूर प्रभु रास-रस-नागरी मध्य दोउ परसपर नारि-पति मनहिं चोरै॥१०६७॥

सुरगन चढ़ि बिमान नभ देखत।
ललना सहित सुमन-गन बरसत धन्य जन्म ब्रज लेखत॥

धनि ब्रज लोग धन्य ब्रज-बाला, विहरत रास गुपाल।
धनि बंसीबट, धनि जमुना-तट धनि धनि लता-तमाल॥
सब तैं धन्य-धन्य वृंदावन जहाँ कृष्न को बास।
धनि-धनि सूरदास के स्वामी, अद्भुत राच्यौ रास॥१०६८॥

नैन सफल अब भए हमारे।
देव लोक नीसान बजाए बरषत सुमन सुधारे॥
जै जै धुनि किन्नर-मुनि गावत निरखत जोग बिसारे।
सिव-सारद नारद यह भाषत धनि-धनि नंद-दुलारे॥
सुर-ललना पति-गति बिसराए रहीं निहारि-निहारि।
सात न बनै देखि सुख हरि कौ भाई लोक बिसारि॥
यह छबि तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं जो वृंदावन धाम।
सुंदरता-रस-गुन की सीवाँ सूर राधिका स्याम॥१०६९॥

हमकौं बिधि ब्रज-बधू न कीन्ही, कहा अमरपुर बास भयें।
बार-बार पछितात यहै कहि, सुख होतौ हरि संग रहें॥
कहा जनम जौ नहीं हमारौ फिरि फिरि ब्रज अवतार भयौ।
वृंदावन द्रुम-लता हूजियै, करता सौं माँगियै कयौ॥
यह कामना होइ क्यौं पूरन दासी ह्वै बस ब्रज रहियै।
सूरदास प्रभु अंतरजामी तिनहिं बिना कासौं कहियै॥१०७०॥

मानौ माई घन घन अंतर दामिनि।
घन दामिनि दामिनि घन-अंतर, सोभित हरि-ब्रज-भामिनि॥
जमुना पुलिन मल्लिका मनोहर, सरद सुहाई जामिनि।
सुंदर ससि गुन-रूप-राग निधि अंग अंग अभिरामिनि॥
रच्यौ रास मिलि रसिक राइ सौं मुदित भई गुन-ग्रामिनि।
रूप-निधान स्याम सुंदर तन आनँद मन बिस्रामिनि॥
खंजन मीन मयूर हंस पिक, भाइ-भेद गज गामिनि।
को गति गनै सूर मोहन सँग काम बिमोह्यौ कामिनि॥१०७१॥

देखौ माई, रूप सरोवर साज्यौ।
ब्रज-बनिता-बर-बारि-बृंद मैं श्री ब्रजराज बिराज्यौ॥
लोचन जलज, मधुप अलकावलि, कुंडल मीन सलोल।
कुच चकवाक बिलोकि बदन-बिधु, बिछुरि रहे अनबोल॥
मुक्ता-माल बाल-बग-पंगति करति कुलाहल कूल।
सारस हंस मोर सुक-स्रेनी, बैजयंति सम तूल॥
पुरइन कपिस निचोल, बिबिध रँग, मधुरति रुचि उपजावै।
सूर स्याम आनंदकंद की सीमा कहत न आवै॥१०७१॥

भुजनि अंग छबि निरखत स्याम।
नंद-कुँवर श्री अंग माधुरी, अवलोकति ब्रज-बाम॥
परी दृष्टि जब भुजनि पिया की, वह सुख कह्यौ न जाइ।
अँगिया नील माँड़नी राती निरखत नैन चुराइ॥
वै निरखति पिय-उर भुज की छबि पहुँचनि पहुँची भ्राजति।
कर-पल्लवनि मुद्रिका सोहति ता छबि पर मन लाजति॥
चंदन-बिंदु निरखि हरि रीझे, ससि पर चाप बिलास।
नंदलाल ब्रजबाल-सुभुज क्यौं, बरनै सूरजदास॥१०७२॥

स्याम तनु राजति पीत पिछौरी।
उर बनमाला काछनी काछे, कटि किंकिनि छबि-डोरी॥
बेनी सुभग नितंबनि डोलति मंदगामिनी नारी।
सूथन जँघन बाँधि नारा बँद तिरनी पर छबि भारी॥
नखनि रंग जावक की सीमा, देखत पिय-मन भावति।
सूरदास-प्रभु तनु-त्रिभंग ह्वै, जुवतिनि मनहिं रिझावत॥१०७३

नृत्यत स्याम नाना रंग।
मुकुट-लटकनि, भृकुटि-मटकनि, धरे नटवर अंग॥
चलत गति कटि कुनित किंकिनि, घूँघरू झनकार।
मनौ हंस रसाल बानी, सरस परस बिहार।

लसति कर पहुँची, उपाजै मुद्रिका अति जोति।
भाव सौं भुज फिरत जबहीं, तबहिं सोभा होति।
कबहुँ नृत्यत नारि-गति पर, कबहुँ नृत्यत आपु।
सूर के प्रभु रसिक के मनि, रच्यौ रास प्रतापु ॥१०७२॥

नृत्यत अंग-अभूषन बाजत।
गति सुघंग मी भाव दिखावत इक तैं इक अति राजत।
कहत न बनै, रही रस ऐसी बरनत बरनि न जाइ।
जैसेइ बने स्याम तैसीयै गोपी, छबि अधिकाइ।
कंकन चुरी किंकिनी नूपुर, पैजनि बिछिया सोहति।
अद्भुत धुनि उपजति इनि मिलि कै, भ्रमि भ्रमि इत-उत जोहति।
सुनि-सुनि स्रवन रीझि मनहीं मन, राधा रास-रसज्ञा।
सूर स्याम सबके सुखदायक नायक गुननि-गुनज्ञा ॥१०७३॥

उघटत स्याम नृत्यति नारि।
धरे अधर उपंग, उपजै लेत हैं गिरिधारि।
ताल, मुरज, रबाब, बीना किन्नरी रस सार।
सब्द संग मृदंग मिलवत, सुघर नंदकुमार।
नागरी सब गुननि आगरि मिलि चलति पिय-संग।
कबहुँ गावति, कबहुँ नृत्यति, कबहुँ उघटति रंग।
मंडली गोपाल-गोपी अंग अंग अनुहारि।
सूर प्रभु घन नवल भामिनि, दामिनी छबि वारि ॥१०७४॥

मुरली-धुनि बैकुंठ गई।
नारायन कमला सुनि दंपति, अति रुचि हृदय भई।
सुनौ प्रिया यह बानी अद्भुत वृंदावन हरि देखौ।
धन्य-धन्य श्रीपति मुख कहि-कहि, जीवन ब्रज कौ लेखौ।
रास बिलास करत नँद-नंदन सो हमतैं अति दूरि।
धनि बन-धाम धन्य ब्रज-धरनी उड़ि लागै जौ धूरि।

यह सुख तिहूँ भुवन मैं नाहीं जो हरि-संग पल एक।
सूर निरखि नारायन इक टक भूले नैन निमेष ॥१०७७॥

मुरली सुनत अचल चले।
थके चर, जल झरत पाहन बिफल बृच्छ फले।
पय स्रवति गोधननि थन तैं, प्रेम पुलकित गात।
मुरे द्रुम अंकुरित पल्लव, बिटप चंचल पात।
सुनत खग-मृग मौन साध्यौ चित्र की अनुहारि।
धरनि उमगि न मात उर मैं जती जोग बिसारि।
ग्वाल गृह-गृह सबै सोवत उहै सहज सुभाइ।
सूर प्रभु रस रास कै हित, सुखद रैनि बढ़ाइ ॥१०७८॥

रास-रस मुरली ही तैं जान्यौ।
स्याम अधर पर बैठि नाद कियौ, मारग चंद्र हिराम्यौ।
धरनि जीव जल-थल के मोहे, नभ-मंडल सुर थाके।
तृन-द्रुम-सलिल पवन गति भूले स्रवन सब्द परयौ जाके।
बच्यौ नहीं पाताल-रसातल, कितिक उदै लौं भान।
नारद-सारद-सिव यह भाषत, कछु तनु रह्यौ न स्यान।
यह अपार रस रास उपायौ, सुन्यौ न देख्यौ नैन।
नारायन धुनि सुनि ललचाने, स्याम अधर-रस-बैनु।
कहत रमा सौं सुनि-सुनि प्यारी, बिहरत हैं बन स्याम।
सूर कहाँ हमकौं वैसौ सुख जो बिलसति ब्रज-बाम ॥१०७९॥

गरब भयौ ब्रजनारि कौं, तबहीं हरि जाना।
राधा प्यारी संग लिये भए अंतर्धाना।
गोपिनि हरि देख्यौ नहीं, तब सब अकुलाईं।
चकित होइ पूछन लगीं कहँ गए कन्हाई।
कोउ मर्म जानै नहीं, ब्याकुल सब बाला।
सूर स्याम ढूँढ़ति फिरैं, जित-तित ब्रज-बाला ॥१०८०॥

हुते अनन्द अबहीं सँग बन मैं, मोहन-मोहन कहि कहि टेरैं।
ऐसी सँग तजि दूर भए क्यौं जानि परत अब गैयनि घेरैं॥
चूक मानि लीन्ही हम अपनी, कैसेहुँ आस बहुरि फिरि हेरैं।
कहियत हौ तुम अंतरजामी, पूरन कामी सबही केरैं॥
ढूँढ़ति हैं द्रुम-बेली बाला भई बिहाल करति अवसेरैं।
सूरदास प्रभु रास बिहारी, कृपा करत काहे की मेरैं॥१०८२॥

तुम कहुँ देखे स्याम बिसासी।
तनक बजाइ बाँस की मुरली लै गए प्रान निकासी॥
कबहुँक आगैं कबहुँक पाछैं, पग पग भरति उसासी।
सूर स्याम-दरसन के कारन निकसी चंद कला सी॥१०८३॥

अति ब्याकुल भईं गोपिका, ढूँढ़ति गिरिधारी।
बूझति हैं बन-बेलि सौं देखे बनवारी॥
जाही, जूही, सेवती करना कनिआरी।
बेलि चमेली मालती बूझति द्रुम-डारी।
कुवा मरुआ कुंद सौं कहैं गोद पसारी।
बकुल, बहुलि, बट कदम पै ठाढ़ीं ब्रजनारी।
बार बार हा-हा करैं कहुँ हौ गिरिधारी।
सूर स्याम कौ नाम लै लोचन जल ढारी॥१०८४॥

ब्याकुल भईं घोष-कुमारि।
स्याम सँग तजि कै कहाँ गए यह कहहिं ब्रजनारि॥
चली दिसि बन ढूँढ़ति देखति चकित भईं बिहाल।
राधिका नहिं तहाँ देखी, कहाँ राखे स्याम॥
कछुक दुख कछु हरष कीन्ही, कुंज लै गई स्याम।
सूर प्रभु-सँग देखि हमकौं करे ऐसे काम॥१०८५॥

बन-ढूँढ़ति चली ब्रजनारि।
सदा राधा करति दुबिधा देति रस की गारि॥

संगहीं लै गईं हरि कौं, सुख करति बन-धाम ।
कहौं ऐहैं दूरि लैहैं, महा रसकिनि बाम ॥
चरन चिन्हनि चली देखति, राधिका पग माहिं ।
सूर प्रभु-पग परसि गोपी, हरषि मन मुसुकाहिं ॥१०८६॥

तब नागरि जिय गर्व बढ़ायौ ।

मो समान तिय और नहीं कोउ, गिरिधर मैं ही बस करि पायौ ।
जोइ-जोइ कहति करत पिय सोइ-सोइ मेरैं ही हित रास उपायौ ।
सुंदरि, चतुरि, और नहिं मोसी, देह धरे कौ भाव जनायौ ॥
कबहुँक बैठि जाति हरि कर धरि, कबहुँ कहति, मैं अति स्रम पायौ ।
सूर स्याम गहि कंठ रही तिय कंध चढ़ौं यह बचन सुनायौ ॥१०८७॥

कहै भामिनी कंत सौं, मोहिं कंध चढ़ावहु ।
नृत्य करत अति स्रम भयौ, ता स्रमहि मिटावहु ।
धरनी धरत बनै नहीं, पग अतिहिं पिराने ।
तिया बचन सुनि गर्व के पिय मन मुसुकाने ॥
मैं अबिगत, अज अकल हौं यह मरम न पायौ ।
भाव-बस्य सब पै रहौं निगमनि यह गायौ ॥
एक प्रान द्वै देह हैं, द्विविधा नहिं यामैं ।
छिपी नरेह तैं, मैं रहौं न तामैं ।
सूरज प्रभु अंतर भए, सँग तैं तजि प्यारी ।
जहँ की तहँ ठाढ़ी रही, वह घोष-कुमारी ॥१०८८॥

तब हरि भए अंतरधान ।

जब छिपी मन गर्व प्यारी, कौन मोसी आन ॥
अति गर्बित भई कहत पीतम चलि न सकौं जोइ ।
कंठ भुज गहि रही यह कहि मोहिं कंध चढ़ाइ ।
गए संग बिसारि, रस मैं बिरस कीन्हौ आप ॥
सूर प्रभु हरि चरित देखत गर्व भई बिराम ॥१०८९॥

बायें कर द्रुम टेके ठाढ़ी।

बिछुरे मदन गोपाल रसिक मोहिं, बिरह-ब्यथा तनु बाढ़ी।
लोचन सजल, बचन नहिं आवै स्वाँस लेति अति गाढ़ी।
नंदलाल हमसौं ऐसी कीन्ही, जल तैं मीन धरि काढ़ी।
तब कत लाइ लड़ाइ लड़ैते बैनी कर गुही गाढ़ी।
सूर स्याम प्रभु तुम्हरे दरस बिनु अब न चलत डग आढ़ी॥

जौ देखै द्रुम के तरें मुरछी सुकुमारी।
चकित भईं सब सुंदरी यह तौ राधा री।
याही की सोभति सबै यह रही कहाँ री।
धाइ परीं सब सुंदरी जो जहाँ तहाँ री।
तन की तनकहुँ सुधि नहीं, ब्याकुल भई बाला।
यह तौ अति बेहाल है, कहाँ गए गोपाला।
बार-बार बूझति सबै नहिं बोलति बानी।
सूर स्याम काहैं तजी, कहि सब पछितानी॥१०६१॥

क्यौं राधा, नहिं बोलति है।

काहैं धरनि परी ब्याकुल ह्वै काहैं नैन न खोलति है।
कनक-बेलि सी क्यौं मुरझानी क्यौं बन माँझ अकेली है।
कहाँ गए मनमोहन तजि कै, कोहैं बिरह दुहेली है।
स्याम-नाम स्रवननि धुनि सुनि कै, सखियनि कंठ लगावति है।
सूर स्याम आए यह कहि-कहि, ऐसैं मन हरषावति हैं॥१०६२॥

कहाँ रहे अब लौं तुम स्याम।

नैन उघारि निहारि रही तहँ, जौ देखै बन-धाम।
लागी करन बिलाप सखनि सौं स्याम गए मोहिं त्यागि।
तुमकौं नहीं मिले नँद-नंदन पूछति यह तब जागि।
निरखि बदन बृषभानु-कुँवरि कौ, मनौ सुधा-बिनु चंद।
राधा-बिरह देखि बिरहानी, यह गति बिनु नँद नंद।

हरि बिनु लागत है बन सूनी ।
ढूँढ़त फिरति सकल ब्रज-जुबती, बाढ़त काम-दुख दूनी ॥
तबहिं सुर-धुनि सुनि स्रवननि धाई, मुरलि-नाद मृदु कीनी ।
ब्यापित मकरध्वज अति आतुर, मनहु मीन जल-हीनी ॥
चितवति चकित दिसनि दिसि हेरति मनमोहन हरि लीनी ।
द्रुम-बेली पूछैं सब सुन्दरि, नवल जात कहुँ चीनी ॥
कदली-ओट निहोरत अंचल अधर-सुधा-रस भीनी ।
सूर स्याम पिय-प्रेम उमगि रस, हँसि आलिंगन दीन्ही ॥११ १

राधा भूलि रही अनुराग ।
तरु तर रुदन करति सुरभानी, ढूँढ़ि फिरी बन-बाग ॥
कबरी मसत सिखंडी आहि भ्रम चरन मिलीमुख लाग ।
बानी मधुर जानि पिक बोलति कदम करारत काग ॥
कर पल्लव किसलय कुसुमाकर, जानि भसत भए कीर ।
राका चंद चकोर जानि कै, पिवत, नैन, को नीर ॥,
बिहबल बिकल जाति नँद-नंदन, प्रगट भए तिहिं काल ।
सूरदास प्रभु प्रेमातुर वर, लाय लई भुज माल ॥११०२॥

स्याम तजी स्यामा गोपाल ।
तीरी कृपा बहुत गरबानी, छौड़ी भूमि ब्रज-बाल ॥
तैं कछु कपट सबनि सौं कीन्यौ, अपजसे तैं न डरानी ।
हम एकहि सँग एकहि मति सब कोउ नहिं बिलगानी ॥
हम चातकि, घन हरि नँदनंदन, बरषनि लगि हित कीन्यौ ।
तुम मद प्रबल पवन सम सजनी, प्रेम बीच दुख दीन्यौ ।
बानी, बैन, सुस्मित स्रम, सुखनिधि मोहन मेघु मनायौ ॥
सूर स्याम तन, परस, परस करि, मिमि, संताप नसायौ ॥११०३

प्रगट भए नँदनंदन आइ ।
प्यारी निरखि बिरह अति व्याकुल वर तैं लई उठाइ ॥

उभय भुजा भरि अंकम दीन्हीं, राखी कंठ लगाइ।
मानौं तैं प्यारी तुम मेरैं, यह कहि दुख बिसराइ ॥
हँसत भए अंतर हम तुम सौं मदन कोक उपजाइ।
धरनी मुरछि परीं तुम काहैं, कहाँ गई चतुराई।
राधा सकुचि रही मन जान्यौ, कह्यौ न कछू सुनाइ।
सूरदास-प्रभु मिलि सुख दीन्यौ दुख डारयौ बिसराइ ॥११०४

स्याम-छबि निरखति नागरि नारि।
प्यारी-छबि निरखत मनमोहन सकत न नैन पसारि।
पिय सकुचत नहिं दृष्टि मिलावत सन्मुख होत लजात।
मोरापिका निदर नवओकति, चितहिं हृदय हरषात ॥
परस-परस मोहिनि मोहन मिलि संग गोपी-गोपाल।
सूरदास प्रभु सब गुन लायक, दुष्टनि के उर-साल ॥११०५

बहुरि स्याम सुख-रास कियौ।
भुज-भुज जोरि जुरीं ब्रजबाला वैसोई रस उमँगि हियौ।
वैसैहि मुरली नाद प्रकास्यौ वैसैहि सुर-नर थकित भए।
वैसैहि उडुगन-सहित निसापति, वैसैहि मारग भूलि गए।
वैसिहि दसा भई जमुना की वैसैहि गति तजि पवन थक्यौ
वैसैहि सुरभि तरंग बढ़ावी वैसैहि बहुरी काम जग्यौ।
बढ़ी निसा वैसैहि मन जुवती, वैसैही हरि सबनि भजे।
सूर स्याम वैसैहि मन-मोहन वैसैहि प्यारी निरखि लजे ॥११०६

दुलहिनि-दूलह स्यामा-स्याम।
कोक-कला-ब्युतपन्न परस्पर, देखत लज्जित काम ॥
जा फल कौं ब्रजनारि कियौ ब्रत सो फल सबहिनि दीन्हौ।
मनकामना भई परिपूरन, सबहिनि मानि जु लीन्हौ ॥
राग-रागिनी प्रगट दिखायौ गायौ जो जिहिं रूप।
सत सुरनि के भेद बतावति नागरि रूप-अनूप ॥

या बन मैं कैसैं तुम आई, स्याम संग हैं नाहिं।
अबु जानति, कहँ गए कन्हाई तहाँ तौहिं लै जाहिं।
मैं हठ कियौ वृथा री माई जिय उपज्यौ अभिमान।
सूर स्याम यौं पै मोहिं जानी ह्वै गए अंतरधान ॥१०५३॥

मैं अपने मन गरब बढ़ायौ।
यहै कह्यौ पिय कंध चढ़ौंगी तब मैं भेद न पायौ।
यह बानी सुनि हँसे कंठ भरि भुजनि उछंग भई।
तब मैं कह्यौ, कौन है मो सी, अंतर आनि भई।
कहाँ गए गिरिधर तजि मोकौं ह्याँ कैसैं मैं आई।
सूर स्याम अंतर भए मोतैं, अपनी चूक सुनाई ॥१०५४॥

कैहिं मारग मैं जाउँ सखी री मारग मोहिं बिसरयौ।
ना जानौं कित ह्वै गए मोहन, जात न जानि परयौ।
अपनौ पिय ढूँढ़ति फिरौं, मोहिं मिलिबे कौ चाव।
काँटा लाग्यौ प्रेम कौ पिय यह पायौ दाव।
बन डोंगर ढूँढ़ति फिरी, घर-मारग तजि गाउँ।
बूझौं द्रुम, प्रति बेलि कोउ कहै न पिय कौ नाउँ।
चकित भई चितवति फिरी ब्याकुल अतिहिं अनाथ।
अब कैं जौ कैसैंहुँ मिलौं, पलक न त्यागौं साथ।
हृदय माँझ पिय घर करौं नैननि बैठक देउँ।
सूरदास प्रभु संग मिलौं, बहुरि रास-रस लेउँ ॥१०५५॥

रुदन करति बृषभानु-कुमारी।
बार-बार सखियनि पर लावति कहाँ गए गिरिधारी।
कबहुँ गिरति धरनि पर ब्याकुल, देखि दसा ब्रजनारी।
भरि अँकवारि धरति, मुख पोंछति देति नैन जल ढारी।
त्रिया पुरुष सौ भाव करति है जाने निठुर मुरारी।
सूर स्याम कुल-धरम अपनौ लए रहत बनवारी ॥१०५६॥

नँद-नँदन इनकौं हम जानति।
ग्वालनि संग रहत वे माई, यह कहि-कहि गुन गानति॥
बन-बन धेनु चरावत बासर तिया पथत डर नाहीं।
देखि दसा वृषभानु-सुता की मन-मनहीं पछिताहीं॥
कहा भयौ तिय सौं हठ कीन्हौ, यह न बूझियै स्यामहिं।
सूरदास प्रभु, मिलहु कृपा करि, दूरि करौ मन तामहिं॥१०९७

मिलहु स्याम मोहिं चूक परी।
तिहिं अंतर तनु की सुधि नाहीं रसना रट लागी न टरी॥
कृष्न-कृष्न करि टेरि उठति है जुग सम बीतत पलक-घरी।
धरनि परी व्याकुल भइ बोलति, लोचन धार आँसु झरी॥
कबहुँ मगन कबहुँ सुधि आवति, सरन सरन कहै बिरह-जरी।
सूर निरखि ब्रजनारि दसा यह, चकित भई जहँ-तहाँ खरी॥

करति हैं हरि चरित ब्रज-नारि।
देखहीं अति बिकल राधा, भई बुधि बिचारि॥
इक भई गोपाल की बपु, इक भई बनवारि।
इक भई गिरिधरन समरथ इक भई दैत्यारि॥
एक इक भई धेनु-चारक, इक भई नँदलाल।
इक भई जमला उधारन इक त्रिभंग-रसाल॥
इक भई छबि-रासि मोहन, कहति राधा नारि।
इक कहति चलि, मिलहु भुज भरि सूर प्रभु की प्यारि॥१०९९

सुनि धुनि स्रवन उठी अकुलाइ।
जो देखै नँद-नँदन नाहीं है, सखियन भेष बनाइ॥
कहा कपट करि मोहिं दिखावति कहाँ स्याम सुखदाइ।
कृष्न-कृष्न सरनागत कहि-कहि, बहुरि गिरी मुरझाइ॥
पुनि दौरी जहँ-तहँ ब्रजबाला बन-द्रुम नीर लगाइ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी बिरहिनि पीर बिहाइ॥११००॥

हरि बिनु लागत है बन सूनौ ।
हँस फिरति सकल ब्रज-युवती, बढ़त काम-दुख दूनौ ॥
तजि सुत-पति सुनि स्रवननि धाई, मुरलि-नाद मधु कीनौ ।
व्यापित मकरध्वज अति आतुर, मनहु मीन जल-हीनौ ॥
चितवति चकित दिसनि दिसि हेरति मनमोहन हरि लीनौ ।
द्रुम-बेली पूछैं सब सुन्दरि, तबहूँ भाव कहुँ चीन्हौ ॥
कदली ओट निहारत अंचल अधर-सुधा-रस भीनौ ।
सूर स्याम पिय-प्रेम उमँगि रस, हँसि आलिंगन दीनौ ॥११०१

राधा भूल रही अनुराग ।
तरु तरु बदन करति मुरझानी, ढूँढ़ि फिरी बन-बाग ॥
कबरी मसत सिखंडी अहि भ्रम, चरन सिखीमुख लाग ।
बानी मधुर जानि पिक बोलति कदम करारत काग ॥
कर-पल्लव किसलय कुसुमाकर, जानि मसत मधु कीर ।
राका चंद चकोर जानि कै, पिवत, नैन, कौ नीर है,
बिह्वल बिकल जानि नँद-नंदन, प्रगट भए तिहिं काल ।
सूरदास प्रभु प्रेमातुर अरु, लाय लई भुज माल ॥११०२॥

भयाव रली स्यामा गोपाल ।
धीरी कृपा बहुत गरवानी, बोली बुधि ब्रज-बाल ॥
तैं कछु कपट सबनि सौं कीन्यौं, अपबस तैं न डरानी ।
हम एकहि सँग, एकहि मति सब कोऊ नाहिं बिलगानी ॥
हम व्याकुल, धनु हरि नँदनंदन बरवनि, लगि, हित कीन्यौ ।
सुत मृदु प्रबल पवन, सम सजनी, प्रेम, बीच दुख दीन्यौ ।
बानी, दीन, दुखित सब, सुजनिमि मोहन बेनु बजायौ ॥
सूर स्याम तब दरस परस करि, मिथि संताप मिटायौ ॥११०३

प्रगट भए नँदनंदन आइ ।
प्यारी निरखि बिरह अति व्याकुल धर तैं लई उठाइ ॥

उभय भुजा भरि अंकम लीन्हीं राखी कंठ लगाइ।
मानहुँ तैं प्यारी तुम मेरैं, यह कहि दुख बिसराइ॥
हँसत भए अंतर हम तुम मैं सहज सनेह उपजाइ।
धरनी मुरछि परी तुम काहैं कहाँ गई चतुराई।
राधा सकुचि रही मन जान्यौ, कह्यौ न कछू सुनाइ।
सूरदास-प्रभु मिलि सुख दीन्हौ दुख डारयौ बिसराइ ॥११०४

स्याम-छबि निरखति नागरि नारि।

प्यारी-छबि निरखत मनमोहन सकत न नैन पसारि।
पिय सकुचत नहिं दृष्टि मिलावत, सन्मुख होत लजात।
मोरपिछ निरखि अवलोकति, मनहिं हृदय हरषात॥
सरस-परस मोहिनि मोहन मिलि, सँग गोपी-गोपाल।
सूरदास प्रभु सब गुन लायक जुवतिनि के रस-मास ॥११०५

बहुरि स्याम सुख-रास कियौ।

भुज-भुज जोरि जुरीं ब्रजबाला वैसोई रस उमँगि हियौ।
वैसेंहिं मुरली नाद प्रकास्यौ वैसेंहिं सुर-नर बस्य भए।
वैसेंहिं उडुगन-सहित निसापति वैसेंहिं मारग भूलि गए।
वैसेंहिं दसा भई जमुना की, वैसेंहि गति तजि पवन थक्यौ
वैसेंहिं मृत्य तरंग बढ़ायौ वैसेंहिं बहुरौ काम जक्यौ।
वहै निसा वैसेंहि मन जुवती वैसेंही हरि सबनि भजै।
सूर स्याम वैसेंहि मन-मोहन वैसेंहि प्यारी निरखि लजै ॥११०६

दुलहिनि-दूलह स्यामा-स्याम।

कोक-कला-प्रवीन परस्पर देखत लज्जित काम॥
ता फल कौं ब्रजनारि कियौ व्रत सो फल सबहिनि दीन्हौ।
मनकामना भई परिपूरन, सबहिंनि मानि जु लीन्हौ॥
राग-रागिनी प्रगट दिखायौ गायौ जो जिहिं रूप।
सत सुरनि के भेद प्रकासति नागरि रूप अनूप॥

अतिहिं सुघर पिय कौ मन मोहति, आपबस करति रिझावति।
सूर स्याम-मोहिनि-मूरति कौं, बार-बार उर लावति ।।११०७।।

हा हा री पिय नृत्य करौ।
जैसें करि मैं तुमहिं रिझाई त्यौं मेरौ मन तुमहु हरौ ॥
तुम जैसें स्रम-वायु करत हौ, तैसें मैंहुं डुलावौंगी।
मैं स्रम देखि तुम्हारे अँग कौ, भुज भरि कंठ लगावौंगी॥
मैं हारी त्यौंही तुम हारौ चरन चापि स्रम मेटौंगी।
सूर स्याम ज्यौं उछंग लई मोहिं, त्यौं मैं हूँ हँसि भेंटौंगी।।११०८।।

रास-रस स्रमित भई ब्रजबाल।
निसि सुख दै जमुना-तट लै गए, भोर भयौ तिहिं काल॥
मनकामना भई परिपूरन, रही न एकौ साध।
षोडस सहस नारि सँग मोहन, कीन्हौ सुख अवगाधि॥
जमुना जल बिहरत नँद-नंदन, संग मिली सुकुमारि।
सूर धन्य धरनी बृंदावन, रवि तनया सुखकारि।।११०९।।

जमुना-जल क्रीड़त नँद-नंदन।
गोपी-बृंद मनोहर चहुँ दिसि, मध्य अरिष्ट निकंदन॥
सोभित सलिल परस्पर छिरकत सिथिल होत भुज-बंधन।
त्यौं महिपति कँचुरि कौ, लघु-लघु छीरत है अँग-चंदन॥
कच-भर कुटिल सुदेस अंसुकनि, चुवत स्याम गति मंदन।
मानहु भरि गंडूष कमल तैं डारत अलि आनंदन॥
भुज भरि अंक अगाध चलत लै ज्यौं सुखचक स्याम रंदन।
सूरदास स्वामी श्रीपति के गुन गावत स्रुति छंदन।।१११०।।

राधे छिरकति छींट छबीली।
कुच कुंकुम कंचुकि-बँद छूटे, लटकि रही लट गीली॥
बंदन सिर ताटंक गंड पर रतन जटित मनि नीली।
गति गयंद मृगराज सुकटि पर, सोभित किंकिनि ढीली॥

मच्यौ खेल जमुना-जल-अंतर प्रेम मुदित रस-भीनी ।
नंद-सुवन-भुज ग्रीव विराजति, भाग-सुहाग भरीली ॥
बरषत सुमन देवगन हरषत, दुंदुभि सरस बजीली ।
सूर स्याम-स्यामा रस क्रीड़त, जमुन-तरंग पनीली ।११११।

बिहरत हैं जमुन जल स्याम ।
राजत हैं दोउ बाहौं-जोरी दम्पति अरु ब्रज-बाम ॥
कोउ ठाढ़ी जल जानु जंघ लौं कोउ कटि-हिरदय ग्रीव ।
यह सुख बरनि सकै ऐसौ को सुन्दरता की सींव ॥
स्याम अंग चंदन की आभा, नागरि केसरि अंग ।
मलयज-पंक कुंकुमा मिलिकै, जल जमुना इक रंग ॥
निसि-स्रम मिट्यौ मिट्यौ तन आलस परम जमुन भई पावन ।
सूर स्याम जल मध्य जुवति-गन ब्रज-जन के मन-भावन ।१११२।

ठाढ़े स्याम जमुना-तीर ।
धन्य पुलिन पवित्र पावन जहाँ गिरिधर बीर ॥
जुवति बनि-बनि भई ठाढ़ी चीर पहिरे चीर ।
राधिका सुख-स्याम-दायक कनक-बरन सरीर ॥
लाल चोली नील लहँगा संग जुवतिनि भीर ।
सूर-प्रभु छबि निरखि रीझे, मगन भयौ मन-धीर ।१११३।

ललकत स्याम मन ललचात ।
कहत हैं घर जाहु सुन्दरि मुख न आवति बात ॥
घर सदन हँसि गोप कन्या, रैनि भीगी गात ।
एक छिन भई कोउ न न्यारी, सबनि पूरी आस ॥
फिरीं सब घर-घर पठाईं मन गईं ब्रज-बाल ।
सूर प्रभु नँद-स्याम पहुँचे, लख्यौ काहु न न्याय ।१११४।

ब्रजबासी सब सोवत पाए ।
नँद-सुवन मति ऐसी ठानी, घनि घर लाग जगाए ॥

उठे प्रात-गाथा मुख भाषत आतुर रजनि बिहानी।
पँडुक भृंग सम्हात बदन भरि, कहत सबै यह बानी ॥
जो जैसे सो तैसे लागे अपनैं-अपनैं काज।
सूर स्याम के चरित अगोचर राखी कुल की लाज ॥१११४॥

ब्रज-जुवती रस-रास पगीं।
कियौ स्याम सब कौ मन भायौ, निसि रति-रंग जगीं ॥
पूरन ब्रह्म, अकल, अबिनासी, सबनि संग सुख कीन्हौ।
जितनी नारि भेष भए तितने, भेद न काहूँ चीन्हौ ॥
यह सुख टरत न काहूँ मन तैं पति-हित-साध पुराई।
सूर स्याम दूलह, सब दुलहिनि निसि भाँवरि दै आई ॥१११५॥

मैं कैसें रस रासहिं गाऊँ।
श्री राधिका स्याम की प्यारी, कृपा बास ब्रज पाऊँ ॥
आन देव सपनेहुँ न जानौं दंपति कौं सिर नाऊँ।
भजन प्रताप चरन-महिमा तैं गुरु की कृपा दिखाऊँ ॥
नव निकुंज बन धाम-निकट इक, आनँद-कुटी रचाऊँ।
सूर कहा बिनती करि बिनवै, जनम-जनम यह ध्याऊँ ॥१११७

रास-रस-लीला गाइ सुनाऊँ।
यह जस कहै सुनै मुख स्रवननि, तिहिं चरननि सिर नाऊँ ॥
कहा कहौं बक्ता स्रोता फल, इक रसना क्यौं गाऊँ।
अष्टसिद्धि नवनिधि सुख-संपति लघुता करि दरसाऊँ ॥
जौ परतीति होइ हिरदै मैं जग-माया धिक देखै।
हरि जन दरस हरिहिं सम बूझै, अंतर कपट न लेखै ॥
धनि बक्ता, तेई धनि स्रोता, स्याम निकट हैं ताकैं।
सूर धन्य तिहिं के पितु-माता भाव-भगति है जाकैं ॥१११८॥

\+ \+ \+ \+

मृदु मुरली की तान सुनावैं इहि बिधि कान्ह रिझावैं।
नटवर भेष बनाए ठाढ़े पसु-मृग निकट बुलावैं ॥

ऐसी को जो आइ जमुन तैं, जल भरि लै घर आवै।
मोर-मुकुट-कुंडल बनमाला पीतांबर फहरावै।
एक अंग सोभा अवलोकत, लोचन जल भरि आवै।
सूर स्याम के अंग-अंग-प्रति कोटि काम-छबि छावै ॥११११

पनघट रोके रहत कन्हाई।
जमुना-जल कोउ भरन न पावै, देखत हीं फिरि जाई।
तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई, आपुन रहे छपाई।
तट ठाढ़े जे सखा संग के, तिनकौं लियौ बुलाई।
बैठारयौ ग्वालनि कौं द्रुम तर, आपुन फिरि फिरि देखत।
बड़ी बार भई, कोउ न आई, सूर स्याम मन लेखत ॥११२

जुवति इक आवति देखी स्याम।
द्रुम कैं ओट रहे हरि आपुन, जमुना-तट गई बाम।
जल हलोरि गागरि भरि नागरि, जबहीं सीस उठायौ।
घर कौं चली जाइ ता पाछैं सिर तैं घट ढरकायौ।
चतुर ग्वारि कर गह्यौ स्याम कौ कनक-लकुटिया पाई।
औरनि सौं करि रहे अचगरी, मोसौं लगत कन्हाई।
गागरि लै हँसि देत ग्वारि-कर, रीतौ घट नहिं लैहौं।
सूर स्याम ह्याँ आनि देहु भरि, तबहिं लकुट कर दैहौं ॥११२१

घट भरि देहु लकुट तब दैहौं।
हौं हूँ बड़े महर की बेटी तुम सौं नहीं डरैहौं।
मेरी कनक-लकुटिया दै री, मैं भरि दैहौं नीर।
बिसरि गई सुधि ता दिन की तोहिं, हरे सबनि के चीर।
यह बानी सुनि ग्वारि बिबस भई, तन की सुधि बिसराई।
सूर लकुट कर गिरत न जानी, स्याम ठगौरी लाई ॥११२२॥

घट भरि दियौ स्याम उठाइ।
नैंकु तन की सुधि न ताकौं, चली ब्रज-समुहाइ।

स्याम सुंदर नैन-भीतर, रहे आनि समाइ।
जहाँ जह भरि दृष्टि देखे, तहाँ-तहाँ कन्हाइ।
उतहिं तैं इक सखी आई, कहति कहा भुलाइ।
सूर अबही हँसत आई, चली कहा गवाँइ ॥११२३॥

काहू तोहिं ठगौरी लाई।
बूझति सखी सुनति नहिं नैकहुँ, तुही किधौं ठगमूरी खाई।
चौंकि परी सपनैं जनु जागी, तब बानी कहि सखिनि सुनाई।
स्याम बरन इक मिल्यौ ढुटौना तिहिं मोकौं मोहिनी लगाई।
मैं जल भरे इतहिं कौं आवति, आनि अचानक अंकम लाई।
सूर ग्वारि सखियनि के आगैं, बात कहति सब लाज गँवाई॥

नैकु न मन तैं टरत कन्हाई।
इक ऐसैंहिं छकि रही स्याम-रस, तापर इहिं यह बात सुनाई।
वाकौं सावधान करि पठयौ, चली आपु जल कौं अतुराई।
मोर मुकुट पीतांबर काछे, देख्यौ कुँवर नंद कौ आई।
कुंडल झलकत ललित कपोलनि सुंदर नैन बिसाल सुहाई।
चकी सूर प्रभु ये ढंग सीखे, ठगत फिरत हौ नारि पराई ॥११२५॥

कहा ठग्यौ, तुम्हरौ ठगि लीन्हौ ?
क्यौं नहिं ठग्यौ और कहु ठगिहौ, औरहिं के ठग चीन्हौ।
कहौ नाम धरि कहा ठगायौ सुनि राखैं यह बात।
ठग के लच्छन मोहिं बतावहु कैसे ठग के गात ?
ठग के लच्छन हमसौं सुनियै मृदु मुसुकनि चित चोरत।
नैन-सैन दै चलत सूर-प्रभु तन त्रिभंग करि मोरत ॥११२६॥

जानतिहिं करत तुम स्याम अचगरी।
काहू की दोहनि हौ ढेंढुरी काहू की फोरत हौ गगरी।
भरन देहु जमुना-जल हमकौं, दूरि करौ यह बातैं लँगरी।
पैंडे चलन न पावै कोऊ, रोकि रहत लरिकनि लै डगरी।

तू मोहीं कौं मारन जानति।
—रित कहा कोउ जानै, उनहिं कही तू मानति ॥
—र तैं मोहिं बुलायौ, गढ़ि-गढ़ि बातैं बानति।
—गिरी गागरी सिर तैं, अब ऐसी बुधि ठानति ॥
—रतई तू कहाँ रही कहि, मैं नहिं तोकौं जानति।
—हिं देखतही रिस गई मुख चूमति उर आनति ।।११२६

— झूठहिं सुतहिं लगावति खोरि।
जसति जनकैं संग नीकैं बातैं मिलवति जोरि।
र जोबन-मद की माती मेरौ तनक कन्हाई।
। फोरि गागरी सिर तैं उरहन लीन्हे आई ॥
नकैं हिग आवत कहति है ए पापिनि सब नारि।
याम अब कहौ मानि तू हैं सब ढोठि गँवारि ।।११२७

ब्रज-घर-घर यह बात चलावत।
कौ सुत करत अचगरी जमुना जल कोउ भरन न पावत
न नटवर बपु काछि मुरली राग मलार बजावत।
वे रवि किरनहुँ तैं दुति मुकुट इंद्र धनुहूँ तैं भावत।
दु न करत अचगरी गागरि धरि जल मुहैं ढरकावत ॥
मैं मात पिता दोउ ऐसे रैंग आपुनहिं पढ़ावत ।।११२८

करत अचगरी नँद महर कौ।
। लिये जमुना तट बैठ्यौ, निधरक न लोग डगर कौ।
लीन्हौं काऊ बिन पराजौं जुवतिनि कैं मन ध्यान।
एव कर्म स्यामसुंदर तजि और न जानति आन।
लीला सब स्याम करत हैं, ब्रज जुवतिनि कैं हेत।
मजै जिहिं भाव कृष्न कौ तार्कौं सोइ फल देत ।।११२९

ब्रज-मैंहैं कोउ चलन न पावत।
ना सँग औरनि ढोटा दैं-दैं होत जहाँ-तहँ धावत।

जमुन-तट हरि देखि ठाढ़े, बरनि आवै बहरि।
सूर स्यामहिं नैकु बरजौ, करत हैं अति चहरि ॥११२१॥

कहा कहौं मोसौं कही सबहीं।
जौ पाऊँ तौ तुमहिं दिखाऊँ, हा हा करिहै अबहीं।
तुमहूँ गुन जानति हौ हरि के, ऊखल बाँधे जबहीं।
सटिया सौं मारन जब लागी, तब बरज्यौ मोहिं सबहीं।
लरिकाई तैं करत अचगरी मैं जाने गुन तबहीं।
सूर हाल कैसे करिहौं अरि आवै तौ हरि अबहीं ॥११२२॥

मैं जानति हौं ढीठ कन्हाई।
माखन दौं पर देहु स्याम कौं कैसी करौं सयाई।
मोसौं करत ढिठाई मोहन मैं जाकी हौं माई।
और न काहू की यह मानै, कछु सकुचत बस माई।
अब जौ जाउँ कहा तिहिं पाऊँ, कासौं देहु भराई।
सूर स्याम दिन दिन लंगर भयौ, दूरि करौं लँगराई ॥११२३

जुवति बोधि सब घरहिं पठाई।
यह अपराध मोहिं बकसौ री, यहै कहति हौं मेरी माई।
इत तैं चली घरनि सब गोपी उत तैं आवत कुँवर कन्हाई।
बीचहिं भेंट भई जुवतिनि हरि, नैननि बोरत गईं लजाई।
जाहु कान्ह महतारी टेरति बहुत पढ़ाई करि हम आईं।
सूर स्याम मुख निरखि चली हँसि, मैं कैसी बनती समुझाई ॥

जसुमति यह कहि कै रिस पावति।
रोहिनी करति रसोई भीतर, कहि-कहि ताहि सुनावति।
गारी देत यह पैठिनि कौं, तैं पाई ह्यौं आवति।
हा हा करति सबनि सौं मैं हौं, कैसेहु मूँड छुड़ावति।
जाति-पाँति सौं कहा अचगरी यह कहि सुतहिं खिरावति
सूर स्याम कौ सिखवति हारी, मारेहुँ लाज न आवति ।११२४

तू मोहीं कौं मारन जानति ।
उनके चरित कहा कोउ जानै, उनहिं कही तू मानति ॥
कदम-तीर तैं मोहिं बुलायौ, गढ़ि-गढ़ि बातैं बानति ।
मटकत गिरी गागरी सिर तैं, अब ऐसी बुधि ठानति ॥
फिरि चितई तू कहाँ रही कहि मैं नहिं तोकौं जानति ।
सूर सुतहिं देखतही रिस गई मुख चूमति उर आनति ।११३६

झूठहिं सुतहिं लगावति खोरि ।
मैं जानति उनके ढँग नीकैं बातैं मिलवति जोरि ।
वै सब जोबन-मद की माती, मेरौ तनक कन्हाई ।
आपुन फोरि गागरी सिर तैं उरहन लीन्हे आई ॥
तू उनकैं ढिग जात कबहिं है, वै पापिनि सब नारि ।
सूर स्याम अब कह्यौ मानि तू, हैं सब ढीठि गँवारि ।११३७

ब्रज-घर-घर यह बात चलावत ।
जसुमति कौ सुत करत अचगरी जमुना-जल कोउ भरन न पावत ।
स्याम बरन नटवर वपु काछे मुरली राग मलार बजावत ।
कुंडल-छबि रबि-किरनहुँ तैं दुति मुकुट इंद्र धनुहूँ तैं भावत ।
मानत काहु न करत अचगरी गागरि धरि जल मुँह ढरकावत ॥
सूर स्याम कौं मात-पिता दोउ, ऐसे ढँग आपुनहिं पढ़ावत ।११३८

करत अचगरी नँद महर कौ ।
सखा लिये जमुना-तट बैठ्यौ निबहै न लोग डगर कौ ।
कोउ लीन्हौं काहू किन बरज्यौ जुवतिनि कैं मन स्याम ।
मन-बच कर्म स्यामसुंदर तजि और न जानति बाम ।
यह लीला सब स्याम करत हैं, ब्रज-जुवतिनि कैं हेत ।
सूर भजै जिहिं भाव कृष्ण कौं ताकौं सोइ फल देत ।११३९

ब्रज-खोरैं कोउ चलन न पावत ।
ग्वाल सखा सँग लीन्हें डोलत दै-दै दौर जहाँ-तहँ धावत ।

काहू की ईंडुरी फटकारत काहू की गगरी ढरकावत।
काहू कौं गारी दै भाजत, काहू कौं कंकम मारि बजावत।
काहू नहिं मानत ब्रज-भीतर नंद महर कौ कुँवर कहावत।
सूर स्याम नटवर-वपु काछे जमुना कैं तट मुरलि बजावत॥

राधा सखिनि लई बुलाइ।
चली जमुना-जलहिं जैये चलीं सब सुख पाइ॥
सबनि इक-इक कलस लीन्हौ तुरत पहुँची आइ।
तहाँ देख्यौ स्याम सुंदर कुँवरि मन हरषाइ।
नंद-नंदन देखि रीझे, चितै रहे चित लाइ।
सूर प्रभु की प्रिया राधा भरति जल मुसुकाइ।।११४१।।

भरहिं चलीं जमुना-जल भरि कै।
सखिनि बीच नागरी बिराजति भई प्रीति उर हरि कै।
मंद-मंद गति चलत अधिक छबि, अंचल रह्यौ फहरि कै।
मोहन कौं मोहिनी लगाई, संगहिं चले डगरि कै।
बेनी की छबि कहत न आवै रही नितंबनि हरि कै।
सूर स्याम प्यारी के बस भए, रोम-रोम रस भरि कै।।११४२।।

सखियनि बीच नागरी आवै।
छबि निरखत रीझ्यौ नँद-नंदन, प्यारी मनहिं रिझावै।
कबहुँक आगैं कबहुँक पाछैं, नाना भाव बतावै।
राधा यह अनुमान करै हरि मेरे चितहिं चुरावै।
आगैं जाइ कनक लकुटी लै, पंथ सँवारि बनावै।
निरखत जहाँ छाँह प्यारी की तहँ लै छाँह छुवावै।
छबि निरखत तन वारत अपनी नागरि जियहिं जनावै।
अपने सिर पीतांबर वारत, ऐसैं रुचि उपजावै।
चोलि इहनियों चलत दिखावत इहिं मिसि निकटहिं आवै।
सूर स्याम ऐसे भावनि सौं, राधा-मनहिं रिझावै।।११४३।।

× × ×

ऐसौ हम माँगियै नहिं जौ हम पै दियौ न जाइ।
बन मैं पाइ अकेली जुवतिनि, मारग रोकत धाइ।
घाट-बाट औघट जमुना-तट बातैं कहत बनाइ।
कोऊ ऐसौ दान लेत है कौनैं पठै सिखाइ।
हम जानतिं तुम यौं नहिं रैहौ रहिहौ गारी खाइ।
जो रस चाहौ सो रस नाहीं गोरस पियौ अघाइ।
औरनि सौं लै लीजै मोहन तब हम देहिं बुलाइ।
सूर स्याम कत करत अचगरी हम सौं कुँवर कन्हाइ।।११४८।।

सूधैं दान न काहैं लेत।
और अटपटी छाँड़ि नँद-सुत रहहु कँपावत बेत।
बृंदावन की बीथिनि तकि-तकि, रहत गुमान समेत।
इन बातनि पति नाहिंन पैयत जानि न होहु अचेत।
अबलनि रोकि-रोकि पकरत हौ मारग चलन न देत।
सो तौ तुम कछु कहि न सुनावत कहा तुम्हारौ लेत।
आजु न जान देहिं री ग्वारिनि बहुत दिननि कौ नेत।
सूरदास प्रभु कुंज-भवन चले ओरि उरनि मन देत।।११४९।।

ऐसैं जनि बोलहु नँद-लाला।
छाँड़ि देहु अँचरा मेरौ नीकैं, जानत और सी बाला।।
बार बार मैं तुमहिं कहति हौं, परिहौ बहुरि जँजाला।
जोबन रूप देखि ललचाने अबहीं तैं ये ख्याला।
तरुनाई तनु आवन दीजै कत जिय होत बिहाला।
सूर स्याम उर तैं कर टारहु टूटै मोतिनि-माला।।११५०।।

कहा अटनि परी अमन्द तुम्हारी, पग लागत हौ पैरे।।
ऐ बतियाँ तुम देखि हँसि भावत रह पर्यौ चहुँफेरे।
अब सुनिहैं यह बात आजु की, जाग जुवति सब नेरे।
मधुपनि हैं घर घर देता सौ नेकु लाज नहिं तेरे।

काहू की ईंडुरी फटकारत काहू की गगरी ढरकावत।
काहू कौं गारी दै भाजत, काहू कौं कंकम मारि भजावत।
काहू नहिं मानत ब्रज-भीतर नंद महर को कुँवर कहावत।
सूर स्याम नटवर-बपु काछे जमुना कैं तट मुरलि बजावत॥

राधा सखिनि लई बुलाइ।
चली जमुना-जलहिं भैंरे चली सब सुख पाइ॥
सबनि इक-इक कलस लीन्हौ, तुरत पहुँची जाइ।
तहाँ देख्यौ स्याम सुंदर कुँवरि मन हरषाइ।
नंद-नंदन देखि रीझे, चिते रहे चित लाइ।
सूर प्रभु की प्रिया राधा भरति जल मुसुकाइ॥११४२॥

घरहिं चली जमुना-जल भरि कै।
सखिनि बीच नागरी बिराजति भई प्रीति उर हरि कै।
मंद-मंद गति चलत अधिक छबि अंचल रह्यौ फहरि कै।
मोहन की मोहिनी लगाई, संगहिं चले डगरि कै।
बेनी की छबि कहत न आवै रही नितंबनि ढरि कै।
सूर स्याम प्यारी के बस भए रोम-रोम रस भरि कै॥११४३॥

सखियनि बीच नागरी आवै।
छबि निरखत रीझयौ नँद-नंदन, प्यारी मनहिं रिझावै।
कबहुँक आगैं कबहुँक पाछैं, नाना भाव बतावै।
राधा यह अनुमान करै, हरि मेरे चितहिं चुरावै।
आगैं आइ कनक लकुटी लै, पंथ सँवारि बनावै।
निरखत जहाँ छाँह प्यारी की, तहँ लै छाँह छुवावै।
छबि निरखत तन बारत अपनौ, नागरि जियहिं जनावै।
अपने सिर पीतांबर वारत, ऐसैं रुचि उपजावै।
कोटि चहुनियौं चलत दिखावत, इहिं मिसि निकटहिं आवै।
सूर स्याम ऐसे भावनि सौं, राधा-मनहिं रिझावै॥११४४॥

× × ×

ऐसी दान माँगियै नहिं जौ हम पैं दियौ न जाइ।
बन मैं पाइ अकेली जुवतिनि मारग रोकत धाइ।
घाट-बाट औघट जमुना-तट बातैं कहत बनाइ।
कोऊ ऐसी दान लेत है कौनैं पठै सिखाइ।
हम जानतिं तुम यौं नहिं रैहौ रहिहौ गारी खाइ।
जो रस चाहौ सो रस नाहीं गोरस पियौ अघाइ।
औरनि सौं लै लीजै मोहन, तब हम दैहिं बुलाइ।
सूर स्याम कत करत अचगरी हम सौं कुँवर कन्हाइ।।११४४।

सूधैं दान न काहैं लेत।
और अटपटी छाँड़ि नंद-सुत रहहु कँपावत बेत।
बृंदावन की बीथिनि तकि-तकि रहत गुमान समेत।
इन बातनि पति मार्हिन पैयत जानि न होहु अचेत।
अपसनि रचकि-रचकि पकरत हौ, मारग चलन न देत।
सो तौ तुम कछु कहि न बनावत कहा तुम्हारौ हेत।
आजु न जान दैहैं री ग्वारिनि बहुत दिननि कौ नेत।
सूरदास-प्रभु कुंज-भवन चलो, छोरि हरषि मन देत। ११४५

ऐसें जनि बोलहु नँद-लाला।
छाँड़ि देहु अँचरा मेरौ नीकैं जानत और सी बाला।।
बार बार मैं तुमहिं कहति हौं, परिहौ बहुरि जँजाला।
जोबन रूप देखि ललचाने अबहीं तैं ये ख्याला।
तरुनाई तनु आवन दीजै, कत जिय होत बिहाला।
सूर स्याम उर तैं कर टारहु टूटै मोतिनि-माला।११४६।

कहा मचति परी कान्ह तुम्हारी, कत रोकत हौ मेरे।।
ए बतियाँ तुम हँसि हँसि भाषत इहै चलै चहुँफेरे।
अब सुनिहैं यह बात आजु की, कान्ह जुवति सब नेरे।
सकुचति हैं घर घर चेरी लौं नैंकु लाज नहिं तेरे।

अतिहिं अबेर भई घर कौं री चितै हँसति मुख हेरे।
सूरदास प्रभु कृष्ण कहा हौ चेरी हैं कहु केरे ।।११४७

तुम कबके जु भए हौ दानी।
मटुकी फोरि हार गहि तोरयौ इन बातनि पहिचानी।
नंद महर की कानि करति हौं न तु करतौ मेहमानी।
भूलि गए सुधि ता दिन की अब बाँधे जसुदा रानी।
अब लौं सही तुम्हारी ढीठी तुम यह कहत बरानी।
सूर स्याम कछु करत न बनिहै, नृप पावै कहुँ जानी ।।११४८।

दधि-मटुकी हरि छीन लई।
हार तोरि चोली-बँद तोरयौ जोबन कैं बस दीठि भई।
ज्यौंही ज्यौं हम सूधे बोलत त्यौंही त्यौं अति सतरि गई।
बार करति अबही रोवहुगी, बार-बार कहि दई-दई।
अंस परायौ देहु न नेकहुँ माँगत ही सब करति नई।
सूर सुनहु मैं कहत कबहुँ सौं प्रीति करहु, जु भई सुभई ।।११४९

कन्हैया, हार हमारौ देहु।
दधि, माखनी, दूध सो कछु चाहौ, सो तुम वैसेहि लेहु।।
कहा करौं दधि दूध तिहारौ, मोसौं नाहिन काम।
जोबन-रूप दुराइ धरयौ है ताकौ लेति न नाम।
मोकैं मन है माँगत तुम सौं, बैर नहीं तुम मानति।
सूर सुनहु री ग्वारि सयानी अंतर हमसौं राखति ।।११५०।

है कब तोरयौ हार मोसरि कौ।
मोती बगरि रहे सब बन मैं, गयौ कान कौ तरिकौ।
ये अवगुन जु करत गोकुल मैं तिलक दिये केसरि कौ।
ढीठ गुवाल दही कौ माती ओढ़नहार कमरि कौ।
आइ पुकारें जसुमति आगैं चढ़ति सु मोहन सरिकौ।
सूर स्याम जानी चतुराई जिहि अभ्यास महुअरि कौ ।।११५१

मैं तुम्हरे मन की सब जानी ।
आपु सबै इतराति फिरति हौ, दूषन देति स्याम कौं आनी ।
मेरौ हरि कहँ दसहिं बरस कौ तुम ही जोबन-मद उमदानी ।
लाज नहीं आवति इन लँगरिनि कैसैं धौं कहि आवति बानी ।
आपुहिं तोरि हार चोली-बंद, उर नख-घात बनाइ निसानी ।
कहाँ कान्ह की नन्हक अँगुरियाँ, यह कहि बार बार पछितानी ।
देखहु आइ और काहू कैं, हरि पर सबहिं रहसि भँडरानी ।
सूरदास प्रभु मेरौ नान्हौ तुम तरुनी डोलति अठिलानी ।११४०।

हँसत सखनि यह कहत कन्हाई ।
आइ चढ़ौ तुम सघन द्रुमनि पर, जहँ-तहँ रही लुकाई ।
तब हौं बैठि रहौं मुख मूँदे, जब जानहु सब आई ।
कूदि परौ तब द्रुमनि द्रुमनि तैं दै दै नंद दुहाई ।
चकित होहिं जैसैं जुवती गन, डरनि जाहिं अकुलाई ।
बेनु बिषान मुरलि धुनि कीजौ संख सब्द घहनाई ।
नित प्रति जाति हमारैं मारग यह कहियौ समुझाई ।
सूर स्याम माखन-दधि-दानी, यह सुधि नाहिंन पाई ।११४३।

और सखा सँग लिये कन्हाई ।
आपुहिं निकसि गए आगे कौं, मारग रोक्यौ जाई ।
इहिं अंतर जुवती सब आईं बन आम्यौ कछु भारी ।
पाछैं जुवती रही तिन टेरति, अबहिं गईं तुम हारी ।
तरुनी जुरि इक संग भईं सब इत उत चली निहारति ।
सूरदास प्रभु सखा लिये सँग ठाढ़े भए बिचारत ।११४४।

ग्वारिनि जब देखे नँद नंदन ।
मोर-मुकुट पीतांबर काछे खौरि किए तन चंदन ।
तब यह कह्यौ कहाँ अब जैहौ, आगैं कुँवर कन्हाई ।
यह सुनि मन आनँद बढ़ायौ, मुख कहैं बात डराई ।

भातिहिं अबेर भई घर छाँड़े, चितै हँसति मुख हेरै।
सूरदास प्रभु कहत कहा ही पैरी है कहु केरे।।११४७।

तुम कपके सु मद ही दानी।
मटुकी फोरि, हार गहि तोरयौ इन बातनि पहिचानी।
नंद महर की कानि करति हौं न तु करती मेहमानी।
भूलि गए सुधि ता दिन की जब बाँधे जसुदा रानी।
अब लौं सखौ तुम्हारी होती तुम यह कहत डरानी।
सूर स्याम कछु करत न बनिहै, भूप भावै कहुँ जानी।।११४८।

दधि-मटुकी हरि छीन लई।
हार तोरि चोली-बँद तोरयौ जोबन कैं बल डीठि मई।
ज्यौंही ज्यौं हम सूधें बोलत त्यौंही त्यौं अति सतरि गई।
बाद करति अबही रोवहुगी, बार-बार कहि दई-दई।
अंस पराये देहु न नीकैं माँगत ही सब करति लई।
सूर सुनहु मैं कहत भजहुँ सौं प्रीति करहु, जु भई सुभई।।११४६

कन्हैया, हार हमारौ देहु।
दधि, जननी पूत को कछु चाही, सो तुम ऐसैंहि लेहु।।
कहा करौ दधि-दूध तिहारौ मोसौं नाहिंन काम।
जोबन-रूप दुराइ धरयौ है, ताकौ लेति न नाम।
मोकै मन हौं माँगत तुम सौं बैर नहीं तुम नाखति।
सूर सुनहु री ग्वारि सयानी अंतर हमसौं राखति।।११५०।

तैं कत तोरयौ हार नौसरि कौ।
मोती बगरि रहे सब बन मैं गयौ कान को तरिकौ।
ये अवगुन जु करत गोकुल मैं तिलक दिये केसरि कौ।
ढीठ गुवाल दही कौ माती ओढ़नहार कमरि कौ।
जाइ पुकारैं जसुमति आगैं कहति जु मोहन लरिकौ।
सूर स्याम जानी चतुराई, जिहिं अभ्यास मधुपरि कौ।।११५१

तुम दानी ह्वै आए हम पर, यह हमकौं नहिं भावै ।
कहौ तही सौं निपटै जोई, जातें सब सुख पावै ॥
हमकौं जान देहु दधि बेचन, पुनि कोऊ नहिं लैहै ।
गोरस लेत प्रातहीं सब कोउ सूर धर्यौ पुनि रैहै ।।११५९।

दान दिए बिनु जान न पैहौ ।
जब देहौ ढराइ सब गोरस, तबहिं दान तुम दैहौ ।
तुमसौं बहुत दिनन है मोकौं पहिलै काहि सुनाऊँ ।
चोरी आवति बेचि जाति हौ पुनि गोरस कहँ पाऊँ ।
माँगत दाप, कहा दिखराऊँ, को नहिं हमकौं जानत ।
सूर स्याम तब कह्यौ ग्वालि सौं, तुम मोकौं नहिं मानत ।।११६०।

कहा हमहिं रिस करत कन्हाई ।
यह रिस जाइ करौ मथुरा पर जहँ है कंस कसाई ।
अब हम कहौं जाइ गुहरावैं, चरति तिहारैं गाईं ।
ऐसे दान करत लोगनि कै, कौन रहै इहि ठाईं ॥
अपने घर के तुम राजा हौ सब को राजा कंस ।
सूर स्याम हम देखत पाछे अब सीखे ये गंस ।।११६१।

आइ सबै कंसहिं गुहराबहु ।
दधि-माखन घृत लेत छँड़ाए आजु हजूर पुकारहु ॥
ऐसे की कहि मारि बतावति पल भीतर गहि मारौं ।
मथुरापतिहिं सुनौगी तुमहीं जब धरि कैस पछारौं ।
बार-बार दिन हमहिं बतावति अपनौ दिन न बिचारयौ ।
सूर इंद्र ब्रज ऊपरहिं बहावत तब गिरि राखि उबारयौ ।।११६२

गिरिधर धर्यौ आपने कर कौं ।
ताही के बल दान लेत हौ रोकि रहत तिय पर कौं ॥
अपनेही घर बड़े कहावत मन धरि मंद मदर कौं ।
यह जानति, तुम गाइ चरावन जात सदा बन बर कौं ॥

कोउ-कोउ कहति, चली री जैयै कोउ कहै, पर फिरि जैयै ।
कोउ-कोउ कहति, कहा करिहैं हरि, इनसौं कहा परैयै।
कोउ-कोउ कहति, कालिहीं हमकौं लूटि लए नँद-लाल ।
सूर स्याम के ऐसे गुन हैं, घरहिं फिरीं ब्रज बाल ।।११५५।

ग्वालनि सैन दई तब स्याम ।
कूदि-कूदि सब परहु द्रुमनि तैं जाति चली घर बाम ।।
सैन जानि तब ग्वाल जहाँ-तहँ, द्रुम-द्रुम डार हलायौ ।
धेनु-बिषान-संख-मुरली धुनि, सब इक सब्द बजायौ ।।
चकित तरु-तरु-प्रति देखति, बारनि-बारनि ग्वाल ।
कूदि-कूदि सब परे धरनि मैं घेरि लईं ब्रज-बाल ।
नित प्रति जाति दूध-दधि बेंचन आजु पकरि हम पाइ ।
सूर स्याम कौ दान देहु तब जैहौ, नँद-दुहाई ।।११५६।

यह सुनि हँसी सकल ब्रजनारि ।
आइ सुनी री बात नई इक, सिखए हैं महतारि ।।
दधि-माखन खैबे कौं चाहत माँगि लेहु हम पास ।
सूधैं बात कहौ सुख पावैं चोंपन करत अकास ।।
अब समझी हम बात तुम्हारी, पढ़े एक चटसार ।
सुनहु सूर यह बात कही जनि, जानति नँद-कुमार ।।११५७।

काहे कहत दधि-दान न दैहौ ? ।
लैहौ छीनि दूध-दधि-माखन, देखति ही तुम रैहौ ।।
सब दिन कौ भरि लेउँ आजु ही, तब छाँड़ौं मैं तुमकौं ।
उघटति ही तुम मातु-पिता कौं नहिं जानति हौ हमकौं ।।
हम जानति हैं तुमकौं मोहन लै-लै गोद खिलाए ।
सूर स्याम अब भए जगाती, वै दिन सब बिसराए ।।११५८।

कबहूँ माँगि लेहु दधि दैहैं ।
दूध-दही-माखन जौ चाहौ, सहज आहु सुख पैहैं ।

तुम बानी है आप हम पर, यह हमकौं नहिं भावै ।
करौ वही जौ निबहै ओर्हें, आवैं सब सुख पावैं ॥
हमकों आन देहु दधि बेंचन, पुनि कोऊ नहिं लेहै ।
गोरस लेत प्रातहीं मन भीउ, सूर परयौ पुनि रैहै ।।११४६।।

दान दिये बिनु जान न पैहौ ।
अब देहौ डराइ सब गोरस, बहुरि दान तुम देहौ ।
तुमसौं बहुत लेन है मोकौं पहिलैं ताहि सुनाऊँ ।
चोरी जावति बेंचि जाति हौ, पुनि गोरस कहँ पाऊँ ।
मोंगत दाप कहा दिखराऊँ, को नहिं हमकौ जानत ।
सूर स्याम तब कह्यौ ग्वालि सौं,तुम मोकौं नहिं मानत ।।११६०।।

कहा हमहिं रिस करत कन्हाई ।
यह रिस जाइ करौ मथुरा पर, जहँ हैं कंस कसाई ।
अब हम कहाँ जाइ गुदरावैं, बसति तिहारैं गाउँ ।
ऐसे हाल करत लोगनि के कौन रहे हरि ठाउँ ॥
अपने घर के तुम राजा हौ सब की राजा कंस ।
सूर स्याम हम देखत पाले, अब सीखे ये गंस ।।११६१।।

जाइ सबै कंसहिं गुदरावहु ।
दधि-माखन-घृत लेत छँड़ाए आजु हजूर बुलावहु ॥
ऐसे कौ कहि मोहिं बतावति पल भीतर गहि मारौं ।
मथुरापतिहिं सुनौगी तुमहीं, अब धरि केस पछारौं ।
बार-बार दिन हमहिं बतावति अपनौ दिन न बिचारयौ ।
सूर इंद्र ब्रज ऊपर गरज्यौ तब गिरि राखि उबारयौ ।।११६२

गिरिधर परयौ आपने घर कौं ।
ताही कैं बल दान लेत हौ रोकि रहत तिय पर कौं ॥
अपनेही घर बड़े कहावत सब धरि नंद महर कौं ।
यह जानति, तुम गाइ चरावत जात सदा बन बर कौं ॥

कोउ-कोउ कहति, चलौ री जैयै कोउ कहै, घर फिरि जैयै ।
कोउ-कोउ कहति, कहा करिहैं हरि, इनसौं कहा परैयै।
कोउ-कोउ कहति, काल्हिहीं हमकौं लूटि लए नँद-लाल ।
सूर स्याम के ऐसे गुन हैं, घरहिं फिरीं ब्रज-बाल ।।११२५।

ग्वालनि सैन दई तब स्याम ।
कूदि-कूदि सब परत द्रुमनि तैं जाति चली घर बाम ॥
सैन जानि तब ग्वाल जहाँ-तहँ, द्रुम-द्रुम ऊपर दुरायी ।
बेनु बिषान-संख-मुरली धुनि सब इक संग बजायी ॥
चकित तरु-तरु प्रति देखति डारनि-डारनि ग्वाल ।
कूदि-कूदि सब परे धरनि मैं घेरि लई ब्रज-बाल ।
नित प्रति जाति दूध-दधि बेचन आजु पकरि हम पाईं ।
सूर स्याम कौ दान देहु, तब जैहौ, नंद-दुहाई ।।११२६।

यह सुनि हँसी सकल ब्रजनारि ।
आइ सुनी री बात नई इक सिखए हैं महतारि ।।
दधि-माखन बेंचे की चाहत माँगि लेहु हम पास ।
सूधैं बात कही सुख पावैं जोबन कहत अकास ।।
अब समझी हम बात तुम्हारी परे एक बटमार ।
सुनहु सूर यह बात कही जनि, जानति नंद-कुमार ।।११२७।

कान्ह कहत दधि-दान न दैहौ ? ।
लैहौ छीनि दूध-दधि-माखन, देखति ही तुम रैहौ ॥
सब दिन कौ भरि लेहौं आजु ही, तब छाँड़ौं मैं तुमकौं ।
उघटति हौ तुम मातु-पिता लौं नहिं जानति हौ हमकौं ॥
हम जानति हैं तुमकौं मोहन लै-लै गोद खिलाए ।
सूर स्याम अब भए जगाती, वै दिन सब बिसराए ।।११२८।

अबहूँ माँगि लेहु दधि दैहैं ।
दूध-दही-माखन जो चाहौ, सहज स्वादु सुख पैहैं ।

तुम दानी ह्वै आए हम पर, यह हमकौं नहिं भावै ।
कबौं नहीं की निबहै मोहीं, खावैं सब सुख पावैं ॥
हमकौं दान देहु दधि माखन, पुनि कोऊ नहिं लैहै ।
गोरस लेत प्रातहीं सब कोउ सूर बरषी पुनि देहै ।।११५९।

दान दिए बिनु जान न पैहौ ।
जब देहौ बताइ सब गोरस तबहिं दान तुम देहौ ।
तुमसौं बहुत दिन है मोकौं पहिलैं ताहि सुनाऊँ ।
चोरी आवति, भाजि जाति हौ पुनि गोरस कहँ पाऊँ ।
माँगत दाप कहा दिखराऊँ, को नहिं हमकौं जानत ।
सूर स्याम तब कह्यौ ग्वालि सौं, तुम मोकौं नहिं मानत ।।११६०।

कहा हमहिं रिस करत कन्हाइ ।
यह रिस जाइ करौ मथुरा पर, जहँ है कंस कसाइ ।
जब हम कहौं जाइ गुहरावैं, बसति तिहारैं गाउँ ।
ऐसे दाप करत लोगनि के, कौन रहे इहिं ठाउँ ॥
अपने घर के तुम राजा हौ सब की राजा कंस ।
सूर स्याम हम देखन चाहैं अब सीखे ए गंस ।।११६१।

जाइ सबै कंसहिं गुहरावहु ।
दधि-माखन-घृत लेत छँडाए आजु हजूर बुलावहु ॥
ऐसे की कहि मोहिं बतावति, धन भीतर गहि मारौं ।
मथुरापतिहिं सुनौगी तुमहीं, अब धरि केस पछारौं ।
बार-बार दिन हमहिं बतावति अपनौ दिन न बिचार्यौ ।
सूर इंद्र ब्रज जबहिं बहावत तब गिरि राखि उबार्यौ ।।११६२

गिरिधर धर्यौ आपने कर कौं ।
ताही कैं बल दान लेत हौ, ऐंडि रहत सिर पर कौ ॥
अपनेही घर बड़े कहावत सब धरि नंद महर कौ ।
यह जानति, तुम गाइ चरावत जात सदा बन बर कौं ॥

मुरली कर काछिनि आभूषन, मोर पखौवा सिर कौ।
सूरदास कौंधें कामरिया, और लकुटिया कर की ।।११९३।।

यह कमरी, कमरी करि जानति।
जाके जितनी बुद्धि हृदय मैं सो तितनी अनुमानति।
या कमरी के एक रोम पर, वारौं चीर-पटंबर।
सो कमरी तुम निंदति गोपी जो तिहुँ लोक अडंबर।
कमरी कैं बल असुर सँहारे, कमरिहिं तैं सब भोग।
जाति-पाँति कमरी सब मेरी, सूर सबै यह जोग ।।११९४।।

मोसौं बात सुनहु ब्रज-नारी।
इक उपखान चलत त्रिभुवन मैं तुमसौं कहौं उघारी।
कबहूँ बालक मुँह न दीजियै मुँह न दीजियै नारी।
जोइ मन करैं सोइ करि डारैं मूँड़ चढ़त हैं भारी।
बात कहत अँठिलाति जाति सब, हँसति देति कर तारी।
सूर कहा ये हमकौं जानैं छाँछहिं बेंचनहारी ।।११९५।।

यह जानति, तुम नंदमहर-सुत।
धेनु दुहत तुमकौं हम देखति जबहिं जाति खरिकहिं उत।।
चोरी करत रहे पुनि जानति, घर घर ढूँढ़त भाँड़े।
मारग रोकि भए अब दानी वे ढँग कब तैं छाँड़े।।
और सुनौ जसुमति जब बाँधे तब हम कियौ सहाइ।
सूरदास प्रभु यह जानति हम तुम ब्रज रहत कन्हाइ ।।११९६।।

को माता को पिता हमारैं।
कब जनमत हमकौं तुम देख्यौ हँसियत बचन तुम्हारैं।
कब माखन चोरी करि खायौ, कब बाँधे महतारी।
दुहत कौन की गैया चारत बात कही यह भारी।
तुम जानत मोहिं नंद ढुटौना, नंद कहाँ तैं आए।
मैं पूरन अविगत अविनासी, माया सबनि भुलाए।

यह सुनि ग्वालि सबै मुसुक्यानी ऐसे गुन हौ जानत।
सूर स्याम जौ निदरयौ सबहीं मात-पिता नहिं मानत ।।११६७।

भक्त-हेत अवतार धरौं।
कर्म धर्म कैं बस मैं नाहीं जोग-जग्य मन मैं न करौं।।
दीन-गुहारि सुनौं स्रवननि भरि, गर्व-बचन सुनि हृदय जरौं।
भाव-अधीन रहौं सबही कैं और न काहू नैंकु डरौं।।
ब्रह्मा कीट आदि लौं ब्यापक, सबकौ सुख दै दुखहिं हरौं।
सूर स्याम तब कही प्रगटही, जहाँ भाव तहँ तैं न टरौं ।।११६८।

प्यारी पीतांबर उर मटक्यौ।
हरि तोरी मोतिनि की माला कछु गर कछु कर लटक्यौ।
डीठौ करत स्याम तुम लागे जाइ गही कटि-फेंट।
आपु स्याम रिस करि अंकम भरी भई प्रेम की भेंट।।
जुवतिनि घेर लियौ हरि कौ तब भरि भरि भरि अँकवारि।
सखा परस्पर देखत ठाढ़े हँसत देत किलकारि।।
हाँक दियौ करि नंद दुहाई, आइ गए सब ग्वाल।
सूर स्याम कौं जानति नाहीं ढीठि भई हैं बाल ।।११६९।

हम भई ढीठि, भले तुम ग्वाल।
दीन्ही ग्वाल दई कौ पैहौ ऐसी री यह कहा लँगाल।।
बन-भीतर जुवतिनि कौं रोकत हम खोटी तुम्हरे ये ख्याल।
मात कहन कौ येकु आवत, बड़े सुधर्मा धर्मोहिपाल।।
सासि सखा की ऐसी भरिहौ, तब आवहुगे जीति भुवाल।
आप हैं धरि रिस करि हम पर सूर हमहिं जानत बेहाल ।।११७०।

एक हार मोहिं कहा दिखावति।
नख-सिख लौं अँग-अँग निहारहु ये सब कहहिं दुरावति।।
मोतिनि माल तैराइ कै टीकौ करनफूल नकबेसरि।
कंठसिरी, दुलरो, तिलरो उर, और हार इक नौसरि।।

सुभग सुमन, कटाव की अँगिया, नगनि जरित की डोरें।
बहुँटा कर कंकन बाजूबँद, पते पर हैं जोरें।
छुद्रघंटिका, पग नूपुर जेहरि, बिछिया मन पग छोरें।
सहज अंग-सोभा सब न्यारी, कहत सूर ये थोरें ॥॥

याहू मैं कछु बात तिहारी।
अचिरज आइ सुनौ री भूषन देखि न सकत हमारी।
कहौ गढ़ाइ दिये से आपुन, कै जसुमति, कै नंद।
बाट परयौ तुम पर्यौ जानि कै, करत ठगनि के फंद।
जितनी पहिरि आजु हम आईं घर हैं यातैं दूनी।
सूर स्याम हौ बहुत लुभाने बन देख्यौ धौं सूनौ ॥॥

कहा हँसत मोरत हौ भौंह।
सोई कहौ मनहिं जो आई, तुमहिं नंद की सौंह।
और सौंह तुमकौं गोधन की सौंह माइ जसुमति की।
सौंह तुमहिं बलदाऊ की है कहौ बात जा मति की।
बार-बार तुम भौंह सकोरयौ कहा आपु हँसि रीझे।
सूर स्याम हम पर सुख पायौ, की मनही मन खीझे ॥॥

श्रीदामा गोपिनि समुझावत।
हँसत स्याम के तुम कह जान्यौ, काहैं सौंह दिवावत।
तुमहूँ हँसौ आपनें सँग मिलि, हम नहिं सौंह दिवावैं।
तरुनिनि की यह प्रकृति अनैसी, थोरिहिं बात खिसावैं।
मान्हें लोगनि सौंह दिवावहु, ये दानी प्रभु सबके।
सूर स्याम कौ दान देहु री, माँगत ठाढ़े कब के ॥॥

हम जानति, बड़ कुँवर कन्हाई।
प्रभु सुन्दरें मुख आजु सुनी हम, तुम जानत प्रभुताई।
प्रभुता यही होति इन बातनि, यही बड़ी कै छमा।
वै ठाकुर तुम सेवक उनके जान्यौ सबकौ भ्रमा।

दधि खायौ, मोतिनि लर तोरी, घृत-माखन सोउ लीजै ।
सूरदास प्रभु अपनें सदका धरहिं मान हम दीजै ।।११०५।

की जानै हरि चरित तुम्हार ।

अजहूँ दान नहीं तुम पायौ मन हरि लिये हमारे ।।
ऐसौ करि लीजौ मनमोहन, दूध-दही कछु खाहु ।
नवमाखन तुम्हरेहिं मुख-लायक लीजै दान उगाहु ।।
तुम खैहौ माखन-दधि हम सब देखि-देखि सुख पावैं ।
सूर स्याम तुम अब दधि-दानी कहि कहि प्रगट सुनावैं ।।११०६

माखन-दधि हरि खात ग्वाल-सँग ।

पातनि के दोना सब लै-लै, पतुभिनि मुख मेलत रँग ।।
मटुकिनि तें लै-लै परसति हैं हरष भरी ब्रज-नारी ।
यह सुख तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं दधि जेंवत बनवारी ।।
गोपी धन्य कहति आपुन कौं, धन्य दूध-दधि-माखन ।
जाकौं कान्ह लेत मुख मेलत सखनि कियौ सँभाषन ।।
जो हम साध करति अपनें मन सो सुख पायौ नीकें ।
सूर स्याम पर तन-मन वारति आनँद जी सबही कें ।।११०७

गोपिका अति आनँद भरी ।

माखन-दधि हरि खात प्रेम सौं निरखति नारि खरी ।।
कर लै-लै मुख परस करावत उपमा बरनी सु जाइ ।
मानहुँ कंज मिलत ससि कौं लियें सुधा-कौर कर आइ ।।
जा कारन सिव ध्यान लगावत, सेस सहस मुख गावत ।
कोई सूर प्रगटि ब्रज-भीतर राधा-मनहिं चुरावत ।।११०८

राधा सौं माखन हरि माँगत ।

औरनि की मटुकी कौ खायौ तुम्हरौ कैसौ लागत ।।
लै आई वृषभानु सुता हँसि सद लवनी है मेरौ ।
लै दीन्ही अपनें कर हरि-मुख खात अल्प हँसि हेरौ ।।

सबनिहिं तैं मीठौ दधि है यह, मधुरैं कह्यौ सुनाइ।
सूरदास प्रभु सुख उपजायौ, ब्रज-ललना मनभाइ ।।११७५।।

मेरे दधि कौ हरि स्वाद न पायौ।
जानत इन गुजरिनि कौ सौ है, लयौ छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायौ ॥
धौरी धेनु दुहाइ छानि पय, मधुर आँचि मैं औटि सिरायौ।
नई दोहिनी पोंछि पखारी, धरि निरधूम खिरनि पै तायौ ॥
तामैं मिलि मिस्रित मिसिरी करि, दै कपूर-पुट जावन नायौ।
सुभग ढकनियाँ ढाँकि बाँधि पट, जतन राखि छींकै समुदायौ ॥
हौं तुम कारन लै आई गृह, मारग मैं न कहूँ दरसायौ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि, कियौ कान्ह ग्वालिनि मन भायौ।

गोपी कहति, धन्य हम नारी।
धन्य दूध, धनि दधि धनि माखन,हम परसति जेंवत गिरिधारी॥
धन्य घोष,धनि दिन, धनि निसि वह, धनि गोकुल प्रगटे बनवारी।
धन्य सुकृत पाछिलौ धन्य धनि नंद धन्य जसुमति महतारी॥
धनि धनि ग्वाल धन्य वृंदावन धन्य भूमि यह अति सुखकारी।
धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृन-द्रुम-बन-चारी ।।११८१।।

गन गंधर्व देखि सिहात।
धन्य ब्रज-ललनानि कर तैं ब्रह्म माखन खात ॥
नहीं रेख, न रूप, नहिं तनु-बरन नहिं अनुहारि।
मातु-पिता नहिं दोउ जाकैं हरत-मरत न जारि ॥
आपु कर्ता आपु हर्ता आपु त्रिभुवन-नाथ।
आपुही सब घट कौ व्यापी निगम गावत गाथ ॥
अंग प्रति प्रति रोम जाकैं, कोटि-कोटि ब्रह्मंड।
कीट ब्रह्म प्रभंत जल-थल, इनहिं तैं यह मंड।
बेइ बिस्वंभरन नायक, ग्वाल संग बिलास।
सोइ प्रभु दधि-दान माँगत धन्य सूरजदास ।।११८२।।

यह तिनहिं यह आपहु दीन्ही।
जिन जिन संग जन्म लियौ परगट, सखी-सखा करि कीन्ही॥
गोपी ग्वाल कान्ह द्वै नाहीं ये कहुँ नैंकु न न्यारे।
जहाँ-जहाँ अवतार धरत हरि, ये नहिं नैंकु बिसारे॥
एकै देह बहुत करि राखे, गोपी-ग्वाल मुरारी।
यह सुख देखि सूर के प्रभु कौं थकित अमर-सँग नारी॥११८३॥

अमर-नारि अस्तुति करैं भारी।
एक निमिष ब्रजबासिनि कौ सुख, नहिं तिहूँ लोक बिचारी॥
धन्य कान्ह नटवर बपु धारे धन्य गोपिका नारी।
इक-इक तैं गुन रूप उजागरि, स्याम मानती प्यारी॥
परसति ग्वारि ग्वाल मन जेंवत, धन्य कृष्न सुखकारी।
सूर स्याम दधि-दानी कहि कहि आनँद घोष कुमारी॥११८४॥

यह महिमा येई पै जानैं।
जोग-जज्ञ-तप ध्यान न आवत सो दधि-दान लेत सुख मानैं॥
खात परस्पर ग्वालिनि मिलि कै, मीठौ कहि-कहि आपु बखानैं।
बिस्वंभर जगदीस कहावत ते दधि-दोना माँझ अघाने॥
आपुहिं करता आपुहिं हरता, आपु बनावत, आपुहिं भानैं।
ऐसे सूरदास के स्वामी, ते गोपिनि कैं हाथ बिकाने॥११८५॥

स्याम सुनहु इक बात हमारी।
मीठौ बहुत दई हम तुमकौं, बकसौ चूक हमारी।
मुख जो कही कटुक सब बानी हरष हमारैं नाहीं।
हँसि हँसि कहति लिलत बति तुमकौ अति आनँद मन माहीं॥
दधि-माखन कौ दान और जो, जानौ सबै तुम्हारौ।
सूर स्याम तुमकौं सब दीन्हौ जीवन प्रान हमारौ॥११८६॥

सुनहु बात जुवती इक मेरी।
तुमहिं दूरि होत नहिं कबहूँ तुम राखी मोहिं घेरी।

सखनिहिं तैं मीठी दधि है यह, मधुरैं कह्यौ सुनाइ।
सूरदास प्रभु सुख उपजायौ, ब्रज-ललना मनभाइ ॥११८०॥

मेरे दधि कौ हरि स्वाद न पायौ।
जानत इन गुजरिनि कौ सौ है लयौ छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायौ ॥
धौरी धेनु दुहाइ छानि पय, मधुर आँचि मैं औटि सिरायौ।
नई दोहिनी पोंछि पखारी धरि निरधूम खिरनि पै तायौ ॥
तामैं मिलि मिस्रित मिसिरी करि दै कपूर-पुट जावन नायौ।
सुभग ढकनियाँ ढाँकि बाँधि पट, जतन राखि छीकैं समुदायौ ॥
हौं तुम कारन लै आई गृह, मारग मैं न कहूँ दरसायौ।
सूरदास-प्रभु रसिक-सिरोमनि कियौ कान्ह ग्वालिनि मन भायौ।

गोपी कहति, धन्य हम नारी।
धन्य दूध धनि दधि धनि माखन, हम परुसति जैंवत गिरिधारी ॥
धन्य घोष, धनि दिन, धनि निसि वह धनि गोकुल प्रगटे बनवारी।
धन्य सुकृत पाछिलौ धन्य धनि नंद धन्य जसुमति महतारी ॥
धनि धनि ग्वाल धन्य वृंदावन धन्य भूमि यह अति सुखकारी।
धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृन-द्रुम-बन-डारी ॥११८१॥

गन गंधर्व देखि सिहात।
धन्य ब्रज-ललनानि कर तैं ब्रह्म माखन खात ॥
नहीं रेख, न रूप, नहिं तनु-बरन नहिं अनुहारि।
मातु-पिता नहिं दोउ जाकैं, हरत-मरत न जारि ॥
आपु कर्ता आपु हर्ता आपु त्रिभुवन-नाथ।
आपुही सब घट कौ व्यापी, निगम गावत गाथ ॥
अंग प्रति प्रति रोम जाकैं, कोटि-कोटि ब्रह्मंड।
कीट ब्रह्म प्रजंत जल-थल, इनहिं तैं यह मंड।
बेद बिस्वंभरन नायक ग्वाल संग बिलास।
सोइ प्रभु दधि-दान माँगत, धन्य सूरजदास ॥११८४॥

धिक-धिक स्रवन कथा बिनु हरि के, धिक लोचन बिनु रूप।
सूरदास प्रभु तुम बिनु घर ज्यौं बन-भीतर के कूप ।।२१६०।।

जुवती भवन पर आन बिचारति।
कबहुँक मटुकी लेति सीस पर, कबहुँ धरनि फिरि धारति।
देखत स्याम, सखा सब देखत चिते रही ब्रज नारि।
रीती मटुकिनि मैं कछु नाहीं, सकुची मनहिं बिचारि।
तब हँसि बोले स्याम, जाहु घर तुमकौं भई अबार।
सकुचति दान पाछिले कौ तुम, मैं करिहौं निरवार।
यह कहिकै हरि ब्रजहिं सिधारे, जुवतिनि दान भुलाइ।
सूर स्याम नागर नारिनि के, चित लै गए चुराइ ।।२१६१।।

रीती मटुकी सीस धरैं।
बन की घर की सुरति न काहूँ लेहु दही यह कहति फिरैं।
कबहुँक जाति कुंज भीतर कौं तहाँ स्याम की सुरति करैं।
चौंकि परति, कछु तन-सुधि आवति जहाँ-तहाँ सखि सुनति ररैं।
तब यह कहति कहाँ मैं इनसी, भ्रमि भ्रमि बन मैं वृथा मरैं।
सूर स्याम के रस पुनि छाकति बैसे ही ढँग बहुरि ढरैं ।।२१६२।।

तरुनी स्याम-रस मतवारि।
प्रथम जोबन-रस चढ़ायौ, अतिहिं भई खुमारि।
दूध नहिं दधि नहीं माखन नहीं, रीतौ माट।
महा-रस अँग अंग पूरन कहाँ घर कहँ बाट।
मातु-पितु गुरुजन कहाँ के कौन पति की नारि।
सूर प्रभु के प्रेम-पूरन, छकि रही ब्रजनारि ।।२१६३।।

बैठि गईं मटुका सब धरि कै।
यह जानति अबही हैं आवत स्याम सखा सँग हरि कै।
अंचल सौं दधि-माट दुरावति दृष्टि गई जहँ धरि कै।
गर्वनि मटुकिनि रीता देखि तरुनी गईं भभरि कै।

तुम कारन बैकुंठ तजत हौं जनम लेत ब्रज आइ।
वृंदावन राधा-गोपी सँग यह नहिं बिसर्यौ जाइ॥
तुम अंतर अंतर कह भाषति, एक प्रान द्वै देह।
क्यौं राधा ब्रज बसैं बिसारौं सुमिरि पुरातन नेह॥
अब घर जाहु दान मैं पायौ, लेखा कियौ न जाइ।
सूर स्याम हँसि-हँसि जुवतिनि सौं, ऐसी कहत बनाइ॥११८७॥

घर तनु मन बिना नहिं जात।
आपु हँसि-हँसि कहत हौ जू चतुरई की बात॥
तनहिं घर है मनहिं राखा मोह करी मोह होइ।
कहौ घर हम जाहिं कैसैं मन धरयौ तुम गोइ॥
नैन-स्रवन बिचार बुधि-सुधि रहे मनहिं लुभाइ।
ताहि अबहीं तनुहिं लै घर, परत नाहिंन पाइ॥
प्रीति करि, दुबिधा करौ कत तुमहिं जानी नाथ।
सूर के प्रभु दीजिये मन, जाहिं घर लै साथ॥११८८॥

मन भीतर है बास हमारौ।
हमकौं लै वहँ तुमहिं दुरायौ, यह तौ दोष तुम्हारौ॥
काजैं कहौ, रहैं हम अनतहिं, तुम अपनौ मन देहु।
अब पछितानी लोक-लाज-डर, हमहिं जानि तौ लेहु॥
घटती होइ जाहि तैं अपनी, ताहि कीजिये त्याग।
पीसैं कियौ बास मन-भीतर अब समुझे भई जाग॥
मन दीन्हौ, मोकौं तब लीन्हौ मन लैहौ मैं जाउँ।
सूर स्याम ऐसी जनि कहिये हम यह कही सुभाउ॥११८९॥

तुमहिं बिना मन धिक अरु धिक घर।
तुमहिं बिना धिक-धिक माता पितु, धिक कुल-कानि, लाज, डर॥
धिक सुत पति धिक जीवन जग कौ धिक तुम बिनु संसार।
धिक सो दिवस, पहर, घटिका, पल, जो बिनु नंद-कुमार॥

धिक-धिक स्रवन कथा बिनु हरि के, धिक लोचन बिनु रूप ।
सूरदास प्रभु तुम बिनु घर ज्यौं, बन-भीतर के कूप ॥११६०॥

जुवती ब्रज घर आन बिसारति ।
कबहुँक मटुकी छिति सीस पर कबहुँ धरनि फिरि धारति ।
देखत स्याम, सखा सब देखत, चितै रहीं ब्रजनारि ।
रीती मटुकिनि मैं कछु नाहीं सकुचीं मनहिं बिचारि ।
तब हँसि बोले स्याम आजु घर तुमकौं भई अबार ।
सकुचति दान पाछिलो कौ तुम, मैं करिहौं निरवार ।
यह कहिकै हरि ब्रजहिं सिधारे, जुवतिनि दान मनाइ ।
सूर स्याम नागर नारिनि के, चित लै गए चुराइ ॥११६१॥

रीती मटुकी सीस धरैं ।
बन की घर की सुरति न काहूँ, लेहु दही यह कहति फिरैं ।
कबहुँक जाति कुंज भीतर कौं तहाँ स्याम की सुरति करैं ।
चौंकि परति, कछु तन-सुधि आवति जहाँ-तहाँ सखि सुनति ररैं ।
तब यह कहति कहाँ मैं इनसौं भ्रमि भ्रमि बन मैं वृथा मरैं ।
सूर स्याम के रस पुनि छाकति वैसैं ही ढँग बहुरि ढरैं ॥११६२॥

तरुनी स्याम-रस मतवारि ।
प्रथम जोबन-रस चढ़ायौ अतिहिं भई खुमारि ।
दूध नहिं दधि नहीं, माखन नहीं, रीतौ माट ।
महा-रस अँग अँग पूरन, कहाँ घर, कहँ बाट ।
मातु-पितु गुरुजन कहाँ के, कौन पति, को नारि ।
सूर प्रभु कैं प्रेम-पूरन छकि रहीं ब्रजनारि ॥११६३॥

बैठि गईं मटुकी सब धरि कै ।
यह जानति अबहीं हैं आवत, ग्वाल सखा सँग हरि कै ।
अंचल सौं दधि-माट दुरावति दृष्टि गईं तहँ परि कै ।
सबनि मटुकियाँ रीती देखी तरुनी गईं मसरि कै ।

कहि-कहि उठी जहाँ-तहँ सब मिलि, गोरस गयौ कहूँ ढरिकै।
कोउ कोउ कहै, स्याम ढरकायौ, जान देह री धरि कै।
इहिं मारग कोऊ जनि आवहु, रिस करि चली डगरि कै।
सूर सुरति तनु की कछु आई, उघरत काम लहरि कै॥११८४॥

लोक-सकुच कुल-कानि तजी।
जैसैं नदी सिंधु कौं धावै वैसैंहिं स्याम भजी।
मातु-पिता बहु त्रास दिखायौ, नैंकु न डरी लजी।
हारि मानि बैठे, नहिं लागति बहुतै बुधि सजी।
मानति नहीं लोक-मरजादा हरि कैं रंग मजी।
सूर स्याम कौं मिलि, चूनौ-हरदी ज्यौं रंग रजी॥११८५॥

कोउ माई बरजै री गोपालहिं।
दधि कौ नाम स्यामसुंदर-रस बिसरि गयौ ब्रज-बालहिं।
मटुकी सीस, फिरति ब्रज-बीथिनि बोलति बचन रसालहिं।
उफनत तक्र, चहूँ दिसि चितवत चित लाग्यौ नँद-लालहिं।
हँसति, रिसाति, बुलावति, बरजति देखहु इनकी चालहिं।
सूर स्याम बिनु और न भावै या बिरहिनि बेहालहिं॥११८६॥

कहा कहति तू, मोहिं री माई।
नँद-नँदन मन हरि लियौ मेरौ तब तैं मोकौं कछु न सुहाई।
अब लौं नहिं जानति मैं को ही कब पै तू मेरैं ढिग आई।
कहाँ गेह, कहँ मातु-पिता हैं, कहाँ सजन, गुरुजन, कहँ भाई।
कैसी लाज, कानि है कैसी कहा कहति ह्वै-ह्वै रिसहाई !।
अब तौ सूर भजी नँद-लालहिं की लघुता की होइ बड़ाई॥११८७

मेरे कहे मैं कोउ नाहिं।
कह कहौं कछु कहि न आवै नैंकहूँ न डराहिं।
नैन ये हरि-दरस-लोभी, स्रवन सब्द-रसाल।
मनहीं मन गयौ तन तजि, तब भई बेहाल।

इंद्रियनि पर भूप मन है, सबनि लियौ बुलाइ ।
सूर प्रभु कौं मिले सब ये, मोहिं करि गए बाइ ॥११९८॥

अब तौ प्रगट भई जग जानी ।
वा मोहन सौं प्रीति निरंतर, क्यौंऽब रहैगी छानी ।
कहा करौं सुंदर मूरति इन नैननि माँझ समानी ।
निकसति नहीं, बहुत पचि हारी रोम-रोम अरुझानी ।
अब कैसैं निरवारि जाति है, मिली दूध ज्यौं पानी ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी उर अंतर की जानी ॥११९९॥

सखि मोहिं हरि-दरस-रस प्याइ ।
हौं रँगी अब स्याम-मूरति लाख लोग रिसाइ ।
स्यामसुंदर मदन-मोहन रंग-रूप सुभाइ ।
सूर-स्वामी प्रीति कारन सीस रहौ कि जाइ ॥१२००॥

नँदलाल सौं मेरौ मन मान्यौ कहा करैगौ कोउ ।
मैं तौ चरन कमल लपटानी जो भावै सौ होउ ।
बाप रिसाइ, माइ घर मारै, हँसै बिराने लोग ।
अब तौ स्यामहि सौं रति बाढ़ी बिधना रच्यौ सँजोग ।
जाति महति पति जाइ न मेरौ अरु परलोक नसाइ ।
गिरिधर बर मैं नैंकु न छाँड़ौं मिलौं निसान बजाइ ।
बहुरि कबहिं यह तन धरि पैहौं कहँ पुनि श्रीबनवारि ।
सूरदास-स्वामी के ऊपर यह तन वारौं वारि ॥१२०१॥

करनि दै लोगनि कौं उपहास ।
मन-क्रम-बचन नँद-नंदन कौ नैंकु न छाँड़ौं पास ।
सब या ब्रज के लोग चिकनियाँ मेरे भाएँ घास ।
अब तौ यहै बसी री माई नहिं मानौं गुरु-त्रास ।
कैसैं रह्यौ परै री सजनी, एक गाँव के बास ।
स्याम मिलन की प्रीति सखी री, जानत सूरजदास ॥१२०२॥

एक गाउँ के बास सखी हौं, कैसे धीर धरौं।
लोचन-मधुप अटक नहिं मानत, जद्यपि जतन करौं।
वै इहिं मग नितप्रति आवत हैं, हौं दधि लै निकरौं।
पुलकित रोम-रोम, गदगद सुर आनँद उमँग भरौं।
पल अंतर चलि जात, कलप भर बिरहा अनल जरौं।
सूर सकुच कुल-कानि कहाँ लगि आरज-पथहिं डरौं ॥१२११॥

हौं सँग साँवरे के जैहौं।
होनी होइ, होइ सो अबहीं, जस-अपजस काहूँ न डरैहौं।
कहा रिसाइ करै कोउ मेरौ, कछु जो कहै प्रान तिहिं दैहौं।
देहौं त्यागि, राखिहौं यह व्रत, हरि-रति-बीज बहुरि कब बैहौं
का पाइ सूर अथिर अवनी, तनु तजि अकास पिय-भवन समैहौं।
जम पद ब्रज-बापी क्रीड़ा जल, भजि नँद-नंद सबै सुख लैहौं॥

## (क) नेत्रोपालंभ

मन बिगर्‌यौ, भए नैन बिगारे।
ऐसौ निठुर भयौ ऐसौ री, तब तैं टरत न टारे॥
इंद्री सबै नैन बस कीन्हे, स्यामहिं गीधे मारे।
ये सब कहा कौन हैं मेरे, आनाकानि बिचारे॥
इतने तैं इतने मैं कीन्हे कैसें जाहु बिसारे।
सुनहु सूर जे आपुस्वारथी, ते आपुनहीं मारे ॥१२०५॥

मन कैं भेद नैन गए माई।
लुब्धे जाइ स्यामसुंदर-रस करी न कछू भलाई॥
जबहीं स्याम अचानक आए, इकटक रहे लगाई।
लोक सकुच मरजादा कुल की छिनहीं मैं बिसराई॥
व्याकुल फिरति भवन बन जहँ-तहँ तूल आक उधराई।
देह नहीं अपनी सी लागति यह है मनौ पराई॥
सुनहु सखी मन के ढँग ऐसे ऐसी बुद्धि उपाई।
सूर स्याम लोचन बस कीन्हे रूप-ठगौरी लाई ॥१२०६॥

नैन न मेरे हाथ रहे।
देखत दरस स्यामसुंदर कौ जल की ढरनि बहे॥
यह नीचे कौं धावत आतुर वैसेहिं नैन भए।
यह तौ जाइ समात उदधि मैं ये प्रति अंग रए॥

यह अगाध कहुँ वार पार नहिं, येउ मोमा नहिं पार।
सोचन मिले त्रिवेनी ह्वै कै, सूर समुद्र अपार।१२०७।

नैना नीकैं बनहि रए।
मन अब गयौ, नहीं मैं जान्यौ, ये दोउ निदरि गए॥
ये ती भए भावते हरि के, सदा रहत इन माहीं।
कर मीड़ति, सिर धुनति नारि सब यह कहि कहि पछिताहीं॥
मूरख हैं क्यौं बुद्धि पाछिली हमहूँ करि दियौ आगैं।
अब ती मिले सूर के प्रभु कौं पावति ही अब माँगैं।१२०८।

नैन परे रस-स्याम-सुधा मैं।
सिव सनकादि, ब्रह्म, नारद मुनि, ये लुब्धे हैं जामैं॥
ऐसौ रस बिलसत नाना बिधि खात, खवावत खारत।
सुनहु सखी वैसो निधि सखि कै, क्यौं वै तुमहिं निहारत॥
जिनि यह सुधा-पान सुख कीन्हौ, ते कैसैं दुख देखत।
त्यौं ये नैन भए गरबीले अब काहे हम लेखत॥
काहे कौं अपसोस करति हौ, नैन तुम्हारे नाहीं।
जाइ मिले सूरज के प्रभु कौं इत उत कहुँ न जाहीं।१२०९।

नैना हरि अंग रूप लुब्धे री माई।
लोक लाज कुल की मरजादा बिसराई॥
जैसैं चंदा चकोर, मृगी नाद जैसैं।
कंचुरि ज्यौं त्यागि फनिग फिरत नहीं तैसैं॥
जैसैं सरिता प्रवाह सागर कौं धावै।
कोऊ स्रम कोटि करै, तहाँ फिरि न आवै॥
तनु की गति पंगु किये, सोचति ब्रजनारी।
तैसैं ये मिले जाइ, सूरज प्रभु हारी।१२१०।

नैना भए बजाइ गुलाम।
मन बेंच्यौ लै वस्तु हमारी, सुनहु सखी ये काम॥

प्रथम भेद करि आयौ आपुन, माँगि पठायौ स्याम ।
खैंचि लिये निधरक हरि लीन्हे, मृदु मुसुकनि दै दाम ॥
यह बानी आईं-नाईं परबसी मोल लए कौ नाम ।
सुनहु सूर यह दाप कौन कौ यह तुम कही न काम ।१२११

कहा भए जौ ऐसे लोचन, मेरैं तौ कछु काज नहीं।
मैं तौ व्याकुल भई पुकारति ये सँग लै जु गए मनहीं ॥
त्रिभुवन मैं अति नाम जगायौ फिरत स्याम-सँगहीं-सँगहीं ।
अपनैं सुख कौ कहा चाहियै, बहुरि न आए मो-तनहीं ॥
सो सपूत परिवार चलावै, ये तौ लोभी, धिक इनहीं ।
ऐसे पर ये सूर कहावत लाज नहीं ऐसे जनहीं ।१२१२।

इन चोरनि कहँ होति बड़ाई ।
लूटत हैं दधि-रासि स्याम की, नीके करि निधि पाई ॥
थोरे ही मैं उघरि परैंगे, अतिहिं चले इतराई ।
आरत आत देत नहिं कहूँ, चोरें पर निधि आई ॥
यह संपति ह तिहूँ भुवन की सब इनहीं अपनाई ।
सूरदास प्रभु सँग लै चोरैं काहूँ नहीं जनाई ।१२१३।

इन नैननि मोहिं बहुत सतायौ ।
अब लौं कानि करी मैं सजनी बहुतैं मूँड़ चढ़ायौ ।
निदरे रहत गहे रिस मोसौं मोही दोष लगायौ ।
लूटत आपुन श्री अँग-सोभा ज्यौं निधनी धन पायौ ।
निसिहूँ दिन ये करत अचगरी, मनहिं कहा धौं आयौ ।
सुनहु सूर इनकौ प्रतिपालत, आलस नैंकु न लायौ ।१२१४।

हरि-छबि देखि नैन ललचाने ।
इकटक रहे चकोर चंद ज्यौं, निमिष बिसरि अटकाने ॥
मेरौ कह्यौ सुनत नहिं स्रवननि लोक-लाज न लजाने ।
गए अकुलाइ धाइ मौ देखत, नैंकहुँ नहीं सकाने ॥

जैसें सुभट आव रन सम्मुख तरत न कबहूँ पराने।
सूरदास ऐसी इनि कीन्हीं, स्याम-रंग लपटाने ।१२१२।

सुनि सजनी, तू भई अयानी।
या कलियुग की बात सुनाऊँ, जानति तोहिं सयानी ॥
जो तुम करी भलाई कोटिक, सो नहिं मानै कोई।
जै अनमले बड़ाई तिनकी, मानै सोई सोई।
प्रगट देखि, कह दूरि बताऊँ, हमहूँ स्याम कौं ध्यावैं।
सुनहु सूर सब ब्याकुल डोलैं, नैन तुरत फल पावैं ।१२१६।

नैन करैं सुख हम दुख पावैं।
ऐसौ को पर-बेदन जानै, जासौं कहि जु सुनावैं ॥
तातैं मौन भली सबही तैं कहि कै मान गँवावैं।
लोचन, मन, इंद्री हरि कौं भजि, तजि हमकौं सुख पावैं ॥
वै तौ गए आपने कर तैं, वृथा जीव भरमावैं।
सूर स्याम हैं चतुर सिरोमनि तिनसौं भेद जनावैं ।१२१७।

इन नैननि की कथा सुनावै।
इनकौं गुन औगुन हरि आगैं बिलग-बिलग भेद जनायै।
इनसौं तुम परतीति बढ़ावति, ये हैं अपने काजी।
स्वारथ मानि लेत रति करि कै, बोलत हाँ जी, हाँ जी।
ये गुन नहिं मानत काहू कौ अपनैं सुख भरि लेत।
सूरज प्रभु ये पहिलैं हित करि, फिरि पाछैं दुख देत ।१२१८

ये नैना यौं आहिं हमारे।
इतने तैं इतने हम कीन्हे, बारे तैं प्रतिपारे।
यौवति पुनि अंचल लै पोंछति, आँजति इनहिं बनाइ।
पढ़े भए तब लीन मानि यह, जहँ-तहँ पलक लगाइ।
ऐसे मैवार कहौं पाइहौ, बड़े करैं हरि आगैं।
ये अब ढीठ भए यौं डोलत, हमहिं यमी परित्यागैं ॥

सूर स्याम तुम त्रिभुवन-नायक, दुखदायक तुम नाहीं।
ज्यौं त्यौं करि ये हमहिं मिलावहु अहे कहाँ बसि जाहीं ।।१२१६

नैना अतिहीं लोभ भरे।
संगहिं संग रहत वै जहँ तहँ, बैठत चलत-खरे ।।
काहू की परतीति न मानत, जानत सबहिनि चोर।
लूटत रूप अखूट दाम कौ, स्याम बस्य यौं मोर ।।
बड़े मागमानी यह जानी कृपिन न इनतैं और।
ऐसी निधि मैं नाउ न कीन्हौं कहूँ लेहिं, कहूँ ठौर ।।
आपुन लेहिं, औरहूँ देते बस लेते संसार।
सूरदास प्रभु इनहिं पत्याने को कहै बारंबार ।।१२२०।

ऐसे आपुस्वारथी नैन।
अपनोइ पेट भरत हैं निसि-दिन और न लैन न दैन ।।
वस्तु अपार परी ओछैं कर ये जानत घटि जैहै।
को इनसी समुझाइ कहै, यह दीन्हें ही अधिकैहै ।।
सदा नहीं रैहैं अधिकारी, नाउँ रहत कौं लेते।
सूर स्याम सुख लूटैं आपुन, औरनि हूँ कौं देते ।।१२२१।

ये लोभी ते देहिं कहा री।
ऐसे निठुर नहीं मैं जाने, जैसे नैन महा री ।।
मन अपनौ कबहूँ बढ हैहै, ये नहिं होहिं हमारे।
जब तैं गए नंद-नंदन-ढिग, तब तैं फिरि न निहारे ।।
कोटि करौ वै हमहिं न मानैं, गीधे रूप अगाध।
सूर स्याम कौ कबहुँ त्रासें रहे हमारी साध ।।१२२२।

नैन भरे घर के चोर।
लेत नहिं कछु बनै इनसौं, देखि छबि भयौ भोर ।।
नहीं स्यागत नहीं मागत, रूप लाग प्रकास।
अलक डोरनि बाँधि राखे, हमौ उनकी आस ।।

मैं बहुत करि बरजि हारी, निदरि निकसे हेरि।
सूर स्याम पँचाइ हारे, अंग अँग-छबि घेरि ।।१२२३।

लोचन चोर बाँधे स्याम।
जात ही उन तुरत पकरे, कुटिल अलकनि दाम ।।
सुभग ललित कपोल-आभा मिले दाम अपार।
और अँग छबि लोभ लागे, अब नहीं निरवार ।।
संग गए ते सबै अटके, लटकि अंग अनूप।
एक एकहिं नहीं मानत, परे लोभा-कूप ।।
जो जहाँ सो तहाँ बाँध्यौ नैंकु तन-सुधि नाहिं।
सूर गुरुजन बरहिं मारत, यहै कहि पछिताहिं ।।१२२४।

लोचन भए पखेरू माई।
लुब्धे स्याम रूप चारा कौं, अलक-फंद परे जाई ।।
मोर मुकुट टाटी मानौ यह बैठनि ललित त्रिभंग।
चितवनि लकुट, लास लटकनि पिय, काँपा अलक तरंग ।।
डोरि गहनि मुख-मृदु मुसकावनि लाभ-पीजरा डारे।
सूरदास मन व्याध हमारौ गृह बन तें जु बिसारे ।।१२२५।

लोचन मेरे भृंग भए री।
लोक-लाज बन-घन बेली तजि, आतुर ह्वै जु गए री ।।
स्याम-रूप-रस वारिज लोचन तहाँ जाइ लुबधे री।
अपने सहज पराग-बिलोचनि संपुट-लोभ परे री ।।
हँसनि प्रकास बिगास हेरि कै, निकसत पुनि तहँ पैठत।
सूर स्याम संपुट-कर परसनि, जहाँ-तहाँ भ्रमि बैठत ।।१२२६

मेरे नैन कुरंग भए।
लोचन-बन तैं निकसि चले ये, मुरली-नाद रए ।।
रूप-व्याध कुंडल दुति-चामा, झिझिनि फंदा बीच।
व्याकुल ह्वै धरहिं दृढ़ हेरन, गुरुजन तजि संकोच ।।

भौंह कमान, नैन सर-साधनि, मारनि चितवनि चारि।
हीर रहे नहिं टरत सूर पै, मंद हँसनि सिर डारि ॥१२२७॥

नैन भए बस मोहन तैं।
ज्यौं कुरंग बस होत नाद कैं, टरत नहीं ता गानहि तैं ॥
ज्यौं मधुकर बस कमल-कोष कैं, ज्यौं बस चंद चकोर।
तैसैहिं ये बस भए स्याम कैं, गुड़ी-बस्य ज्यौं डोर ॥
ज्यौं बस स्वाति बूँद के चातक, ज्यौं बस जल के मीन।
सूरज प्रभु के बस्य भए ये छिनु-छिनु प्रीति नवीन ॥१२२८॥

सुभट भए डोलत ये नैन।
सन्मुख भिरत मुरत नहिं पाछैं सीमा चमू करैं न ॥
आयुध सीस-छत्र सौं चाबत पलक-कवच नहिं अंग।
हाव-भाव सर भरत कटाच्छनि, भृकुटी धनुष अपंग ॥
महाधीर ये हत अँग-अँग-बस रूप-सैन पर धावत।
सुनहु सूर ये लोचन मेरे इकटक पलक न लावत ॥१२२९॥

नैना हैं री ये बटपारी।
कपट-नेह करि-करि इन हमसौं गुरुजन तैं करी न्यारी ॥
स्याम-सरस मारग पर रोक्यौ, प्रेम-ठगौरी लाई।
मुख मुसकाइ हँसनि आपुनपौ फाँसी संग लगाइ ॥
मन हमसौं लिखि भेद बतायौ, बिरह फाँस गर डारी।
कुल-लज्जा-संपदा हमारी लूटि लई इन सारी ॥
मोह-बिपिन मैं परी कराहति नेह जीव नहिं जात।
सूरदास गुन सुमिरि-सुमिरि कै अंतरगत पछितात ॥१२३०॥

लीन लीन ह्वै नैन गए री।
ज्यौं जलधर बरषत पर बरषत बूँद बूँद ह्वै निघटि गए री ॥
ज्यौं मधुकर रस-कमल पान करि सोनैं नहिं उन्मत भए री।
ज्यौं चौपड़ी मुदंगम गाजी, फिरि न गहैं जु गए सु गए री ॥

ऐसी दसा भई री इनकी, स्याम-रूप मैं मगन भए री।
सूरदास-प्रभु अगनित सोभा न जानौं किहिं अंग छए री।।१२११।।

तब तैं नैन रहे इकटक्की।
जब तैं दृष्टि परे नँद-नंदन नैंकु न अंत मटक्की।।
मुरली धरे अरुन अधरनि पर कुंडल झलक कपोल।
निरखत इकटक पलक भुलाने, मनौं बिकाने मोल।।
हमकौं पै काहैं न बिसारैं अपनी सुधि उन नाहिं।
सूर स्याम छबि सिंधु समाने बूझा बरुनि पछिताहिं।।१२१२।

मेरे नैन चकोर भुलाने।
भए निसि रहत पलक सुधि बिसरे रूप-सुधा न अघाने।।
पल घटिका, घटि जाम, जाम दिन, दिनहीं जुग कर जाने।
स्वाद परे निमिषहुँ नहिं त्यागत, ताही माँझ समाने।।
हरि मुख बिधु-छबि पीवत ये व्याकुल, नैंकहुँ नहीं अघाने।
सूरदास प्रभु निरखि ललित तनु, अंग अंग अरुझाने।।१२१३।

हरि-मुख-बिधु, मेरी अँखियाँ चकोरी।
राखी रहति ओट पट जतननि तऊ न मानति किहिक निहोरी।।
बरबस ही इन गही सुरुखा, प्रीति आइ चंचल सौं जोरी।
बिबस भई चाहति उड़ि लागन अटकति नैंकु अँचल की डोरी।।
बरबसही इन गही चपलता करत फिरत हमहूँ सौं चोरी।
सूरदास प्रभु मोहन नागर बरषि सुधा-रस सिंधु झकोरी।।१२१४

नैन भए बोहित के काग।
उड़ि-उड़ि जात पार नहिं पावत, फिरि आवत तिहिं लाग।।
ऐसी दसा भई री इनकी अब लागे पछितान।
मो बरजत-बरजत उठि धाए, नहिं पायौ अनुमान।।
वह समुद्र, ये ओछे बासन, धरैं कहाँ सुख-रासि।
सुनहु सूर ये चतुर कहावत, वह छबि महा प्रकासि।।१२१५।

हारि-जीति नैना नहिं जानत ।
आए आठ घरी कौ फिरि-फिरि पै छिनही अपमानत ॥
परे रहत द्वारैं सोभा कैं, पेई गुन गनि गानत ।
हरषित रहत सबनि कौं निदरे नैंकहु लाज न मानत ॥
अब ये रहत निपसई कीन्हे, जद्यपि रूप न आनत ।
दुख-सुख बिरह-सँजोग समिति जनु सूरदास यह गानत ।१२२६

नैना मानऽपमान सही ।
अति अकुलाइ मिले री धरजत, जद्यपि कोटि कही ।
जाकी बानि परी मति जैसी सो तिहिं टेक गही ।
ज्यौं मरकट मूठी नहिं छाँड़त नलिनी सुवा गही ॥
जैसें नीर प्रवाह समुद्रहिं माँझ चली सु बही ।
सूरदास इन ऐसिय कीन्ही फिरि मो तन न चही ।१२२७।

नैन गए न फिरे री माई ।
ज्यौं सरधार जाइ सुपत कौ बहुर्यौ फेरि न आई ।
ज्यौं बालापन बहुरि न आवै, फिरै नहीं तरुनाई ।
ज्यौं जल ढरत गिरत नहिं पावै आगें आगें जाई ।
ज्यौं कुसमप् बाहिरी परि कै, कुम्भ मैं फिरि न समाई ।
वैसी दसा भई हमहूँ की, सूर स्याम-सरनाई ।१२२८।

नैननि सौं झगरौ करिहौं री ।
कहा भयौ जौ स्याम-संग हैं बाँह पकरि सन्मुख करिहौं री ।
जन्महिं तैं प्रतिपालि बड़े किये दिन दिन कौ लेखौ करिहौं री ।
रूप-लूट कीन्ही तुम काहैं, अपने बाँटे कौ धरिहौं री ।
एक मातु-पितु, भवन एक रहे मैं काहैं इनकौ डरिहौं री ।
सूर अंस जौ नहीं दैहिंगे, इनकैं रंग मैंहूँ ढरिहौं री ।१२२९।

नैना रहैं न मेरे हटके ।
कछु पढ़ि दियौ सखी उहिं ढोटा, घूँघरवारी लटकै ।

कनक-कुलुफ मेलि मंदिर मैं, पलक-सँदूक पट झटके।
निगम नेति कुल लाज टूटे सब मम-गर्वहि के झटके ॥
मोहनलाल करी बस अपने, ही निमिष के झटके।
सूरदास पुर नारि फिरावत संग लगाए नट के ॥१२४०॥

सुनि सजनी, मोसों इक बात।
भाग बिना कछु नहीं पाइयै, तू काहैं पुनि-पुनि पछितात।
नैनान बहुत करी री सेवा पल-पल घरी-पहर दिन-रात।
मन-बच-क्रम रहनाई जाकैं सम्य-सम्य इनकी है बात।
कैसैं मिले स्याम इनकौं हरि, जैसे सुत कौं हित कै मात।
सूरदास प्रभु कृपा-सिंधु वे, सहज बड़े हैं त्रिभुवन-तात ॥१२४१॥

नैन स्याम-सुख लूटत हैं।
यहै बात मोकौं नहिं भावै हम ते काहैं छूटत हैं।
महा स्वरूप निधि पाइ अचानक, आपुहिं सबै चुरावत हैं।
अपने हैं, तातैं यह कहियत, स्याम इन्हें मर्यादावत हैं।
यह संपदा कहौ क्यौं पचिहै, बालसँभाली जानत हैं।
सूरदास यौ देवे कछु-इक, कहौ कहा अनुमानत हैं ॥१२४२॥

नैननि हरि कौ निठुर कराए।
चुगली करी जाइ उन आगे हमसौं वै उचटाए ॥
यहै कहौ, हम जनहिं बुलावत, वै नाहिंन ह्याँ आवहिं।
आरज-पंथ लोक की संका तुम-तन आवत पावहिं ॥
यह सुनि कै मन हमहिं बिसारी, राजत नैननि साथ।
सेवा बस करि कै राखत हैं, बात आपनें हाथ ॥
संगहिं रहत फिरत नहिं कबहूँ आपस्वारथी नीके।
सुनहु सूर ये ऐसे हैं, बड़े कुटिल हैं जी के ॥१२४३॥

कपटी नैननि तैं कोउ नाहीं।
घर कौ भेद और के आगे, क्यौं कहिबे कौं जाहीं ॥

मधुप रूप निधरक ह्वै इनसौं, बरजि-बरजि पचि हारी।
मनमथमना भई परिपूरन, हरि रीझे गिरिधारी॥
इनहिं बिना वै उनहिं बिना ये, अंतर नाहीं भावत।
सूरदास यह जुग की महिमा, कुटिल तुरत फल पावत॥१२४४॥

मेरे इन नैननि इते करे।
मोहन बदन चकोर चंद ज्यौं, इकटक तैं न टरे॥
प्रमुदित मनि अवलोकि उरग ज्यौं, अति आनंद भरे।
निधिहिं पाइ इतराइ नीच ज्यौं, त्यौं हमसौं निठुरे॥
ज्यौं अलकें गोचर घूँघट पट सिसु ज्यौं अरनि अरे।
धरे न धीर निमेष रहन-बस, ज्यौं हठ-करनि परे॥
रही चाहि, सिखि लाज-लकुट तैं पसु डर न डरे।
सूरदास गथ खोटी, काहैं पारखि-दोष धरे॥१२४५॥

नैननि बानि परी नहिं नीकी।
फिरत सदा हरि पाछैं-पाछैं कहा लगनि उन जी की॥
लोक लाज, कुल की मरजादा, अतिहीं लागति फीकी।
जो पीतरि मोपै री सजनी, कहौं काहि या ही की॥
अपनैं मन उन सबै करी है, मोहिं धरे हैं बीकी।
सूरदास ये बार लुभाने, मृदु मुसुकनि हरि पी की॥१२४६॥

नैना घूँघट मैं न समात।
सुंदर बदन नंद-नंदन को निरखि-निरखि न अघात॥
अति-रस-लुब्ध महा मधु-लंपट, जानत एक न बात।
कहा कहौं दरसन-सुख माते ओट भएँ अकुलात॥
बार-बार बरजत हौं हारी, तऊ टेव नहिं जात।
सूर तनक गिरिधर बिनु देखें, पलक कलप सम जात॥१२४७॥

लोचन टेक परे सिसु जैसैं।
माँगत हैं हरि-रूप माधुरी खोज परे हैं ऐसें॥

बारंबार पछितात तबहीं रहत न पावैं वैसैं।
आतुर भए आपुनहीं अब लौं, राखे जैसे तैसे॥
कोटि जतन करि-करि परमोधति कह्यौ न मानहिं कैसैं।
सूर कहूँ ठगमूरी खाई, ब्याकुल डोलत ऐसे॥१२४८॥

ये नैना मेरे ढीठ भए री।
घूँघट-ओट रहत नहिं रोकैं, हरि-मुख देखत लोभि गए री॥
अब मैं कोटि जतन करि राखे, पलक-कपाटनि मूँदि लए री।
तब ते उमँगि चले दोउ हठ करि, करौं कहा मैं बाम भए री।
अतिहिं चपल बरज्यौ नहिं मानत, देखि बदन तन फेरि नए री।
सूर स्यामसुंदर-रस अटके, मानहुँ लोभी उहँइ भए री॥१२४९॥

नैना बहुत भाँति हटके।
बुधि-बल-छल-उपाइ करि थाके, नैंकु नहीं मटके।
इत चितवत, उतहीं फिरि लागत, रहत नहीं अटके।
देखतहीं चढ़ि गए हाथ तैं भए चटा नट के।
पलकहिं परनि परे लग ज्यौं हरि-रूप-माँझ भटके।
मिले जाइ हरदी चूना ज्यौं, फिरि न सूर फटके॥१२५०॥

अँखियाँ हरि कैं हाथ बिकानी।
मृदु मुसुकानि मोल इनि लीन्ही, यह सुनि सुनि पछितानी॥
कैसैं रहति रहीं मेरे बस अब कछु औरै भाँति।
अब वै लाज मरति मोहिं देखत बैठीं मिलि हरि-पाँति॥
सपने की सी मिलनि करति हैं, कब आवति, कब जाति।
सूर मिलीं हरि नंद-नँदन कौं, अनत नहीं पतियाति॥१२५१॥

अँखियनि तब तैं बैर धर्‍यौ।
जब हम हटकी हरि-दरसन कौं, सो रिस नहिं बिसर्‍यौ॥
तबही तैं उनि हमहिं भुलायौ गईं उतहिं कौं धाइ।
अब तौ तरकि तरकि ऐंठति हैं, लेनी लेति बनाइ॥

भई जाइ वे स्याम सुहागिनि, बड़भागिनि कहवावैं ।
सूरदास वैसी प्रभुता तजि, हम पै कब वै आवैं ।।१२५२।

धन्य धन्य मँखियाँ बड़भागिनि ।
जिनि बिनु स्याम रहत नहिं नैकहुँ, कीन्ही बनै सुहागिनि ।।
जिनकौं नहीं अंग तैं टारत, निसि-दिन परसन पावैं ।
तिनकी सरि कहि कैसे कोई जे हरि के मन भावैं ।।
हमहीं तै पे भई उजागर, अब हम पर रिस मानैं ।
सूर स्याम अति बिबस भए हैं, कैसे रहत सुमाने ।।१२५३।

— (❀) —

## (ञ) मथुरा-प्रवास

नृपति हृदै मन बिचार परयौ।
क्यौं मारी जोर नंद ढुटौना, ऐसी करनि करयौ ॥
कबहुँक कहत आपु उठि धावौं यहै बिचार करयौ।
सात दिवस मैं वधी पूतना, यह गुनि मनहिं डरयौ ॥
पुनि साहस जिय-जिय करि गरब्यौ, ताकौ काल सरयौ।
सूर स्याम-बलराम हृदय तै, नैकु नहीं बिसरयौ ॥१२४३॥

नंद-सुत सहज बुलाइ पठाऊँ।
स्याम-राम अति सुन्दर कहियत, देखन काज मँगाऊँ ॥
बैरी कौन प्रेम करि ल्यावै भेद न जानै कोइ।
महर-महरि सौं हित करि ल्यावै महा चतुर जौ होइ ॥
इहिं अंतर अक्रूर बुलायौ, अति आतुर महराज।
सूर चल्यौ मन सोच बढ़ाये, कौन है ऐसौ काज ॥१२४४॥

कंस नृपति अक्रूर बुलाये।
बैठि इकंत मंत्र दृढ़ कीन्हौ, दोउ बंधु मँगवाये।
कहूँ मल्ल, कहुँ गज दै राखे, कहुँ धनुष, कहुँ बीर।
नंद महर के बालक मेरैं करषत रहत सरीर ॥
उनहिं बुलाइ बीच ही मारौं नगर न आवन पावैं।
सूर सुनत अक्रूर, कहत नृप मन-मन मौज बढ़ावै ॥१२४५॥

पल नँदहिं सपनौ भयौ, हरि कहूँ हिराने।
बल-मोहन कोउ लै गयौ, सुनि कै बिलखाने॥
ग्वाल-सखा रोवत कहैं हरि तौ कहुँ नाहीं।
संगहिं सँग खेलत रहे यह कहि पछिताहीं॥
दूत एक संग लै गयौ, बलराम कन्हाई।
कहा ठगौरी सी करी, मोहिनी लगाइ॥
बाही के दोउ ह्वै गए, हम देखत ठाढ़े।
सूरज प्रभु वै निठुर ह्वै, अतिहीं गए गाढ़े।।१२४७।।

आसु आइ देखौं वे चरन।
सीतल-सुभग सकल सुखदाता, दुसह दोष-दुख-हरन॥
अंकुस-कुलिस-कमल-धुज चिन्हित अरुन कंज के रंग।
गो-चारत बन आइ पाउहीं, गोप-सखनि कै संग॥
जाकौ ध्यान धरत मुनि नारद, सुर, बिरंचि अरु ईस।
तेई चरन प्रगट करि परसौं, इन कर अपने सीस॥
अति सरूप रथ रहि नहिं सकिहौं तिन परिहौं पर धाइ।
सूरदास प्रभु अभय भुजा धरि, हँसि भेंटिहैं उठाइ।।१२४८।।

सुफलक-सुत-हरि दरसन पायौ।
रहि न सक्यौ रथ पर सुख-व्याकुल, भयौ बड़े मन भायौ॥
भू पर दौरि निकट हरि आयौ, चरननि चित्त लगायौ।
पुलक अंग लोचन जल-धारा श्रीपद सिर परसायौ॥
कृपासिंधु करि कृपा मिले हँसि लियौ भक्त उर लाइ।
सूरदास यह सुख सोइ जानै कहौ कहा मैं गाइ।।१२४९।

अति प्रेमल बलराम-कन्हाई।
दुहुनि गोद अक्रूर लिए हँसि सुमनहुँ तैं हरषाई॥
ग्वाल संग रथ लीन्हे आए पहुँचे ब्रज की ओर।
देख्यौ गोकुल लोग जहाँ-तहँ भैंट करें सुनि सोर॥

## ( घ ) मथुरा-प्रवास

नृपति इहै मन बिचार पर्यौ।
क्यौं मारौं दोउ नंद ढुटौना, ऐसी करनि करयौ॥
कबहुँक कहत आपु उठि धावौं यहै बिचार करयौ।
सात दिवस मैं बधी पूतना यह गुनि मनहिं डरयौ॥
पुनि साहस बिय-बिय करि गर्ज्यौ ताकौ काज सर्यौ।
सूर स्याम-बलराम हृदय तैं, नैंकु नहीं बिसर्यौ।।१२४४।।

नँद-सुत सहज बुलाइ पठाऊँ।
स्याम-राम अति सुन्दर कहियत, देखन काज मँगाऊँ॥
बैठे कौन प्रेम करि ल्यावै, भेद न जानै कोइ।
महर-महरि सौं हित करि ल्यावै, महा चतुर जौ होइ॥
इहिं अंतर अक्रूर बुलायौ, अति आतुर महराज।
सूर चल्यौ मन सोच बढ़ाये, कौन है ऐसी काज।।१२४५।।

कंस नृपति अक्रूर बुलाये।
बैठि इकंत मंत्र दृढ़ कीन्हौ, दोऊ बंधु मँगाये।
कहूँ मल्ल, कहूँ गज दै राखे कहूँ धनुष, कहूँ बीर।
नंद महर के बालक मेरैं, कपट रहत सरीर॥
बनहिं बुलाइ बीच ही मारौं, नगर न आवन पावैं।
सूर सुनत अक्रूर, कहत नृप मन-मन मौज बढ़ावै।।१२४६।।

मथुरा असुर-समूह बसत है, कर-कृपान जोधा हत्यारे।
सूरदास ये लरिका दोऊ, इन कब देखे मल्ल-अखारे ॥१२६४

ब्रजबासिनि के सरबस स्याम।
यह अक्रूर, क्रूर भयौ हमकौं प्रिय के प्रिय मोहन-बलराम।
अपनी लाग लेहु लेखौ करि जो कछु राज-अंस कौ दाम।
और महर लै संग सिधारौ नगर कहा लरिकन कौ काम।
तुम हौ साधु परम उपकारी, सुनियत बड़ौ तिहारौ नाम।
सूरदास-प्रभु पठै मधुपुरी, को जीवै छिन बासर जाम ॥१२६५॥

मेरी माई, निधनी कौ धन माधौ।
बारंबार निरखि सुख मानति, तजति नहीं पल आधौ।
छिनु-छिनु परसति अंकम लावति प्रेम प्रगट ह्वै बाँधौ।
निसिदिन चंद चकोरी अँखियनि, मिटै न दरसन साधौ।
कहिहै कहा अक्रूर हमारौ दैहैं प्रान अबाधौ।
सूर स्यामघन हौं नहिं पठवौं, अबहिं कंस किन बाँधौ ॥१२६६

नहिं कोउ स्यामहिं राखै जाइ।
सुफलक-सुत बैरी भयौ मोकौं कहति जसोदा माइ।
मदनगोपाल बिना घर आँगन, गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रहीं ठगी सी ठाढ़ी कहा ठगौरी लाइ।
सुंदर स्याम-धाम भरि लोचन बिनु देखैं दोउ भाइ।
सूर तिन्हैं लै चले मधुपुरी हिरदै सूल बढ़ाइ ॥१२६७॥

जसोदा बार-बार यौं भाषै।
है कोऊ ब्रज हितू हमारौ चलत गुपालहिं राखै।
कहा काज मेरे छगन-मगन कौ, नृप मधुपुरी बुलायौ।
सुफलक-सुत मेरे प्रान हरन कौं, काल-रूप ह्वै आयौ।
बरु यह गोधन हरौ कंस सब मोहिं बंदि लै मेलौ।
इतनौइ सुख मेरौ कमल-नयन इन अँखियनि आगैं खेलौ।

निसि सुपने कौ त्रास भए अति, सुन्यौ कंस कौ दूत।
सूर नारि-नर देखन धाये, घर-घर सोर अकूत ।।२६०।

चलन चलन स्याम कहत, लैन कोउ आयौ।
नंद-भवन भनक सुनी, कंस कहि पठायौ।।
ब्रज की नारि गृह बिसारि ब्याकुल उठि धाईं।
समाचार बूझन कौं आतुर ह्वै आईं।।
प्रीति जानि, हेत मानि बिलख बदन ठाढ़ी।
मानहु वै अति बिचित्र चित्र लिखी काढ़ी।।
ऐसी गति ठौर-ठौर कहत न बनि आवै।
सूर स्याम बिछुरें, दुख-बिरह काहि भावै ।।२६१।।

चलत जानि चितवति ब्रज जुवती, मानहु लिखी चितेरें।
जहाँ सु तहाँ एकटक रहि गईं, फिरत न लोचन फेरें।।
बिसरि गई गति भाँति देह की सुनति न स्रवननि टेरें।
मिलि जु गई मानौ पय-पानी, निबरति नहीं निबेरें।।
लागीं संग मतंग मत्त ज्यौं घिरति न कैसैहुँ घेरें।
सूर प्रेम आसा-अंकुस जिय वै नहिं इत उत हेरें ।।२६२।

स्याम गएँ सखि, प्रान रहेंगे ?
बरस-बरस ज्यौं बातैं कहियत तैसैं बहुरि कहैंगे ?
इंदु-बदन दृग-मीन हमारे, जानति धीर गहैंगे ?
बासर-निसि कहुँ होत न न्यारे, बिछुरनि हृदय सहैंगे ?
एक घरी तुम आगैं बाना स्याम न जाहि, रहैंगे।
सूरदास प्रभु जसुमति की तजि, मथुरा कहा महैंगे ।।२६३।।

( मेरे ) कमलनैन प्राननि तैं प्यारे।
इन्हैं कहा मधुपुरी पठाऊँ, राम-कृष्न दोऊ जन बारे।।
जसुदा कहै, सुनौ सुफलक-सुत, मैं इन बहुत दुखनि सौं पारे।
ए कहा जानैं राज-सभा कौं ए गुरजन-बिप्रहुँ न जुहारे।।

मधुरा असुर समूह बसत हैं, कर-कृपान जोधा हत्यारे।
सूरदास ये लरिका दोऊ, इन कब देखे मल्ल-अखारे ॥१२६४

ब्रजबासिनि के सरबस स्याम।
यह अक्रूर, क्रूर भयौ हमकौं प्रिय के प्रिय मोहन-बलराम।
अपनी लाग लेहु लेखौ करि, जो कछु राज-अंस कौ दाम।
और महर लै संग सिधारौ नगर कहा लरिकन कौ काम।
तुम तौ साधु परम उपकारी सुनियत बड़ौ तिहारौ नाम।
सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी को जीवै छिन बासर जाम ॥१२६५॥

मेरौ माई निधनी कौ धन माधौ।
बारंबार निरखि सुख मानति तजति नहीं पल आधौ।
छिनु-छिनु परसति अंकम लावति प्रेम प्रकट ह्वै बाँधौ।
निसिदिन चंद चकोरी अँखियनि मिटै न दरसन साधौ।
करिहै कहा अक्रूर हमारौ दैहैं प्रान अबाधौ।
सूर स्यामघन हौं नहिं पठवौं अबहिं कंस किन बाँधौ ॥१२६६

नहिं कोउ स्यामहिं राखै जाइ।
सुफलक-सुत बैरी भयौ मोकौं, कहति जसोदा माइ।
मदनगोपाल बिना घर आँगन, गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रही ठगी सी ठाढ़ी कहा ठगौरी लाइ।
सुंदर स्याम-राम भरि लोचन बिनु देखैं दोउ भाइ।
सूर तिन्हैं लै चले मधुपुरी हिरदै सूल बढ़ाइ ॥१२६७॥

जसोदा बार-बार यौं भाषै।
है कोउ ब्रज हितू हमारौ चलत गुपालहिं राखै।
कहा काज मेरे छगन-मगन कौ नृप मधुपुरी बुलायौ।
सुफलक-सुत मेरे प्रान हरन कौं काल-रूप ह्वै आयौ।
बरु यह गोधन हरौ कंस सब मोहिं बंदि लै मेलौ।
इतनोइ सुख मेरौ कमल-नयन इन अँखियनि आगैं खेलौ।

बासर बदन बिलोकति जीवौं, निसि निज अंकम लाऊँ।
तिहिं बिछुरत जौ जियौं कर्मबस तौ हँसि काहि बुलाऊँ।
कमलनयन-गुन टेरत-टेरत अधर-बदन कुम्हिलानी।
सूर कहाँ लगि प्रगटि जनाऊँ, दुखित नंद जु की रानी १२६८

मोहन इतौ मोह चित धरियै।
जननी दुखित जानि कै कबहुँ मथुरा गवन न करियै।
यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै तुमहिं लेन है आयौ।
तिरछे भए करम कृत पहिले बिधि यह ठाट बनायौ।
बार बार जननी कहि मौसौं माखन माँगत जौन।
सूर तिनहिं लैबे कौं आए, करिहैं सूनौ भौन ॥१२६९॥

जसुमति अति ही भई बिहाल।
सुफलक-सुत यह तुमहिं बूझियत, हरत हमारे बाल!
ये दोउ भैया जीवन हमरे, कहति रोहिनी रोइ।
धरनी गिरति, उठति अति ब्याकुल करि राखति नहिं कोइ।
निठुर भए जब तें यह आयौ, घरहूँ आवत नाहिं।
सूर कहा नृप पास तुम्हारौ, हम तुम बिनु मरि जाहिं ॥१२७०॥

कन्हैया मेरी छोह बिसारी।
क्यौं बलराम, कहत तुम नाहीं, मैं तुम्हरी महतारी।
तब हलधर जननी परबोधत, मिथ्या यह संसारी।
ज्यौं सावन की बेलि फैलि कै, फूलति है दिन चारी।
हम बालक तुमकौं कह सिखवैं, हम तुमही तैं जात।
सूर हृदय धीरज भय भारौ, काहे कौं बिलखात ॥१२७२॥

यह सुनि गिरी धरनि झुकि माता।
कहा अक्रूर ठगौरी लाई, लिये जात दोउ भ्राता।
बिरध समय की हरत लकुटिया पाप-पुन्य डर नाहीं।
कछू नफा है तुमकौं यामैं सोची धौं मन माहीं।

नाम सुनत अक्रूर तुम्हारौ, क्रूर भए हौ आइ।
सूर नंद-घरनी अति व्याकुल, ऐसैंहिं रैनि बिहाइ ॥१२७२॥

सुने हैं, स्याम मधुपुरी जात।
सकुचनि कहि न सकति काहू सौं, गुप्त हृदय की बात।
संकित बचन अनागत कोऊ, कहि जु गयौ अधरात।
नींद न परै, घटै नहिं रजनी, कब उठि देखौं प्रात।
नंद-नँदन तौ ऐसे लागे ज्यौं जल पुरइनि पात।
सूर स्याम सँग तैं बिछुरत हैं, कब ऐहैं कुसलात ॥१२७३॥

गोपालहिं राखहु मधुबन जात।
लाज किए कछु काज न सरिहै, पल बीतै जुग सात।
सुफलक-सुत के सँग न दीजिए, सुनौ हमारी बात।
गोकुल की सोभा सब जैहै, बिछुरत नँद के तात।
रथ आरूढ़ होत बल-केसव ह्वै आयौ परभात।
सूरदास कछु बोल न आयौ, प्रेम पुलक सब गात ॥१२७४॥

मोहन नैंकु बदन-तन हेरौ।
राखौ मोहिं नात जननी कौ, मदनगुपाल लाल मुख फेरौ।
पाछैं चढ़ौ बिमान मनोहर, बहुरौ ब्रज मैं होत अँधेरौ।
बिछुरन भेंट देहु ठाढ़े ह्वै निरखौं घोष जनम कौ खेरौ।
समदौ सखा स्याम यह कहि-कहि अपने गाइ-ग्वाल सब घेरौ।
गए न प्रान सूर ता अवसर, नंद जतन करि रहे घनेरौ ॥१२७५॥

जब नँद, गाइ धेनु सँभारि।
जौ तुम्हारैं आनि बिलमे, दिन चराईं चारि।
दूध-दही खवाइ कीन्हे बड़े अति प्रतिपारि।
ये तुम्हारे गुन हृदय तैं डारिहौं न बिसारि।
मातु जसुदा द्वार ठाढ़ी चलै आँसू ढारि।
कह्यौ रहियौ सुखित सौं, यह ज्ञान गुर उर धारि।

कौन सुत, को पिता-माता, देखि हृदै बिचारि।
सूर के प्रभु गवन कीन्हौ, कपट कागद फारि ॥१२०६॥

जबहीं रथ अक्रूर चढ़े।
तब रसना हरि-नाम भाषि कै, लोचन-नीर ढरे।
महरि पुत्र कहि सोर लगायौ, तरु ज्यौं धरनि लुटाइ।
देखति नारि चित्र सी ठाढ़ीं, चितये कुँवर कन्हाइ।
इतनेहिं मैं सुख दियौ सबनि कौं, दीन्ही अवधि बताइ।
तनक हँसे, हरि मन जुवतिनि कौं, निठुर ठगौरी लाइ।
बोलति नहीं, रहीं सब ठाढ़ी, स्याम ठगीं ब्रज-नारि।
सूर तुरत मधुबन पग धारे, धरनी के हितकारी ॥१२०७॥

रहीं जहाँ सो तहाँ सब ठाढ़ी।
हरि के चलत देखियत ऐसी, मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी।
सूखे बदन स्रवति नैननि तैं जल-धारा उर बाढ़ी।
कंधनि बाँह धरे चितवति मनु द्रुमनि-बेलि दव दाढ़ी।
नीरस करि छाँड़ी सुफलक-सुत, जैसैं दूध बिनु साढ़ी।
सूरदास अक्रूर कृपा तैं, सही बिपति तन गाढ़ी ॥१२०८॥

बिछुरत श्रीब्रजराज आजु इनि नैननि की परतीति गई।
उड़ि न गए हरि संग तबहिं तैं, ह्वै न गए सखि स्याममई।
रूप-रसिक लालची कहावत, सो करनी कछुवै न भई।
साँचे क्रूर कुटिल ये लोचन, वृथा मीन-छबि छीन लई।
अब काहैं जल-मोचत, सोचत, समौ गए तैं सूल नई।
सूरदास याही तैं जड़ भए, पलकनिहूँ हठि दगा दई ॥१२०९॥

सखी री चढ़ देखी रथ जात।
कमल-नयन काँधे पर ल्यारी, पीत बसन फहरात।
सब जात अब चोर चढ़नि की बचन-हीन इम-गात।
छिति पर कँप, कनक कदली चहैं, मानौ पवन बिहात।

मधु के बाट सुफलक-सुत लै गए, ज्यौं माली बिललात।
सूर सुरूप-नीर-दरसन बिनु, मनहु मीन अकुलात।।१९८०।

पाऊँ हौं चितवत मेरे लोचन आगे परत न पायें।
मन लै चली माधुरी मूरति, कहा करौं ब्रज जाय।।
पवन न भई पताका-अंबर, भई न रथ के अंग।
धूरि न भई चरन लपटाती जाती उहँ लौं संग।।
ठाढ़ी कहा करौं मेरी सजनी जिहिं बिधि मिलहिं गुपाल।
सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी मुरझि परी ब्रजबाल।।१९८१।

अब वै बातैं ह्याँ रहीं।
मोहन मुख मुसकाइ चलत कछु काहूँ नहीं कही।।
सखि सुभाउ बस समुझि परस्पर सन्मुख सूल सही।
अब वै सालति हैं उर महियाँ, कैसेहु कढ़ति नहीं।
ज्यौं त्यौं सत्य करन कौ सजनी, कहुँ फिरति बही।
हरि धुंधक आई मिलहिं सूर प्रभु मों सौं काहु कही।।१९८२।

आजु रैनि नहिं नींद परी।
जागत गिनत गगन के तारे, रसना रटत गोविंद हरी।।
वह चितवनि, वह रथ की बैठनि जब अक्रूर की बाँह गही।
चितवति रही ठगी-सी ठाढ़ी, कहि न सकति कछु काम दही।।
इते मान व्याकुल भइ सजनी आरज-पंथहुँ तै बिडरी।
सूरदास प्रभु जहाँ सिधारे, कितिक दूर मथुरा नगरी।।१९८३।

कहा हौं ऐसे ही मरि जैहौं।
इहिं आँगन गोपाल लाल कौ, कबहुँ कि कनियाँ लैहौं।।
कब वह मुख बहुरौ देखौंगी कब वैसो सचु पैहौं।
कब मोपै माखन माँगैंगे कब रोटी धरि दैहौं।।
मिलन-आस तन-प्रान रहत हैं, दिन दस मारग ज्वैहौं।
जौ न सूर आइहैं इते पर जाइ जमुन धँसि लैहौं।।१९८४।

इहै सोच अक्रूर परयौ।
लिये जात इनकौं मैं मथुरा, कंसहिं महा डरयौ॥
धिक मोकौं, धिक मेरी करनी, तबहीं क्यौं न मरयौ।
मैं देखौं, इनकौ यह हरिहै, अति व्याकुल हहरयौ॥
इहिं अंतर जमुना-तट आए, स्यंदन कियौ खरयौ।
सूरदास-प्रभु अंतरजामी, मन कौ सँदेह हरयौ॥१२८५॥

बूझत हैं अक्रूरहिं स्याम।
तरनि किरनि महलनि पर झाँई, इहै मधुपुरी नाम॥
स्रवननि सुनत रहत हे जाकौं सो दरसन भए नैन।
कंचन कोट कँगूरनि की छबि, मानौ बैठे मैन॥
उपवन बन्यौ चहूँघाँ पुर के, अतिहीं मोकौं भावत।
सूर स्याम बलरामहिं पुनि-पुनि, कर-पल्लवनि दिखावत॥१२८६॥

बार-बार बलराम कौं मधुपुरी बतावत।
सुभ्रनि महलनि देखि कै, मन हरष बढ़ावत॥
जन्म-धाम जिय जानि कै, तातैं सुख पावत।
बन उपबन आये सघन, रथ चढ़े बनावत॥
नगर सोर अक्रूर आगमन अति रुचि उपजावत।
सुनत सब्द परिवार कौ, भूप द्वार जमावत॥
बरन बरन मंदिर बने, सोभित ठहरावत।
सूरज प्रभु अक्रूर सौं कहि देखि सुनावत॥१२८७॥

मथुरा हरषित आजु भई।
ज्यौं जुवती पति आवत सुनि कै, पुलकित अंग मई॥
नवसत साजि सिंगार सुंदरी, आतुर पंथ निहारति।
उड़ति धुजा तनु सुरति बिसारे, अंचल नहीं सँभारति॥
उरज प्रगट महलनि पर कलसा लसति पास बन सारी।
ऊँचे अटनि छाज की सोभा, सीस उचाइ निहारी॥

सामरंभ इकन्त मग जोवति कंकिनि कंचन दुर्गे ।
बेनी ससति कहाँ छवि ऐसी, महलनि चित्रे वर्गे ।।
बाजत नगर बाजने जहँ तहँ, और बजत घरियार ।
सूर स्याम बनिता ज्यौं चंचल, पग नूपुर झनकार ।।१९८८

मथुरा पुर मैं सोर परयौ ।
गरजत कंस बंस सब साजे, मुख कौ नीर हरयौ ।
पीरो भयौ फेफरी अधरनि हिरदै अतिहिं डरयौ ।
नंद महर के सुत दोउ सुनि कै, नारिनि हर्ष भरयौ ।
कोउ महलनि पर, कोउ छजनि पर कुल-लज्जा न करयौ ।
कोउ धाईं पुर गलिनि-गलिनि ह्वै काम-धाम बिसरयौ ।
इंदु बदन नव जलद सुभग तनु, दोउ खग नयन करयौ ।
सूर स्याम देखत पुर-नारी उर-उर प्रेम भरयौ ।।१९८९।

ढोटा नंद कौ यह री ।
मारि जानति बसत ब्रज मैं प्रगट गोकुल री ।।
धरयौ गिरिवर बाम कर जिहिं, सोइ है यह री ।
दैत्य सब इनहीं सँहारे आपु-भुज-बल री ।
ब्रज-घरनि कौ करत चोरी, खात माखन री ।
नंद-घरनी जाहि बाँध्यौ अजिर ऊखल री ।
सुरभि-ठान लिये बन तैं आवत सबहिं गुन इन री ।
सूर-प्रभु ये सबहिं लायक, कंस डरै जिन री ।।१९९०।

रथ पर देखि हरि-बलराम ।
निरखि कोमल-चारु मूरति हृदय सुख-धाम ।।
मुकुट कुंडल पीत पट छबि, अनुज भ्राता स्याम ।
रोहिनी-सुत एक कुंडल गौर तनु सुख धाम ।।
ललनि कैसें धरयौ धीरज कहति सब पुर-बाम ।
बोलि पठयौ कंस इनकौं, करै धौं कह काम ।।

जोरि कर बिधि सौं मनावति असिस दै दै नाम।
न्हात बार न खसै इनको, कुसल पहुँचैं धाम॥
कंस कौ निरबंस ह्वैहै, करत इन पर ताम।
सूर प्रभु नँद-सुवन दोऊ, हंस बाल उपमा।।१२६१॥

भए सखि नैन सनाथ हमारे।
मदनगोपाल देखतहिं सजनी सब दुख-सोक बिसारे।
पठए हैं सुफलक-सुत गोकुल लैन, सो इहाँ सिधारे।
मल्ल जुद्ध प्रति कंस कुटिल मति छल करि इहाँ हँकारे॥
मुष्टिक अरु चानूर सैल सम, सुनियत हैं अति भारे।
कोमल कमल समान देखियत, ये जसुमति के बारे॥
होवै जीति बिधाता इनकी, करहु सहाइ सबारे।
सूरदास चिर जियहु दुष्ट दलि, दोऊ नंद-दुलारे।।१२६२॥

स्याम-बलराम गए जमुपसाला।
लियौ रथ तैं उतरि रजक मार्यौ जहाँ कँदरा तैं निकसि सिंघ बाला।
नंद उपनंद सँग सखा इक लाख रहि कोउ चले आगैं बीर जोटा।
असुर सैना सबै देखि कै भै डरे, मनु नाईं पास रिपु मदा-पोटा।
घेरि लीन्हे स्याम-बलराम कौं तहाँ, बोलि सब उठे, हरि, धनुष तोरौ।
सूर तुमकौ सुने, भुजनि बल चंड अति, हँसत हरि कह्यौ, यह बैर जोरौ।।१२६३॥

*हमको नृप इहिं हेत बुलाए?*
कहाँ धनुप, कहँ हम अति बालक कहि आचरज सुनाए।
टाढ़े सूर बीर अवलोकत तिनिसौं कही न तोरै॥
हमसौं कही, खेल कछु ऐसौ यह कहि-कहि मुख मोरै।
कंस एक तहँ असुर पठायौ, यहै कहत वह आयौ॥
चलै धनुष तोरैं अब तुमको, पाछैं निकट बुलायौ।

पालक देखि गहन भुज लाग्यौ ताहि तुरत ही मारयौ।
तारि कोदंड मारि सब जोधा, तब बल भुजा निहारयौ।
आगैं अस्त्र तिनहिं तेहिं मारयौ चले सामुहीं खोरी।
सूर कूबरी चंदन लीन्हें, मिली स्याम कौं दौरी॥१२६४॥

प्रभु, तुमकौं मैं चंदन ल्याई।
गह्यौ स्याम कर अपने सौं, लिए सदन कौं आई।
धूप दीप नैवेद साजि कै मंगल करे बिचारि।
चरन पखारि लियौ चरनोदक धनि धनि कहि दैवारि।
मेरी जनम कल्पना ऐसी, चंदन परसौं अंग।
सूर स्याम जन के सुखदायक, बँधे भाव-रसु-रंग॥१२६५॥

सुनिहि महावत, बात हमारी।
बार-बार संकर्षन भाषत लेत नहीं ह्याँ तैं गज टारी।
मेरौ कह्यौ मानि रे मूरख, गज समेत तोहिं डारौं मारी।
द्वारैं खरे रहे हैं कबके, जानि रे, गर्व करहिं जिय भारी।
न्यारी करि गयंद तू अजहूँ, जान देहि कै आपु सँभारी।
सूरदास प्रभु दुष्ट-निकंदन, धरनी भार उतारनकारी॥१२६६

तब रिस कियौ महावत मारि।
जौ नहिं आज मारिहौं मरौं कंस डारिहै मारि।
कौकुम राखि कुंभ पर करष्यौ हलधर उठ हँकारि।
धायौ पवनहुँ तैं अति आतुर धरनी दंत सँभारि।
तब हरि पूँछ गह्यौ दच्छिन कर, कंदुक फेरि सिर डारि।
पटक्यौ भूमि, फेरि नहिं मटक्यौ, लीन्हे व उपारि।
दुहुँ कर दुरद दसन इक इक छबि, सो निरखति पुर-नारि।
सूरदास प्रभु सुर-सुखदायक, मारयौ नाग पछारि॥१२६७॥

ए सुत नंद अहीर के।
मारयौ रजक बसन सब छीने, संग सखा बलबीर के।

काँधे धरि दोऊ जन आए, दंत कुवलयापीर के।
पसुपति मंडल मध्य मनौ, मनि छीरधि नीरधि नीर के।
चढ़ि आए तजि हंस माव मनु मानसरोवर तीर के।
सूरदास प्रभु ताप निवारन, हरन संत दुख पीर के ॥१२८८॥

स्याम-बलराम रँगभूमि आए।
मल्ल प्रभु रूप सुंदर परम देखि पुनि प्रबल बल आनि मन मैं
सकाए।
कह्यौ गज कुबलया हते भयौ गर्व तुम, आनि परिहै मिरन सँग
हमारैं।
काल सौं मिरैं हम कौन तुम बापुरे, पै हवे धर्म रहियौ बिचारे।
स्याम चानूर, बलबीर मुष्टिक मिरे, सीस सौं सीस, भुज भुज
मिलाएँ।
वै उन्हैं गहत, वै दौरि उनकौं गहत करत छलबल नहीं दावँ पावैं
धरि पछारयौ दुहुँ वीर दुहुँ मल्ल कौं, हरषि कह्यौ, हवे ये नैंद
दुहाई।
सूर प्रभु परस लहि, लह्यौ निरबान पद सुरनि आकास जय पुनि
सुनाई ॥१२८९॥

मदन मंद-नंदन रंगभूमि राजैं।
स्याम तन, पीत पट मानौ घन मैं तड़ित मार के फंद मानौ बिराजैं।
स्रवन कुंडल-झलक मानौ चपला-चमक, दृग अरुन कमल-दल
से बिसाला।
भौंहैं सुंदर धनुष बान सम सिर तिलक, केस कुंचित सोह भृंग
माला।
हृदय बनमाल, नूपुर चरन लाल, चलत गज चाल, अति बुधि
बिराजैं।
हंस मानौ मानसर, अरुन अंबुज सुभर निरखि, आनंद करि हरषि
गाजैं।

कुवलया मारि, चानूर मुष्टिक पटकि, बीर दोउ कंध गज दंत धारे।
आइ पहुँचे तहाँ, कंस बैठ्यौ जहाँ, गए अवसान प्रभु के निहारे।
ढाल तरवारि आगैं धरी रहि गई महल कौ पंथ खोजत न पावत।
लात कैं लगत सिर तैं गयौ मुकुट गिरि, केस गहि लै चले हरि खसावत।
चारि भुज धारि तेहिं चारि दरसन दियौ, चारि आयुध चहूँ हाथ लीन्हें।
असुर तजि प्रान निरबान पद कौं गयौ, बिमल मति भई प्रभु-रूप चीन्हें।
देखि यह पुहुप-बर्षा करि सुरनि मिलि, सिद्ध गंधर्ब जय धुनि सुनाई।
सूर प्रभु अगम महिमा न कछु कहि परति, सुरनि की गति तुरत असुर पाई ॥३६००॥

हरष नर-नारि मथुरा-पुरी।
धौंस सबकौ गयौ धनुष टूटत सब हयौ, तिहूँ भुवन लौं बची, हरष ही कै।
निदरि मार्‌यौ कंस प्रगट देखत सबै अतिहिं मल्ल कै नंद ढोटा।
नैन दोउ कमल से, परम सोभा लसै, भक्त की बसे सुभ हंस जोटा।
देव दुंदुभि बजी, अमर आनंद भए पुहुपगन बरषहीं चैन मान्यौ।
सूर बसुदेव-सुत रोहिनी-नंद धनि, धनि मिन्यौ भुव भार भाजित आन्यौ ॥३६०१॥

उग्रसेन कौं दियौ हरि राज।
आनँद-मगन सकल पुरबासी, चँवर डुलावत श्री ब्रजराज।
जहाँ तहाँ तैं जादव आए, कंस डरनि जे गए पराइ।
मागध-सूत करत सब अस्तुति, जै जै जै श्री जादवराइ।

जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ गए बलि के द्वारैं प्रतिहार।
सूरदास प्रभु अज अबिनासी, भक्तनि हेतु लेत अवतार ॥१२०१

तब बसुदेव हरषित गात।
स्याम रामहिं कंठ लाए, हरषि देवै मात।
अमर दिवि दुंदुभी दीन्ही, भयौ जैजैकार।
दुष्ट दलि सुख दियौ संतनि, ये बसुदेव-कुमार।
दुख गयौ बहि, हरष पूरन नगर के नर-नारि।
भयौ पूरन फल सँपूरन, लह्यौ सुख दैत्यारि।
तुरत बिप्रनि बोलि पठ्ये धेनु कोटि मँगाइ।
सूर के प्रभु ब्रह्मपूरन पाइ हरषे राइ ॥१२०२॥

बसुद्यौ कुल-ब्यौहार बिचारि।
हरि, हलधर कौ दियौ जनेऊ करि षटरस ज्यौनारि।
जाके स्वाँस उसाँस लेत मैं प्रगट भए स्रुति चार।
तिन गायत्री सुनी गर्ग सौं प्रभु गति अगम अपार।
बिधि सौं धेनु दई बहु बिप्रनि सहित सर्बऽलंकार।
अनुकूल भयौ परम कौतूहल जहँ तहँ गावहिं नार।
मातु देवकी परम मुदित ह्वै देति निछावरि वारि।
सूरदास की यहै आसिषा चिर जियौ नंदकुमार ॥१२०३॥

कुबरी पूरब तप करि राख्यौ।
आए स्याम भवन ताही कैं, नृपति महल सब नाख्यौ।
प्रथमहिं धनुष तोरि आवत हैं, बीच मिली यह आइ।
तिहिं अनुराग बस्य भए ताकैं, सो हित कह्यौ न जाइ।
देव-काज करि आवन कहि गए, दीन्हौ रूप अपार।
कृपा-दृष्टि चितवतहीं श्री भइ, निगम न पावत पार।
हम तैं दूरि दीन के पीछैं, ऐसे दीनदयाल।
सूर सुरनि करि काज तुरतहीं, आवत तहाँ गोपाल ॥१२०४॥

कियौ सुर काज गृह चले ताकैं।
पुरुष की नारि को भेद-भेदा नहीं, कुलिन अकुलिन अवतरयौ
जाकैं॥
दास दासी कौन, प्रभु-निप्रभु कौन है, अखिल मर्याद इक रोम
जाकैं।
भाव साँचौ हृदय जहाँ, हरि तहाँ हैं, कृपा प्रभु की माथ भाग
जाकैं॥
दास-दासी स्याम भजनहुँ तें किये, रमा सम भई सो कृप्न
दासी।
मिली वह सूर प्रभु प्रेम चंदन परसि कियौ जय कोटि, तप कोटि
कासी।।१२०६।

मथुरा दिन-दिन अधिक बिराजै।
तेज, प्रताप राइ केसौ कैं, तीनि लोक पर गाजै।
पग पग तीरथ कोटिक राजैं मणिमिश्रित बिराजै।
करि अस्नान प्रात जमुना कौ जनम-मरन भय भाजै।
बिट्ठल बिपुल बिनोद बिहारन ब्रज कौ बसिबौ छाजै।
सूरदास सेवक उनहीं कौ, कृपा सु गिरिधर राजै।।१२०७।

\+ \+ \+

बेगि ब्रज कौ फिरिए नँदराइ।
हमहिं तुमहिं-सुत-तात कौ नातौ और पन्यौ है आइ।
बहुत कियौ प्रतिपाल हमारौ सो नहिं जी तें जाइ।
जहाँ रहैं तहँ तहाँ तुम्हारे, डारौ जनि बिसराइ।
जननि जसोदा भेंटि सगा सब मिलियौ कंठ लगाइ।
साधु समाज निगम जिनके गुन, मेरैं गमि न सिराई।
माया मोह, मिलन अरु बिछुरन ऐसेंही जग जाइ।
सूर स्याम के निठुर बचन सुनि रहे नैन जल छाइ।।१२०८।

पद सुनि भए व्याकुल नंद।
निठुर बानी हरि कही अब, परि गए दुख-फंद॥
निरखि मुख मुख रहे चकित सखा भए सब गोप।
चरित ए चक्कर कीन्हे, करत मन मन कोप।
धाइ परननि परे हरि कैं, चलहु ब्रज कौ स्याम।
कंस असुर समेत मारे, सुरनि के करि काम॥
मोचि बंधन राज दीन्हौं हरष भए बसुदेव।
सूर जसुमति बिनु तुम्हारैं कौन जानै देव॥३६०८॥

(मेरे) मोहन तुमहिं बिना नहिं जैहौं।
महरि दौरि आगे जब ऐहै कहा ताहि मैं कैहौं॥
माखन मथि राखौ ह्वैहै तुम हेत, चलौ मेरे बारे।
निठुर भए मधुपुरी आइ कै, काहैं असुरनि मारे॥
सुख पायौ बसुदेव-देवको अरु सुख सुरनि दियौ।
यहै कहत नंद गोप-सखा सब बिदरत चहत हियौ॥
तब माया जड़ता उपजाई, निठुर भए जदुराइ।
सूर नंद परमोधि पठाए निठुर ठगौरी लाइ॥३६१०॥

गोपालराइ, हौं न चरन तजि जैहौं।
तुमहिं छाँड़ि मधुबन मेरे मोहन, कहा जाइ ब्रज लैहौं।
कैहौं कहा जाइ जसुमति सौं, जब सन्मुख उठि ऐहै।
प्रात समय दधि मथत छाँड़ि कै, काहि कलेऊ दैहै।
बारह बरस दियौ हम ढीठौ यह प्रताप बिनु जानै।
अब तुम प्रगट भए बसुधी-सुत गर्ग-बचन परमानै।
रिपु हति काज सबै कत कीन्हौं, कत आपदा बिनासी।
डारि न दियौ कमल-कर तैं गिरि, दबि मरते ब्रजबासी।
बासर संग सखा सब लीन्हैं, टेरि न धेनु चरैहौ।
क्यौं रहिहैं मेरे प्रान दरस बिनु, जब संध्या नहिं ऐहौ।

ऊधव स्वाँस चलत गमि थाकी नैन नीर भरलाइ।
सूर मंद बिछुरन की बेदनि, मो पै कही न जाइ ।।३३११।

उठे कहि माधौ इतनी बात।
जिती मान सेवा तुम कीन्ही, बदलौ दयौ न जात ।।
पुत्र हेतु प्रतिपार कियौ तुम जैसैं जननी तात।
गोकुल बसत हँसत-खेलत मोहिं, द्यौस न जान्यौ जात ।।
होहु बिदा घर जाहु गुसाईं माने रहियौ नात।
ठाढ़ौ थक्यौ उतर नहिं आवै लोचन जल न समात ।।
भए बसहीन ज्ञान तन कंपित ज्यौं बयारि बस पात।
धकधकात हिय बहुत सूर उठि चले नंद पछितात ।।३३१२।

नंदहिं कहत हरि ब्रज जाहु।
फिरि के मथुरा प्रगटहि अंतर जिय कहा पछिताहु ।।
कहा व्याकुल होत बसिहौ दूरि हौं कहुँ तात ?
निठुर उर मैं ज्ञान बरन्यौ मानि लीन्ही बात ।।
नंद भए कर जोरि ठाढ़े तुम कहे ब्रज जाउँ।
सूर मुख यह कहत मानौ चित नहीं कहुँ ठाउँ ।।३३१३।

फिरि करि नंद न उत्तर दीन्हौ।
रोम रोम भरि गयौ बचन सुनि मनहु चित्र लिखि कीन्हौ ।।
यह तौ परंपरा चलि आई सुख-दुख लाभऽरु हानि।
हम पर कृपा मया किए रहियौ, सुत अपनौ जिय जानि ।।
यौं अकुलै कै चरन लागे निरखि बदन सिर नायौ।
दुख समूह हृदय परिपूरन चलत कंठ भरि आयौ ।।
पग पग पर भुव भई कोटि गिरि, जौ लगि गोकुल पैठे।
सूरदास चौस कठिन कुलिस तैं, अजहूँ रहत तनु बैठी ।।३३१४।

चले नंद ब्रज कौं समुहाइ।
गोप सखा हरि बोधि पठाए, सबै चले अकुलाइ ।।

काहू सुधि न रही तन की कछु लटपटात परे पाइ।
गोकुल जात फिरत पुनि मधुबन, मन तिन तहाँहिं बसाइ॥
बिरह सिंधु मैं परे चेत बिनु ऐसैंहि चले बहाइ।
सूर स्याम-बलराम छाँड़ि कै, ब्रज आए नियराइ।।१२१५

बार बार मग जोवति माता। ब्याकुल बिनु मोहन बलभ्राता॥
आवत देखि गोप नँद साथा। बिबि बालक बिनु भई अनाथा॥
धाई धेनु बच्छ ज्यौं ऐसैं। माखन बिना रहैं धौं कैसैं॥
ब्रज-नारी हरषित सब धाईं। महरि जहाँ-तहँ आतुर आईं॥
हरषति मातु रोहिनी आई। उर भरि हलधर लेउँ कन्हाई॥
देखे नंद गोप सब देखे। बल मोहन कौं तहाँ न पेखे।
आतुर मिलन-काज ब्रज-नारी। सूर मधुपुरी रहे मुरारी।।१२१६

जसमति पग कैसैं दीन्हौ नंद।
छाँड़े कहाँ उभै सुत मोहन, धिक जीवन मतिमंद।
कै तुम धन जोबन-मद-माते कै तुम छूटे बंद॥
सुफलक-सुत बैरी भयौ हमकौं लै गयौ आनँदकंद॥
राम-कृष्न बिनु कैसैं जीवैं, कठिन प्रीति कै फंद।
सूरदास मैं भई अभागिनि तुम बिनु गोकुलचंद।।१२१७

दोउ ढोटा गोकुल-नायक मेरे।
काहैं नंद छाँड़ि तुम आए, प्रान-जिवन सब केरे॥
तिनकैं जात बहुत दुख पायौ, रोर परी इहिं खेरे।
गोसुत-गाइ फिरत हैं दहुँ दिसि वै न चरैं तृन घेरे॥
प्रीति न करी राम दसरथ की, प्रान तजे बिनु हेरैं।
सूर नंद सौं कहति जसोदा, प्रबल पाप सब मेरैं।।१२१८

नंद कहौ हो कहँ छाँड़े हरि।
लै जु गए जैसैं तुम ह्यातैं ल्याए किन वैसैंहि आगैं धरि॥

पालि पोषि मैं किए सयाने जिन मारे गज मल्ल कंस भरि ।
अब भए तात देवकी वसुधौ, बाँहैं पकरि ल्याये न न्याव करि ॥
देखी दूध-दही-धृत-माखन मैं राखे सब वैसें ही धरि ।
अब को खाइ नंदनंदन बिनु गोकुममनि मथुरा जु गए हरि॥
श्रीमुख देखन कौं ब्रजबासी रहे ते घर आँगन मैं मरि ।
सूरदास प्रभु के जु सँदेसे, कहे महर आँसू गदगद करि ।१३१६।

जसुदा कान्ह-कान्ह कै बूझे ।
फूटि न गईं तुम्हारी चारौ, कैसें मारग सूझे ॥
इक तौ अरी जात बिनु देखे अब तुम दीन्ही फूँकि ।
यह छतिया मेरे कान्ह कुँवर बिनु, फटि न भई द्वै टूक ॥
धिक तुम, धिक ये चरन अहो पति अब बोलत उठि धाए ।
सूर स्याम बिछुरन की हम पै दैन बधाई आए ।१३२०।

नंद, हरि तुम सौं कहा कह्यौ ।
सुनि सुनि निठुर बचन मोहन के, कैसें हृदय रह्यौ ॥
छाँड़ि सनेह चले मंदिर कत, दौरि न चरन गह्यौ ।
दरकि न गई बज्र की छाती कत यह सूल सह्यौ ॥
सुरति करति मोहन की बातैं नैननि नीर बह्यौ ॥
सुधि न रहि अति गलित गात भयौ मनु डसि गयौ अह्यौ॥
उन्हैं छाँड़ि गोकुल कत आए चाखन दूध-दह्यौ ।
तजे न प्रान सूर दसरथ लौं हुतौ जन्म निबह्यौ ।१३२१।

कहाँ रह्यौ मेरौ मन-मोहन ।
वह मूरति जिय तैं नहिं बिसरति अंग अंग सब सोहन ॥
कान्ह बिना गौवैं सब व्याकुल को ल्यावै भरि दोहन ।
माखन खात खवावत ग्वालनि, सखा लिए सब गोहन ॥
अब वै लीला सुरति करति हीं चित चाहत उठि जोहन ।
सूरदास प्रभु के बिछुरे तैं मरियत है अति छोहन ।१३२२।

तब तू मारिबोई करति।
रिसनि आगैं कहि जु आवति अब लै माडै मरति ॥
रीस कै कर दाँवरी लै, फिरति घर-घर धरति।
कठिन यह करी तब जौ बाँध्यौ, अब वृथा करि मरति ॥
नृपति कंस बुलाइ पठयौ बहुत कै प्रिय हरति।
यह कछुक विपरीति मो मन, मौंफ देखि जु परति ॥
होनहारी होइहै सोइ, अब इहाँ कत अरति।
सूर तब किन फेरि राखे पाईं अब किहिं परति ।।३६२३।।

कहाँ नंद कहाँ छाँड़े कुमार।
कैसी प्रान रहे सुत बिछुरत पूछति हैं गोपी बारंबार ॥
करुना करैं जसोदा माता नैननि नीर बहै असरार।
चितवत नंद ठगे से ठाढ़े मानौ हारयौ हेम जुआर ॥
मुरली-धुनि नहिं सुनियत ब्रज मैं सुर-नर-मुनि नहिं करत बिचार।
सूरदास प्रभु के बिछुरे तैं कोउ न भीतन आवत द्वार ।।३६२४।।

ग्वारनि कही ऐसी जाइ।
भए हरि मधुपुरी राजा, बड़े बंस कहाइ ॥
सूत-मागध बदत बिरदनि, बरनि बसुदौ-तात।
राज भूषन अंग भ्राजत अहिर कहत लजात ॥
मातु-पितु बसुदेव देवै, नंद जसुमति नाहिं।
यह सुनत जल नैन ढारति,मींजि कर पछिताहिं ॥
मिली कुबिजा मलै लैकै, सो भई अरधंग।
सूर प्रभु बस भए ताकैं, करत नाना रंग ।।३६२५।।

कैसैं री यह हरि करिहैं।
राधा कौ तजिहैं मनमोहन, कहा कंस-दासी धरिहैं ॥
कहा कहति यह भइ पटरानी, वै राजा भए जाइ वहाँ।
मथुरा बसत लखत नहिं कोऊ,को आपी, को रहत कहाँ ॥

स्याम बँधे ऊखरी बिसारी, संग न छाँड़त एक घरी।
सूर आहि परतीति न काहू, मन सिहात यह करनि करी।१२२६

तब तैं मिटे सब आनँद।
या ब्रज के सब भाग संपदा, लै जु गए नँदनंद॥
बिह्वल भई जसोदा डोलति, दुखित नंद उपनंद।
धेनु नहीं पय स्रवतिं, रुचिर मुख चरतिं नहीं तृन-कंद॥
बिषम बियोग दहत उर सजनी, बाढ़ि रहे दुख-दंद।
सीतल कौन करै री माई, नाहिं इहाँ ब्रज-चंद॥
रथ चढ़ि चले, गहे नहिं काहूँ, चाहि रही मति-मंद।
सूरदास अब कौन छुड़ावै परे बिरह कैं फंद।१२२७

इक दिन नँद चलाई बात।
कहत-सुनत गुन राम-कृष्न के, ह्वै आयौ परभात॥
वैसेंहि भोर भयौ जसुमति कौ, लोचन जल न समात।
सुमिरि सनेह बिहरि उर अंतर, ढरि आवत, ढरि जात॥
जद्यपि वै बसुदेव-देवकी हैं निज जननी-तात।
बार एक मिलि जाहु सूर-प्रभु, धाई हूँ कै नात।१२२८

चूक परी हरि की सेवकाई।
यह अपराध कहाँ लौं बरनौं, कहि कहि नंद-महर पछिताई।
कोमल चरन-कमल कंटक कुस, हम उन पै बन गाइ चराई॥
रंचक दधि के काज जसोदा, बाँधे कान्ह उलूखल लाई॥
इंद्र प्रकोप जानि ब्रज राखे, बरुन फाँस तैं मोहिं मुकराई।
अपने तन-धन-लोभ कंस डर, आगैं कै दीन्हें दोउ भाई॥
निकट बसत कबहूँ न मिलि आयौ, इते मान मेरी निठुराई।
सूर अजहुँ नातौ मानत हैं, प्रेम सहित करैं नंद-दुहाई।१२२९

लै आवहु गोकुल गोपालहिं।
पाइँनि परि क्यौं हूँ बिनती करि, छल-बल बाहु बिसालहिं॥

अबकी बार नैकु दिखरावहु, नंद आपने माहिं।
गाइनि गनत ग्वार-गोसुत सँग सिखवत बैन रसाहिं॥
जद्यपि महाराज सुख-संपति, कौन गनै मनि-माहिं।
तदपि सूर वै छिन न तजत हैं वा घुँघुची की माहिं।१२१०।

जद्यपि मन समुझावत लोग।
सूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुख जोग॥
निसि-बासर छतिया लै लाऊँ बालक-लीला गाऊँ।
वैसे भाग बहुरि कब ह्वैहैं, मोहन मोद मचाऊँ॥
जा कारन मुनि ध्यान धरैं, सिव अंग बिभूति लगावैं।
सो बालक-लीला धरि गोकुल ऊखल साथ बँधावैं॥
बिदरत नहीं बज्र कौ हिरदै हरि-बियोग क्यों सहिऐ।
सूरदास प्रभु कमलनयन बिनु, कौनै बिधि ब्रज रहिऐ।१२११।

नंद ब्रज लीजै ठोकि बजाइ।
देहु बिदा मिलि जाहिं मधुपुरी, जहँ गोकुल के राइ॥
नैननि पंथ कहौ क्यों सूझै, उलटि दियौ जब पाइ।
रघुपति दसरथ कथा सुनी ही, तउ मरते गुन गाइ॥
भूमि मसान बिदित यह गोकुल मनहु खाइ कै खाइ।
सूरदास प्रभु पास जाहिं हम, देखहिं रूप अघाइ।१२१२।

हौं तौ माई, मथुरा ही पै जैहौं।
दासी ह्वै बसुदेव राइ की दरसन देखत रैहौं॥
राखि राखि एते दिवसनि मोहिं, कहा कियौ तुम नीकौ।
सोऊ तौ अकूर गए लै, तनक खिलौना जी कौ।
मोहिं देखि कै लोग हँसैंगे अरु किन कान्ह हँसै।
सूर असीस जाइ दैहौं, जनि न्हातहु बार खसै।१२१३।

पंथी इतनी कहियौ बात।
तुम बिनु इहाँ कुँवर वर मेरे, होत जिते उतपात॥

बकी अघासुर टरत न टारे, बालक बनहिं न जात।
ब्रज पिंजरी रुँधि मानौ राखे, निकसन कौं अकुलात।।
गोपी-गाइ सकल लघु-दीरघ पीत बरन कृस गात।
परम अनाथ देखियत तुम बिनु केहि अवलंबै तात।।
कान्ह कान्ह के टेरत तब धौं अब कैसैं जिय मानत।
यह व्यवहार आजु लौं है ब्रज कपट नाट छल ठानत।।
दसहूँ दिसि तैं उदित होत हैं दावानल के कोट।
आँखिनि मूँदि रहत सनमुख ह्वै नाम कवच दै ओट।।
ए सब दुष्ट हते हरि जेते भए एक ही पेट।
सत्वर सूर सहाइ करौ अब, समुझि पुरातन हेट।।११३४।।

संदेसौ देवकी सौं कहियौ।
हौं तौ धाइ तिहारे सुत की मया करत ही रहियौ।।
जदपि टेव तुम जानति उनकी तऊ मोहिं कहि आवै।
प्रात होत मेरे लाल लड़ैतैं माखन-रोटी भावै।।
तेल उबटनौ अरु तातौ जल ताहि देखि भजि जाते।
जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती क्रम-क्रम करि कै न्हाते।
सूर पथिक सुनि मोहिं रैनि दिन बढ़्यौ रहत उर-सोच।
मेरौ अलक लड़ैतौ मोहन, ह्वै है करत सँकोच।।११३५।।

जौ पै राखति हौ पहिचानि।
तौ बारैक मेरे मोहन कौं मोहिं दिखावहु आनि।।
तुम रानी बसुदेव गेहिनी हम अहीर ब्रजबासी।
पठै देहु मेरे लाल लड़ैतैं वारौं ऐसी हाँसी।।
भली करी कंसादिक मारे सब सुर-काज किए।
अब इहिं गैयनि कौन चरावै भरि-भरि लेति हिए।।
खान-पान-परिधान राज-सुख जौ कोउ कोटि लड़ावै।
तदपि सूर मेरौ यह बालक माखन ही सचु पावै।।११३६।।

मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कुछ वैसहिं धर्‌यौ रहै।
को उठि प्रात होत लै माखन, को कर नेति गहै॥
सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि सूल सहै।
दिन उठि घर घेरत ही ग्वारिनि उरहन कोउ न कहै॥
जो ब्रज मैं आनंद हुतौ, मुनि-मनसाहू न गहै।
सूरदास स्वामी बिनु गोकुल, कौड़ी हू न लहै॥३३२७॥

— (४) —

## ( ८ ) गोपी-विरह

चलत गुपाल के सब चले।

यह प्रीतम सौं प्रीति निरंतर रहे न अर्ध पले॥
धीरज पहिल करी चलिबे की जैसी करत भले।
धीर चलत मेरे नैननि देखे तिहि छिन आँसु ढले॥
आँसु चलत मेरी बलयनि देखे भए अंग सिथिले।
मन चलि रह्यौ हुतौ पहिलैं ही चले सबै बिमले।
एक न चलै प्रान सूरज प्रभु असमंजस माहँ मले॥१३३८॥

हरि गए थोरे दिन की प्रीति।

कहँ वह प्रीति करी यह बिछुरनि, कहँ मधुबन की रीति।
अब की बेर मिलौ मनमोहन बहुत भई बिपरीति।
कैसे प्रान रहत दरसन बिनु मनहु गए जुग बीति॥
कृपा करहु गिरिधर हम ऊपर, प्रेम रह्यौ तन जीति।
सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, भई भुस पर की भीति॥१३३९

प्रीति करि दीन्ही गरैं छुरी।

जैसे बधिक चुगाइ कपट-कन पाछैं करत बुरी॥
मुरली मधुर चेप काँपौ करि, मोर चंद फँदवारि।
बंक बिलोकनि लगी लोभ-बस, सकी न पंख पसारि॥
तरफत छाँड़ि गए मधुबन कौं बहुरि न कीन्ही सार।
सूरदास प्रभु-संग कलपतरु, उलटि न बैठी डार॥१३४०॥

माधव, ब्रजवासिनि की सुधि लीजै।
गोपी, ग्वाल, गाइ, गोसुत सब, दीन-मलीन दिनहिं दिन छीजै।
नैननि जलधारा बाढ़ी अति बूड़त ब्रज किन कर गहि लीजै।
इतनी बिनती सुनहु हमारी, बारक हूँ पतिया लिखि दीजै।
चरन-कमल दरसन नव नाव, करुनासिंधु जगत जस लीजै।
सूरदास प्रभु आस मिलन की, एक बार आवन ब्रज कीजै।।११४१

देखियति कालिंदी अति कारी।
अहौ पथिक, कहियौ उन हरि सौं, भई बिरह-जुर जारी।
गिरि-प्रजंक तैं गिरति धरनि धँसि, तरँग-तरफ तन भारी।
तट बारू उपचार चूर जल पूर प्रस्वेद पनारी।
बिगलित कच-कुस-काँस कूल पर, पंक जु काजल सारी।
भौंर भ्रमत अति फिरति भ्रमति मति, दिसि दिसि दीन दुखारी।
निसि दिन चकई पिय जु रटति है भई मनौ अनुहारी।
सूरदास-प्रभु जो जमुना गति, सो गति भई हमारी।।११४२।

परेखौ कौन बोल कौ कीजै।
ना हरि जाति न पाँति हमारी कहा मानि दुख लीजै।
नाहिंन मोर-चंद्रिका माथै, नाहिंन उर बनमाल।
नहिं सोभित पुहुपनि के भूषन सुंदर स्याम तमाल।
नँद-नँदन गोपी-जन-बल्लभ, अब नहिं कान्ह कहावत।
बासुदेव जादवकुल दीपक बंदी जन बर गावत।
बिसर्‌यौ सुख नातौ गोकुल कौ और हमारे अंग।
सूर स्याम वह गई सगाई वा मुरली कैं संग।।११४३।

सुनियत मुरली देखि लजात।
दूरिहिं तैं सिंहासन बैठे सीस नाइ मुसकात।
मोर पच्छ कौ व्यजन बिलोकत बहरावत कहि बात।
जौ कहुँ सुनत हमारी चरचा चालत हीं चपि जात।

सुरभी लिखत चित्र की रेखा सोवैं हू सकुचात।
सूरदास जो प्रभुहिं बिसारयौ, दूध-दही कत खात।।१३४३।

अब वै बातैं उलटि गई।
जिन बातनि लागत सुख आली, तेऊ दुसह भई।।
रजनी स्याम स्याम सुंदर सँग अरु पावस की गरजनि।
सुख समूह की अवधि माधुरी, पिय रस-बस की तरजनि।
मोर पुकार गुहार कोकिला, अलि गुंजार सुहाई।
अब लागति पुकार दादुर सम बिनही कुँवर कन्हाई।
चंदन चंद समीर अगिनि सम, तनहिं देत दव लाई।
कालिंदी अरु कमल कुसुम सब दरसन ही दुखदाई।
सरद बसंत सिसिर अरु ग्रीषम हिम-रितु की अधिकाई।
पावस जरैं सूर के प्रभु बिनु तरफत रैनि बिहाई।।१३४४।

इहिं बिरियाँ बन तैं ब्रज आवत।
दूरिहिं तैं वह बेनु अधर धरि बारंबार बजावत।
कबहुँक काहूँ भाँति चतुर चित अति ऊँचे सुर गावत।
कबहुँक लै-लै नाम मनोहर धौरी धेनु बुलावत।
इहिं बिधि बचन सुनाइ स्याम घन, मुरझे मदन जगावत।
आगम सुख उपचार बिरह-जुर, बासर अंत नसावत।
रुचि रुचि प्रेम पियासे नैननि, क्रम क्रम बलहिं बढ़ावत।
सूर सकल रसनिधि सुंदर घन, आनँद प्रगट करावत।।१३४५।

मोहन जा दिन बनहिं न जात।
ता दिन पसु पच्छी द्रुम बेली, बिनु देखे अकुलात।।
देखत रूप निधान नैन भरि, तातैं नहीं अघात।
ते न चुगत तृन चारन उदर भरि, भए रहत कृस गात।
जे मुरली-धुनि सुनत स्रवन भरि, ते सुख पल महिं न्यात।
ते मग बिपिन अधीन कीर-पिक, डोलत हैं बिललात।

जिन बेलिन परसत कर-पल्लव, अति अनुराग सुभाव ।
ते सब सूखी परति बिटप ह्वै सीरन से द्रुम-भाव ॥
अति अधीर सब बिरह सिथिल मुनि, तन की दसा दिखाव ।
सूरदास मदनमोहन बिनु, जुग सम पल हम जात ।।११४७।

मिलि बिछुरनि की बेदन न्यारी ।
जाहि लगी सोई पै जानै बिरह पीर अति भारी ।
जब यह रचना रची बिधाता, तबही क्यौं न सँभारी ।
सूरदास प्रभु काहैं जिवाई जनमत ही किन मारी ।।११४८।

मधुबन, तुम क्यौं रहत हरे ।
बिरह-बियोग स्यामसुंदर के ठाढ़े, क्यौं न जरे ।
मोहन बेनु बजावत तुम तर, साखा टेकि खरे ।
मोहे थावर अरु जड़-जंगम मुनिजन ध्यान टरे ।
वह चितवनि तू मन न धरत है फिरि-फिरि पुहुप धरे ।
सूरदास प्रभु बिरह-दवानल नख-सिख लौं न जरे ।।११४९।

री सखि, मोहिं लै ब्रज स्याम ।
बरष होत न एक पल सम, अब सु जुग भर जाम ।
कहँ गोकुल, कहाँ मैं कहँ जमुना ठाम ।
कहँ गृह जिहिं सकल संपति बन भयौ सोइ धाम ।
कहँ रति पति अछत स्यामहिं लै न सकती नाम ।
सूर प्रभु बिनु ब्रज कलेवर, रहन लाग्यौ काम ।।११५०।

अब यौं ही लागे दिन जान ।
सुमिरत प्रीति साज लागति है, उर भयौ कुलिस समान ।
लोचन रहत मदन बिनु देखे, बचन सुने बिन कान ।
हृदय रहत हरि पानि-परस बिनु, छिदत न मनसिज-बान ।
मानौ सखी, रहे नहिं मेरे, वे पहिले तन-प्रान ।
बिधि सनेह रचि भजे नंदसुत, बिरह-बिथा दै मान ॥

बिधि यह हरे और पुनि कीने वैसेइ पैत विधान।
सूरदास ऐसीयै कछु यह समुझति हैं अनुमान ।१३२१।

ऐसी कोउ नाहिंनै सजनी, जो मोहनहिं मिलावै।
बारक बहुरि नंदनंदन कौ, जो इहाँ लौं लै आवै ॥
पाइनि परि बिनती करि मेरी यह सब छमा सुनावै।
निसि निर्भय-सुख केलि परम रुचि राम की सुरति करावै ॥
और कौनहुँ भाँत की सकुच न, किहुँ बिधि की पठावै।
पुनि-पुनि सूर यहै कहै हरि सौं लोचन सरस बुझावैं ।१३२२।

बहुरी देखिबी इहिं भाँति।
असन चाँदत खात बैठे, परुषक्न की पाँति ॥
एक दिन नवनीत चोरत, मैं रही दुरि जाइ।
निरखि मम छाया भजे, मैं दौरि पकरे धाइ ॥
पोंछि कर मुख लई कनियाँ तब गई रिस भागि।
यह सुरति जिय जाति नाहीं रहे छाती लागि ॥
जिन चरनि यह सुख विलोक्यौ, तै छगन भव खान।
सूर बिनु ब्रजनाथ देखें रहत पापी प्रान ।१६२३।

कब देखौं इहिं भाँति कन्हाई।
मोरनि के चँदवा माँथे पर काँध कमरी लकुट सुहाई ॥
साँझ समय के बोरैं सुरभिनि संग आवत एक महाछबि पाई।
कान अँगुरिया चाखि निकट पुर, मोहन राग अहीरी गाई।
क्यौंहुँ न रहत प्रान दरसन बिनु, अब किन जतन करैं री माई।
सूरदास स्वामी नहिं आए बदि जु गए अवध्यौउ मराई ।१३२४।

यह जिय हौंसै पै जु रही।
पुनि री सखी स्याम सुन्दर हँसि, बहुरि न बाँह गही ॥
अब वै दिवस बहुरि कब ह्वै हैं, ऐसी बात सही।
कहाँ काम्ह है, कहाँ री अब हम, कौन पचारि कही ॥

कासी कहौ कहत नहिं आवै, कहत न परै कही।
जो कछु दुखी हमारी हरि कौ, हरि कैं संग निबही॥
इतनी कहतहिं हिचकी लागी, गोबिंद गुननि रही।
सूरदास काटे तरिवर ज्यौं, ठाढ़ी रहति रही॥११२५॥

ब्रज मैं वै उनहार नहीं।
ब्रज सब गोप रहे, हरि बिनहीं, स्वाद न रूप रही॥
ज्यौं द्रुम डार पवन के परसै इस बिधि परत मही।
बासर बिरह भरी अति व्याकुल कबहु न नींद लही॥
दिन दिन देह दुखी अति हरि बिनु, इहिं तन बहुत सही।
सूरदास हम तब न मुईं, अब ये दुख सहन रही॥११२६॥

कबहुँ दिन ऐसे हो चलि ऐहैं।
सुनि सखि नवल गुपाल आँगन मैं ग्वालनि संग न ऐहैं॥
कबहुँ जात पुलिन जमुना के बहु बिहार बिधि खेलत।
सुरति होत सुरभी सँग आवत पुहुप गहे कर मेलत॥
मृदु मुसुकानि आनि राख्यौ जिय, चलत कह्यौ है आवन।
सूर सुदिन कबहूँ तौ ह्वै है, मुरली सब्द सुनावन॥११२७॥

स्याम सिधारे कौनैं देस।
तिनकौ कठिन करेजौ सखि री, जिनकौ पिय परदेस॥
उन माधौ कछु भली न कीन्ही, कौन बतन की पैन।
छिन भरि प्रान रहत नहिं उन बिनु, निसि दिन अधिक अँदेस॥
अतिहिं निठुर पतियाँ नहिं पठई काहूँ हाथ सँदेस।
सूरदास प्रभु यह उपजत है, धरिए जोगिनि-भेस॥११२८॥

गोपालहिं पावौं धौं किहिं देस।
सिंगी मुद्रा कर खप्पर लै, करिहौं जोगिनि भेस॥
कंथा पहिरि, बिभूति लगाऊँ, जटा बँधाऊँ केस।
हरि कारन गोरखहिं जगाऊँ, जैसैं स्वाँग महेस॥

तन-मन वारौं, भस्म चढ़ाऊँ, बिरहा के उपदेस।
सूर स्याम बिनु हम हैं ऐसी जैसैं मनि बिनु सेस ॥१३५९॥

फिरि ब्रज आइऐ गोपाल।
नंद-नृपति-कुमार कहिहैं, अब न कहिहैं ग्वाल।
मुरलिका पुनि सप्त दिसि दिसि, चलौ निसान बजाइ।
दिगविजय कौं सुजति-मंडल-भूप परिहैं पाइ।
सुरभि-सखा सु सैन भट सँग, उठैगी खुर-रैन।
आतपत्र मयूर चंद्रिका, लसत है रवि-ऐन।
मधुप-बंदीजन सुजस कहि मदन आयसु पाइ।
द्रुम-लता बन-कुसुम-धानक, बसन-कुटी बनाइ।
सरस खग मृग पैक पायक, पौरिया, प्रतिहार।
सूर प्रभु ब्रजराज कीजे आइ अबकी बार ॥१३६०॥

फिरि ब्रज बसौ गोकुलनाथ।
अब न तुमहिं जगाइ पठवैं, गोधननि के साथ।
बरजैं न माखन खात कबहूँ, दह्यौ देत लुटाइ।
अब न देहिं उराहनौ नँद-घरनि आगैं आइ।
दौरि दाँवरि देहिं नहिं, लकुटी जसोदा पानि।
चोरी न देहिं उघारि कै, औगुन न कहिहैं आनि।
कहिहैं न चरननि देन जावक गुहन बैनी-फूल।
कहिहैं न करन सिंगार कबहूँ बसन जमुना-कूल।
करिहैं न कबहूँ मान हम हठिहैं न माँगत दान।
कहिहैं न मृदु मुरली बजावन, करन तुमसौं गान।
देहु दरसन नँद-नंदन मिलन की जिय आस।
सूर हरि के रूप कारन मरत लोचन प्यास ॥१३६१॥

दारक आइयौ मिलि माधौ।
को जानै तन छूटि जाइगी सूल रहै जिय साधौ।

पहुँचैहैं नंद महा के आवहु देखि लेहु पल आधौ।
मिलिहौ मैं बिपरीत करी बिधि होत दरस कौ बाधौ।
सो सुख सिव-सनकादि न पावत जो सुख गोपिनि साधौ।
सूरदास राधा बिलपति है, हरि कौ रूप अगाधौ ॥१२६२॥

सखी, इन नैननि तैं घन हारे।
बिनहीं रितु बरषत निसि-बासर, सदा मलिन दोउ तारे।
ऊरध स्वास समीर तेज अति सुख अनेक द्रुम डारे।
बदन सदन करि बसे बचन-खग, दुख पावस के मारे।
दुरि दुरि बूँद परति कंचुकि पर मिलि अंजन सौं कारे।
मानौ परनकुटी सिव कीन्ही बिबि मूरति धरि न्यारे।
घुमरि घुमरि बरषत जल छाँड़त डर लागत अँधियारे।
बूड़त ब्रजहिं सूर को राखै, बिनु गिरिवरधर प्यारे ॥१२६३॥

निसि-दिन बरषत नैन हमारे।
सदा रहति बरषा-रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे।
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर-कपोल भए कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।
आँसू सलिल सबै भइ काया पल न जात रिस टारे।
सूरदास-प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे ॥१२६४॥

अति रस-लंपट मेरे नैन।
तृप्ति न मानत पिवत कमल-मुख, सुंदरता मधु-ऐन।
दिन अरु रैनि दृष्टि रसना-रस निमिष न मानत चैन।
सोभा-सिंधु समाइ कहाँ लौं हृदय साँकरे ऐन।
अब यह बिरह अजीरन ह्वै कै, मनि लाग्यौ दुख देन।
सूर बैद ब्रजनाथ मधुपुरी, काहि पठाऊँ लैन ॥१२६५॥

हरि दरसन कौं तरसति अँखियाँ।
झाँकति झखति झरोखा बैठी, कर मीड़ति ज्यौं मखियाँ।

बिछुरी मदन-सुधानिधि-रस तैं लगति नहीं पल पँखियाँ।
इकटक चितवति उड़ि न सकति जनु मच्छि भई सखि मखियाँ।
बार बार सिर धुनति बिसूरति, बिरह ग्राह जनु भखियाँ।
सूर सुरूप मिले तैं जीवहिं काट किनारे नखियाँ ।।२३६६।

अँखियाँ करति हैं अति आरि।
सुंदर स्याम पाहुने कै मिस, मिलि न जाहु दिन चारि।।
बारैं बछी पापमहिं उड़ावत, कर देती उनहारि।
मैं तौ स्याम-स्याम करि टेरति कालिंदी कैं करार।
कमल बदन ऊपर द्वै खंजन मानौ बूड़त बारि।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु सकैं न पंख पसारि ।।२३६७।

लोचन लालच तैं न टरैं।
हरि-मुख एक रंग सँग बीधे, दाधे, फिरि जरैं।।
ज्यौं मधुकर रुचि रच्यौ केतकी कंटक काटि करैं।
तैसेइ लोभ तजत नहिं लोभा, फिरि फिरि फेरि फिरैं।।
मृग ज्यौं सहज सहत सर   न, सन्मुख तैं न टरैं।
आनन चाहिं हनै बन स्वागत, कायर दिये करैं।।
समुझि न परै कौन सचु पावत, जीवत जाइ मरैं।
सूर सुभट हठ छाँड़त नाहीं कटैं सीस लरैं ।।२३६८

( मेरे ) नैना बिरह की बेलि बई।
सींचत नैन-नीर के सजनी मूल पताल गई।।
बिगसित लता सुभाइ आपनैं छाया सघन भई।
अब कैसे निरवारौं सजनी सब तन पसरि छई।।
को जानै काहू के जिय की, छिन छिन होत नई।
सूरदास स्वामी के बिछुरैं लागी प्रेम जई ।।२३६९।

मन बसि काके होत नहीं।
इन लोभी नैननि के काजैं परबस भए जो रहीं।।

बिसरि जाइ गइ सुधि नहिं तन की, अब धौं कहा कहौं।
मेरे जिय मैं ऐसी आवति, जमुना जाइ परौं।
इक बन ढूँढ़ि, सकल बन ढूँढ़ौं, कहुँ न स्याम लहौं।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं इहिं दुख अधिक दहौं ॥१३७०॥

हौं, वा दिन कजरा मैं दैहौं।
जा दिन नंदनंदन के नैननि, अपने नैन मिलैहौं।
सुनि री सखी, यहै जिय मेरैं भूलि न और चितैहौं।
अब हठ सूर यहै व्रत मेरौ कौकिर लै मरि जैहौं ॥१३७१॥

कहा इन नैननि कौ अपराध।
रसना रटत, सुनत जस स्रवननि, इतनी अगम अगाध।
भोजन करैं भूख ज्यौं भावति बिनु खाएँ कह स्वाद।
इकटक रहत छुटति नहिं कबहूँ हरि देखन की साध।
ये दृग दुखी बिना वह मूरति कहौ कहा अब कीजै।
एक बेर ब्रज आनि कृपा करि, सूर सुदरसन दीजै ॥१३७२॥

चितवत ही मधुबन दिन जात।
नैननि नींद परति नहिं सजनी सुनि सुनि बातनि मन अकुलात।
अब ये भवन देखियत सूने, धाइ धाइ हमकौं ब्रज खात।
कौन प्रतीति करै मोहन की जिन छाँड़े निज जननी तात॥
अनुदिन नैन तपत बरसन कौं, दरद समान देखियत गात।
सूरदास स्वामी के बिछुरे, ऐसी भई हमारी बात ॥१३७३॥

देखि सखी, उत है वह गाउँ।
जहाँ बसत नँदलाल हमारे, मोहन मथुरा नाउँ।
कालिंदी कै कूल रहत हैं, परम मनोहर ठाउँ।
जौ तन पंख होइँ सुनि सजनी अबहिं उहाँ उड़ि जाउँ।
होनी होइ होइ सो अबहीं इहिं ब्रज अन्न न खाउँ।
सूर नंदनंदन सौं हित करि लोगनि कहा डराउँ ॥१३७४॥

लिखि नहिं पठवत हैं द्वै बोल।
द्वै कौड़ी के कागद-मसि कौ, लागत है बहु मोल ?
हम इहिं पार, स्याम पैले तट, बीच बिरह कौ जोर।
सूरदास प्रभु हमरे मिलन कौं हिरदै कियौ कठोर ॥१२७५।

सुपनेहूँ मैं देखिये जौ नैन नींद परै।
बिरहिनी प्राननाथ बिनु कहि कहा उपाइ करै ॥
चंद मंद समीर सीतल सेज सदा जरै।
कहा करौं किहूँ भाँति मेरौ मन न धीर धरै ॥
करे जतन अनेक बिरहिनि कछु न आइ सरै।
सूर सीतल कृष्न बिनु, तन कौन ताप हरै ।१२७६।

सुपनें हरि आए, हौं किलकी।
नींद जु सौति भई रिपु हमकौं सहि न सकी रति तिल की।
जौ जागौं तौ कोऊ नाहीं रोकै रहति न हिलकी।
तन फिरि जरनि भई नख-सिख तैं दिया-बाति जनु मिलकी।
पहिली दसा पलटि लीन्ही है त्वचा तचकि तनु पिलकी।
अब कैसें सहि जाति हमारी भई सूर गति सिल की ।१२७७।

बहुरी भूमि न सौन्हि लगी।
सुपनें के सुख न सहि सकी नींद जगाइ भगी ॥
बहुत प्रकार निमेष लगाए छुटी नहीं लगी।
मनु हीरा हरि लियौ हाथ तैं ढोल बजाइ ठगी ॥
वर मोहनि पद्मावति बिचारनि इहिं बिधि निसा जगी।
यह मूरति कब सुख दिखावै सोई सूर सगी ।१२७८।

सखी री काहे रहति मलीन।
नव सिंगार बसन देखनि नहिं बुधि-बल आनँद-हीन ॥
सुख समीर, नैननि नहिं अंजन तिलक ललाट न दीन।
कुंचित बार बगरे बनि लटकें छिन-छिन ह्वै तन छीन ॥

प्रेम-सुधा पीनहिं मन मानै बिरही, चातक मीन ।
सूरदास जीवति सु हृदय मैं जिन जिम परमस छीन ।।१९७९।।

हमकौं सपनेहू मैं सोच ।
जा दिन तैं बिछुरे नँदनंदन, ता दिन तैं यह पोच ॥
मनु गुपाल आए मेरैं गृह, हँसि करि भुजा गही ।
कहा कहौं, बैरिनि भइ निदया, निमिष न और रही ॥
ज्यौं चकई प्रतिबिंब देखि कै, आनंदै पिय जानि ।
सूर पवन मिसि निठुर बिधाता, चपल कियौ जल आनि ।।१९८०

सुनहु सखी ते धन्य नारि ।
जे अपने प्रान बल्लभ की सपनैं हूँ देखति अनुहारि ॥
कहा कहौं री चलत स्याम कै, पहिलैहिं नींद गई दिन चारि ।
देखि सखी, कछु कहत न आवै मींचि रही अपमाननि मारि ॥
जा दिन तैं नैननि अंतर भए अनुदिन अति बाढ़त है बारि ।
मनहु सूर दोउ सुभग सरोवर, उमँगि चले मरजादा टारि ।।१९८१।

हमकौं जागत रैनि बिहानी ।
कमल-नैन, जग-जीवन की सखि गावत अकथ कहानी ।
बिरह अथाह होत निसि हमकौं, बिनु हरि समुद समानी ।
क्यौं करि पावहिं बिरहिनि पारहिं बिनु केवट अगवानी ॥
चहित सूर चकई मिलाप निसि अति सु मिलै अरविंदहिं ।
सूर हमैं दिन-राति दुसह दुख, कहा कहैं गोबिंदहिं ।।१९८२।

पिय बिनु नागिनि कारी राति ।
जौ कहुँ जामिनि उवति जुन्हैया, डसि उलटी ह्वै जाति ॥
मंत्र न फुरत, मंत्र नहिं लागत, प्रीति सिरानी जाति ।
सूर स्याम बिनु बिकल बिरहिनी मुरि-मुरि लहरैं खाति ।।१९८३।

सोभौ माई, जमुना जम ह्वै रही ।
मेरे मिलैं स्यामसुंदर की बैरिनि बीच बही ॥

किविक पीप मयुरा अरु गोकुल, आवत हरि जु नहीं।
हम इयक्षा कछु मरम न जान्यौ, पलस न फेंट गही॥
अब पछितावति, प्रान दुख पावत, जाति न बात कही।
सूरदास-प्रभु सुमिरि-सुमिरि गुन दिन-दिन सूल सही।१८८४

नैन सलोने स्याम बहुरि कब आवहिंगे।
वै जो देखत राते-राते, फूलनि फूली डार॥
हरि बिनु फूल झरी सी लागत झरि झरि परत अँगार॥
फूल बिनन नहिं जाउँ सखी री हरि बिनु कैसे बीनौं फूल।
सुनि री सखी, मोहिं राम दुहाई लागत फूल त्रिसूल॥
जब मैं पनघट जाउँ सखी री, वा जमुना कैं तीर।
भरि-भरि जमुना उमड़ि चलति है, इन नैनन कैं नीर॥
इन नैननि कै नीर सखी री, सेज भई घरनाउँ।
चाहति हौं ताही पै चढ़ि कै, हरि जू कें ढिग जाउँ॥
लाल पियारे प्रान हमारे रहे अधर पर आइ।
सूरदास प्रभु कुंज बिहारी, मिलत नहीं क्यौं धाइ।१३८५

सखी री, हरि आवहिं किहिं हेत।
वै राजा तुम ग्वारि बुलावन यहै परेखी लेत॥
अब सिर छत्र-छत्र राजत है मोर पंख नहिं भावत।
सुनि ब्रजराज पीठि दै बैठत जदुकुल बिरद बुलावत।
द्वारपाल अति पौरि बिराजत, दासी सहस अपार।
गोकुल गाइ दुहन दुख को सी सूर सहै इक बार।१३८६।

बलम न माधौ की गही बाहैं।
बार बार बदिजाति हरषि हैं यहै सूप मन माहैं॥
पर-धन कछु न सुहाइ रैनि-दिन, मनहु मृगी इव डाहैं।
मिलनि न मरनि बिना धन स्यामहिं, कोटि धनी धन दाहैं॥

चितवति चकित पखिक्षति मनहिं मन चंद गहैं जनु राहैं।
सूरदास-प्रभु दूरि सिधारे, दुख कहिये किहिं पाहैं ।१३८७।

मेरौ मन वैसीयै सुरति करै।
मृदु मुसकानि बंक अवलोकनि हिरदै तैं न टरै॥
जब गुपाल गोपन सँग आवत मुरली अधर धरै।
मुख की रेनु भारि अंचल सौं जसुमति अंक भरै॥
संध्या समय चोप की बोलनि, यह सुधि क्यौं बिसरै।
सूरदास प्रभु दरसन कारन, नैननि नीर ढरै ।१३८८।

मति कोउ प्रीति कैं फंग परै॥
साहर खौंति देखि मन मानै, पंछी प्रान हरै॥
देखि पतंग कहा क्रम कीन्यौ जीव कौ त्याग करै।
अपने मरिबे तैं न डरत है, पावक पैठि जरै॥
भौंर सनेही सोहिं बधाऊँ, केतिक प्रेम धरै।
सारँग सुनत नाद रस मोह्यौ, मरिबे तैं न डरै॥
जैसे चकोर चंद कौ चाहत जल बिनु मीन मरै।
सूरदास प्रभु सौं ऐसें करि मिलै तौ काज सरै ।१३८९।

प्रीति करि, काहू सुख न लह्यौ।
प्रीति पतंग करी पावक सौं आपै प्रान दह्यौ॥
अलि सुत प्रीति करी जल-सुत सौं, संपुट माँझ गह्यौ।
सारँग प्रीति करी जु नाद सौं सन्मुख बान सह्यौ॥
हम जौ प्रीति करी माधव सौं, चलत न कछू कह्यौ।
सूरदास प्रभु बिनु दुख पावति नैननि नीर बह्यौ ।१३९०।

प्रीति तौ मरिबौऊ न बिचारै।
निरखि पतंग ज्योति-पावक ज्यौं जरत न आपु सँभारै॥
प्रीति कुरंग नाद मन मोहित बधिक निकट ह्वै मारै।
प्रीति परेवा उड़त गगन तैं गिरत न आपु सँभारै॥

सावन मास पपीहा बोलत, पिय पिय करि जु पुकारै ।
सूरदास प्रभु दरसन कारन, ऐसी भाँति बिचारै ॥३६६१॥

अति कोउ काहू कैं बस हाहि ।
ज्यौं चकई दिनकर बस डोलत, मोहिं फिरावत मोहि ।
हम तौ रीझि लटू भईं लालन, महा प्रेम तिय जानि ।
बंधन अवधि भ्रमति निसि-बासर, को सुरझावत आनि ।
परमैं संग अंग-अंगनि प्रति, बिरह-बेलि की नाईं ।
मुकुलित कुसुम नैन निद्रा तजि, रूप-सुधा सियराईं ।
अति आधीन हीन-मति ब्याकुल, कहँ लौं कहौं बनाई ।
ऐसी प्रीति-रीति-रचना पर सूरदास बलि जाई ॥३६६२॥

अब बरषा कौ आगम आयौ ।
ऐसे निठुर भए नँदनंदन, सँदेसहु न पठायौ ।
बादर घोरि उठे चहुँ दिसि तैं जलधर गरजि सुनायौ ।
एकै सूल रही मेरैं जिय बहुरि नहीं ब्रज छायौ ।
दादुर मोर पपीहा बोलत कोकिल सब्द सुनायौ ।
सूरदास के प्रभु सौं कहियौ, नैननि हू झर लायौ ॥३६६३॥

ये दिन रूसिबे के नाहीं ।
कारी घटा पौन झकझोरे, लता तरुन लपटाहीं ।
दादुर मोर चकोर मधुप पिक बोलत अमृत बानी ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु बैरिनि रितु नियरानी ॥३६६४॥

सँदेसनि मधुबन कूप भरे ।
अपने तौ पठवत नहिं मोहन हमरे फिरि न फिरे ।
जिते पथिक पठए मधुबन कौं बहुरि न सोध करे ।
कै वै स्याम सिखाइ प्रबोधे, कै कहुँ बीच मरे ।
कागद गरे मेघ, मसि खूटी सर दव लागि जरे ।
सेवक सूर लिखन कौ आँधौ, पलक कपाट अरे ॥३६६५॥

देखियत चहुँ दिसि तैं घन घोरे।
मानौ मत्त मदन के हथियनि, बल करि बंधन तोरे।
स्याम सुभग तन, चुवत गंडमद, बरषत थोरे-थोरे।
रुकत न पवन महावतहू पै, मुरत न अंकुस मोरे।
मनौ निकसि बग पंक्ति दंत उर-अवधि-सरोवर फोरे।
बिनु बेला बल निकसि नयन-जल कुच-कंचुकि-बँद बोरे।
तब तिहिं समय आनि ऐरावत ब्रजपति सौं कर जोरे।
अब सुनि सूर कान्ह-केहरि बिनु, गरत गात जैसे ओरे।।११६६

ब्रज पर सजि पावस दल आयौ।
धुरवा धुंध उठी दसहूँ दिसि, गरज निसान बजायौ।
चातक, मोर, इतर पैदरगन, करत अवाजैं कोयल।
स्याम घटा गज असमनि साजि रथ, बिच बगपाँति सँजोयल।
दामिनि कर करवाल, बूँद सर, इहिं बिधि साजे सैन।
निधरक भयौ चल्यौ ब्रज आवत अब फौजपति मैन।
हम अबला जानिय तुमहिं बल कहौ कौन बिधि कीजै।
सूर स्याम अबकै इहिं अवसर, आनि राखि ब्रज लीजै।।११६७।।

बरु ए बदरौ बरषन आए।
अपनी अवधि जानि नँदनंदन गरजि गगन घन छाए।
कहियत हैं सुर-लोक बसत सखि, सेवक सदा पराए।
चातक कुल की पीर जानि कै, तेउ तहाँ तैं धाए।
द्रुम किए हरित हरषि बेली मिलि, दादुर मृतक जिवाए।
साजे निबिड़ नीड़ तृन सँचि-सँचि पंछिनहूँ मन भाए।
समुझति नहीं चूक सखि, अपनी, बहुतैं दिन हरि लाए।
सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि मधुबन बसि बिसराए।।११६८

बहुरि हरि आवहिंगे किहिं काम।
रितु बसंत अरु ग्रीषम बीते, बादर आए स्याम।

छिन मंदिर छिन द्वारैं ठाढ़ी यौं सूखति है घाम।
तारे गनत गगन के सजनी बीतैं चारौ जाम।।
औरौ कथा सबै बिसराई लेत तुम्हारौ नाम।
सूर स्याम ता दिन तैं बिछुरे अस्थि रहे कै चाम।।१३९९।

किधौं घन गरजत नहिं उन देसनि।
किधौं हरि हरषि इंद्र हठि बरजे दादुर खाए सेषनि।।
किधौं उहिं देस बगनि मग छाँड़े धरनि न बूँद प्रवेसनि।
चातक मोर कोकिला उहिं बन बधिकनि बधे बिसेषनि।।
किधौं उहिं देस बाल नहिं झूलतिं गावतिं सखि न सुदेसनि।
सूरदास-प्रभु पथिक न चलतौ कासौं कहौं सँदेसनि।।१४००।

आजु घन स्याम की अनुहारि।
आए उनइ साँवरे सजनी देखि रूप की आरि।।
इंद्रधनुष मनु पीत बसन छबि दामिनि दसन बिचारि।।
मनु बगपाँति माल मोतिनि की, चितवत चित्त निहारि।
गरजत गगन गिरा गोबिंद मनु, सुनत नयन भरे बारि।
सूरदास गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भई ब्रजनारि।।१४०१।

जैसे बादर ता दिन आए जा दिन स्याम गोबर्धन धारयौ।
गरजि-गरजि घन बरषन लागे मानौ सुरपति बैर सम्हारयौ।।
तबै सँजोग जुरे हैं सजनी बादर हठ करि धीर पछारयौ।
तब को सात दिवस राखैगौ दूरि गयौ ब्रज कौ रखवारौ।।
अब बलराम दुरे या ब्रज मैं काहू देव न ऐसौ हारयौ।
अब यह भूमि भयानक लागी बिधना बहुरि कंस अवतारयौ।।
अब यह सुनि करे को हमारी, या ब्रज मैं कोउ नाहिं हमारौ।
सूरदास अति बिकल बिरहिनी गोपिनि पद्मिनी प्रेम सँभारयौ।।

मानौ माई सबनि यहै है भावत।
अब हरि देस स्याम सुंदर कहैं, कोउ न सबौ गुनावत।।

भरत न मन नव पत्र फूल-फल, पिक बसंत नहिं गावत।
मुदित न मर सरोज अलि गुंजत, पवन पराग उड़ावत॥
पावस विविध बरन बर बादर, उमड़ि न अंबर छावत।
दादुर मोर कोकिला चातक बोलत बचन दुरावत॥
ज्यौं ही प्रगट निरंतर निसि दिन, हठ करि विरह बढ़ावत।
सूर स्याम पर-पीर न जानत कत सरवज्ञ कहावत ॥१४०३॥

सखि कोउ नई बात सुनि आई।
यह ब्रजभूमि सकल सुरपति सौं, मदन मिलिक करि पाई।
घन धावन, बगपाँति पटोसिर, बैरख तड़ित सुहाई।
बोलत पिक चातक ऊँचे सुर, फैरत मनौ दुहाई।
दादुर मोर चकोर मधुप सुक, सुमन समीर सुहाई।
चाहत बास कियौ वृंदावन, विधि सौं कछु न बसाई।
सीव न चाँपि सक्यौ तब कोऊ, हुते बल-कुँवर कन्हाई।
सूरदास गिरिधर बिनु गोकुल पै करिहैं ठकुराई ॥१४०४॥

सिखिनि सिखर चढ़ि टेर सुनायौ।
बिरहिनि, सावधान ह्वै रहियौ सजि पावस दल आयौ।
नव बादर बानैत पवन ताजी चढ़ि, चुटक दिखायौ।
चमकत बीजु, मैरु कर मंडित गरज निसान बजायौ।
चातक पिक झिल्लीगन, दादुर, सब मिलि मारू गायौ।
मदन सुभट कर बान पंच लै ब्रज सन्मुख ह्वै धायौ।
जानि विदेस नंदनंदन कौं अबलनि त्रास दिखायौ।
सूर स्याम पहिलै गुन सुमिरैं, प्रान जात बिरमायौ ॥१४०५॥

हमारे माई मोरवा बैर परे।
घन गरजत बरज्यौ नहिं मानत त्यौं त्यौं रटत खरे।
करि करि प्रगट पंख हरि इनके, लै लै सीस धरे।
याही तैं न बदत बिरहिनि कौं मोहन ढीठ करे।

को जानै काहे तें सजनी, हमसौं रहत अरे।
सूरदास परदेस बसे हरि, ये बन तें न टरे ।१४०६।

बहुरि पपीहा बोल्यौ माई।
नींद गई, चिंता चित बाढ़ी, सुरति स्याम की आई ॥
सावन मास मेघ की बरषा, हौं उठि आँगन आई।
चहुँदिसि गगन दामिनी कौंधति तिहिं जिय अधिक डराई ॥
काहूँ राग मलार अलाप्यौ मुरलि मधुर सुर गाई।
सूरदास बिरहिनि भइ ब्याकुल धरनि परी मुरझाई ।१४०७।

सारँग स्यामहिं सुरति कराउ।
पौढ़े होहिं जहाँ नँदनंदन ऊँचे टेरि सुनाउ ॥
गई ग्रीषम पावस रितु आई सब काहूँ चित चाउ।
तुम बिनु ब्रजबासी यौं जीवैं ज्यौं करिया बिन नाउ ॥
तुम्हरी कही मानिहैं मोहन चरन पकरि लै आउ।
अबकी बेर सूर के प्रभु कौं नैननि आनि दिखाउ ।१४०८।

सखी री, चातक मोहिं जियावत।
जैसैंहि रैनि रटति हौं पिय-पिय, तसैंहिं वह पुनि गावत ॥
अतिहिं सुकंठ दाह प्रीतम कैं, तारू जीभ न लावत।
आपुन पियत सुधा रस अंमृत बोलि बिरहिनी प्यावत ॥
यह पंछी जु सहाइ न होतौ प्रान महा दुख पावत।
जीवन सुफल सूर ताही कौ काज पराए आवत ।१४०९।

बहुत दिन जीवौ पपिहा प्यारौ।
बासर रैनि नाम लै बोलत भयौ बिरह जुर कारौ ॥
आपु दुखित पर दुखित जानि जिय, चातक नाम तुम्हारौ।
देखौ सकल बिचारि सखी जिय बिछुरन कौ दुख न्यारौ।
जाहि लगै सोई पै जानै प्रेम बान अनियारौ।
सूरदास प्रभु स्वाति बूँद लगि, तज्यौ सिंधु करि खारौ ।१४१०।

(हौं तौ मोहन के) बिरह जरी रे तू कत जारत।
रे पापी, तू पंखि पपीहा पिय-पिय करि अधराति पुकारत॥
करी न कछु करतूति सुभट की, मूठि गहत अपजसि सर मारत।
रे सठ, तू जु सतावत औरनि, जानत नहिं अपने जिय आरत॥
सब जग सुखी, दुखी तू जल बिनु, तऊ न उर की व्यथा बिचारत।
सूर स्याम बिनु ब्रज पर बोलत काहैं अगिलौ जनम बिगारत॥१४११॥

कोकिल हरि कौ बोल सुनाउ।
मधुबन तैं उपटारि स्याम कौं, इहिं ब्रज कौं लै आउ॥
जा जस कारन देत सयाने, तन-मन-धन सब साज।
सुजस बिकात बचन के बदलै, क्यौं न बिसाहतु आज॥
कीजै कछु उपकार परायौ, इहै सयानौ काज॥
सूरदास पुनि कहँ यह अवसर, बिनु बसंत रितुराज॥१४१२॥

ऐसौ सुनियत है, द्वै सावन।
वहै सूल फिरि फिरि सालत जिय स्याम कह्यौ हौ आवन॥
तब कत प्रीति करी अब त्यागी, अपनौ कीन्हौ पावन।
इहिं दुख सख्यौ, निकसि यहँ जइयै जहँ सुनियै कोउ नावँ न॥
पलहिं बैर सखी मधुकर ज्यौं लागौ नेह बढ़ावन।
सूर सुरति क्यौं होति हमारी, लागीं नीकी भावन॥१४१३॥

अब यह बरषा बीति गई।
अनि सोचहि, सुख मानि सयानी सखी रितु सरद भई॥
फूल्यौ सरोज सरोवर सुंदर, नव बिधि नलिनि भई।
उदित चारु चंद्रिका किरन, उर अंतर अमृत भई॥
घटी घटा अभिमान मोह-मद तमिता तेज हई।
सरिता संजम स्वच्छ सलिल सब फाटी काम कई॥
पौ मारग संदेस सूर सुनि करुना कहि पठई।
यह सुनि सखी सयानी आए हरि-रति अवधि हई॥१४१४॥

सरद समौ हूँ स्याम न आए।
को जानै काहे तैं सजनी किहिं बैरिनि बिरमाए।
अमल अकास कास कुसुमित छिति, लच्छन स्वच्छ जनाए।
सर सरिता सागर जल-उज्ज्वल अति कुल कमल सुहाए।
अहि मयंक मकरंद कंज अलि, दाहक गरल जिवाए।
प्रीतम रंग अंग मिलि सुन्दरि, रचि सचि सींचि सिराए॥
सूनी सेज तुषार जमत चिर बिरह-सिंधु उपजाए।
अब गई आस सूर मिलिबे की भए ब्रजनाथ पराए।१४१५।

सबै रितु औरै लागति आहि।
सुनि सखि, वा ब्रजराज बिना सब, फीकी लागत चाहि॥
वै घन देखि नैन बरषत हैं, पावस गयें सिरात।
सरद सनेह सँचे सरिता उर, मारग ह्वै जल जात॥
हिम हिमकर देखे उपजत अति, निसा बढ़ति इहिं लाग।
सिसिर बिकल कौंपत सु कमल उर सुमिरि स्याम रस भोग॥
निरखि बसंत बिरह बेली तन, पै सुख दुख ह्वै फूलत।
ग्रीषम काम निमिष छाँड़त नहिं देह दसा सब भूलत॥
षट् रितु ह्वै इक ठाम कियौ तनु, उठे त्रिदोष जुरे।
सूर अवधि उपचार आजु लौं, राखे प्रान मुरे।१४१६।

हरि बिनु मुरली कौन बजावै।
सुंदर स्याम कमल लोचन बिनु, को मधुरे सुर गावै।
ये दोउ स्रवन सुधा-रस पीयै को ब्रज फेरि बसावै।
ऐसौ निठुर कियौ हरि जू मन पंथी पंथ न आवै।
छाँड़ी सुरति नंद-जसुमति की हमरी कौन चलावै।
सूर स्याम कौ प्रीति पाछिली, को अब सुरति करावै।१४१७।

सखि, कर धनु लै चंदहिं मारि।
तब तौ पै कहुँवै न सिरैहै, जब अति जुर बाढ़ै तनु ज्वारि।

उठि इरखाइ आइ मंदिर चढ़ि, मसि सनमुख दरपन बिस्तारि।
ऐसी भाँति बुलाइ मुकुर मैं अति बल खंड-खंड करि डारि॥
सोई अवधि निकट आई है चलत तौहिं जो दई मुरारि।
सूरदास बिरहिनि यौं तलफति जैसैं मीन दीन बिनु बारि॥१४१८

या बिनु होत कहा हाँ सूनौ।
लै किन प्रगट कियौ प्राची दिसि, बिरहिनि कौ दुख दूनौ॥
सब निरदै सुर असुर सैल सखि, सायर सर्प समेत।
काहु न कृपा करी इतननि मैं त्रिन तन-धन दव देत॥
धन्य कुहू बरषा रितु, तमचुर, अरु कमलनि कौ हेत।
जुग जुग जीवे जरा बापुरी मिलै राहु कौ केत॥
मिटै चंद तन सुरति स्याम की बिकल भई ब्रजबाल।
सूरदास अबहूँ इहिं औसर काहे न मिलत गुपाल॥१४१६॥

दूरि करहि बीना कर धरिबौ।
रथ थाक्यौ, मानौ मृग मोहे, नाहिंन होत चंद कौ ढरिबौ।
बीतै जाहि सोइ पै जानै, कठिन सु प्रेम पास कौ परिबौ।
प्राननाथ संगहिं तैं बिछुरे, रहत न नैन-नीर कौ झरिबौ।
सीतल चंद अगिनि सम लागत कहिए धीर कौन बिधि धरिबौ।
सूर सु कमलनयन के बिछुरैं झूठौ सब जतननि कौ करिबौ।

कोउ माई, बरजै री या चंदहिं।
अतिहीं क्रोध करत है हम पर, कुमुदिनि-कुल आनंदहिं॥
कहाँ कहौ बरषा रवि तमचुर कमल बलाहक कारे।
चलत न चपल रहत थिर कै रथ, बिरहिनि के तन जारे॥
निंदति सैल उदधि पन्नग कौं, श्रीपति कमठ कठोरहिं।
देति असीस जरा देवी कौ राहु केतु किन जोरहिं॥
ज्यौं जल-हीन मीन तन तलफति ऐसी गति ब्रजबालहिं
सूरदास अब आनि मिलावहु, मोहन मदन गुपालहिं॥१४२१॥

माई मोकौं चंद लग्यौ दुख दैन।
कहँ वै स्याम, कहाँ वै बतियाँ, कहँ वै सुख की रैन।
तारे गनत-गनत हौं हारी, टपकन लागे नैन।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु बिरहिनि कौं नहिं चैन ॥१४२२

अब हरि कौने सौं रति जोरी।
काके भए, कौन के ह्वै हैं बँधे कौन की डोरी।
त्रेता जुग इक पतिनी-व्रत कियौ, सीऊ विसपत छोरी।
सुफलक-सुत सँग ब्याहन आई, माफ निपात बहोरी।
पय पीवत जिन हती पूतना, स्रुति मरजादा फोरी।
बहुतै प्रीति बढ़ाइ महरि सौं, छिनक मौंझ दै तोरी।
बारजपंथ सिखाइ गोपजनि, अपने स्वारथ मोरी।
सूरदास करि काज आपनौ, गुडी डोर ज्यौं तोरी ॥१४२३॥

अब या तनहिं राखि कह कीजै।
सुनि री सखी स्यामसुन्दर बिनु बाँटि विषम विष पीजै।
कै गिरिये गिरि चढ़ि सुनि सजनी सीस संकरहिं दीजै।
कै दहिये दारुन दावानल जाइ जमुन धँसि लीजै।
दुसह वियोग-विरह माधौ के, कौ दिन ही दिन छीजै।
सूर स्याम प्रीतम बिनु राधे सोचि साचि कर मींजै ॥१४२४

काहे कौं पिय पियहिं रटति हौं, पिय कौ प्रेम तेरौ प्रान हरैगौ।
काहे कौं लेति नयन जल भरि-भरि नैन भरे कैसैं सूल टरैगौ।
काहे कौ स्वाँस उसाँस लेति हौ बैरी बिरह कौ दवा बरैगौ।
हार सुगंध मैन पुहपावलि हार छुवैं, हिय हार जरैगौ।
बदन दुराइ बैठि मंदिर मैं बहुरि निसापति उदय करैगौ।
सूर सखी, अपने इन नैननि, चंद चितै जनि, चंद जरैगौ ॥१४२५

स्याम बिनोदी रे मधुबनियाँ।
अब हरि गोकुल काहे कौं आवत भावति नव जोबनियाँ।

ये दिन माधौ भूलि गए जब, लिए फिरावति कनियाँ।
अपनैं कर जसुमति पहिरावति कनक चौंप की मनियाँ।
दिना चारि तैं पहिरन सीखे, पट पीतांबर तनियाँ।
सूरदास प्रभु वाकैं बस परि, अब हरि भए चिकनियाँ ॥१४२५॥

कहौं री जो कहिबे की होइ।
प्रान-नाथ बिछुरे की बेदन और न जानै कोइ।
जब हम अधर-सुधा-रस लै-लै, मगन रहीं मुख जोइ।
जा रस सिव-सनकादिक दुरलभ, सो रस बैठी खोइ।
कहा कहौं कछु कहत न आवै सुख सपनौ भयौ सोइ।
हमसौं कठिन भए कमलापति काहि सुनाऊँ रोइ।
बिरह बिथा अंतर की बेदन, सो जानै जिहिं होइ।
सूरदास सुख-मूरि मनोहर, लै जु गए मन गोइ ॥१४२७॥

बिछुरे री मेरे बाल सँघाती।
निकसि न जात प्रान ये पापी, फाटति नाहिंन छाती।
हौं अपराधिनि दही मथति ही भरी जोबन मदमाती।
जौ हौं जानति हरि कौ चलिबौ लाज छाँड़ि सँग जाती।
ढरकत नीर नैन भरि सुंदरि कछु न सोह दिन-राती।
सूरदास-प्रभु दरसन कारन, सखियनि मिलि लिखी पाती॥

हमारे हिरदै कुलिसहुँ जीत्यौ।
फटत न सखी अजहुँ उहिं आसा, बरष दिवस पर बीत्यौ।
हमहूँ समुझि परी नीकैं करि, यह आसिकनि की रीत्यौ।
बहुरि न जीवन मरन सौं साम्यौ, ज्यौं मधुप की मीत्यौ।
अब लौं पान परी-मद्दरन की, ज्यौं उद्पम की भीत्यौ।
सूर स्याम दासी सुख सोवहु, भयौ उभै मन चीत्यौ ॥१४२८॥

एक द्यौस कुंजनि मैं माई।
नाना कुसुम लेइ अपनैं कर, दिए मोहिं, सो सुरति न जाई।

इतने मैं घन गरजि वृष्टि करी, तनु भीज्यौ मो भई जुड़ाई ।
कंपत देखि उढ़ाइ पीत पट, लै करुनामय कंठ लगाई ॥
कहँ वह प्रीति-रीति मोहन की, कहँ अब धौं एती निठुराई ।
अब बलबीर सूर प्रभु सखि री, मधुबन बसि सब रति बिसराई ॥

माहिनै अब ब्रज नंद कुमार ।
परम चतुर सुन्दर सुजान सखि, या तनु की मतिहार ।
रूप लकुट रोकै जु रहत अलि, मनु दिन नैननि द्वार ।
ता दिन तैं उर-भवन भयौ सखि सिव रिपु कौ संचार ॥
दुख आवत कछु अंक न मानत सूनौ देखि अगार ।
अंसु धर्सीम जात अंतर तैं करत न कछू बिचार ॥
निसि निमेष कपाट लगे बिनु ससि मूसत मन सार ।
सूर प्रान रहि जात न औषध सुमिरि अवधि-आधार ।१४३१।

मेरे मन इतनी सूल रही ।
वै बतियाँ छतियाँ लिखि राखीं जे नँदलाल कही ॥
एक द्यौस मेरैं गृह आए हौं ही मथत दही ।
रति माँगत मैं मान कियौ सखि, सो हरि गुसा गही ॥
सोचति अति पछिताति राधिका मुरछित धरनि ढही ।
सूरदास-प्रभु के बिछुरे तैं, बिथा न जाति सही ।१४३२।

सुरति करि हाँ की रोइ दियौ ।
पंथी एक देखि मारग मैं राधा बोलि लियौ ॥
कहि धौं बीर कहाँ तैं आयौ हम जु प्रनाम कियौ ।
पा लागौं मंदिर पग धारौ सुनि दुखियान त्रियौ ॥
गद्गद कंठ. हियौ भरि आयौ बचन कह्यौ न दियौ ।
सूर स्याम अभिराम ध्यान मन, भरि-भरि लेत हियौ ।१४३३।

हरि कौ मारग दिन प्रति जोवति ।
चितवत रहत चकोर चंद ज्यौं, सुमिरि-सुमिरि गुन रोवति ॥

पतियाँ पठवति मसि नहिं खूँटति लिखि लिखि मानहु धोवति।
भूख न दिन, निसि नींद हिरानी, एकौ पल नहिं सोवति॥
जे जे बसन स्याम सँग पहिरे, ते अजहूँ नहिं धोवति।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, वृथा जनम सुख खोवति॥१४३४॥

बिनु माधौ, राधा तन सजनी सब बिपरीत भई।
गई छपाइ छपाकर की छबि, रही कलंकमई॥
अलक जु हुती भुअंगम हू सी लट-लट मनहु भई।
तनु-तरु छाइ बियोग भयौ तनु, तनुता सकल दई॥
अँखियाँ हुतीं कमल-पँखुरी सी, सुदृग निचोरि लई।
भौंह लगें ज्यौनो सानी मैं धौं तनु धातु भई॥
कदली दल सी पीठि मनोहर, मानौ उलटि ठई।
संपति सब हरि हरी सूर प्रभु बिपदा देह दई॥१४३५॥

हरि है दुख तन तरफत मरि जैहै।
कबहुँ न सखी, स्याम-सुंदर-घन, मिलिहैं आइ अंक भरि लैहैं?
कबहुँ न बहुरि सखा सँग ललना, ललित त्रिभंगी छबिहिं दिखैहैं?
कबहुँ न बेनु अधर धरि मोहन, यह मति लै लै नाम बुलैहैं?
कबहुँ न कुंज-भवन सँग मिलिहैं, कबहुँ न दूती नेम पठैहैं?
कबहुँ न पकरि भुजा रस-बस ह्वै, कबहुँ न पग परि मान मिटैहैं?
याही तैं घट प्रान रहत है, कबहुँक फिरि दरसन हरि दैहैं?
सूरदास परिहरत न यातैं प्रान तजैं नहिं पिय ब्रज ऐहैं॥१४३६॥

सबै सुख लै जु गए ब्रजनाथ।
बिलखि बदन चितवति मधुबन तन, हम न गईं उठि साथ॥
वह मूरति चित तें बिसरति नहिं, देखि साँवरे गात।
मदन गोपाल ठगौरी मेली, कहत न आवै बात॥
नंद नंदन जु बिदेस गवन कियौ, बैसी मीजति हाथ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे बिछुरे, हम सब भईं अनाथ॥१४३७॥

उनकौं ब्रज बसिबौ नहिं भावै।
हाँ वै भूप भए त्रिभुवन के, ह्याँ कत ग्वाल कहावै॥
हाँ वै छत्र सिंहासन राजत, को बछरनि सँग धावै।
ह्याँ तौ बिबिध बसन पाटंबर, को कमरी सचु पावै॥
नंद जसोदा हूँ कौ बिसारयौ, हमरो कौन चलावै।
सूरदास प्रभु निठुर भए री, पातिहुँ लिखि न पठावै॥४६८॥

— (❀) —

## ( ठ ) कृष्ण और उद्धव

जदुपति जानि उद्धव-रीति।
जिहिं प्रगट निज सखा कहियत करत भाव अनीति।
बिरह दुख जहँ नाहिं नैकहुँ तहँ न उपजै प्रेम।
रेख रूप न बरन जाकैं, इहिं धरयौ वह नेम।।
त्रिगुन तन करि लखत हमकौं ब्रह्म मानत और।
बिना गुन क्यौं पुहुमि उघरै यह करत मन डौर।।
बिरह रस किहिं मंत्र कहिऐ, क्यौं चलै संसार।
कछु कहत यह एक प्रगटत, अति भरयौ अहंकार।।
प्रेम भजन न नैंकु याकैं, जाइ क्यौं समुझाइ।
सूर प्रभु मन यहै आनी ब्रजहिं देउँ पठाइ।।१४१६।

संग मिलि कह्यौ कासी जात।
यह तौ कहत जोग की बातैं जामैं रस जरि जात।।
कहत कहा, पितु-मातु कौन के, पुरुष-नारि कह नात।
कहाँ जसोदा सी है मैया कहाँ नंद सम तात।।
कहँ वृषभानु-सुता सँग कौ सुख वह बासर वह प्रात।
सखी सखा सुख नहिं त्रिभुवन मैं नहिं बैकुंठ सुहात।।
ये बातैं कहिए किहिं आगैं, यह गुनि हरि पछितात।
सूरदास प्रभु ब्रज महिमा कहि, लिखी कहत नहिं जात।।१४२०

कहाँ सुख ब्रज कौ सौ संसार।
कहाँ सुखद बंसीबट जमुना यह मन सदा बिचार।
कहँ बन धाम कहाँ राधा सँग, कहाँ संग ब्रज-बाम।
कहँ रस-रास बीच अंतर सुख, कहाँ नारि तन ताम॥
कहाँ लता तरु-तरु प्रति झूमनि, कुंज-कुंज नव धाम।
कहाँ बिरह सुख बिन गोपिनि सँग, सूर स्याम मन काम १४४१

याहि और नहिं कछू उपाइ।
मेरी प्रगट कही नहिं मानिहै, ब्रजहीं देउँ पठाइ॥
गुप्त प्रीति जुवतिनि की कहि कै, याकौ करौं महंत।
गोपिनि के परमोधन कारन, ऐहै सुनत तुरंत॥
अति अभिमान करैगौ मन मैं जोगिनि की यह भाँति।
सूर स्याम यह निहचै करिकै, बैठत हैं मिलि पाँति।१४४२।

तबहिं उपँगसुत आइ गए।
सखा सखा कछु अंतर नाहीं भरि भरि अंक लए॥
अति सुंदर तन स्याम सरीखौ, देखत हरि पछिताने।
ऐसे कैं वैसी बुधि होती ब्रज पठऊँ मन आने॥
या आगैं रस कथा प्रकासौं जोग-कथा प्रगटाऊँ।
सूर ज्ञान याकौ दृढ़ करिकै, जुवतिन्ह पास पठाऊँ॥

जबहीं यह कहौंगौ याहि।
मोहिं पठवत गोपिकनि पै हरष ह्वै है ताहि॥
जोग कौ अभिमान करिहै, ब्रजहिं जैहै धाइ।
कहैगौ मोहिं स्याम मानत कह्यौ यह चतुराइ॥
आइ गए तिहिं समै ऊधौ सखा कहि लियौ बोलि।
अंस धरि भुज भए ठाढ़े, करत बचन निठोलि॥
बार-बार असीस हारत कहत ब्रज की बात।
सूर प्रभु के बचन सुनि-सुनि उपँग-सुत मुसकात।१४४३।

हरि गोकुल की प्रीति चलाई ।
सुनहु उपँग-सुत मोहिं न बिसरत, ब्रज-बासी सुखदाई ॥
यह चित होत जाउँ मैं अबहीं, इहाँ नहीं मन लागत ।
गोपी-ग्वाल गाइ-बन चारन अति दुख पायौ त्यागत ॥
कहँ माखन-रोटी कहँ जसुमति जेंवहु कहि-कहि प्रेम ।
सूर स्याम के बचन हँसत सुनि थापत अपनौ नेम ।१४४५।

जदुपति लख्यौ तिहिं मुसुकात ।
कहत हम मन रही जोई भई सोई बात ॥
बचन परगट करन कारन प्रेम कथा चलाइ ।
सुनहु ऊधौ मोहिं ब्रज की सुधि नहीं बिसराइ ॥
रैनि सोवत दिवस जागत नाहिंनै मन आन ।
नंद जसुमति, नारि नर-ब्रज तहाँ मेरौ प्रान ॥
कहत हरि, सुनि उपँग-सुत यह, कहत हौं रस-रीति ।
सूर चित तैं टरति नाहीं राधिका की प्रीति ।१४४६।

सखा, सुनि एक मेरी बात ।
वह लता गृह संग गोपिनि सुधि करत पछितात ॥
बिधि लिखी नहिं टरत क्यौंहूँ, यह कहत अकुलात ।
हँसि उपँग-सुत बचन बोले, कहा हरि, पछितात ॥
सदा हित यह रहत नाहीं, सकल मिथ्या बात ।
सूर प्रभु यह सुनौ मोसौं एक ही सौं नात ।१४४७।

तब ऊधौ यह बात कही ।
तब जदुपति अति ही सुख पायौ मानी प्रगट सही ॥
श्रीमुख ऊधौ जाहु तुम ब्रज कौं, मिलहु जाइ ब्रज लोग ।
मो बिन बिरह भरी ब्रज-बाला जाइ सुनावहु जोग ॥
प्रेम मिटाइ ज्ञान परबोधहु तुम हौ पूरन ज्ञानी ।
सूर उपँग-सुत मन हरषाने, यह महिमा हम जानी ।१४४८।

ऊधौ, तुम यह निहचै जानौ।
मन बच क्रम मैं तुमहिं पठावत ब्रज कौं तुरत पलानौ।
पूरन ब्रह्म सकल अबिनासी, ताके तुम ह्वौ ज्ञाता।
रेख न रूप, जाति कुल नाहीं, जाके नहिं पितु-माता।
यह मत दै गोपिनि कौं आवहु, बिरह नदी मैं भासत।
सूर तुरत तुम जाइ कहौ यह, ब्रह्म बिना नहिं आसत ।१४४९।

ऊधौ, बेगिहीं ब्रज जाहु।
सुधि सँदेस सुनाइ मेटौ बल्लभिनि कौ दाहु।
काम पावक, तूल तन मैं, बिरह स्वाँस समीर।
जरि भसम नहिं होन पावैं लोचननि के नीर॥
आजु लौं इहिं भाँति ह्वै है, कछुक सजग सरीर।
इते पर बिनु समाधानहिं, क्यौं धरैं तिय धीर।
बार-बार कहा कहौं तुम सखा, साधु प्रबीन।
सूर सुमति बिचारिऐ, जिहिं जियैं जल बिनु मीन ।१४५०।

ऊधौ मन अभिमान बढ़ायौ।
जदुपति जोग जानि जिय साँचौ नैन अकास चढ़ायौ।
नारिनि पै मोकौं पठवत हैं, कहत सिखावन जोग।
मन ही मन अब करत प्रसंसा यह मिथ्या सुख-भोग।
आयसु मानि लियौ सिर ऊपर, प्रभु आग्या परमान।
सूरदास प्रभु गोकुल पठवत, मैं क्यौं कहौं कि आन ।१४५१।

तुम पठवत गोकुल कौं जैहौं।
जौ मानिहैं ब्रह्म की बातैं तौ उनसौं मैं कैहौं।
गदगद बचन कहत मन पुलकित बार-बार समुझैहौं।
आजु नहीं जौ करौं काज तुव, कौन काज पुनि लैहौं।
यह मिथ्या संसार सदाई, यह कहिकै उठि ऐहौं।
सूर दिना द्वै ब्रज-जन सुख दै, आइ चरन पुनि गैहौं ।१४५२।

सुनु सखा हित प्रान मेरैं मादिनै सम सोहिं।
कैसेहुँ कर धरिन कीजै, गोपिकनि सौं मोहिं।
रैनि दिन मम भक्ति उनकैं, कछू करत न आन।
और सरबस मोहिं अरप्यौ तरुनि-तन-धन प्रान।
ब्याज मैं ये रतन दीन्हे, कृपा गोपकुमारि।
सालोक्यता समीपता सारूपता मुख चारि।
इक रही सायुज्यता सो सिद्ध नहिं बिनु ज्ञान।
सोइ तुम उपदेसियौ जिहिं लहैं पद निर्बान।
जौ न अंगीकृत करैं वै, होइहौं रिन दास।
सूर गाइ चराइहौं मैं, बहुरि बसि ब्रजबास।।१४२३।।

तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत आजु।
ज्ञान बुझाइ खबरि दै आवहु एक पंथ द्वै काज।।
जब तैं मधुबन कौं हम आए, फेरि गयौ नहिं कोइ।
जुवतिनि पै ताही कौं पठवौं जौ तुम लायक होइ।।
इक प्रबीन अरु सखा हमारे ज्ञानी तुम सरि कौन।
सोइ कीजौ जातैं ब्रज-बाला साधन सीखैं पौन।।
श्रीमुख स्याम कहत यह बानी ऊधौ सुनत सिहात।
आयसु मानि सूर प्रभु जैहौं नारि मानिहैं बात।।१४२४।।

हलधर कहत प्रीति जसुमति की।
कहा रोहिनी इतनी पावै बहु बोलनि अति हित की।।
एक दिवस हरि खेलत मो सँग, झगरौ कीन्हौ पेलि।
मोकौं दौरि गोद करि लीन्हौ, इनहिं दियौ कर ठेलि।
नंद बबा तब कान्ह गोद करि, खीझन लागे मोकौं।
सूर स्याम मान्यौ तेरी मैया छोह न आवत तोकौं।।१४२५।।

जसुमति करति मोकौं हेत।
सुनौ ऊधौ, कहत बनत न, नैन भरि-भरि लेत।

दुहुँनि कौ कुसलात कहियौ, तुमहिं भूलत नाहिं।
स्याम-हलधर सुत तुम्हारे, और के न कहाहिं।
आइ तुमकौं आइ मिलिहैं, कछुक कारज और।
सूर हमकौं तुम बिना सुख कौ नहीं कहुँ ठौर ॥१४२६॥

स्याम कर पत्री लिखी बनाइ।
नंद बबा सौं बिनै कर जोरि जसुदा माइ।
गोप-ग्वाल सखानि कौं हिलि मिलन कंठ लगाइ।
और ब्रज-नर-नारि जे हैं, तिनहिं प्रीति जनाइ।
गोपिकनि लिखि जोग पठयौ, भाव जानि न जाइ।
सूर प्रभु मन और यह कहि, प्रेम हेत दिढ़ाइ ॥१४२७॥

उपंग-सुत-हाथ दई हरि पाती।
यह कहियौ जसुमति मैया सौं नहिं बिसरत दिन-राती।
कहत कहा बसुदेव देवकी, तुमकौं हम हैं जाये।
कंस त्रास सिसु जतनहिं जानिकै, ब्रज मैं राखि दुराये।
कहै बनाइ कोटि जोउ बातैं, तऊ बलराम कन्हाई।
सूर काज करिकै दिन कछु मैं बहुरि मिलैंगे आई ॥१४२८॥

ऊधौ, इतनी कहियौ जाइ।
हम आवैंगे दोऊ भैया मैया जनि अकुलाइ।
याकौ बिलग बहुत हम मान्यौ जो कहि पठयौ धाइ।
वह गुन हमकौं कहा बिसरिहै, बड़े किए पय प्याइ।
अरु जब मिलियौ नंद बबा सौं तब कहियौ समुझाइ।
तौ लौं दुखी होन नहिं पावैं धौरी-धूमरि गाइ।
जद्यपि इहाँ अनेक भाँति सुख तदपि रह्यौ नहिं जाइ।
सूरदास देखौं ब्रजबासिनि, तबहीं हियौ सिराइ ॥१४२९॥

मोकौं कहियौ जसुमति मैया।
आवैंगे दिन चारि-पाँच मैं हम हलधर दोउ भैया।

नोई बेंत, बिषान, बाँसुरी, द्वार अबेर सबेरौ।
लै जनि जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरौ।
जा दिन तैं हम तुमतैं बिछुरे कोउ न कहत कन्हैया।
उठि न सबेरे कियौ कलेऊ, साँझ न चाखी पैया।
कहियौ कहा नंद बाबा सौं निपट निठुर मन कीन्हौ।
सूरदास पहुँचाइ मधुपुरी, फेरि न सोधौ लीन्हौ ॥१४६०॥

ऊधौ, जननी मेरी कौं मिलि, अरु कुसलात कहौगे।
बाबा नंदहिं पालागन कहि, पुनि-पुनि चरन गहौगे।
जा दिन तैं मधुबन हम आए, सोध नहीं तुम कीन्हौ।
दै-दै सौंह कहौगे हित करि, कहा निठुरई कीन्हौ।
यह कहियौ बलराम स्याम अब आवैंगे दोउ भाई।
सूर करम की रेख मिटै नहिं, यौं कह्यौ जदुराई ॥१४६१॥

बिधना यहै लिख्यौ संजोग।
कहाँ तैं मधुपुरी आए, तज्यौ माखन भोग।
कहाँ वे ब्रज के सखा सब, कहाँ मथुरा लोग।
देवकी-बसुदेव-सुत सुनि जननि करिहै सोग।
रोहिनी माता कृपा करि सबाँग लेती रोग।
सूर प्रभु मुख यह बचन कहि, लिखि पठायौ जोग ॥१४६२

ऊधौ बात ब्रजहिं सुने।
देवकी-बसुदेव सुनि कै, हरे हित गुने।
प्रभु सौं पाती लिखी कहि धन्य जसुमति-नंद।
सुत हमारे पालि पठए, अति दियौ आनंद।
आइकै मिलि जात कबहूँ न स्याम अरु बलराम।
इहौ कहत पठाइहौं अब, तबहिं तन बिस्राम।
बाल-सुख सब तुमहिं लूट्यौ मोहि मिले कुमार।
सूर यह उपकार तुम तैं, कहत बारंबार ॥१४६३॥

पाती लिखि ऊधौ कर दीन्ही।
नंद जसोदहिं हित करि दीजौ हँसि उपंग-सुत कीन्ही॥
मुख बचननि कहि हेत जनायौ तुम ही हितू हमारे।
बालक जानि पठए नृप घर सौं तुम प्रति-पालनहारे॥
कुबिजा सुन्यौ जात ब्रज ऊधौ, महलनिहिं लियौ बुलाइ।
अपने कर पाती लिखि राधेहिं, गोपिनि सहित पठाइ॥
मोकौं तुम अपराध लगावति, कृपा भई अनयास।
कुकनि कहा मो पर ब्रज-नारी सनमुख सूरजदास।।१५६४।।

हम पर काहैं कुकति ब्रजनारी।
साझे भाग नहीं काहू कौ हरि की कृपा निनारी॥
कुबिजा लिख्यौ सँदेस सबनि कौ, अरु कीन्ही मनुहारी।
हौं तौ दासी कंसराइ की देखौ मनहिं बिचारी॥
तपनि मौन्ह तपी करुइ तोमरि, रहत धुरे पग धारी।
अब ही हाथ परी जंत्री के, बाजत राग दुलारी॥
तनु तैं टेढ़ो सब कोउ जानत परसि भई अधिकारी।
सूरदास स्वामी करुनामय, अपुने हाथ सँवारी।।१५६५।।

ऊधौ ब्रजहिं जाहु पालागौं।
यह पाती राधा कर दीजौ यह मैं तुमसौं माँगौं॥
गारी देहिं प्रान उठि मोकौं सुनति रहति यह बानी।
राजा भए जाइ नँदनंदन मिली कूबरी रानी॥
मो पर रिस पावति काहे कौं, परजि स्याम नहिं राख्यौ?
लरिकाई तैं पोषति जसुमति कहा जु माखन चाख्यौ।
रजु लै बचे हमूर होति तुम महरि सुता-बृषभानु।
सूर स्याम बहुरौ ब्रज जैहैं, ऐसे भए अजान।।१५६६।।

ऊधौ यह राधा सौं कहियौ।
जैसी कृपा स्याम मोहिं कीन्ही आप करन सोइ रहियौ॥

मो पर रिस पावति बिनु कारन, मैं हौं तुम्हरी दासी।
तुमहीं मन मैं गुनि धौं देखौ, बिनु तप पायौ कासी॥
कहाँ स्याम की तुम अरधंगिनि, मैं तुम सरि कौ नाहीं।
सूरज प्रभु कौ यह न बूझिऐ, क्यौं न यहाँ लौं आहीं॥१४६७॥

सुनियत, ऊधौ चाप सँदेसी, तुम गोकुल कौं जात।
पाछैं करि गोपिनि सौं कहियौ एक हमारी बात॥
मातु पिता कौ नेह समुझि कै स्याम मधुपुरी आए।
नाहिन कान्ह तुम्हारे प्रीतम ना जसुदा के जाए॥
देखौ बूझि आपने जिय मैं, तुम धौं कौन सुख दीन्हे।
ये बालक तुम मत्त ग्वालिनी सबै आँह करि लीन्हे॥
तनक दही-माखन के कारन, जसुदा त्रास दिखावै।
तुम हँसि सब बाँधन कौं दौरीं, काहू दया न आवै॥
जो वृषभानु-सुता इत कीन्ही सो सब तुम जिय जानी।
ताही लाज तज्यौ ब्रज मोहन अब काहे दुख मानी॥
सूरदास-प्रभु सुनि-सुनि बातैं रहे मूँड सिर नाए।
इत कुबिजा इत प्रेम गोपिकनि कहत न कछु बनि आए॥१४६८॥

तब ऊधौ हरि निकट बुलायौ।
लिखि पाती दोउ हाथ दई तिहिं, यौं मुख बचन सुनायौ।
ब्रजवासी आवत नारी नर जल थल द्रुम मन-पात।
जो जिहिं विधि तासौं तैसेंही, मिलि कहियौ कुसलात॥
जो सुख स्याम तुमहिं तैं पावत, सो त्रिभुवन कहुँ नाहिं।
सूरज प्रभु दई सौंह आपुनी समुझत ही मन माहिं॥१४६६॥

पहिलैं प्रनाम नँदराइ सौं।
ता पाछैं मेरौ पालागन कहियौ जसुमति माइ सौं॥
बार एक तुम बरसानै लौं जाइ सबै सुधि लीजौ।
कहि वृषभानु महर सौं मेरौ, समाचार सब दीजौ॥

श्रीदामाऽदि सकल ग्वालनि कौं मेरौ कोटी भेंट्यौ ।
सुख संदेस सुनाइ सबनि कौं, दिन-दिन कौ दुख मेट्यौ ।
मित्र एक मन बसत हमारैं, ताहि मिलैं सुख पाइही ।
करि करि समाधान नीकी बिधि, मोकौं माथौ नाइही ।
डरपहु जनि तुम सघन कुंज मैं, है तहँ के खग भारी ।
वृंदावन मति रहति निरंतर, कबहुँ न होति निनारी ।
ऊधौ सौं समुझाइ प्रगट करि, अपने मन की बीती ।
सूरदास स्वामी यौं ब्रज सौं कही सकल ब्रज-प्रीती ॥१४७०

गहरु जनि लावहु गोकुल जाइ ।
तुमहिं बिना ब्याकुल हम ह्वै हैं, जदुपति करी चतुराइ ।
अपनौ ही रथ तुरत मँगायौ दियौ तुरत पलनाइ ।
अपने अंग अभूषन करि-करि, आपुन ही पहिराइ ।
अपनौ मुकुट पितंबर अपनौ, देत सबै सुख पाइ ।
सूर स्याम तदरूप उपँगसुत, भृगुपद एक बचाइ ॥१४७१॥

जबहिं चले ऊधौ मधुबन तैं गोपिनि मनहिं जनाइ गई ।
बार-बार अति लागे सबननि कछु दुख कछु हिय हर्ष भई ।
जहँ तहँ काग उड़ावन लागीं हरि आवत उड़ि जाहिं नहीं ।
समाचार कहि मनहिं मनावति उठि बैठत सुनि औचकहीं ।
सखी परस्पर यह कही बातैं आजु स्याम कै आवत है ।
किधौं सूर कोउ ब्रज पठयौ, आजु खबरि कै पावत हैं ॥१४७२॥

आजु कोउ नीकी बात सुनावै ।
कै मधुबन तैं नंद-लाड़िलौ कैउन दूत कोउ आवै ।
भौंर एक चहुँ दिसि तैं उड़ि उड़ि कानन लगि लगि गावै ।
उत्तम भाषा ऊँचे चढ़ि चढ़ि, अंग-अंग सगुनावै ।
भामिनि एक सखी सौं बिनवै, नैन नीर भरि आवै ।
सूरदास कोउ मधु ऐसौ जो मनमोहन मिलावै ॥१०७३॥

तौ तू उड़ि न जाइ रे काग।
जौ गुपाल गोकुल कौं आवैं, तौ ह्वै है बड़भाग।
दधि-ओदन भरि दोनी दैहौं, अरु अंचल की पाग।
मिलिहौं हृदय सिराइ स्रवन सुनि, मेटि बिरह के दाग।
जैसैं मातु-पिता नहिं जानत अंतर कौ अनुराग।
सूरदास प्रभु करैं कृपा अब, तब तैं देह सुहाग॥१४७४॥

है कोउ वैसी ही अनुहारि।
मधुबन तन तैं आवति सखि री, देखौ नैन निहारि।
सीसहि मुकुट मनोहर कुंडल, पीत बसन रुचिकारि।
वैसेहिं बात कहत सारथि सौं नख तन बाहँ पसारि।
कैधौं बीच कियौ हरि अंतर, प्रभु बीते जुग चारि।
सूर सकल आतुर अकुलानी जैसैं मीन बिनु बारि॥१४७५॥

घर घर ह्वै सब्द परयौ।
सुनत जसुमति धाइ निकसी हरष हियौ भरयौ।
नंद हरषित चले आगैं, सखा हरषित अंग।
मुदित-मुदित नारि हरषित, चली उदधि तरंग।
गाइ हरषित है सबहिं थन, चौकरत गौ-बाछ।
उमँगि अंग न मात कोऊ, बिरह तजनउ बास।
कोउ कहत, बलराम नाहीं स्याम रथ पर एक।
कोउ कहत, प्रभु-सूर दोऊ, रचित बात अनेक॥१४७६॥

सुने ब्रज लोग आवत स्याम।
जहाँ तहाँ तैं सबै धाए, सुनत दुर्लभ नाम।
मनु मृगीं बन चरत ब्याकुल तुरत बरस्यौ नीर।
बचन गदगद प्रेम ब्याकुल धरति नहिं मन धीर।
एक इक पल जुग सबनि कौं, मिलन कौ अनुराग।
सूर बछनी मिलि परस्पर, भई हरषित गाय॥१४७७॥

आजु कोउ स्याम की अनुहारि।
आवत उतै उमँग सौं सबही, देखि रूप की धारि॥
इंद्र धनुष की उर बनमाला चितवत चित्त हरै।
मनु हलधर अनुज मोहन के स्रवननि सब्द परै॥
गईं चलि निकट न ऐसे मोहन, प्रान किये बलिहारि।
सूर सकल गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भईं ब्रजनारि।।१४८५।

कोउ माई, आवत है तनु स्याम।
वैसे पट, वैसिय रथ-बैठनि, वैसीयै उर दाम॥
जो जैसैं तैसैं उठि धाईं छाँड़ि सकल गृह काम।
पुलक रोम गदगद तेहीं छन, सोभित अँग अभिराम॥
इतने बीच आइ गए ऊधौ, रहीं ठगी सब बाम।
सूरदास प्रभु ह्याँ क्यों आवैं, बँधे कुबिजा रस-दाम।।१४८६।

उमँगि ब्रज देखन कौ सब धाए।
एकहिं एक परस्पर पूछति, मोहन सुनि आए॥
सोई ध्वजा पताका सोई, वा रथ चढ़ि सु सिधाए।
स्रुति-कुंडल आदि पीत बसन छबि, वैसोइ साज बनाए॥
आइ निकट पहिचाने ऊधौ, नैन जलज जल छाए।
सूरदास मिटी दरसन आसा, भूषन बिरह बनाए।।१४८७।

जबहिं कह्यौ, ए स्याम नहीं।
परीं मुरछि धरनी ब्रजबाला, जो जहँ रहीं सु तहीं॥
सपने की रजधानी ह्वै गइ जो जागीं कछु नाहीं।
बार बार रथ ओर निहारहिं, स्याम बिना अकुलाहीं॥
कहा आइ करिहैं ब्रज मोहन, मिली कूबरी नारी।
सूर कहत सब, ऊधौ आए, गईं काम-सर मारी।।१४८८।

तरुनी गईं सब बिलखाइ।
जबहिं आप सुने ऊधौ चलिहिं गईं मुरझाइ॥

परी ब्याकुल जहाँ जसुमति गई तहँ सब धाइ।
नीर नैननि बहति धारा, लई पोंछि उठाइ॥
इक गई बन बसी मारग सखा पठयौ स्याम।
सुनी हरि कुसलात ल्यायौ, महरि सौं कहै नाम॥
जबहिं तैं रथ निकट आयौ तबहुँ तैं परितीति॥
वह मुकुट-कुंडल-पितंबर, सूर प्रभु अँग रीति।।१४८२।

भली भई हरि सुरति करी।
उठी महरि कुसलात बूझिबे आनँद उमँग भरी॥
भुजा गहे गोपी परबोधति, मानहु सुफल घरी।
पाती लिखि कछु स्याम पठायौ, यह सुनि मनहिं हरी
निकट उपँगसुत आइ तुलाने मानौ रूप हरी।
सूर स्याम कौ सखा यहै री, स्रवननि सुनी परी।।१४८३।

ऐसौ नंद-द्वार रथ ठाढ़ौ।
बहुरि सखी सुफलकसुत आयौ परयौ सँदेह जिय गाढ़ौ॥
प्रान हमारे तबहिं लै गयौ, अब किहिं कारन आयौ।
मैं जानी यह बात सुनत प्रभु, कृपा करन उठि धायौ।
इतने अंतर आइ उपँगसुत तेहिं छन दरसन दीन्हौ।
तब पहिचानि सखा हरि जू कौ, परम सुचित मन कीन्हौ।
तिहिं परनाम कियौ अति रुचि सौं अरु सबहिनि कर जोरे।
सुमिरत हुते तैसेई ऐसौ परम सुहद प्रिय भोरे॥
तुम्हरौ दरसन पाइ आपनौ जनम सुफल करि मान्यौ।
सूर सु ऊधौ मिलत भयौ सुख ज्यौं झख पायौ पान्यौ।।१४८४

निरखत ऊधौ कौ सुख पायौ।
सुंदर सुभग सुबेस देखियत, मानौं स्याम पठायौ॥
मोहैं हरि-संदेस कहैगी सजन सुनत सब ऐहैं।
यह जानति हरि तुरत आइहैं, यह कहि हरी सिरैहैं॥

घेरि लिए रथ पास पहुँचा, नंद-गोप-ब्रजनारी।
मदन मिलाइ गए निज मंदिर, हरषित लियौ उतारी।
अरघ देत भीतर तिहिं लीन्हौ, धनि धनि दिन कौ आज।
धनि धनि सूर उपंगसुत आए, मुदित कहत ब्रजराज ॥४८८५॥

कबहुँ सुधि करत गुपाल हमारी।
पूछत पिता नंद ऊधौ सौं अरु जसुदा महतारी।
बहुतै चूक परी अनजानत कहा अबकैं पछिताने।
बासुदेव घर भीतर आए मैं अहीर करि जाने।
पहिलैं गर्ग कह्यौ हुतौ हमसौं संग दुःख गयौ भूल।
सूरदास-स्वामी के बिछुरैं राति दिवस भयौ सूल ॥४८८६॥

कह्यौ कान्ह सुनि जसुदा मैया।
आवहिंगे दिन चारि पाँच मैं हम हलधर दोउ भैया।
*मुरली बेंत बिषान हमारी कहूँ अबेर सबेरी।*
मति लै जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरौ।
जा दिन तैं हम तुम सौं बिछुरे काहु न कह्यौ कन्हैया।
प्रात न कियौ कलेऊ कबहूँ, साँझ न पय पियौ पैया।
कहा कहौं कछु कहत न आवै जननी जो दुख पायौ।
अब हमसौं बसुदेव-देवकी कहत आपनौ जायौ।
कहियै कहा नंद बाबा सौं बहुत निठुर मन कीन्हौ।
सूर हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी बहुरि न सोधौ लीन्हौ ॥४८८७॥

हमतैं कछु सेवा न भई।
घोखैं ही घोखैं जु रहे हम जाने नाहिं त्रिलोकमई।
चरन पखारि कर बिनती करियौ सब अपराध छमा कीजै।
ऐसौ भाग होइगौ कबहूँ स्याम गोद पुनि मैं लीजै।
कहै नंद आगैं ऊधौ के, एक बेर दरसन दीजै।
सूरदास स्वामी मिलि अबकैं सबै दोष निज गए छीजै ॥४८८८

ऊधौ, कही साँची बात।
दधि, मही, नवनीत माखन, कौन के घर खात।
किन सखा सँग संग खीझे, गहे लकुटी हाथ।
कौन की गैयाँ चरावत, जात को धौं साथ।
कौन गोपी कूल-जमुना, रहत गहि-गहि घाट।
दान हठ कै लेत कापैं, रोकि किनकी बाट॥
कौन के माखन चुरावत, जात उठिकै प्रात।
इतो बूझत माइ जसुमति, परी मुरछित गात॥
सूरदास किसोर मिलवहु, मेटि हिय की तात।१४८८।

—(०)—

## (२) उद्धव-गोपी-संवाद और भ्रमरगीत

ब्रज घर-घर सब होति बधाई।
कंचन कलस दूब दधि रोचन लै वृंदावन आई।
मिलि ब्रजनारि तिलक सिर कीन्हौ करि प्रदच्छिना तासु।
पूछन कुसल नारि-नर हरषत आए सब ब्रज-बासु।
सकसकात तन धकधकात उर अकबकात सब ठाढ़े।
सूर उपँगसुत बोलत नाहीं, अति हिरदै ह्वै गाढ़े॥१४८०॥

ऊधौ कहौ, हरि कुसलात।
कह्यौ आवन किधौं नाहीं, बोलिहै मुख बात॥
एक दिन सुत ज्ञान हमकौ बिनु सुने हरि-रीति।
आजु आए कृपा कीन्ही, अब कहौ कछु नीति॥
तब उपँगसुत लागि बोले सुनौ मधुपुर जोग।
सूर सुनि सब रहीं ठाढ़ीं हरषि हँसी लोग॥१४८१॥

गोपी सुनहु हरि कुसलात।
संग सूर कौ जानि छोरे आपने सिसु मात।
बहुत बिधि मथुरा करि दीनी स्यामसुंदरि गात।
मगन भीग गुली कमल हैं सर सुरभि के बात।
कहौ हर बाती रहै निसि कछौ कछु तरिम।
सूर सिसु न जब घर कौं गये नरम रोम॥१४८२॥

गोपी, सुनहु हरि-संदेस।
गए संग अक्रूर मधुबन, हत्यौ कंस नरेस।
रजक मार्यौ बसन पहिरे, धनुष तोर्यौ जाइ।
कुबलया चानूर मुष्टिक, दिए धरनि गिराइ।
मातु पितु के बंध छोरे वासुदेव कुमार।
राज दीन्हौ उग्रसेनहिं चौर निज कर ढार।
कह्यौ तुमकौं ब्रह्म ध्यावन छाँड़ि विषय बिकार।
सूर पाती दई लिखि मोहिं पढ़ौ गोप-कुमारि ॥१४५३॥

पाती मधुबन ही तैं आई।
सुंदर स्याम आपु लिखि पठई, आइ सुनौ री माई।
अपने अपने गृह तैं दौरीं लै पाती उर लाई।
नैननि निरखि निमेष न खंडित प्रेम-तृषा न बुझाई।
कहा करौं सूनौ यह गोकुल हरि, बिनु कछु न सुहाई।
सूरदास प्रभु कौन चूक तैं स्याम सुरति बिसराई ॥१४५४॥

निरखति अंक स्याम सुंदर के बार-बार लावति लै छाती।
लोचन जल कागद मसि मिलिकै ह्वै गइ स्याम, स्याम जू की पाती।
गोकुल बसत नंदनंदन के, कबहुँ बयारि न लागी ताती।
अरु हम उती कहा कहैं ऊधौ, जब सुनि बेनु-नाद सँग जाती।
उनकै लाड़ बदति नहिं काहूँ निसि दिन रसिक-रास-रस राती।
प्रान-नाथ तुम कबहिं मिलौगे, सूरदास-प्रभु बाल-सँघाती ॥१४५५॥

पाती मधुबन तैं आई।
ऊधौ हरि के परम सनेही ताकै हाथ पठाई।
कोउ पढ़ति, कोउ धरति नैन पर काहूँ हृदै लगाई।
कोउ पूछति फिरि फिरि ऊधौ कौं, आपुन लिखी कन्हाई?
बहुरौ दइ फेरि ऊधौ कौं, तब उन बाँचि सुनाई।
मन मैं ध्यान हमारौ राख्यौ सूर सदा सुखदाई ॥१४५६॥

लिखि आई ब्रजनाथ की छाप।
ऊधौ बाँधे फिरत मोम पर, बाँचत आवै ताप।
उलटी रीति नँदनंदन की घर-घर भयौ सँताप।
कहियो आइ जोग आराधैं, अविगत अकथ अमाप।
हरि आगैं कुबिजा अधिकारिनि, को जीवै इहिं दाप।
सूर सँदेस सुनावन आगे कहौ कौन यह पाप।।१४६७।।

कोउ ब्रज बाँचत नाहिन पाती।
कत लिखि-लिखि पठवत नँद-नंदन कठिन बिरह की काँती।
नैन सजल कागद अति कोमल कर अँगुरी अति ताती।
परसैं जरैं बिलोकैं भीजैं दुहूँ भाँति दुख छाती।
क्यौं बाँचै ये अंक सूर प्रभु कठिन मदन-सर घाती।
सब सुख लै गए स्याम मनोहर हमकौं दुख दै थाती।।१४६८।।

ऊधौ कहा करैं लै पाती।
जौ लौं मदनगुपाल न देखैं बिरह जरावत छाती।
निमिष निमिष मोहि बिसरत नाहीं, सरद सुहाई राती।
पीर हमारी जानत नाहीं तुम ही स्याम-सँघाती।
यह पाती लै जाहु मधुपुरी जहँ वै बसैं सजाती।
मन जु हमारे उहाँ लै गए, काम कठिन सर घाती।
सूरदास प्रभु कहा चहत हैं, कोटिक बात सुहाती।
एक बेर मुख बहुरि दिखावहु रहैं चरन-रज-राती।।१४६९।।

हरि कौ मग तन दीठि लगौंहीं।
याही तैं लिखि पठवत आँखि पर बातैं प्रेम लपौंहीं।
कागद कहा करै हमसौं अब, लिखि लिखि बात सलौंहीं।
कै अब प्रगट करौ पननागर या रँग चलत हँसौंहीं।
कै बुलाइ लीन्हे हम पर तैं, परम भीर मुसकौंहीं।
कै अब हारि दई मन-बच-क्रम पनहीं रचिहि गुरौंहीं॥

जहाँ रही तहँ कोटि बरष लगि, छिपी स्याम सुख सौंही ।
पै कुबिजा बस हम जु जोग बस, सूर आपनी गौं ही ।।१५००।।

आए नंद-नंदन के भेष ।
गोकुल माँझ जोग बिस्तारयौ, भली तुम्हारी टेव ।।
जब वृन्दावन रास रच्यौ हरि तबहिं कहा तुम टेव ।
अब यह ज्ञान सिखावन आए भस्म अधारी भेष ।
अबलनि कौं तुम सौ व्रत ठान्यौ जो जोगिनि कौं जोग ।
सूरदास यह सुनत दुसह दुख आतुर बिरह बियोग ।।१५०१।।

इहिं अंतर मधुकर इक आयौ ।
निज स्वभाव अनुसार निकट ह्वै सुंदर सब्द सुनायौ ।
पूछन लागीं ताहि गोपिका, कुबिजा तोहिं पठायौ ।
कीधौं सूर स्याम सुंदर कौ हमैं सँदेसौ लायौ ।।१५०२

( मधुप, तुम ) कहौ कहाँ तैं आए हौ ।
जानति हौं अनुमान आपनैं तुम जदुनाथ पठाए हौ ।
वैसेइ बसन, बरन तन सुंदर, वेइ भूषन सजि ल्याए हौ ।
लै सरबसु सँग स्याम सिधारे, अब का पर पहिराए हौ ।
अहो मधुप एकै मन सबकौ, सु तौ वहाँ लै छाए हौ ।
अब यह कौन सयान बहुरि ब्रज ता कारन उठि धाए हौ ।
मधुबन की मानिनी मनोहर तहीं जाहु जहँ भाए हौ ।
सूर जहाँ लौं स्याम गात हैं, जानि भले करि पाए हौ ।।१५०३

सुनौ गोपी, हरि कौ संदेस ।
करि समाधि अंतर-गति ध्यावहु, यह उनकौ उपदेस ।
वै अबिगति अबिनासी पूरन, सब घट रहे समाइ ।
तत्व ज्ञान बिनु मुक्ति नहीं है, बेद पुराननि गाइ ।
सगुन रूप तजि निरगुन ध्यावहु, इक चित इक मन लाइ ।
यह उपाइ करि बिरह तरौ तुम, मिलै ब्रह्म तब आइ ।

दुसह सँदेस सुनत माधौ कौ, गोपीजन बिलखानी।
सूर बिरह की कौन चलावै बूड़ति मनु बिनु पानी ।।१२०४।।

मधुकर, हमहीं क्यौं समुझावत।
बारंबार ज्ञान गीता कौ, अबलनि आगैं गावत।।
नँद-नंदन बिनु, कपट कथा कत कहि कहि रुचि उपजावत।
एक चंदन औ अंग छुआ-रत, कहि कैसें सचु पावत।।
देखि बिचारि तुम्हीं प्रिय अपनैं नागर है जु कहावत।
सब सुमननि फिरि-फिर जु निरस करि काहैं कमल बँधावत।।
चरन कमल कर-नमन-बदन-छबि, बहै कमल मन भावत।
सूरदास मन अलि अनुरागी, कहि कैसें सुख पावत ।।१२०५।।

रहे रे मधुकर मधु मतवारे।
कौन काज या निरगुन सौं चिर जीवहु कान्ह हमारे।।
लोटत पीत पराग कीच मैं नीच न अंग सँम्हारे।
बारंबार सरक मदिरा की, अपरस रटत उघारे।।
तुम जानत ही वैसी ग्वारिनि, जैसे कुसुम तिहारे।
घरी पहर सबहिनि बिरमावत, जैसे आवत कारे।।
सुंदर बदन कमल-दल लोचन जसुमति नँद-दुलारे।
तन-मन सूर अरपि रहीं स्यामहिं, कापै लेहिं उधारे।।१२०६।।

मधुकर काके मीत भए।
दौस चारि करि प्रीति-सगाई रस लै अनत गए।।
डहकत फिरत आपने स्वारथ, पाखँड अग्र दए।
चाँड़ सरें पहिचानत नाहीं प्रीतम करत नए।।
भुज उचाट मेलि बीउए, मन हरि हरि जु लए।
सूरदास प्रभु भूति धर्म ढिग, दुख के बीज बए ।।१२०७।।

मधुकर, हम न होहिं वे बेलि।
जिम भजि तजि तुम फिरत और रँग, करत कुसुम-रस केलि।।

बारे तैं बर बारि बढ़ी हैं, अब पीवी पिय पानि।
बिनु पिय परस प्रात उठि फूलत, होति सदा हित हानि॥
ये बेली बिरही बृंदाबन, उरझीं स्याम तमाल।
प्रेम-पुहुप-रस-बास हमारे, बिलसत मधुप गोपाल॥
जोग समीर धीर नहिं डोलति, रूप डार दृढ़ लागीं।
सूर पराग न तजति हिए तें श्री गुपाल अनुरागी॥१५०८

मधुकर कहाँ पढ़ी यह नीति।
लोक बेद स्रुति ग्रंथ रहित यह कथा कहत बिपरीति॥
जनमभूमि ब्रज, सखा राधिका केहिं अपराध तजी।
अति कुलीन गुन रूप अमित सुख दासी जाइ भजी॥
जोग समाधि बेद-मुनि मारग क्यों समुझैं जु गँवारि।
जौ पै गुन अतीत ब्यापक है, तौ हम कहाँ न्यारि॥
रहि अलि, ढीठ कपट स्वारथ हित, तजि बहु बचन बिसेषि।
मन-क्रम-बचन बसति इहिं नातें, सूर स्याम तन देखि॥१५०९

कौन भाइ मधुबन तैं आयौ।
सखी सिमिटि सब सुनौ सयानी, हित करि कान्ह पठायौ॥
जो मोहन बिछुरे तें गोकुल इते दिवस दुख पायौ।
सो इन कमलनैन करुनामय हिरदै माँझ बतायौ॥
जाकौं जोगी जतन करत हैं, नैकहुँ ध्यान न आयौ।
सो इन परम उदार मधुप ब्रज-बीथिनि माँझ बहायौ॥
अति कृपालु आतुर अबलनि कौं, ब्यापक अगह गहायौ।
समुझि सूर सुख होत बचन सुनि नेति जु निगमनि गायौ॥१५१०

परी पुकार द्वार गृह-गृह तैं, सुनी सखी इक जोगी आयौ।
पवन सधावन भवन छँड़ावन नवल रसाल गोपाल पठायौ॥
आसन बाँधि परम ऊरध चित चलत न तिनहिं कहा हित स्यायौ।
उलट पेलि, कामिनि भजपाला, जोग अगिनि दहिबे कौं धायौ॥

भव-भय हरन, असुर मारन हित कारन कान्ह मधुपुरी आयौ।
जादव मैं जब एकौ नाहीं, काहैं बसदी बस बिसरायौ।।
सुफलक सुत स्याम यान मैं बैठे, भक्तनि प्रति अधिकार जनायौ।
सूर बिसारी प्रीति साँवरे भली चतुरता जगत हँसायौ।।१५११।।

हैन आए ऊधौ मत नीकौ।
आवहु री, मिलि सुनहु सयानी, लेहु सुजस कौ टीकौ।।
तजन कहत अंबर आभूषन, गेह नेह सुत ही कौ।
अंग भसम करि सीस जटा धरि, सिखवत निरगुन फीकौ।।
मेरे जान यहै जुवतिनि कौ देत फिरत दुख पी कौ।
ता सराप तैं भयौ स्याम तन, तउ न गहत डर जी कौ।।
जाकी प्रकृति परी जिय जैसी, सोच न भली बुरी कौ।
जैसे सूर ब्याल रस चाखैं, मुख नहिं होत अमी कौ।।१५१२।।

ऊधौ, स्याम-सखा तुम साँचे।
कै करि लियौ स्वाँग बीचहि तैं वैसहिं लागत काँचे।।
जैसी कही हमहिं आवत ही, औरनि कहि पछिताते।
अपनौ पति तजि और बतावत, महिमानी कछु खाते।।
तुरत गमन कीजै मधुबन कौं इहाँ कहा यह लाए।
सूर सुनत गोपिनि की बानी ऊधौ सीस नवाए।।१५१३।।

ऊधौ, बेगि मधुबन जाहु।
जोग लेहु सँभारि अपनौ बेचियै जहँ लाहु।।
हम बिरहिनी नारि, हरि बिनु कौन करै निबाहु।
तहाँ दीजै मूर पूरैं नफौ तुम कछु खाहु।।
जौ नहीं ब्रज मैं बिकानौ, नगर नारि बिसाहु।
सूर वै सब सुनत लैहैं, जिय कहा पछिताहु।।१५१४।।

ऊधौ और कछू कहिबे कौ?
मन मानै सोऊ कहि डारौ, हम सब सुनि सहिबे कौ।

यह उपदेस आजु लौं ऐसौ कानन सुन्यौ न है ऊधौ ।
नीरस कटुक तपत अति दारुन, चाहत हम पर मेल्यौ ॥
निसि-दिन बसत नैंकु नहिं निकसत, हृदय मनोहर बैन ।
याकौ यहाँ ठौर नाहीं है, लै राखौ जहँ चैन ॥
ब्रजबासी गोपाल उपासी, हमसौं बातैं छाँड़ि ।
सूर जोग धन राखि मधुपुरी, कुबिजा के घर गाड़ि ॥१५१५॥

ऊधौ, कहौ कहन कौ पारौ ।
नाहीं बचि, कछु दोष बिहारी सकुचि साप जनि मारौ ॥
नाहीं ब्रज बसि नंदलाल की बाल-बिनोद निहारौ ।
नाहीं रास-रसिक-रस चाख्यौ तीय लई सो आरपौ ॥
जौ नहिं गयौ सूर प्रीतम सँग प्रान त्यागि तन न्यारौ ।
तौ अब यहु त देखिबे, सुनिबै कहा करम कौ पारौ ॥१५१६॥

ऊधौ जानु तुमहिं हम जाने ।
स्याम तुमहिं ह्याँ कौ नहिं पठयौ, तुम ही बीच भुलाने ॥
ब्रजनारिनि सौं जोग कहत हौ, बात कहत न लजाने ।
बड़े लोग न बिबेक तुम्हारे, ऐसे भए अयाने ॥
हमसौं कही लई हम सहि कै, जिय गुनि लेहु अयाने ।
कहँ अबला कहँ दसा दिगंबर, मष्ट करौ पहिचाने ॥
साँच कहौ तुमकौं अपनी सौं, बूझतिं बात निदाने ।
सूर स्याम जब तुमहिं पठायौ, तब नैंकहुँ मुसकाने ॥१५१७॥

कहति कहा ऊधौ सौं बौरी ।
जाकौं सुनति, रहे हरि के ढिग, स्याम-सखा यह सो री ।
कहा कहति री, मैं पत्याति नहिं, सुनी तुही कहनावति ॥
हमकौं जोग सिखावन आए, यह तेरैं मन आवति ।
करनी भली भलेई जानै, कुटिल कपट की खानि ॥
हरि कौ सखा नहीं री माई, यह मन निहचै जानि ।

कहाँ रास-रस कहाँ जोग भरि, इतने अंतर मापत।
सूर सबै तुम भई बावरी, याकी पति कह राखति ॥१४१८॥

ऐसेई जन भूत कहावत।
मोकौं एक अचंभौ आवत, यामैं वै कछु पावत।
वचन कठोर कहत कहि दाहत, अपनौ महत गँवावत।
ऐसी प्रकृति परी काहू की जुवतिनि ज्ञान बतावत।
आपुन निलज रहत नख सिख लौं, एते पर पुनि गावत।
सूर कहत परसंसा अपनी, हारेहुँ जीति कहावत ॥१४१९॥

प्रकृति जो जाकैं अंग परी।
स्वान पूँछ कोउ कोटिक लागै, सूधी कहुँ न करी।
जैसैं काग भच्छ नहिं छाँड़ै जनमत जौन घरी।
धोए रंग जात नहिं कैसेहुँ ज्यौं कारी कमरी।
ज्यौं अहि डसत उदर नहिं पूरत ऐसी धरनि धरी।
सूर होइ सो होइ सोच नहिं, तैसेइ एऊ री ॥१४२०॥

ऊधौ, होउ आगे तैं न्यारे।
तुम देखत तन अधिक कहत हौ, भरत नैननि के तारे।
अपनौ जोग सैंति किन राखहु इहाँ देत कत डारे।
सौ को आ अपने सुख खैहै, मीठे तजि, फल खारे।
हम गिरिधर के नाम गुननि बस, और काहि उर धारे।
सूरदास हम सब एकै मत, तुम सब खोटे कारे ॥१४२१॥

जाहु जाहु आगे तैं ऊधौ हौं तौ पति राखति हौं तेरी।
कहै कौं अब रोष दिखावत, देखत आँखि जरति हैं मेरी।
तुम जु कहत, संवत हैं गोबिंद, सुनियत हैं कुबिजा उन घेरी।
दोउ मिले तैसेई तैसे, वै अहीर, वह कंस की चेरी।
तुम सारिखे बसीठ पठाए, कहिए कहा बुद्धि उन केरी।
सूर-स्याम वह सुधि बिसराई, देत फिरत ग्वालनि सँग टेरी ॥

समुझि न परति तिहारी ऊधौ।
ज्यौं त्रिदोष उपजैं जक लागत, बोलत बचन न सूधौ।
आपुन कौ उपचार करौ अति तब औरनि सिख देहु।
बड़ौ रोग उपज्यौ है तुमकौं, भवन सवारैं लेहु।
ह्याँ भेषज नाना भाँतिनि के, अरु मधु-रिपु से बैद।
हम कातर डरपतिं अपनैं सिर, यह कलंक है खेद।
साँची बात छाँड़ि अलि, तेरी, झूठी को अब सुनिहै।
सूरदास-मुक्ताफल भोगी, हंस ज्वारि क्यौं चुनिहै ॥१५९३॥

ऊधौ, हम आजु भईं बड़ भागी।
जिन अँखियनि तुम स्याम बिलोके, ते अँखियाँ हम लागीं।
जैसैं सुमन बास लै आवत, पवन मधुप अनुरागी।
अति आनंद होत है तैसैं, अंग-अंग सुख रागी।
ज्यौं दरपन मैं दरस देखियत, दृष्टि परम रुचि लागी।
तैसैं सूर मिले हरि हमकौं बिरह बिथा तन-त्यागी ॥१५९४॥

बिलग जनि मानौ हमरी बात।
डरपतिं बचन कठोर कहत अलि मति बिनु पति उठि जात।
जो कोउ कहै करै कछु अपनैं, फिरि पाछैं पछितात।
जो प्रसाद पावत तुम ऊधौ, कृष्न नाम लै खात॥
मन जु तिहारौ हरि चरननि तर, चंचल रहत दिन-रात।
सूर स्याम तैं जोग अधिक है, कत कहि आवै बात ॥१५९५॥

( अलि, हौं ) कैसैं कहौं, हरि के रूप-रसहि।
अपने तन मैं भेद बहुत बिधि रसना न जानै नैन-दसहि।
जिन देखे ते आहिं बचन बिनु, जिनहिं बचन दरसन न तिसहि।
बिनु बानी ये उमँगि प्रेम जल, सुमिरि-सुमिरि वा रूप नसहि।
बार-बार पछितात यहै कहि, कहा करौं जौ बिधि न बसहि।
सूर सकल अंगनि की यह गति, क्यौं समुझावैं छपद पसुहि॥

हम तौ सब बातनि सचु पायौ।
गोद खिलाइ, पियाइ देह-पय, पुनि पालनैं झुलायौ।
देखति रही फनिग की मनि ज्यौं, गुरुजन ज्यौं न भुलायौ।
अब नहिं समुझति कौन पाप तैं बिधना सौ उलटायौ।
बिनु देखैं पल-पल नहिं छन-छन यौं ही बित ही पायौ।
अबहिं कठोर भए जदुपति सुत, रोवत मुँह न धुवायौ।
नए हम रूप रही के कारन, घर-घर बहुत खिझायौ।
सो अब सूर प्रगट ही लाग्यौ जोगऊ ज्ञान पठायौ ॥१४२७॥

मधुकर, कहियै काहि सुनाइ।
हरि बिछुरत हम जिते सहे दुख जिते बिरह के घाइ।
बरु माधौ मधुबन ही रहते कत जसुदा कै आए।
कत प्रभु गोप-भेष ब्रज धरि कै, कत ये सुख उपजाए।
कत गिरि धरयौ, इंद्र मद मेट्यौ कत बन रास रचाए।
अब कहा निठुर भए अबलनि कौं लिखि-लिखि जोग पठाए।
तुम परबीन सबै जानत हौ, तातैं यह कहि आई।
अपनी को चालै सुनि सूरज पिता, जननि बिसराई ॥१४२८॥

कहाँ लौ दुख आपनौ सुनाऊँ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की सामग्री कहँ पाऊँ।
ऊधौ कहैं सु गौ भरु सेवौ, कैसौ भसम जगाऊँ।
सोरह सहस मुद्री बांधै, मृगछाला कहँ पाऊँ।
रूप न रेख बरन बपु जाके, कैसे ध्यान धराऊँ।
सूरदास स्वामी बिनु गुन तैं, कहौ, काके गुन गाऊँ ॥१४२९

जानि करी बावरी जनि कोउ।
सब मझे बैसी है जैसी, धारम परमै कोउ।
मेरौ बचन सत्य करि मानौ, छाँड़ौ सबकौ मोहू।
तौ लगि सब पानी की चुपरी, जौ लगि अस्थिर दोऊ।

अरे मधुप ! बातैं ये ऐसी, क्यौं कहि आवति तोहि ।
सूर सुबस्ती छाँड़ि परम सुख हमैं बतावत कोहि ॥१४२०॥

तुम तौ कहत सँदेसी आनि ।
कहा करैं वा नंदनंदन सौं, होत नहीं हित हानि ।
जुगुति मुकुति किहिं काज हमारैं, जदपि महा सुख खानि ।
सनी सनेह स्यामसुंदर सौं, हिलि-मिलि कै मन मानि ।
सोहत लोह परसि पारस कौं ज्यौं सुबरन बर बानि ।
पुनि वह कहा चाह चुंबक सौं, लटपटाइ लपटानि ।
रूप रहित निरगुन नीरस नित, निगमहु परत न जानि ।
सूरजदास कौन बिधि तासौं अब कीजै पहिचानि ॥१४२१॥

ऊधौ हम हैं हरि की दासी ।
काहे कौं कटु बचन कहत हौ, करत आपनी हाँसी ।
हमरे गुनहिं गाँठि किन बाँधौ, हम कह कियौ बिगार ।
जैसी तुम कीन्ही सो सबही, जानत है संसार ।
जो कछु भली-बुरी तुम कहिहौ, सो सब हम सहि लैहैं ।
आपन कियौ आपही भुगतहिं, दोष न काहू दैहैं ।
तुम तौ बड़े, बड़े कुल जनमे, अरु सबके सरदार ।
यह दुख भयौ सूर के प्रभु सौं, कहत लगावन छार ॥१४२२॥

ऊधौ, हरि गुन, हम चकडोर ।
गुन सौं ज्यौं भावै त्यौं फेरौ, यहै बात कौ ओर ।
पै हमैं न चलियै सौ चलियै झटकि लपटैं पाइँ ।
चकडोरी की रीति यहै फिरि, गुन ही सौं लपटाइ ।
सूर सहज गुन बँधि हमारे दई स्याम कर माहिं ।
हरि के हाथ परे तौ छूटैं, और जतन कछु नाहिं ॥१४२३॥

मधुकर, छाँड़ि अटपटी बातैं ।
फिरि फिरि बार-बार सोइ सिखवत, हम दुख पावति जातैं ।

हम बिन देति असीस प्रात उठि, बार लसी मत म्हावैं।
तुम निसि दिन उर अंतर सोचत, ब्रज-जुवतिनि की घातैं॥
पुनि-पुनि तुमहिं कहत कत आवै, कछुक सकुच है नातैं।
सूरदास वै रँगी स्याम रँग, फिरि न चढ़ै रँग यातैं।।१४३४।

उलटी रीति तिहारी ऊधौ, सुनै सो ऐसी को है।
अलप बयस अबला अहीरि, सठ तिनहिं जोग कत सोहै॥
बूची खुमी, आँधरी काजर नकटी पहिरै बेसरि।
मुड़ली पटिया पारौ चाहै, कोढ़ी लावै केसरि॥
बहिरी पति सौ मतौ करै सौ तैसोइ उत्तर पावै।
सो गति होइ सबै ताकी जो, ग्वारिनि जोग सिखावै॥
सिखई कहत स्याम की बतियाँ तुमकौं नाहीं दोष।
राज-काज तुम तैं न सरैगौ काया अपनी पोष॥
जाते भूलि सबै मारग मैं, इहाँ आनि का कहते।
भली भई सुधि रही सूर नतु मोह धार मैं बहते।।१४३५।

मधुकर, हम अजान मति भोरी।
पद मत आइ यहाँ उपदेसी नागरि नवल किसोरी॥
कंचन की मृग कौनैं देख्यौ, किन बाँध्यौ गहि डोरी।
कहि धौं मधुप बारि तैं माखन, कौनैं भरी कमोरी॥
बिनुहीं भीत चित्र किन कीन्हौं किन नभ बाँध्यौ झोरी।
कही कौन पै कढ़त कनूका जिन हठि भुसी पछोरी॥
निरगुन ग्यान तुम्हारौ ऊधौ हम अबला मति थोरी।
चाहति सूर स्याम-मुख चंदहिं, अँखियाँ तृषित चकोरी।।१४३६।

मधुकर ब्रज कौ बसिबौ नीकौ॥
बछरा धेनु चरावत बन मैं, कान्ह सबनि कौ टीकौ॥
बृंदावन मैं होत कुलाहल, गरजत सुर मुरली कौ।
ठाढ़ी जाइ कदम की छहियाँ माँगत दान मही कौ॥

उपजत प्रेम प्रीति अंगरागत, गावत जस हरि पी की।
सूरदास प्रभु इतनोइ सेखौ, मान हमारे जी की ।।१२३७

अँखियाँ हरि-दरसन की भूखी।
कैसे रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखी ।।
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनी नहिं झूखी ।
अब यह जोग-सँदेसी सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखी ।।
बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिवत पतूखी ।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखी ।।१२३८

नैननि कहैं रूप की देखौं।
तौ ऊधौ यह जीवन जग कौ, साँच सुफल करि लेखौं ।।
लोचन चपल चारु खंजन मन-रंजन हृदय हमारे।
सुरँग कमल-मृग-मीन मनोहर, सेत, अरुन अरु कारे ।।
रत्नजटित कुंडल स्रवननि वर, परति कपोलनि झाईं।
मनु दिनकर प्रतिबिंब मुकुर महँ, ढूँढ़त यह छबि पाई ।।
मुरली अधर विकट भौंहैं करि, ठाढ़ी होत त्रिभंग।
मुक्त-माल उर-नील-सिखर तैं धँसी धरनि जनु गंग ।।
और भेष को कहै बरनि सब अँग-अँग केसरि खौर।
देखें बने, कहत रसना सौं, सूर बिलोकत और ।।१२३९

नैननि नंद-नंदन-ध्यान।
तहाँ यह उपदेस दीजै जहाँ निरगुन ग्यान ।।
पानि-पल्लव-रेख गनि गुन, अवधि बिबिध बिधान।
इतै पर इन कटुक बचननि, क्यौं रहै तन प्रान ।।
चंद कोटि प्रकास मुख, अवतंस कोटिक भान।
कोटि मन्मथ वारि छबि पर, निरखि दीजत दान ।।
भृकुटि कोटि कोदंड रुचि, अवलोकनी संधान।
कोटि वारिज बंक नैन कटाच्छ कोटिक बान ।।

मनि कंठ हार, उदार बर, अतिसय बन्यौ निरमान।
संख, चक्र, गदा धरे कर पदुम सुभा निधान॥
स्याम तनु पट पीत की छबि करै कौन बखान।
मनहुँ नत्यत नील घन में, तड़ित दैती मान॥
रास-रसिक गुपाल मिलि, मधु अधर करती पान।
सूर ऐसे स्याम बिनु को इहाँ रच्छक आन॥१२४०॥

जब तें सुंदर बदन निहारयौ।
ता दिन तें मधुकर, मन अटक्यौ, बहुत करी निकरै न निकारयौ॥
मातु पिता पति, बंधु,सुजन नहिं, तिनहूँ कौ कहिबौ सिर धारयौ।
रही न लोक-लाज मुख निरखत, दुसह क्रोध फीकौ करि डारयौ॥
ह्वै पी होइ सु होइ कर्मबस, अब जी की सब सोच निवारयौ।
दासी भई जु सूरदास-प्रभु, भलौ पोच अपनी न बिचारयौ॥१२४१॥

ऊधौ, क्यौं राखौं ये नैन।
सुमिरि-सुमिरि गुन अधिक तपत हैं, सुनत तुम्हारे बैन।
ये जु मनोहर बदन इंदु के, सारद कुमुद चकोर।
परम तृषारत सजल स्याम-घन-तन के चातक मोर॥
मधुप-मराल जु पद-पंकज के, गति-बिलास-जल मीन।
चक्रवाक दुति-मनि दिनकर के, मृग मुरली आधीन॥
सकल लोक सूनी लागत है, बिनु देखे वह रूप।
सूरदास प्रभु नंद-नंदन के, नख-सिख अंग अनूप॥१२४२॥

और सकल अंगनि तें ऊधौ, अँखियाँ अधिक दुखारी।
अतिहिं पिराति, सिराति न कबहूँ बहुत जतन करि हारी॥
मग जोवत पलकौ नहिं लावति बिरह बिकल भईं भारी।
भरि गइ बिरह बयारि दरस बिनु, निसि दिन रहति उघारी॥
ते अलि अब ये ज्ञान-सलाकैं, क्यौं सहि सकति तिहारी।
सूर सु अंजन आँजि रूप-रस, आरति हरहु हमारी॥१२४३॥

स्याम बियोग सुनी हो मधुकर, अँखियाँ उपमा जोग नहीं।
कंज खंजन मृग मीन होहिं नहिं, कविजन वृथा कहीं॥
कंजनहूँ की अगति पतक-पख, जामिनि होति कहीं।
खंजनहूँ तजि जात बिसद में, प्रीतम जहाँ तहीं॥
मृग होते रहते सँग ही सँग, चंद-बदन जितहीं।
रूप सरोवर के बिछुरे कहुँ, जीवत मीन नहीं।
ये अपना सी मरति सदा हैं, सोभा सकल बही।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, अब कत साँस रही॥१४४३॥

उपमा नैन न एक रही।
कविजन कहत कहत सब आए सुधि करि नाहिं कही॥
कहि चकोर, बिधु-मुख बिनु जीवत भ्रमर नहीं उड़ि जात।
हरि-मुख कमल कोष बिछुरे तें, ठाले कत ठहरात॥
ऊधो बधिक ब्याध है आए, मृग सम क्यों न पलात।
भागि जाहिं बन सघन स्याम मैं, जहाँ न कोऊ घात॥
खंजन-मन-रंजन न होहिं ये कबहुँ नहीं अकुलात।
पंख पसारि न होत चपल गति, हरि समीप मुकुलात॥
प्रेम न होइ कौन बिधि कहियै झूठैं ही तन आड़त।
सूरदास मीनता कछू इक, जल भरि कबहुँ न छाँड़त॥१४४४॥

नैना साहिँने ये रहत।
जद्यपि मधुप तुम नंद-नँदन की, निपटहिं निकट कहत॥
इहै मौंझ सौं हरिहिं बतावत, सीखी नाहिं गहत।
परी जु प्रकृति मगन दरसन की, देख्यौइ रूप चहत॥
पद निरगुन उपदेस तुम्हारौ सुनें न सही परत।
सूरदास-प्रभु बिनु अवलोके, कैसेंहु सुख न लहत॥१४४५॥

ऊधौ, अँखियाँ अति अनुरागी।
इकटक मग जोवति अरु रोवति, भूलेहुँ पलक न लागी॥

बिनु पावस पावस करि राखी देखत ही बिद्यमान।
अब धौं कहा कियौ चाहत हौ, छाँड़ौ निरगुन ज्ञान॥
तुम हौ सखा स्यामसुंदर के, जानत सकल सुभाइ।
जैसें मिलैं सूर के स्वामी सोई करहु उपाइ।१३४७।

सखी री, मथुरा मैं द्वै हंस।
ये अक्रूर और ये ऊधौ जानत नीकैं गंस॥
ये दोउ छीर नीर पैरिया इनहिं बधायौ कंस।
इनकै कुल ऐसी चलि आई, सदा उजागर बंस॥
अब इन कृपा करी ब्रज आए, जानि आपनी अंस।
सूर सुज्ञान सुनावत अबलनि सुनत होत मति भ्रंस।१३४८।

मनौ दोउ एकहिं मतै भए।
ऊधौ अरु अक्रूर बधिक मति, ब्रज आखेट ठए।
बचन फाँस बाँधे मृग-माधौ बन रथ आइ लए।
इनहीं हेरि मृगी-गोपी सब सायक-ज्ञान हए।
जोग-अगिनि की दवा देखियत, चहुँदिसि लाइ दए
अब धौं कहा कियौ चाहत हैं करि उपचार नए।
परमारथी परम कैतव चित बिरहिनि प्रेम रए।
कैसें जिऐं सूर के प्रभु बिनु, चातक मेघ गए।१३४९।

सब खोटे मधुबन के लोग।
जिनके संग स्याम सुंदर सखि सीखे हैं अपजोग।
आए हैं ब्रज के हित ऊधौ, जुवतिनि कौ लै जोग।
आसन, ध्यान, नैन मूँदे सखि, कैसें कटै बियोग।
हम अहीरि इतनी का जानैं, कुबिजा सौं संजोग।
सूर सुबैद कहा लै कीजै, कहै न जानै रोग।१३५०।

मधुबन लोगनि कौ पतियाइ।
मुख औरै, अंतरगति औरै, पतियौं लिखि पठवत जु बनाइ।

ज्यौं कोइल-सुत काग जियावै, भाव-भगति भोजन जु खवाइ।
कुहुकि-कुहुकि आऐं बसंत रितु, अंत मिलै अपने कुल जाइ।
ज्यौं मधुकर अंबुज रस चाख्यौ, बहुरि न बूझै बातैं आइ।
सूर जहाँ लगि स्याम गात हैं, तिनसौं कीजै कहा सगाइ।।१५५१।

मधुबन सब-कृतज्ञ धरमीले।
अति उदार पर-हित डोलत हैं, बोलत बचन सुसीले।
प्रथम आइ गोकुल सुफलक-सुत लै मधुपुरिहिं सिधारे।
उहाँ कंस, इहाँ हम दीननि कौं, दूनौ काज सँवारे।।
हरि कौ सिखै, सिखावन हमकौं, अब ऊधौ पग धारे।
ह्वाँ दासी-रति की कीरति कै, इहाँ जोग बिस्तारे।
अब तिहिं बिरह-समुद्र, सबै हम बूड़ी चहुँ तन हीं।
लीला सगुन नाव ही सुनु अलि, तिहिं अवलंबन रहीं।
अब निरगुनहिं गहैं जुवतीजन, पारहिं कहा गईं।
सूर अक्रूर उधव के सम मैं मींहिन त्रास दई।।१५५२।

ऊधौ, ऐसौ काम न कीजै।
एकहिं रंग रँगे तुम दोऊ, बोइ खेत करि लीजै।
फिरि फिरि दुख अवगाहि हमारे, हम सब करी अचेत।
जिहिं पट पर गौठा मारत हौ आप मूड़ के खेत।
आपुन कपट, कपट कुल जनम्यौ, कहा भलाई जानै।
फोरत भौंस काटि दाँतनि सौं बार-बार अकुलानैं।।
छाँड़ि देत कमलिनि सौं अपनी, तू जिय अनतहिं जाइ।
संपट दीठ बहुत अपराधी, कैसैं मन पतियाइ।
यहै जु बात कहति हैं तुम सौं, इहिं ब्रज फिरि मति आवै।
एक बार समुझावहु सूरज, अपनी काम सिरावैं।।१५५३।

माधौ सीख सुनै ब्रज कौ रे।
जाकी रहनि-कहनि अनमिल अलि कहत समुझियत थोरे।

आपुन पद-मकरंद सुधा-रस हृदय रहत नित बोरे।
हमसौं कहत बिरह-स्रम जैहै, गगन कूप खनि खोरै।
धान को गाँव पयार तें जानौ ज्ञान बिषय रस भोरे।
सूर सु बहुत कहै न रहै रस, गूलर को फल फोरे ॥१५५४॥

ऊधौ जोग सिखावन आए।
सृंगी भस्म अधारी मुद्रा दै ब्रजनाथ पठाए।
जो पै जोग लिख्यौ गोपिनि कौं, कत रस-रास खिलाए।
तबहीं क्यौं न ज्ञान उपदेस्यौ, अधर सुधा-रस प्याए।
मुरली सब्द सुनत बन गवनी सुत, पति गृह बिसराए।
सूरदास सँग छाँड़ि स्याम कौ हमहिं भए पछिताए ॥१५५५॥

आए जोग सिखावन पाँड़े।
परमारथी पुराननि लादे ज्यौं बनजारे टाँड़े।
हमरे गति-पति कमल-नयन की जोग सिखैं ते राँड़े।
कही मधुप कैसे समाहिंगे, एक म्यान दो खाँड़े।
कहु षटपद, कैसैं खैयतु है, हाथिनि कैं सँग गाँड़े।
काकी भूख गई बयारि भखि बिना दूध घृत माँड़े।
काहे कौं झाला लै मिलवत कौन चोर तुम डाँड़े।
सूरदास तीनौं नहिं उपजत धनियाँ धान, कुम्हाँड़े ॥१५५६॥

ज्ञान बिना कहुँवै सुख नाहीं।
घट घट व्यापक दारु अगिनि ज्यौं सदा बसै उर माहीं।
निरगुन छाँड़ि सगुन कौं दौरतिं, सु धौं कहौ किहिं पाहीं।
तत्व भजौ जो निकट न छूटै, ज्यौं तनु तैं परछाहीं।
तिहि तैं कहौ कौन सुख पायौ जिहिं अबहीं अवगाहीं।
सूरदास ऐसैं करि लागत ज्यौं कृपि कीन्हे पाहीं ॥१५५७॥

ऊधौ, कही सु फैरि न कहिए।
जौ तुम हमैं जिवायौ चाहत अनबोले ह्वै रहिए।

प्रान हमारे घात होत हैं, तुम्हरे भाये हाँसी।
या जीवन तैं मरन भली है, करवत लैहैं कासी।
पूरब प्रीति सँभारि हमारी, तुमकौं कहन पठायौ।
हम तौ जरि-बरि भस्म भईं, तुम आनि मसान जगायौ।
कै हरि हमकौं आनि मिलावहु, कै लै चलिये साथै।
सूर स्याम बिनु, प्रान तजति हैं, दोष तुम्हारे माथै ॥१४४८॥

ऊधौ, तुम अपनौ जतन करौ।
हित की कहति कुहित की लागति कत बेकाज ररौ।
जाइ करौ उपचार आपनौ, हम जु कहति हैं जी की।
कछुवै कहत कछुव कहि आवत, धुनि सुनियत नहिं नीकी।
साधु होइ तिहिं उत्तर दीजै तुमसौं मानी हारि।
यहै जिय जानि नँद-नंदन तुम इहाँ पठाए टारि।
मथुरा गहौ बेगि हम पाइनि, उपज्यौ है तन रोग।
सूर सु बैद बेगि टोहौ किन भए मरन के जोग ॥१४४९॥

घर ही के बाढ़े रावरे।
नाहिंन मीत-वियोग बस परे, अनब्यौगे अलि बावरे।
बरु मरि जाइ चरै नहिं तिनुका, सिंह को यहै स्वभाव रे।
स्रवन सुधा मुरली के पोषे जोग जहर न खवाव रे।
ऊधौ हमहिं सीख का दैहौ हरि बिनु अनत न ठाँव रे।
सूरदास कहा लै कीजै, थाही नदिया नाव रे ॥१४५०॥

तुम अलि कासौं कहत बनाइ।
बिनु समुझैं हम फिरि-फिरि बूझतिं बारक बहुरौ गाइ।
कहु, किहिं गमन कियौ स्यंदन चढ़ि सुफलक-सुत के संग।
किहिं रिपु रजक लिए नाना पट पहिरे अपने अंग।
किहिं हति चाप, निदरि गज निज बल, किहिं मल्लनि मथि जाने।
उग्रसेन बसुदेव देवकी किहिंऽप निगड़ तैं आने।

जाकी करत प्रसंसा निसि दिन, कीन्हैं घोष पठाए।
जिहिं मातुल हति कियौ जगत जस, कौन मधुपुरी छाए॥
माथे मोर-मुकुट, उर गुंजा, मुख मुरली, कल बाजै।
सूरदास जसुदा नँद-नंदन गोकुल कान्ह बिराजै॥१५६१॥

हमकौं हरि की कथा सुनाउ।
ये आपनी ज्ञान-गाथा अलि मथुरा ही लै जाउ॥
नागरि नारि भलैं समझैंगी, तेरो बचन बनाउ।
पा लागौं ऐसी, इन बातनि उनहीं जाइ रिझाउ॥
जौ सुचि सखा स्याम सुंदर कौ अरु जिय मैं सति भाउ।
तौ कोउ कोटि करौ कैसेहुँ बिधि बल-बिद्या-ब्यवसाउ।
तउ सुनि सूर मीन कौं जल बिनु, नाहिन और उपाउ॥१५६२॥

(ऊधौ) हरि बिनु ब्रज-रिपु बहुरि जिए।
जे हमरे देखत नँद-नंदन, हति-हति हुते सु दूरि किए॥
निसि कौ रूप बकी बनि आवति, अति भय करति सु कंप हिए।
तापहिं तें तन प्रान हमारे रबिहूँ छिनक छँड़ाइ लिए॥
अरु ऊधे उछ्वास तृनावर्त, तिहिं सुख सकल उड़ाइ दिए।
कोकिल काली सम कालिंदी बरसत सलिल न जात पिए॥
बन अघ-रूप अघासुर सम गृह जितहूँ तौ न चितै सकिए।
ऐसी कठिन करम केसी बिनु, काकौं सूर सरन तकिए॥१५६३॥

ऊधौ तुम ब्रज की दसा बिचारी।
ता पाछैं यह सिद्धि आपनी, जोग कथा बिस्तारी॥
जा कारन तुम पठए माधौ सो सोचौ जिय माहीं।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं॥
तुम परबीन चतुर कहियत हौ संतत निकट रहत हौ।
जल बूड़त अवलंब फेन कौ, फिरि-फिरि कहा गहत हौ॥

वह मुसकान मनोहर चितवनि कैसैं उर तैं टारौं।
जोग, जुक्ति अरु मुक्ति परम निधि, वा मुरली पर वारौं॥
जिहिं उर कमल-नयन जु बसत हैं, तिहिं निरगुन क्यौं आवै।
सूरदास सो भजन बहाऊँ, जाहि दूसरौ भावै॥१४६४॥

ज्यौं तुम कहत कौन की बातैं।
कहौ मधुप, हम समुझति नाहीं फिरि बूझति हैं तातैं॥
को नृप भयौ, कंस किन मारयौ को बसुधौ-सुत आहि।
ह्यौं जसुदासुत परम मनोहर जीवतु है मुख चाहि॥
दिन प्रति जात धेनु बन चारन गोप सखनि कैं संग।
बासरगत रजनीमुख आवत, करत नैन गति पंग॥
को अबिनासी अगम अगोचर, को बिधि बेद अपार।
सूर वृथा बकवाद करत कत, इहिं ब्रज नंदकुमार॥१४६५॥

ऊधौ, हरि काहे के अंतरजामी।
अजहुँ न आइ मिलत इहिं औसर अवधि बतावत लामी॥
अपनी चोप आइ उड़ि बैठत अलि ज्यौं रस के कामी।
तिनकौ कौन परेखौ कीजै जे हैं गरुड़ के गामी॥
आई उघरि प्रीति कलई सी जैसी खाटी आमी।
सूर इतै पर अनखनि मरियत, ऊधौ पीवत मामी॥१४६६॥

निरगुन कौन देस कौ बासी ?
मधुकर, कहि समुझाइ सौंह दै बूझति, साँच, न हाँसी।
को है जनक, कौन है जननी कौन नारि, को दासी ?
कैसो बरन, भेष है कैसौ, किहिं रस मैं अभिलाषी ?
पावैगौ पुनि कियौ आपनौ, जो रे करैगौ गाँसी।
सुनत मौन ह्वै रह्यौ बावरौ, सूर सबै मति नासी॥१४६७॥

कहियौ, ठकुराइति हम जानी।
अब दिन चारि चलहु गोकुल मैं, सेवहु आइ बहुरि रजधानी॥

हमकौं हौंस बहुत देखन की, संग लिये कुबिजा पटरानी ।
पहुनाई ब्रज की दधि माखन, बड़ी पलँग अरु दासी पानी ॥
तुम जनि डरौ उसास जो तोरयौ, सौंकरिहू अब भई पुरानी ।
यह अब कहौं जसोमति कैं कर देहु रावरैं सीख सुहानी ॥
सुरभी बाँटि दई ग्वालनि कौं मोर चंद्रिका सबै पहानी ।
सूर नंद जू के पालागौं देखहु आइ राधिका स्यानी ।१२६८।

ऊधौ अब कछु कहत न आवै ।
सिर पर सौति हमारैं कुबिजा, चाम के दाम चलावै ॥
कछु इक मंत्र कह्यौ चंदन मैं तातैं स्यामहिं भावै ।
अपनैं ही रँग रचे साँवरे सुक ज्यौं पैठि पढ़ावै ॥
तब जो कहत असुर की दासी अब कुल-बधू कहावै ।
नगिनी सी कर लिए लकुटिया कपि ज्यौं नाच नचावै ॥
टूट्यौ माथौ या गोकुल कौ लिखि लिखि जोग पठावै ।
सूरदास प्रभु हमहिं निदरि, दाझे पर लौन लगावै ।१२६९।

सुनि-सुनि ऊधौ, आवति हाँसी ।
कहँ वे ब्रह्मादिक के ठाकुर कहाँ कंस की दासी ।
इंद्रादिक की कौन चलावै, संकर करत खवासी ।
निगम आदि बंदीजन जाके, सेष सीस के वासी ॥
जाकैं रमा रहति चरननि तर, कौन गनै कुबजा सी ।
सूरदास प्रभु दृढ़ करि बाँधे प्रेम-पुंज की पासी ।१२७०।

काहे कौं गोपीनाथ कहावत ।
जौ मधुकर, वे स्याम हमारे क्यौं न इहाँ लौं आवत ॥
सपने की पहिचानि मानि जिय, हमहिं कलंक लगावत ।
जौ पै कृष्न कूबरी रीझे, सोइ किन बिरद बुलावत ॥
ज्यौं गजराज काज के औसर औरै दसन दिखावत ॥
ऐसें हम कहिबे-सुनिबे कौं सूर अनत बिरमावत ।१२७१।

साँवरी साँवरी रैनि की जायी।
आधी राति कंस के त्रासनि बसुदो गोकुल ल्यायौ॥
नंद पिता अरु मातु जसोदा माखन मही खवायौ।
हाथ लकुटि, कामरि काँधे पर, बछरन साथ डुलायौ॥
कहा भयौ मधुपुरी अवतरे, गोपीनाथ कहायौ।
ब्रज बधुअनि मिलि साँट कटीली, कपि ज्यौं नाच नचायौ॥
अब लौं कहाँ रहे हो ऊधौ लिखि लिखि जोग पठायौ।
सूरदास हमैं यहै परेखौ कूबरि हाथ बिकायौ॥१५०२॥

ऊधौ, जाके माथैं भाग।
बिलपत छाँड़ि भजत गोपीजन, चेरी चपरि सुहाग॥
आप जोग की बेलि लगावन, काटि प्रेम कौ बाग।
कुबिजा की पटरानी कीन्हीं, हमैं देत बैराग॥
कोबी की सौंटी अंग बामी बढ़्यौ स्याम अनुराग।
निसत भए सोऊ लेखत हैं, बारहमासी फाग॥
जोरी भली बनी है उनकी, राजहंस अरु काग।
सूरदास-प्रभु ऊख छाँड़ि कै, चतुर चचोरत आग॥१५०३॥

ऊधौ कहा हमारी चूक।
वे गुन, वे अवगुन सुनि हरि के, हृदय उठति है हूक॥
बिनही काज छाँड़ि गए मधुबन हम घटि कहा करी।
तन, मन धन आतमा-निवेदन, सौं तन बिसरि परी॥
रीझे जाइ सुंदरी कुबिजा जाहि कुल आवति हाँसी।
जदपि कूर, कुरूप, कुरसना, तदपि हम ब्रजबासी॥
एते ऊपर मान रहत घट, कहौ कौन सी कहियै।
पूरब कर्म लिखी बिधि अच्छर, सूर सबै ना सहियै॥१५०४॥

याह आलि, हमैं अँदेसो आवै।
कौन गुनाह जोग लिखि पठयौ, सो तू कहि समुझावै॥

जे अँग रचे बसन आभूषन, कैसे भस्म चढ़ावैं ।
कबरी केस सुमन गहि राखे, सो क्यों जटा बनावैं ।
सब विपरीत कहत तू हमसों, सो कैसे चित आवै ।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, सूरदास मोहिं भावै ।१२७५।

ऊधौ, आवै यहै परेखो ।

जप मारे तप आस बड़े की, पाछे भएँ यह देखी ।
जोग जज्ञ, जप, नेम, दान व्रत यहै करत सब जात ।
क्योंहूँ बालक बचे कुसल सों, कठिन मोह की बात ।
करी जु प्रगट कपट पिय की रति आपु आप लगि पीर ।
काम सरै नहि मिले आपु कुम, यथा पायस की पीर ।
जहँ जहँ रही राज करी तहँ-तहँ, लहु कोटि सिर भार ।
यहै असीस सूर प्रभु सों कहि न्हात खसै जनि बार ।१२७६।

ऊधो, तुम ब्रज में पैठ करी ।

लै आए हो नफा जानि कै, सबै बस्तु अकरी ।
हम अहीर माखन मधि बेचैं, सगुन टेक पकरी ।
यह निर्गुन निरमोल गाठरी अब किन करत धरी ।
यह ब्यौपार यहाँ जु समातो, दुती बड़ी नगरी ।
सूरदास गाहक नहिं कोऊ, देखियत गरे परी ।१२७७।

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै ।

मूरी के पातनि के बदलैं को मुक्ताहल दैहै ॥
यह ब्यौपार तुम्हारो ऊधो, ऐसे ही धरयो रैहै ।
जिन पै तैं लै आए ऊधो तिनहिं के पेट समैहै ।
दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी को अपने मुख खैहै ।
गुन करि मोही सूर साँवरे को निरगुन निरवैहै ।१२७८।

मीठी बातनि मैं कहा लीजै ।

जौ पै वे हरि होहिं हमारे, करन कहै सोइ कीजै ॥

जिन मोहन अपनैं कर कानननि करनफूल पहिराए।
तिन मोहन माटी के मुद्रा, मधुकर हाथ पठाए।
एक दिवस बेनी बृंदावन, रचि-पचि बिबिध बनाइ।
ते अब कहत जटा माथे पर, बदलौ नाम कन्हाइ।
लाइ सुगंध, बनाइ अभूषन अरु कीन्हीं अरधंग।
सो वै अब कहि कहि पठवत हैं, भसम चढ़ावन अंग।
हम कहा करैं दूरि नँद नंदन तुम जु मधुप मधुपायी।
सूर न होहिं स्याम के मुख की जाहु न जाहु अघायी।।१६८६।।

ऊधौ, तुम हौ निकट के बासी।

यह निरगुन लै तिनहिं सुनावहु, जे मुड़िया बसैं कासी।
मुरलीधरन सकल अँग सुंदर रूप सिंधु की रासी।
जोग बटोरे लिए फिरत हौ ब्रजबासिनि की फाँसी।
राजकुमार भलैं हम जाने, घर मैं कंस की दासी।
सूरदास जदुकुलहिं लजावत ब्रज मैं होति है हाँसी।।१६८७।।

जा दिन तैं गोपाल चले।

ता दिन तैं ऊधौ या ब्रज के, सब स्वभाव बदले।
घटे अहार-बिहार हरप-हित सुख-सोभा गुन-गान।
ओज-तेज सब रहित सकल बिधि आरति असम समान।
बाढ़ी निसा बलय आभूषन, उर-कंचुकी उसास।
नैननि जल, अंजन अंचल प्रति, आवन अवधि की आस।
अब यह दसा प्रगट या तन की, कहियौ जाइ सुनाइ।
सूरदास प्रभु सौ कीजौ जिहिं, बेगि मिलहिं अब आइ।।१६८८।।

सुनि रे मधुकर चतुर सयाने।

सुख की सींव उठी ता दिन तैं पठए स्याम बिनाने।
नैननि नेम गयौ ता दिन तैं, सावन ज्यौं बरसाने।
बर तैं दास बिलाम दोऊ बिधि ये दुरि बहु सुवाने।

ता दिन तैं पंछी भए बैरी मापा बैर भुलाने।
वन के बास निवास सकल ये, भए भयानक बाने॥
मोहन प्रान हरे ता दिन तैं, फेरि न यह गति आने।
विरह-अनंग अनल तन दाहत को या पीरहिं जाने॥
अब ये अंक देखियत ऐसे, रहे सु चित्र लिखाने।
सूर सँजीवन होहिं सु नव तन, रूप माधुरी साने।१४८२।

हम तौ कान्ह-केलि की भूखी।
कहा करें लै निर्गुन तुम्हरौ बिरहिनि बिरह बिदूषी॥
कहियै कहा यहै नहिं जानत कहौ, जोग किहिं जोग।
पालागौं तुमहीं-से वा पुर बसत बावरे लोग॥
चंदन अभरन चीर चारु बर, नैंकु आपु तन कीजै।
दंड, कमंडल, भसम अधारी, जब जुवतिनि कौं दीजै॥
सूर देखि दृढ़ता गोपिनि की ऊधौ इह ब्रत पायौ।
करी कृपा जदुनाथ मधुप कौं प्रेमहिं पढ़न पठायौ।१४८३।

गोपी, सुनहु हरि संदेस।
कह्यौ पूरन ब्रह्म ध्यावहु, त्रिगुन मिथ्या भेष॥
मैं कहौं सो सत्य मानहु सगुन डारहु नाखि।
पंच त्रय गुन सकल देही, जगत ऐसौ भाषि॥
ज्ञान बिनु नर मुक्ति नाहीं यह बिषया-संसार।
रूप-रेख न नाम जल थल बरन अबरन-सार॥
मातु पितु कोउ नाहिं नारी जगत मिथ्या लाइ।
सूर सुख-दुख नहीं जाकैं, भजौ ताकौं जाइ।१४८४।

ऐसी बात कहौ जनि ऊधौ।
कमलनैन की कानि करति हैं, आवत बचन न सूधौ॥
बातनि ही उड़ि जाहिं और ज्यौं त्यौं नाहीं हम काँची।
मन-बच-कर्म सोधि एकै मत नंद-नँदन रँग-राँची॥

सो कछु जतन करौ पालागौं मिटै हियै की सूल।
मुरलीधरहिं आनि दिखरावहु ओढ़े पीत दुकूल॥
इनहीं बातनि भए स्याम तनु, मिलवत हौ गढ़ि छोलि।
सूर बचन सुनि रही ठगौसी, बहुरि न आयौ बोलि ॥१४८४॥

फिरि फिरि कहा बनावत बात।
प्रातकाल उठि खेलत ऊधौ, घर घर माखन खात॥
जिनकी बात कहत तुम हमसौं सो है हमसौं दूरि।
ह्यौं हैं निकट जसोदा नंदन, प्रान सँजीवन-मूरि॥
बालक संग लियें दधि चोरत खात खवावत डोलत।
सूर सीस नीचौ कत नावत अब काहें नहिं बोलत ॥१४८५॥

फिरि-फिरि कहा सिखावत मौन।
बचन दुसह लागत अलि तेरे ज्यौं पजरे पर लौन॥
सिंगी मुद्रा, भस्म, त्वचा-मृग अरु अवराधन पौन।
हम अबला अहीरि, सठ मधुकर, धरि जानहिं कहि कौन॥
यह मत जाइ तिनहिं तुम सिखवहु, जिनहिं आजु सब सोहत।
सूरदास कहुँ सुनी न देखी पोत सूतरी पोहत ॥१४८६॥

ऊधौ हमहिं न जोग सिखैयै।
जिहिं उपदेस मिलैं हरि हमकौं सो व्रत-नेम बतैयै॥
मुक्ति रहौ घर बैठि आपने, निगुन सुनि दुख पैयै।
जिहिं सिर केस कुसुम भरि गूँदे कैसे भसम चढ़ैयै॥
जानि जानि सब मगन भई हैं, आपुन आपु लखैयै।
सूरदास-प्रभु सुनहु नवौ निधि बहुरि कौ हरि ब्रज आइयै ॥१४८७॥

ऊधौ करि रही हम जोग।
कहा एती बात स्रम्यौ, देखि गोपी भोग॥
सीस सेल्ही-केस, मुद्रा, कनक-बीरी बीर।
बिरह भस्म चढ़ाइ बैठीं सहज कंथा चीर॥

हृदय सिंगी टेर मुरली, नैन खप्पर हाथ ।
चाहती हरि-दरस-भिच्छा देहिं दीनानाथ ।
जोग की गति जुगति हम पै, सूर देखी जोइ ।
कहत हम सौं करन जोग सु जोग कैसो होइ ॥१४८९॥

ऊधौ जोग तबहिं तैं जान्यौ ।

जा दिन तैं सुफलक-सुत कैं सँग रथ ब्रजनाथ पलान्यौ ।
ता दिन तैं सब छोह-मोह गयौ सुत-पति हेत भुलान्यौ ।
तजि माया संसार सबनि कौ ब्रज-जुवतिनि ब्रत ठान्यौ ।
नैन मूँदि मुख मौन रहीं धरि तन तप तेज सुखान्यौ ।
नंद-नँदन मुरली मुख धारें यहै ध्यान उर आन्यौ ।
सोइ रूप जोगी जिहिं सूझै जो तुम जोग बखान्यौ ।
ब्रह्मा हूँ पचि मुए ध्यान करि, भँवहुँ नहिं पहिचान्यौ ।
कहाँ सु जोग कहा लै कीजै निरगुन को नहिं जान्यौ ।
सूर यहै निज रूप स्याम कौ, है मन माहँ समान्यौ ॥१४९०॥

ए अलि, कहा जोग मैं नीकौ ।

तजि रस-रीति नंद-नंदन की सिखवत निरगुन फीकौ ।
देखत-सुनत नाहिं कछु स्रवननि ज्योति-ज्योति करि ध्यावत ।
सुंदर स्याम कृपालु दयानिधि, कैसैं हौ बिसरावत ।
सुनि रसाल मुरली की सुर धुनि सुर-मुनि कौतुक भूले ।
अपनी भुजा ग्रीव पर मेली, गोपिनि के मन फूले ।
लोक-लाज कुल के भ्रम डारे मधु संग घर-बन खेली ।
अब तुम सूर खवावन आए, जोग-जहर की बेली ॥१४९१॥

ऊधौ किहिं बिधि कीजै जोग ।

जे रस रसी स्याम सुंदर कै, ते क्यौं सहैं बियोग ।
पूछहु जाइ चकोर चंद हित, दरसन कौ सुख पावत ।
चातक स्वाँति-बूँद चित बाँध्यौ जलनिधि मनहिं न आवत ।

मधु स्याम-कमल सिलीमुख आनत, कंचन सुख सहै री।
तातैं रसिक नैन चितुरन तुव, मरतहुँ प्रीति लहै री।
तुमहूँ रसिक कहावत मधुकर आपु स्वारथी जैसी।
कहा करैं ये सूर प्रेम-बस, बिनु हित जीवन कैसी ॥१४५२॥

ऊधौ, हम कब जानैं जोग।
नंद-नँदन कारन जिन छाँड़यौ, कुल-लज्जा सब लोग।
को आसन सम बैठे ऊधौ प्रान वायु को साधै।
को भरि ध्यान धारना मधुकर, निरगुन पथ आराधै।
काके जिय मैं नेम-तपस्या, काकैं मन संतोष।
काकै सब आचार फलौ मत को चाहत है मोष।
निसि दिन कछु चित चेत न आली नंद-नँदन की आस।
को खनि कूप मरै प्यास, छाँड़ि सुर सरि पास ॥१४५३॥

मधुकर स्याम हमारे ईस।
तिनकौ ध्यान धरैं निसि-बासर, औरहिं नवै न सीस।
जोगिनि जाइ जोग उपदेसहु जिनके मन दस-बीस।
एक चित्त, एकै वह मूरति, नित चितवति दिन तीस।
काहैं निरगुन ग्यान आपनी जित कित डारत खीस।
सूरदास-प्रभु, नंदनँदन बिनु, हमरे को जगदीस ॥१४५४॥

सतगुरु-चरन भजे बिनु बिद्या कहु कैसैं कोउ पावै।
उपदेसक हरि दूरि रहे हैं ज्यौं हमरे मन आवै।
जो हित कियौ तौ अधिक करहि किन, आपुन आनि सिखावैं।
जोग-जोम तैं जसि न सकैं तौ हमहीं क्यौं न बुलावैं।
जोग ग्यान मुनि नगर तजे सब सघन गहन बन धावैं।
आसन मौन नेम मन संजम बिपिन मध्य बनि आवैं।
आपुन कहैं करैं कछु औरै, हम सबहिनि बहकावैं।
सूरदास ऊधौ सौं स्यामा, अति संकेत जनावै ॥१४५५॥

जोग-बिधि मधुबन सिखिहैं जाइ।

मन-बच-कर्म सपथ सुनि ऊधौ, संगहिं चली सिधाइ।
सब आसन, रेचक अरु पूरक कुंभक सीखहिं जाइ।
बिनु गुरु निकट सँदेसनि कैसैं, यह अवगाही जाइ।
हम जो करत देखिहैं कुबिजहिं, सोई करब उपाइ।
श्रद्धा-सहित ध्यान एकहिं मग, कहत जाहिं जदुराइ।
सूर-सुप्रभु को आयसु जपि है सो हम करिहैं आइ।
आज्ञा-भंग करैं हम क्यौं करि, जौ पतिव्रत बिनसाइ।।१२६६

जोग सँदेसौ ब्रज मैं लावत।

थाके चरन तुम्हारे ऊधौ बार-बार के धावत।
सुनिहै कथा कौन निरगुन की रचि पचि बात बनावत।
सगुन सुमेर प्रगट देखियत तुम तृन की ओट दुरावत।
हम जानति परपंच स्याम के, बातनि ही बौरावत।
देखी-सुनी न अब लगि कबहूँ जल मथि माखन आवत।
जोगी जोग अपार सिंधु मैं ढूँढ़ेहूँ नहिं पावत।
ह्याँ हरि प्रगट प्रेम जसुमति कैं ऊखल आपु बँधावत।
चुप करि रहौ, ज्ञान ढकि राखौ कत हौ बिरह बढ़ावत।
नंदकुमार कमल-दल-लोचन कहि को जाहि न भावत।
काहे कौं बिपरीत बात कहि सबके प्रान गवाँवत।
सोहत चित सूरज अपजनि कौं निगम नेति जिहिं गावत।।१२६७

मधुकर, यह निहचै हम जानी।

खोयौ गयौ नेह नग उनपै प्रीति कापरी भई पुरानी।
पहिलैं अधर सुधा-रस सींचे दियौ पोष पटु लाइ सयानी।
बहुरौ रोष कियौ सिसु कैसौ गूढ़-रचना ज्यौं चलत पिछानी।
ऐसें हित की प्रीति दिखाई पन्नग केंचुरि ज्यौं लपटानी।
बहुरौ सुरति लई नहिं जैसें भ्रमर लता त्यागत हूँ सिकानी॥

बहुरंगी जिय जाइ लिवहिँ सुख, इकरंगी दुख देह विभानी।
सूरदास पसुधनी चोरि कै, लायौ चाहत चारा-पानी।।१४६८

ऊधौ, मन नहिँ हाथ हमारैं।
रथ चढ़ाइ हरि संग गए लै, मथुरा जबहिँ सिधारे।
नातरु कहा जोग हम छाँड़हिं अति रुचि कै तुम ल्याए।
हम तौ झँखति स्याम की करनी मन लै जोग पठाए।
अजहूँ मन अपनौ हम पावैं तुम तैं होइ तौ होइ।
सूर सपथ हमैं कोटि तिहारी, कही करैंगी सोइ।।१४६६।

मुक्ति आनि मंदे मैं मेली।
समुझि सगुन ले चले न ऊधौ यह सुम पै सब पूँजी अकेली।
कै लै जाहु अनत ही बेंचो, कै लै राखु जहाँ बिष-बेली।
याहि लागि को मरै हमारैं बृंदाबन पायनि सौं ठेली।
धरे सीस घर घर डोलत हौ एकै मति सब भई सहेली।
सूरदास गिरिधरन छबीली जिनकी भुजा कंठ धरि खेली।।१६०

ऊधौ, मन तौ एकहिँ आहि।
सो तौ हरि लै संग सिधारे, जोग सिखावत काहि।
सुनि सठ, कुटिल बचन रस-लंपट, अबलनि तन धौं चाहि।
अब काहे कौं लोन लगावत, बिरह-अनल कै दाहि।
परमारथ उपचार करत हौ बिरह-व्यथा है जाहि।
जाकौं राजरोग कफ ब्यापत, दही खवावत ताहि।
सुंदर स्याम सलोनी मूरति, पूरि रही हिय माहिँ।
सूर ताहि तजि निरगुन-सिंधुहिं, कौन सकै अवगाहि।।१६०१

ऊधौ मन न भए दस-बीस।
एक हुतौ सो गयौ स्याम सँग को अवराधै ईस।।
इंद्री सिथिल भई केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस।
आसा लागि रहति तन स्वाँसा जीवहिं कोटि बरीस।

तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस।
सूर हमारैं नंदनंदन बिनु, और नहीं जगदीस ॥१६०२॥

हरि हैं उर माखन-चोर गड़े।
अब कैसैं निकसत, सुनि ऊधौ तिरछे ह्वै जु अड़े।
जद्यपि अहीर जसोदा-नंदन कैसैं जात छँड़े।
हाँ जादौपति प्रभु कहियत है, हमैं न लगत बड़े॥
को बसुदेव देवकी-नंदन, को जानै, को बूझै।
सूर नंद-नंदन के देखत, और न कोऊ सूझै ॥१६०३॥

मन मैं रह्यौ नाहिन ठौर।
नंद-नंदन अछत कैसैं आनियै उर और॥
चलत, चितवत, दिवस जागत स्वप्न सोवत राति।
हृदय तैं वह मदन मूरति छिन न इत उत जाति॥
कहत कथा अनेक ऊधौ लोक लाभ दिखाइ।
कहा करौं मन प्रेम पूरन घट, न सिंधु समाइ।
स्याम गात सरोज आनन ललित मृदु मुख हास।
सूर इनकैं दरस कारन, मरत लोचन प्यास ॥१६०४॥

मधुकर, स्याम हमारे चोर।
मन हरि लियौ तनक चितवनि मैं चपल नैन की कोर॥
पकरे हुते हृदय उर अंतर, प्रेम प्रीति कैं जोर।
गए छँड़ाइ तोरि सब बंधन, दै गए हँसनि अँकोर॥
चौंकि परी, जागत निसि बीती दूत मिल्यौ इक भौर।
सूरदास प्रभु सरबस लूट्यौ, नागर नवल-किसोर ॥१६०५॥

सब दिन एकहिं से नहिं होते।
तब अलि, ससि सीरौ अब तातौ भयौ बिरह जरि मो तैं।
तब षट मास रास-रस अंतर एकहु निमिष न जाने।
अब औरै गति भई कान्ह बिनु, पल पूरन जुग माने॥

कहा मति जोग ज्ञान मारग स्तुति, ते किन कहे घनेरे।
अब कछु और सुहाइ सूर नहिं, सुमिरि स्याम गुन केरे।।१६०६।।

ऊधौ, अब नहिं स्याम हमारे।

मधुरा गए पलटि से लीन्हे, माधौ, मधुप तुम्हारे।।
अब मोहिं भावत यह पछितावौ क्यौं गुन बात बिसारे।
कपटी कुटिल काक अरु कोकिल अंत भए सहि न्यारे।।
फिरि-फिरि मौह मगन ब्रजबासी प्रेम प्रान-धन वारे।
सूर स्याम कौ कौन पत्यैहै, कुटिल गात तन कारे।।१६०७।।

सखी री स्याम सबै इक सार।

मीठे बचन सुहाए बोलत, अंतर जारनहार।।
भँवर-कुरंग-काक अरु कोकिल कपटिन की चटसार।
कमलनैन मधुपुरी सिधारे, मिटि गयौ मंगलचार।।
सुनहु सखी री, दोष न काहू, जो बिधि लिख्यौ लिलार।
यह करतूति इनहिं की नाहीं, पूरब बिबिध बिचार।।
कारी घन देखि बासर की, सोभा देखि अपार।
सूरदास सरिता सर पोषत, चातक करत पुकार।।१६०८।।

बिलग जनि मानौ ऊधौ प्यारे।

यह मथुरा काजर की ओबरि, जे आवैं ते कारे।।
तुम कारे, सुफलक-सुत कारे, कारे कुटिल सँवारे।
कमलनैन की कौन चलावै, सबहिनि मैं मनियारे।।
मानौ नील माट तैं काढ़े, जमुना आइ पखारे।
तातैं स्याम भई कालिंदी सूर स्याम गुन न्यारे।।१६०९।।

मोहन माँग्यौ अपनौ रूप।

इहिं ब्रज बसत अँचै तुम बैठी, ता बिनु यहाँ निरूप।।
मेरौ मन मेरे अलि, लोचन, लै जु गए धपि-धूप।
ता ऊपर तुम जोग पठाए, भली बन्यौ करि सूप।।

अपनी काज सँवारि सूर सुनि, हमैं बतावत कूप ।
लेवा-देइ बराबरि मैं है, कौन रंक को भूप ॥१६१०॥

ऊधौ स्याम इहाँ लै आवहु ।
ब्रजजन चातक मरत पियासे, स्वाँति-बूँद बरसावहु ।
हाँ तैं आहु बिलंब करौ जनि हमरी दसा जनावहु ।
घोष-सरोज भयौ है संपुट ह्वै दिनकर बिगसावहु ।
जौ ऊधौ हरि इहाँ न आवहिं तौ हमैं उहाँ बुलावहु ।
सूरदास प्रभु हमहिं मिलावहु तौ तिहुँपुर जस पावहु ॥१६११

बिरहा कहँ लौं आपु सँभारे ।
जब तैं गंग परी हरि-पग तैं बहिबौ नहीं निवारे ।
नैननि तैं बिछुरे सु भ्रमत है ससि कबहूँ बन गारे ।
धाम तैं बिछुरि, कमल कंटक भए सिंधु भए जल खारे ।
बैन तैं बिछुरि कोकिला बिछुरी भई बेदहि का निस्तारे ।
सूरदास जे सब अँग बिछुरी तिनहि कौन उपचारे ॥१६१२॥

ऊधौ भली भई ब्रज आए ।
बिधि-कुलाल कीन्हे काँचे घट ते तुम आनि पकाए ।
रंग दीन्हौ हो कान्ह साँवरैं, अँग अँग चित्र बनाए ।
गातैं गरे न नैन-नेह तैं अवधि अटा जो छाए ।
ब्रज करि अँवा जोग इंधन करि, सुरति आगि सुलगाए ।
फूँक उसास बिरह प्रजरनि सँग ध्यान-दरस सियराए ।
भरे सपूरन सकल प्रेमजल छुवन न काहूँ पाए ।
राज काज तैं गए सूर प्रभु नंदनंदन कर लाए ॥१६१३॥

जब लगि ग्यान हृदै नहिं आवै ।
तब लगि कोटि जतन करै कोऊ, बिनु बिबेक नहिं पावै ।
बिना बिचार भयौ सुपनौ सो, मैं देख्यौ जग जोइ ।
मानौ हाट बनी रंग बावर, प्रगट भये तैं होइ ।

तुमही कहत सकत घट ब्यापक, और मर्वाहिं तें निवरे।
नख-सिख लौं तन प्रगट निसा दिन निकसि करत किन सिवरे।
सौंची बात सबै सीतल ही, मुख में मैले तुरसी।
सूर सु औषध हमें बतावहु, पित-जुर ऊपर गुर-सी ॥१६१४॥

जौ पै हिरदै मौंझ हरी।
तौ कहि इती अवज्ञा उनपै कैसें सही परी।
तब दावानल दहन न पायौ, अब इहिं बिरह जरी।
उर तें निकसि नंद-नंदन हम, सीतल क्यौं न करी।
दिन प्रति नैन इंद्र जल बरसत, घटत न एक घरी।
अति ही सीत-भीत तन भीजत, गिरि अंचल न धरी।
कर-कंकन दरपन लै देखौ, इहिं अति अनख मरी।
क्यौं अब जियहिं जोग सुनि सूरज बिरहिनि बिरह भरी ॥१६१५॥

ऐसी जोग न हम पै होइ।
आखि मूँदि कह पावैं ढूँढ़ें अँधरे ज्यौं टकटोइ।
भसम लगावन कहत सु हमकौं अंग कुंकुमा धोइ।
सुनि कै बचन तुम्हारे ऊधौ, नैना आवत रोइ।
कुंतल कुटिल मुकुट-कुंडल छवि रही सु चित मैं पोइ।
सूरज प्रभु बिनु प्रान रहैं नहिं, कोटि करौ किन कोइ ॥१६१६॥

ऊधौ हमहिं कहा समुझावहु।
पसु-पंछी सुरभी ब्रज की सब देखि, स्रवन सुनि आवहु।
तृन न चरत गौ पियत न सुत पय ढूँढ़त बन-बन डोलैं।
अलि कोकिल दै आदि विहंगम, भौंति भयानक बोलैं।
जमुना भई स्याम स्यामहिं बिनु, इंदु छीन छय रोगी।
तरुवर पत्र बसन न सँभारत, बिरह बृच्छ भए जोगी।
गोकुल के सब लोग दुखित हैं, नीर बिना ज्यौं मीन।
सूरदास प्रभु प्रान न छूटत अवधि आस मैं लीन ॥१६१७॥

हमसौं उनसौं कौन सगाई।
हम अहीर अबला ब्रजबासी, वै जदुपति जदुराई॥
कहा भयौ जु भए जदुनंदन, अब यह पदवी पाई।
सकुच न आवत घोष बसत की, तजि ब्रज गए पराई॥
ऐसे भए वहाँ आदीपति गए गोप बिसराई।
सूरदास यह ब्रज कौ नातौ भूलि गए बलभाई।।१६१८

तौ हम मानैं बात तुम्हारी।
अपनौ ब्रह्म दिखावहु ऊधौ, मुकुट पितांबर धारी॥
भजिहैं तब ताकौं सब गोपी, सहि रहिहैं बरु गारी।
भूत समान बतावत हमकौं, डारहु स्याम बिसारी॥
जे मुख सदा सुधा अँचवत हैं, ते बिष क्यौं अधिकारी।
सूरदास-प्रभु एक अंग पर रीझि रहीं ब्रजनारी।।१६१९

(ऊधौ) जौ कोउ यह बन फेरि बनावै।
तौऊ नंद-नंदन तजि मधुकर और न मन मैं आवै॥
जौ या बन की त्वचा काटि कै लै करि दुंदुभि साजै।
मधुर उपंग सप्त सुर निकसैं कान्ह-कान्ह करि बाजै॥
निकसैं प्रान परैं भिरि माटी द्रुम लागैं तिहिं ठाम।
अब सुनि सूर पत्र फल-साखा, तेउ रटैं हरि नाम।।१६२०

ऊधौ जाइ बहुरि सुनि आवहु कहौ जो नंदकुमार।
यह न होइ उपदेस स्याम कौ कहत लगावन छार॥
निरगुन ज्योति कहाँ उन पाई सिखवत बारंबार।
काल्हिहिं करत हुते हमरे सँग, अपनैं हाथ सिंगार॥
व्याकुल भई गोपालहिं बिछुरैं गयौ गुन-ज्ञान-सँभार।
तातैं जो आवै सो बकत हौ नाहिन दोष तुम्हार॥
बिरह सहन कौं हम सिरजी हैं, पाहन हृदय हमार।
सूरदास अंतरगति मोहन, जीवन प्रान अधार।।१६२१

ऊधौ, जोग बिसरि जनि जाहु।
बाँधौ गाँठि, छूटि परिहै कहुँ, फिरि पाछैं पछिताहु॥
ऐसी बस्तु अनूपम मधुकर, मरम न जानै और।
ब्रज-बनितनि के नहीं काम की, है तुम्हरेई ठौर॥
जो हित करि पठयौ मन मोहन, सो हम तुमकौं दीन्हौ।
सूरदास ज्यौं बिप्र नारियर करही बंदन कीनौ॥१६२२॥

ऊधौ काहे कौ भक्त कहावत।
जु पै जोग लिखि पठयौ हमकौं, तुमहुँ न भस्म चढ़ावत॥
सिंगी मुद्रा भस्म अधारी, हमहीं कहा सिखावत।
कुबिजा अधिक स्याम की प्यारी, ताहि नहीं पहिरावत॥
यह तौ हमकौं तबहिं न सिखयौ जब तैं गाइ चरावत।
सूरदास-प्रभु कौ कहियौ अब लिखि-लिखि कहा पठावत॥१६२३॥

( ऊधौ ) ना हम बिरहिनि, ना तुम दास।
कहत-सुनत घट प्रान रहत हैं, हरि तजि भजहु अकास॥
बिरही मीन मरै जल बिछुरैं, छाँड़ि जियन की आस।
दास-भाव नहिं तजत पपीहा, बरसत मरत पियास॥
पंकज परम कमल मैं बिहरत, बिधि कियौ नीर निरास।
राजिव रबि कौ दोष न मानत, ससि सौं सहज उदास॥
प्रगट प्रीति दसरथ प्रतिपाली, प्रीतम कैं बनबास।
सूर स्याम सौं दृढ़ ब्रत राख्यौ, मेटि जगत उपहास॥१६२४॥

हमतौ दुहूँ भाँति फल पायौ।
जौ गोपाल मिलैं तौ नीकौ, नतरु जगत जस गायौ॥
कहँ हम बा गोकुल की गोपी, बरनहीन घटि जाति।
कहँ वै श्री कमला के बल्लभ मिलि बैठीं इक पाँति॥
निगम ज्ञान मुनि ध्यान अगोचर, ते भए घोष निवासी।
ता ऊपर अब कहौ देखि धौं, मुक्ति कौन की दासी॥

जोग कथा ऊधौ, पा लागौं, मति कहौ बारंबार।
सूर स्याम तजि आन भजै जो, ताकी जननी छार।।१६२५।

ऊधौ सौ पल, सौ पल।
कहँ वै सुंदर स्याम बिहारी, हमकौं तजैं सौ पल।।
आवन-आवन कहि गए ऊधौ करि गए हम सौं छल।
हृदय की प्रीति स्याम जू जानत कितिक दूरि गोकुल।।
आपुन जाइ मधुपुरी छाए, जहाँ रहे हिलि-मिल।
सूरदास स्वामी के बिछुरैं नैननि नीर प्रबल।।१६२६।

गुप्त मते की बात कहौ जो, कहौ न काहूँ आगैं।
कै हम जानैं, कै अलि, तुमहूँ, इतनी पावहिं मागैं।।
एक बेर खेलत बृंदाबन कंटक चुभि गयौ पाइँ।
कंटक सौं कंटक लै काढ़्यौ अपनैं हाथ सुभाइ।।
एक दिवस बिहरत बन भीतर, मैं जु सुनाई भूख।
पाके फल वै देखि मनोहर चढ़े कृपा करि रूख।।
ऐसी प्रीति हमारी उनकी बसतैं गोकुल बास।
सूरदास प्रभु सब बिसराई मधुबन कियौ निवास।।१६२७।

ऊधौ, हम लायक सिख दीजै।।
यह उपदेस अगिनि तैं तातौ कहौ, कौन बिधि कीजै।।
तुमही कहौ इहाँ इतननि मैं सीखनहारी को है।
जोगी-जती रहित माया तैं, तिनही यह मत सोहै।।
कहा सुनत, बिपरीति लोक मैं, यह सब कोऊ कैहै।
देखौ धौं अपने मन सब कोउ तुमही दूषन दैहै।।
स्रक चंदन बनिता-बिनोद-रस, क्यौं बिभूति बपु मींजै।
सूरदास सोभा क्यौं पावति, आँखि आँधरी आँजै।।१६२८।

सब जल तजे प्रेम के नातैं।
चातक स्वाति-बूँद नहिं छाँड़त, प्रगट पुकारत तातैं।।

समुझत मीन नीर की बातैं, तऊ मान हठि हारत।
सुनत कुरंग, प्रेम नहिं त्यागत, जदपि ब्याध सर मारत।
निमिष चकोर नैन नहिं लावत, ससि जोवत जुग बीते।
ज्योति पतंग देखि बपु जारत भए न प्रेम घट रीते॥
कहि अलि, क्यौं बिसरति वै बातैं संग जु करि ब्रजराज।
कैसे सूरस्याम हम छाँड़ैं, एक देह के काज।।१५२९।

ऊधौ, जौ हरि हितू तुम्हारे।
तौ तुम कहियौ जाय कृपा करि, ए दुख सबै हमारे॥
तन-तरिवर उर स्वाँस-पवन मैं बिरह-दवा अति जारे।
नहिं सिरात, नहिं जात छार ह्वै, सुलगि-सुलगि भए कारे।
जदपि प्रेम उमँगि जल सींचैं, बरषि-बरषि घन हारे।
जौ सींचै इहिं भाँति जतन करि, तौ एतैं प्रतिपारे॥
कीर कपोत कोकिला चातक बधिक बियोग बिडारे।
क्यौं जीवैं इहिं भाँति सूर प्रभु, ब्रज के लोग बिचारे।१५३०।

मधुकर, कौन मनायौ मानै।
अबिनासी अति अगम तुम्हारौ, कहा प्रीति रस जानै॥
सिखवहु जाइ समाधि-जोग-रस जे सब लोग सयाने।
हम अपनैं ब्रज ऐसहिं रहिहैं, बिरह बाइ बौराने॥
जागत सोवत सपन रैन दिन, वहै रूप परवाने।
बालमुकुंद किसोरी लीला, लीला सिंधु समाने॥
जिनके तन-मन-प्रान सूर सुनि, मृदु मुसकानि बिकाने।
परी जु पयनिधि अगम बूँद जल सु पुनि कौन पहचाने।१५३१

बिलग हम मानैं ऊधौ, काकी।
तरसत रहे बसुदेव-देवकी, नहिं हित मात-पिता कौ॥
उनके मातु-पिता को काकौ दूध पियौ हरि जाकौ।
नंद-जसोदा लाड़ लड़ायौ, नाहिं भयौ हरि काकौ॥

कहियौ जाइ बनाइ बात यह, को हित है अबला कौ।
सूरदास प्रभु प्रीति है कासौं, कुटिल मीत कुबिजा कौ।।१६६२।

जीवन मुख देखे को नीकौ।।
दरस-परस दिन-राति पाइयत, स्याम पियारे पी कौ।।
सूनौ जोग कहा लै कीजै, जहाँ ज्यान है जी कौ।
नैननि मूँदि मूँदि कह देखौं बँधौ ज्ञान पोथी कौ।
आछे सुंदर स्याम हमारे, और जगत सब फीकौ।।
खाटी मही कहा रुचि मानै, सूर खवैया घी कौ।।१६७३।

अपने सगुन गोपालहिं माई, इहिं बिधि काहैं देति।
ऊधौ की इन मीठी बातनि निगुन कैसैं लेति।।
धर्म अर्थ-कामना सुनावत सब सुख मुक्ति समेति।
काकी भूख गई मन लाडू सो देखहु चित चेति।।
जाकी मोच्छ बिचारत बरनत निगम कहत हैं नेति।
सूर स्याम तजि को भुस फटकै, मधुप तुम्हारे हेति।।१६७४।

वे हरि सकल ठौर के वासी।
पूरन ब्रह्म अखंडित मंडित, पंडित मुनिनि बिलासी।
सप्त पताल ऊरध अध पृथ्वी, तल नभ बरुन बयारी।।
अभ्यंतर दृष्टि देखन कौं कारन रूप मुरारी।
मन-बुधि-चित अहंकार दसेंद्रिय प्रेरक थंभनकारी।
ताकैं काज वियोग बिचारत, ये अबला-ब्रजनारी।।
जाकौ जैसौ रूप मन रुचै, सो अपबस करि लीजै।
आसन बैसन ध्यान धारना, मन आरोहन कीजै।।
षट दल अठ द्वादस दल निरमल, अजपा जाप जपाली।
त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि यौं मिलिहैं बनमाली।।
एकादस गीता स्रु ति साखी जिहिं बिधि मुनि समुझाए।
ते सँदेस श्रीमुख गोपिनि कौं, सूर सु मधुप सुनाए।।१६७५।

मधुकर ल्याए जोग सँदेसौ।
भली स्याम-कुसलात सुनाई, सुनतहिं भयौ अँदेसौ॥
आस रही जिय कबहुँ मिलन की, तुम आवत ही नासी।
जुवतिनि कहत जटा सिर बाँधौ, तौ मिलिहैं अबिनासी॥
तुमकौं जिन गोकुलहिं पठाए, ते बसुदेव कुमार।
सूर स्याम हमतैं कहुँ न्यारे होत न, करत बिहार॥१६१६॥

ऊधौ, हमरी सौं, तुम जाहु।
यह गोकुल पूनौ कौ चंदा, तुम ह्वै आए राहु॥
ग्रह के ग्रसे गुसा परगास्यौ अब लौं करि निरबाहु।
सब रस लै नँदलाल सिधारे, तुम पठए, बड़ साहु॥
जोग बेचि कै तंदुल लीजै बीच बसेरे जाहु।
सूरदास अबहीं चलि जैहौ मिटिहै मन कौ दाहु॥१६१७॥

ऊधौ, मौन साधि रहे।
जोग कहि पछितात मन-मन बहुरि कछु न कहे॥
स्याम की यह नहीं बूझैं, अतिहिं रहे खिसाइ।
कहा मैं कहि-कहि लजानी, भार रह्यौ नवाइ॥
प्रथम ही कहि बचन एकै, रह्यौ गुरु करि मान।
सूर प्रभु मोकौं पठायौ, यहै कारन जानि॥१६१८॥

कहा मति दीन्ही हमहिं गुपाल।
आवहु री सखि सब मिलि सोचैं, जौ पावैं नँदलाल॥
घर बाहर तैं बोलि लेहु सब, जावदेक ब्रज-बाल।
कमलासन बैठहु री माई, मूँदहु नैन बिसाल॥
षटपद कही, सोउ करि देखी, हाथ कछू नहिं आई।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन नैकु न देत दिखाई॥
फिरि भई मगन बिरह सागर मैं काहुँ सुधि न रही।
पूरन प्रेम देखि गोपिनि कौ, मधुकर मौन गही॥

स्रवनन सुनि पुनि पुनि चातक की, मान पखरि तन जाए।
सूर सु अवकै टेरि पपीहा बिरहिन मरत जिवाए।।१६३६।

मधुकर भली करी तुम आए।
ये बातैं कहि-कहि या दुख मैं, ब्रज के लोग हँसाए।
मोर मुकुट मुरली पीतांबर, पठवहु सौंज हमारी।
आपुन जटाजूट मुद्रा धरि, लीजै भस्म अधारी।।
कौन काम बृंदावन को सुख दही-भात की छाक।
अब वै स्याम कुबरी दोऊ, बने एक ही ताक।।
वै प्रभु बड़े सखा तुम उनके जिनकै सुगम अनीति।
या जमुना-जल को सुभाव यह, सूर बिरह को प्रीति।।१६४०।

काहे को रोकत मारग सूधौ।
सुनहु मधुप निरगुन कंटक तैं राजपंथ क्यौं रूँधौ।।
कै तुम सिखि पठए हौ कुबिजा कह्यौ स्यामघनहूँ धौं।
बेद-पुरान-सुमृति सब ढूँढ़ौ जुवतिनि जोग कहूँ धौं।।
ताको कहा परेखो कीजै, जानै छाँछ न दूधौ।
सूर मूर अक्रूर गयौ लै ब्याज निबेरत ऊधौ।।१६४१।

ऊधौ, कोउ नाहिंन अधिकारी।
लै न जाहु यह जोग आपनौ, कत तुम होत दुखारी।।
यह तौ बेद उपनिषद मत है महा पुरुष ब्रतधारी।
हम अबला अहीर ब्रज-बासिनि नाहीं परत सँभारी।।
को है सुनत, कहत हौ कासौं कौन कथा बिस्तारी।
सूर स्याम कैं संग गयौ मन, अहि कैंचुली उतारी।।१६४२।

ऊधौ धनि तुम्हरौ ब्यौहार।
धनि वै ठाकुर, धनि तुम सेवक, धनि हम बर्तनहार।।
काटहु अंब, बबूर लगावहु, चंदन की करि बारि।
हमकौ जोग, भोग कुबिजा कौ, ऐसी समुझ तुम्हारि।।

तुम हरि पढ़े चातुरी बिद्या, निपट कपट चटसार।
पकरौ साहु, चोर कौ छाँड़ौ, चुगलनि कौ इतबार॥
समुझि न परै तिहारी मधुकर, हम ब्रज नारि गँवार।
सूरदास ऐसी क्यौं निबहै, अंध धुंध सरकार॥१६४३।

हरि बिनु इहिं बिधि है ब्रज रहियतु।
पर-पीरहिं तुम जानत ऊधौ, तातैं तुमसौं कहियतु॥
चंदन चंद-किरनि पावक सम, इन मिलि कै तनु दहियतु।
रजनी जाति गनत ही तारे, जतन नहीं निरबहियत॥
बासर हूँ या बिरह-सिंधु कौ क्यौंहूँ पार न लहियत।
फिरि-फिरि गहै अवधि अवलंबन बूड़त ज्यौं तृन गहियत॥
एक जु हरि-दरसन की आसा, ता लगि यह दुख सहियत।
मन-क्रम-बचन सपथ सुनि सूरज, और नहीं कछु चहियत॥१६४४

ये बातें जमुना-तीर की।
कबहुँक सुरति करत हैं मधुकर हरन हमारे चीर की।
लीन्हे बसन देखि ऊँचे द्रुम, रवकि चढ़न बलबीर की।
देखि देखि सब सखी पुकारति अधिक जुड़ाई नीर की।
दोऊ हाथ जोरि करि माँगी दुहाई नंद अहीर की।
सूरदास-प्रभु सब सुख-दाता, जानत हैं पर-पीर की॥१६४५।

प्रेम न रुकत हमारे बूतैं।
किहिं गयंद बाँध्यौ, सुनि मधुकर, पदुम नाल के काँचे सूतैं?
सोवत मनसिज आनि जगायौ, पठै सँदेस स्याम के दूतैं।
बिरह-समुद्र सुखाय कौन बिधि रंचक जोग-अगिनि के लूतैं।
सुफलक सुत अरु तुम, दोऊ मिलि, लीजै मुकुति हमारे हूतैं।
चाहति मिलन सूर के प्रभु कौं क्यौं पतियाहिं तुम्हारे घूतैं॥१६४६

ऊधौ, अब हम समुझि भई।
नँद-नँदन के अंग-अंग-प्रति, उपमा न्याय दई॥

कुंतल कुटिल भँवर भामिनि बर, मालति भुरै लई ॥
तजत न गहरु कियौ तन कपटी जानी निरस भई ।
आनन इंदु बिमुख संपुट तजि करषे तैं न नई ।
निर्मोही नव नेह कुमुदिनी, अंतहु हेम हई ॥
तन घन-सजल सेइ निसि-बासर, रटि रसना छिजई ।
सूर बिबेक-हीन चातक मुख बूँदौ तौ न सई ॥१६४७॥

ऊधौ सुनहु नैकु जो बात ।
अबलनि कौं तुम जोग सिखावत, कहत नहीं पछितात ॥
ज्यौं ससि बिना मलीन कुमुदिनी रबि बिनुही जलजात ।
त्यौं हम कमलनैन बिनु देखे तलफि-तलफि मुरझात ॥
जिन स्रवननि मुरली सुर अँचयौ, मुद्रा सुनत डरात ।
जिन अधरनि अमृत फल चाख्यौ ते क्यौं कटु फल खात ॥
कुसुम चंदन घसि तन लावति तेहि न बिभूति सुहात ।
सूरदास प्रभु बिनु हम यौं हैं, ज्यौं तरु जीरन पात ॥१६४८॥

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं ।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं कैसैं ध्यान धराहीं ॥
तेई मूँदन नैन कहत हौ हरि मूरति जिन माहीं ।
ऐसी कथा कपट की मधुकर हमतैं सुनी न जाहीं ॥
स्रवन चीरि सिर जटा बँधावहु बिरह अनल अति दाही ।
चंदन तजि अँग भस्म बतावत बिरह अनल अति दाही ॥
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले सो तौ है अप माहीं ।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं ॥१६४९॥

हम तौ नंद-घोष के बासी ।
नाम गुपाल, जाति-कुल गोपक, गोप गुपाल उपासी ॥
गिरिधर धारी गोधन चारी, बृंदावन अभिलाषी ।
राजा नंद जसोदा रानी जलधि नदी जमुना सी ॥

मीत हमारे परम मनोहर, कमलनैन सुखरासी।
सूरदास-प्रभु कहौं कहाँ लौं, अष्ट महा-सिधि दासी ॥१६५०॥

यह गोकुल गोपाल उपासी।
जे गाहक निरगुन के ऊधौ, ते सब बसत ईस-पुर कासी।
जद्यपि हरि हम तजी अनाथ करि, तदपि रहतिं चरननि रस-रासी।
अपनी सीतलता नहिं छाँड़त, जद्यपि बिधु भयौ राहु-गरासी॥
किहिं अपराध जोग लिखि पठवत प्रेम-भगति तैं करत उदासी।
सूरदास ऐसी को बिरहिनि माँगि मुक्ति छाँड़ै गुन रासी ॥१६५१॥

हम तन सकल स्याम ब्रत धारी।
बिना गुपाल और जिहिं भावै, तिहिं कहियै ब्यभिचारी।
जोग मोट सिर बोझ आनि तुम, कत धौं घोष उतारी।
इतनिक दूरि जाहु चलि कासी जहाँ बिकत है पियारी॥
यह संदेस सुनै को मधुकर प्रीति अनन्य हमारी।
जो रस-रीति करी हरि हमसौं, सो क्यौं जाति बिसारी॥
महा मुक्ति कोऊ नहिं बूझै, जदपि पदारथ चारी।
सूरदास-स्वामी मनमोहन मूरति की बलिहारी ॥१६५२

ऐसौ सुनियत है बैसाख।
देखति नहीं ज्यौंत जीबे कौ, जतन करौ कोउ लाख॥
मृगमद मलय कपूर कुमकुमा केसर मलियै साख।
जरत अगिनि मैं ज्यौं घृत नायौ तन जरि ह्वै है राख॥
ता ऊपर लिखि जोग पठावत, खाहु नीम, तजि दाख।
सूरदास ऊधौ की बतियाँ सब उड़ि बैठीं ताख ॥१६५३।

इहिं बिधि पावस सदा हमारे।
पूरब पवन स्वाँस उर ऊरध, आनि मिले इकठारे॥
बादर स्याम सेत नैननि मैं, बरसि आँसु जल ढारे।
अरुन प्रकास पलक दुति दामिनि, गरजनि नाम पियारे॥

चातक दादुर मोर प्रगट भए, चपल निरंतर धारैं ।
ऊधव, ये तब तैं फरके भ्रम, स्याम रहे छिन हारैं ॥
कहिये काहि सुनै कत कोऊ या ब्रज के ब्यौहारे ।
तुमही सौं कहि-कहि पछितानी, सूर बिरह के मारे ॥१६५४॥

ऊधौ, कोकिल कूजत कानन ।
तुम हमकौ उपदेस करत हौ भस्म लगावन आनन ॥
औरौ सिखी सखा सँग लै लै टेरत चढ़ि पखानन ।
बहुरौ आइ पपीहा कैं मिस, मदन हनत निज बानन ।
हमरी निपट अहीरि बावरी जोग दीजिये ज्ञानन ।
कहा कथत मामी के आगैं जानत नानी नानन ॥
तुम तौ हमैं सिखावन आए जोग होइ निरबानन ।
सूर मुक्ति कैसैं पूजति है वा मुरली के तानन ॥१६५५॥

हमतैं हरि कबहूँ न उदास ।
राखे खिलाइ, पिआइ अधर रस क्यौं बिसरत ब्रज-बास ।
तुमसौं प्रेम कथा कौ कहिबौ, मनौ काटिबौ घास ।
बहिरौ तान स्वाद कह जानै, गूँगौ बात-मिठास ।
सुनि री सखी, बहुरि हरि ऐहैं, वह सुख, वहै बिलास ।
सूरदास ऊधौ अब हमकौ भए तेरहौ मास ॥१६५६॥

मेरी सुनी न कोऊ मानै ।
रस की बात मधुप नीरस सुनि, रसिक होइ सो जानै ।
दादुर बसै निकट कमलनि कै, जनम न रस पहिचानै ।
अलि अनुराग उड़न मन बाँध्यौ, पै सुनत नहिं कानै ॥
सरिता चली मिलन सागर कौं, कूल मूल द्रुम भानै ।
कायर बकै लोह तैं भाजै, लरै सो सूर बखानै ॥१६५७॥

आयौ घोष बड़ौ ब्यौपारी ।
लादि खेप गुन ज्ञान जोग की ब्रज मैं आनि उतारी ॥

फाटक दै कै हाटक माँगत, भोरौ निपट सुधारी।
धुरही तैं खोटौ खायौ है, लिये फिरत सिर भारी॥
इनकै कहे कौन डहकावै, ऐसी कौन अजानी।
अपनौ दूध छाँड़ि को पीवै, खार कूप कौ पानी॥
ऊधौ, जाहु सबारैं ह्याँ तैं बेगि, गहरु जनि लावहु।
मुँह माँग्यौ पैहौ सूरज प्रभु, साहुहिं आनि दिखावहु॥१६८८

ऊधौ, जोग कहा है कीजतु।
ओढ़ियत है कि बिछैयत है किधौं खैयत है किधौं पीजतु।
कीधौं कछू खिलौना सुंदर की कछु भूषन नीकौ।
हमरे नंद नंदन जो चहियतु मोहन जीवन जी कौ॥
तुम जु कहत, हरि निगुन निरंतर निगम नेति है रीति।
प्रगट रूप की रासि मनोहर क्यौं छाँड़ै परतीति॥
गाइ चरावन गए घोष तैं, अबहीं है फिरि आवन।
सोई सूर सहाइ हमारे, बेनु रसाल बजावन॥१६८९॥

अपने स्वारथ के सब कोऊ।
चुप करि रहौ मधुप, रसलंपट, तुम देखे अरु वोऊ॥
औ कछु कहौ कह्यौ चाहत हौ, कहि निरवारौ सोऊ॥
अब मेरैं मन ऐसियै षटपद होनी होउ सु होऊ॥
तब कत रास रच्यौ वृंदाबन जौ पै ज्ञान हुतोऊ।
लीन्हें जोग फिरत जुबतिनि मैं बड़े सुपत तुम दोऊ।
छुटि गयौ मान परेखौ रे अलि, हृदै हुतौ बर जोऊ।
सूरदास प्रभु गोकुल बिसरयौ चित चिंतामनि खोऊ॥१६९०॥

मधुकर, तुम रसलंपट लोग।
कमल कोस बस रहत निरंतर हमहिं सिखावत जोग॥
अपने काज फिरत बन अंतर निमिष नहीं अकुलात।
पुहुप गए बहुरौ बेलिनि कै नेकु निकट नहिं जात॥

तुम चंचल, वै चोर सकल अँग, बातन की पतियात।
सूर बिधाता दोउ रचे हैं, मधुप-स्याम इक गात ॥१६६१॥

ऊधौ, तुम अति चतुर सुजान।
जे पहिलैं मन रँगे स्याम रँग, अब न चढ़ै रँग आन।
ए दोऊ लोचन बिराट के, स्रुति कहैं एक समान।
भेद चकोर कियौ ताहू मैं, बिधु प्रीतम, रिपु भान।
बिरहिनि बिरह भजैं पा लागौं, तुम हौ पूरन ज्ञान।
दादुर जल बिनु जियै पवन भखि, मीन तजै हठि प्रान।
बारिज बदन नैन मेरे षटपद, कब करिहैं मधुपान।
सूरदास गोपिनि-परतिज्ञा, छुवहिं न जोग बिरान ॥१६६२॥

ऊधौ बिरहौ प्रेम करै।
ज्यौं बिनु पुट पट गहत न रँग कौं, रंग न रसै परै।
ज्यौं धर दहै बीज अंकुर गिरि, तौ सत फरनि फरै।
ज्यौं घट अनल दहत तन अपनौ, पुनि पय अमी भरै।
ज्यौं रन सूर सहै सर सन्मुख, तौ रबि-रथहुँ अरै।
सूर गुपाल-प्रेम पथ चलि करि, क्यौं दुख सुखनि डरै ॥१६६३

मधुकर, प्रीति किये पछितानी।
हम जानी ऐसैहिं निबहैगी, उन कछु औरै ठानी।
वा मोहन कौ कौन पतीजै, बोलत मधुरी बानी।
हमकौं लिखि-लिखि जोग पठावत, आपु करत रजधानी।
सूनी सेज सुहाइ न हरि बिनु, जागत रैनि बिहानी।
जब तैं गवन कियौ मधुबन कौं, नैननि बरसत पानी।
कहियौ जाइ स्याम-सुंदर कौं, अंतरगत की जानी।
सूरदास प्रभु मिलि कै बिछुरे, तातैं भई बिरानी ॥१६६४॥

हमारैं हरि हारिल की लकरी।
मन-क्रम-बचन नंद-नंदन उर, यह दृढ़ करि पकरी।

जागत-सोवत स्वप्न दिवस-निसि, कान्ह-कान्ह जक री।
सुनत जोग लागत है ऐसी ज्यौं करुई ककरी।
सु तौ ब्याधि हमकौं लै आए, देखी, सुनी, न करी।
यह तौ सूर तिनहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी ॥१६६०॥

हरि हैं राजनीति पढ़ि आए।
समुझी बात कहत मधुकर के, समाचार सब पाए।
इक अति चतुर हुते पहिलैं हीं अब गुरु ग्रंथ पढ़ाए।
बढ़ी बुद्धि जानी जौ उनकी, जोग सँदेस पठाए।
ऊधौ, भले लोग आगे के, पर हित डोलत धाए।
अब अपने मन फेर पाइहैं, चलत जु हुते चुराए।
ते क्यौं अनीति करैं आपुन जे और अनीति छुड़ाए।
राज-धरम तौ यहै सूर, जो प्रजा न जाहिं सताए ॥१६६१॥

कहा होत जौ हरि हित चित धरि एक बार ब्रज आवते।
तरसत ब्रज के लोग दरस कौं निरखि-निरखि सुख पावते।
मुरली सब्द सुनावत सबहिनि, हरते तन की पीर।
मधुरे बचन बोलि अमृत मुख बिरहिनि देते धीर।
सब मिलि जग जस गावत उनकौ, हरष मानि उर आनत।
नाचत पिया ब्रज-बनितनि कौ, अलभ सुलभ करि जानत।
दुरी-दुरा की टेव न कोऊ, देखत है ब्रज माहियौं।
बाल-दसा अपटाइ गहत हैं हँसि-हँसि हमरी बाहियौं।
हम दासी बिनु मोल की उनकी, हमहिं जु चित बिसारी।
इत तैं उन हरि रमि रहे अब तौ कुबिजा भई पियारी।
हिय मैं पाछैं समुझि-समुझि कै, लोचन भरि-भरि आए।
सूर सनेही स्याम प्रीति के, ते अब भए पराए ॥१६६२॥

मधुकर, आपुन होहिं बिराने।
बाहर हेत हितू कहवावत, भीतर काज सयाने।

ज्यौं सुक पिंजर माहिं उचारत, ज्यौं-ज्यौं कहत बखाने।
छूटत ही चढ़ि मिलै अपुन कुल, प्रीति न पल ठहराने।
यद्यपि मन नहिं तजत मनोहर, तद्यपि कपटी जाने।
सूरदास प्रभु कौन काज कौं, माखी मधु लपटाने ॥१६६८॥

मधुकर, तुम ही स्याम सखाई।
पा लागौं यह दोष बकसियौ सनमुख करत ढिठाई।
कौनैं रंक संपदा बिलसी सोवत सपनैं पाई।
किहिं सोने की उड़त चिरैया डोरी बाँधि लड़ाई।
धाम धुआँ के कहौ कौन के, बैठी कहाँ अथाई।
किहिं अकास तैं तारि तरैया आनि धरी घर माई।
कासनि की माला कर अपनैं कौनैं गूँथि बनाई।
किहिं कागद की तरनी कीन्ही कौन तरयौ सर जाई।
कौनैं अबला नैन मूँदि कै, जोग-समाधि लगाई।
इहिं उर आन रूप देखन की आगि उठी अनखाई।
सुनि ऊधौ, तुम फिरि फिरि गावत यामैं कौन बड़ाई।
सूरदास-प्रभु ब्रज-जुवतिनि कौ प्रेम कह्यौ नहिं जाई ॥१६६९

ऊधौ क्यौं बिसरत वह नेह।
हमरैं हृदय आनि नँद-नंदन, रचि-रचि कीन्हे गेह।
एक दिवस गई गाइ दुहावन, वहाँ जु बरस्यौ मेह।
लिए उढ़ाइ कामरी मोहन, निज करि मानी देह।
अब हमकौं लिखि-लिखि पठवत हैं, जोग-जुगुति तुम लेहु।
सूरदास बिरहिनि क्यौं जीवैं, कौन सयानप एहु ॥१६७०॥

ऊधौ मन माने की बात।
दाख-छुहारा छाँड़ि अमृत फल बिष-कीरा बिष खात।
ज्यौं चकोर कौं देइ कपूर कोउ, तजि अँगार अघात!
मधुप करत घर कोरि काठ मैं बँधत कमल के पात।

ज्यौं पतंग हित जानि आपनी, दीपक सौं लपटात।
सूरदास जाकौ मन जासौं, सोई ताहि सुहात ॥१६७१॥

इहिं डर बहुरि न गोकुल आए।
सुनि री सखी, हमारी करनी समुझि मधुपुरी छाए।
अधरातक तैं उठि सब बालक, मोहिं टेरेंगे आइ।
मातु-पिता मोकौं पठवैंगे बनहिं चरावन गाइ।
सूने भवन आइ रोकैगी, दधि चोरत नवनीत।
पकरि जसोदा पै लै जैहैं, नाचहु गावहु गीत।
ग्वालिनि मोहिं बहुरि बाँधैगी, केतव वचन सुनाइ।
वै दुख सूर सुमिरि मन ही मन, बहुरि सहै को जाइ ॥१६७२

जौ कोउ बिरहिनि कौ दुख जानै।
तौ तजि सगुन साँवरी मूरति कत उपदेसै ज्ञानै।
कुमुद चकोर मुदित बिधु निरखत, कहा करै लै भानै।
चातक सदा स्वाति कौ सेवक, दुखित होत बिनु पानैं।
भौंर कुरंग काग, कोइल कौं कबिजन कपट बखानै।
सूरदास जौ सरबस दीजै कारे कृतहिं न मानैं ॥१६७३॥

ऊधौ, सुधि नाहीं या तन की।
जाइ कही तुम कित ही भूले हमहुँ भईं बन-बन की।
इक बन ढूँढि सकल बन ढूँढे बन-बेली मधुबन की।
हारी परी वृंदावन ढूँढत, सुधि न मिली मोहन की।
किए बिचार उपचार न लागत, कठिन बिथा भइ मन की।
सूरदास कोउ कहै स्याम सौं, सुरति करै गोपिनि की ॥१६७४

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसैं छूटत।
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत।
वह चितवनि, वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर-भेष नंद-नंदन कौ वह बिनोद, वह बन तैं आवनि।

चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं बिष सौं लागत ।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन-मूरति सोवत जागत ।।१६७५

हरि-रस तौ ब्रजबासी जानैं ।
चरन-सुधा-रस पियत मधुप ज्यौं, चरन कमल रुचि मानैं ।।
ब्रह्म-साख सिव-सौक नाहिं सुख निगम जु नेति बखानैं ।
सो रस गिरिवरधारी के सँग, जिह्वा सेष कहानैं ।।
नैन बिसाल स्याम-सुन्दर के, खंजन भृकुटी तानैं ।
सूरदास प्रभु पसि सीमा की मैन अवधि मधुवानैं ।।१६७६।

मधुकर यह सुख तुमसे दूरि ।
देख्यौ सुन्यौ न परस्यौ रंचक कबहुँ न लागी धूरि ।।
अब तौ जोग सिखावन आए, तजि हरि जीवन मूरि ।
चितवनि मंद हँसनि गति परसनि हृदय रही भरिपूरि।
जो मन जो यह हाव तिहारे, मुक्ति चलै पग धूरि ।
मथुरा जाइ सूर-प्रभु पूछहिं, मरिहौ तबहिं बिसूरि ।।१६७७।

मैं ब्रजबासिनि की बलिहारी ।
जिनके संग सदा क्रीड़त हैं श्री गोवरधन धारी ।।
जिन्हूँ के घर माखन चोरत, जिन्हूँ के सँग दानी ।
जिन्हूँ के सँग धेनु चरावन हरि की अकथ कहानी ।।
जिन्हूँ के सँग जमुना के तट बंसी टेरि सुनावत ।
सूरदास बलि-बलि चरननि की, यह सुख मोहिं नित भावत।।

हौं इन मोरनि की बलिहारी ।
जिनकी सुभग चंद्रिका माथे, धरत गोवरधन धारी ।।
बलिहारी या बाँस-बंस की बंसी सी सुकुमारी ।
सदा रहति है कर जु स्याम के, नैकहुँ होति न न्यारी ।।
बलिहारी या गुंज-जाति की, परसी जगत उधारी ।
सुंदर हृदय रहत मोहन के, कबहुँ टरत न टारी ।।

बलिहारी कुंज-सैल-सरित, जिहिं रहत कलिंद-कुमारी।
निसि-दिन कान्ह-अंग-आलिंगन आपुनहूँ भई कारी।।
बलिहारी वृंदावन भूमिहिं, सुती भाग की सारी।
सूरदास-प्रभु नाँगे पाइनि, दिन प्रति गैयाँ चारी।।१६७९।

हम पर हेत किए रहिबौ।
या ब्रज कौ ब्यौहार सखा तुम, हरि सौं सब कहिबौ।।
देखे जात आपनी अँखियनि, या तन कौ दहिबौ।
तन की बिथा कहा कहौं तुमसौं, यह हमकौं सहिबौ।।
तब न कियौ प्रहार प्राननि कौ, फिरि फिरि क्यौं चहिबौ।
अब न देह जरि जाइ, सूर इनि नैननि कौ बहिबौ।।१६८०।

स्वामी, पहिली प्रेम सँभारौ।
ऊधौ, जाइ चरन गहि कहियै, जी तैं हित न बिसारौ।।
सो तुम मधुबन राज-काज गए, गोकुल हम न बिसारौ।
कमल-नयन सो चैन न देखौ, निति उठि गोधन चारौ।।
ये ब्रज-लोग सदा के सेवक, तिनसौं क्यौं न बिहारौ।
सूरदास-प्रभु एक बार मिलि, सकल बिरह-दुख टारौ।।१६८१।

कर-कंकन तैं भुज-टॉड़ भई।
मधुबन चलत स्याम मनमोहन आवन अवधि जु निकट दई।।
पूजत गौरि, मनावत संकर, बासर-निसि मोहिं गमन गई।
पाती लिखत बिरह तन ब्याकुल कागर है गयौ नीर मई।।
ऊधौ मुख के बचननि कहियौ, हरि की सुधि नित-प्रति जु भई।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, मानौ बंसी मीन दई।।१६८२।

ऊधौ जू, कहियौ तुम हरि सौं जाइ हमारे हिय कौ दरद।
दिन नहिं चैन, रैन नहिं सोवति पावक भई जुन्हाई सरद।।
जब तैं लै अक्रूर गए हैं, भई बिरह तन बाइ बरद।
काम प्रबल अति ऊधौ, लोचन भए जस पीत हरद।।

सदा प्रवीन निरंतर हरि पै, तातैं कहति हैं सीखि परद।
स्यामहिं रूप दरस तजि हरि कौ सूर मूरि बिनु हानि मुरद।

ऊधौ इक पतिया हमरी लीजै।
चरन लागि गोबिंद सौं कहियौ लिख्यौ हमारौ दीजै॥
हम तौ कौन रूप-गुन आगरि जिहिं गुपाल जू रीझैं।
निरखत नैन-नीर भरि आए, अरु कंचुकि पट भीजैं॥
तलफत रहति मीन चातक ज्यौं जल बिनु तृषा न छीजै।
अति व्याकुल अकुलाति बिरहिनी सुरति हमारी कीजै॥
अँखियाँ तरसी निहारति मधुबन हरि बिनु अब विष पीजै।
सूरदास प्रभु कबहिं मिलैंगे देखि-देखि मुख जीजै॥१६८६॥

हम मतिहीन कहा कछु जानैं ब्रजबासिनी अहीरि।
वे जु किसोर नवल नागर नट जदुकुल भूप की भीर॥
बचन की लाज सुरति करि राखौ,तुम आजि इतनी कहियौ।
भली भई जौ कूल पठायौ, इतनौ बोल निबहियौ॥
एक बार तौ मिलौ कृपा करि जौ अपनी ब्रज जानौ।
यहै रीति संसार सबनि की कहा रंक, कह रानौ॥
हम अनाथ तुम नाथ गुसा , राखौ क्यौ नहिं माई।
पर रिपु ब्रज पै आनि पुकारैं सूरदास अब सोई॥१६८७॥

मदनदहन सौं इतनी कहियौ।
जदपि ब्रज अनाथ करि डारयौ तदपि सुरति चित किन गहियौ।
तिनका-तोर करहु जनि हम सौं एक बास की लाज निबहियौ।
गुन औगुननि दोष नहिं कीजनु हम दासिनि की इतनी सहियौ॥
तुम बिनु प्रान, कहा हम करिहैं यह अवलंब न सुपनेहु लहियौ।
सूरदास पाती लिखि पठई, जहाँ प्रीति तहँ ओर निबहियौ॥१६८

ऊधौ, इतनी जाइ कहो।
सबै बिरहिनी पा लागति हैं, मथुरा कान्ह रहौ॥

मूरतिहूँ आनि आवहु हरि गोकुल, उपवति तरनि ज्यौं चंद ।
सुंदर-बदन स्याम कोमल तन ज्यौं मधिहैं नँदनंद ॥
मधुकर, मोर, प्रबल पिक, चातक, बन उपबन चढ़ि बोलत
मनहु सिंह की गरज सुनत गौ-बच्छ दुखित तन डोलत ॥
आसन असन बसन बिष, अहि-सम भूषन बिबिध बिहार
जित तित फिरत दुसह द्रुम-द्रुम प्रति धनुष धरे सत मार
तुम हौ संत सदा उपकारी, जानत हौ सब रीति ।
सूर स्याम कौ क्यौं बोलैं ब्रज, बिनु टारे यह ईति ॥१६०७।

बिनु गुपाल बैरिनि भईं कुंजैं ।
तब ये लता लगति तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं ॥
वृथा बहति जमुना खग बोलत वृथा कमल फूलनि, अलि-गुंजैं ।
पवन, पान, घनसार सजीवन दधि-सुत-किरनि भानु भईं भुंजैं ॥
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौं मग जोवत अँखियाँ भईं छुंजैं ॥१६०८

ऊधौ, इतनी कहियौ बात ।
मदन-गुपाल बिना या ब्रज मैं होन लगे उतपात ॥
तृनावर्त, बक, बकी, अघासुर, धेनुक फिरि फिरि जात ।
ब्योम, प्रलंब, कंस केसी इत, करत जिअनि की घात ॥
काली काल-रूप दिखियत है जमुना जलहिं अन्हात ।
बरुन पास फाँस्यौ चाहत है सुनियत अति मुरझात ॥
इन्द्र आपने परिहँस कारन बार बार अनखात ।
गोपी गाइ गोप गोसुत सब थर-थर काँपत गात ॥
अंचल फारनि जननि जसोदा पाग लिये कर तात ।
लागी बेगि गुहारि सूर-प्रभु गोकुल बैरिनि घात ॥१६०९।

ऊधौ इतनी कहियौ जाइ ।
अति कृस गात भई ये तुम बिनु परम दुखारी गाइ ॥

जल-समूह बरषति दोउ अँखियाँ, हूँकति लीन्हैं नाउँ ।
जहाँ जहाँ गो दोहन कीन्हौ, सूँघति सोई ठाउँ ॥
परति पछार खाइ छिन ही छिन, अति आतुर ह्वै दीन ।
मानहु सूर काढ़ि डारी है, बारि मध्य तैं मीन ।।१९८०।

अति मलीन वृषभानु-कुमारी ।
हरि-स्रम-जल भींज्यौ उर अंचल तिहिं लालच न धुवावति सारी ।
अध मुख रहति अनत नहिं चितवति ज्यौं गथ हारे थकित जुवारी ।
छूटे चिहुर, बदन कुम्हिलाने ज्यौं नलिनी हिमकर की मारी ॥
हरि-सँदेस सुनि सहज मृतक भइ, इक बिरहिनि, दूजे अलि जारी ।
सूरदास कैसैं करि जीवै ब्रज-बनिता बिन स्याम दुखारी ।।१९८१।

ऊधौ, तुमहिं स्याम की सौंहैं ।
मुख देखत कहियौ तुम उनसौं जिन-तिन लगी मदन की भौंहैं ॥
जो मन जोग जुगुति आराधै सो मन ही सबको उन सौं है ।
जैसें बमन तजत है पन्नग सो गति करी कान्ह हमकौं है ॥
हम बावरी ज्यौं न चलि जान्यौ ज्यौं गज चलत आपनी गौंहैं ।
सूरदास कपटी बिन माधव कुबिजा मिली कपट की सौंहैं ।।१९८२

मधुकर कहियौ सुनि सँदेसौ ।
समय पाइ समुझाइ स्याम सौं हम जिय बहुत अँदेसौ ॥
एक बार रस-रास हमारे मन मुरली जो हरे सौ ॥
तब बन बेनु बजाइ बुलाईं अब निरगुन उपदेसौ ॥
और बार बन जोग-जुगुति कौ, भेद न कह्यौ परे सौ ।
तब पतिब्रत तुम करन कहत अब उपरौ ज्ञान गहे सौ॥
और कहौं लौं हम कहैं ऊधौ अबलनि कौं दुख ऐसौ ।
सूरदास इन पर हम मरियत, कुबिजा के बस ऐसौ ।।१९८३।

अब अति चकितवंत मन मेरौ ।
आयौ हो निरगुन उपदेसन, भयौ सगुन कौ चेरौ ।

कहियौ जसुमति की आसीस।
जहाँ रहौ तहँ नंद-लाड़िले, जीवौ कोटि बरीस।
मुरली दई दौहनी घृत भरि, ऊधौ धरि लइ सीस।
यह घृत उनहीं सुरभिनि कौ, जे प्यारी जगदीस।
ऊधौ चलत सखा मिलि आए, ग्वाल-बाल दस-बीस।
अबकै यह ब्रज फेरि बसावहु, सूरदास के ईस ॥१७०३॥

( ऊधौ ) देखत ही जैसे ब्रजबासी।
लेत उसाँस नैन-जल पूरत, सुमिरि-सुमिरि अबिनासी।
भूलि न चढ़ति जसोदा जननी, मनौ भुवंगम-डासी।
छूटत नहीं मान क्यौं अटके, कठिन प्रेम की फाँसी।
आवत नहीं नंद-मंदिर मैं, भयौ फिरत बनबासी।
परम मलीन धेनु दुर्बल भईं, स्याम-बिरह की त्रासी।
गोपी-ग्वाल-सखा बालक सब कबहूँ न सुनियत हाँसी।
काहे दियौ सूर सुख मैं दुख, कपटी कान्ह बिलासी ॥१७०४

## ( ८ ) आश्वासन

ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ।
तब की कथा कृपा करि कहियै, हम सुनिहैं मन लाइ।
बाबा नंद जसोदा मैया मिले कौन हित आइ।
कबहुँ सुरति करत माखन की, किधौं रहे बिसराइ।
गोप-सखा दधि-भात खात बन, अरु चाखते चखाइ।
गाऊ-बच्छ मुरली सुनि उमहत, अब जु रहत किहिं भाइ॥
गोपिनि गृह-व्यवहार बिसारे, मुख सन्मुख सुख पाइ।
पलक ओट निमि पर अनखाती यह दुख कहाँ समाइ॥
एक सखी जनमैं जो राधा, लेति मनहिं जु चुराइ।
सूर स्याम यह बार-बार कहि, मनहीं मन पछिताइ।।१७०४॥

ब्रज के निकट, आइ फिरि आयौ।
गोपिनि-नैन-नीर-सरिता तैं पार न पहुँचन पायौ।
तुम्हरी सीख सु नाव बैठि कै, चाहत पार गयौ।
ज्ञान-ध्यान-व्रत नेम जोग कौ, सँग परिवार लयौ॥
हरि तट तैं चलि खात मैं कुबज बिरह-पवन झकझोरै।
सुरति-सुभट सौ मारि चातुरता, टूक-टूक करि तोरै॥
हौं हूँ बुधि चल्यौ या गहिरैं, देखिक पुहुमी छाई।
ना जानौं वह जोग बापुरौ, कहँ धौं गयौ गुमाई॥

आनत दुखी धाइ या ब्रज की, को तरिबे की पीर ।
सूर कृपा सु कहा कहौं उनकी परसी प्रेम की भीर ।१७०६।

तब मैं इहाँ तैं जु गयौ ।
तब ब्रजराज सकल गोपीजन, आगैं होइ लयौ ।
उतरे आइ नंद बाबा कैं सबहीं सीष दयौ ।
मेरी सौं, मौसौं साँची कहि, मैया कहा कह्यौ ?
बारंबार कुसल पूछी मोहिं सौं लै सुन्दरी नाम ।
ज्यौं जल सुधा बढ़ी चातक-चित कृष्ण-कृष्ण-बलराम ॥
सुंदर परम बिचित्र मनोहर, यह मुरली दै पाती ।
लई उठाइ सुख मानि सूर प्रभु, प्रीति जानि उर साखी ।१७०७

सुनियै ब्रज की दसा गुसाईं ।
रथ की धुजा, पीत-पट, भूषन देखत ही उठि धाईं ॥
जो तुम कही जोग की बातैं सो हम सबै बताईं ।
स्रवन मूँदि गुन-कर्म तुम्हारे, प्रेम-मगन मन गाईं ॥
औरौ कछू सँदेस सखी इक, कहत दूरि लौं आईं ।
हुतौ कछू हमहूँ सौं नातौ निपट कहा बिसराईं ॥
सूरदास प्रभु बन बिनोद करि जे तुम गाइ चराईं ।
ते गाईं अब ग्वाल न घेरत मानौ भईं पराईं ।१७०८।

ब्रज के बिरही लोग दुखारे ।
बिनु गोपाल ठगे से ठाढ़े अति दुर्बल तन कारे ॥
नंद-जसोदा मारग जोवति, निसि-दिन साँझ-सकारे ॥
चहुँ दिसि कान्ह-कान्ह कहि टेरति अँसुवन बहत पनारे ।
गोपी ग्वाल गाइ, गो-सुत सब, अतिहीं दीन बिचारे ।
सूरदास-प्रभु बिनु यौं देखियत, चंद बिना ज्यौं तारे ।१७०९

चित दै सुनौ स्याम प्रबीन ।
हरि तुम्हारैं बिरह राधा मैं जु देखी छीन ।

तज्यौ तेल-तमोल भूषन, अंग बसन मलीन।
कंकना कर बाम राख्यौ, डाँह भुज गहि लीन॥
जब सँदेसौ कहन सुंदरि गवन मो तन कीन।
छुटी छुद्रावलि, चरन अरुझी, गिरी बलहीन॥
कंठ बचन न बोलि आवै, हृदय परिहस भीन।
नैन जल भरि रोइ दीन्हौ, ग्रसित आपद दीन॥
उठी बहुरि सँभारि भट ज्यौं, परम साहस कीन।
सूर हरि के दरस कारन, रही आसा लीन॥१०१६॥

फिरि ब्रज बसौ नंदकुमार।
हरि तिहारे बिरह राधा भई तन जरि छार॥
बिनु अभूषन मैं जु देखी, परी है बिकरार।
पपई रट रटत भामिनि पीव पीव पुकार॥
सजल लोचन चुवत उनके, बहति जमुना-धार।
बिरह अगिनि प्रचंड उनकैं, जरे हाथ लुहार॥
दूसरी गति और नाहीं रटति बारंबार।
सूर प्रभु कौ नाम उनकैं, लकुट अंध अधार॥१०१७॥

तुम्हरे बिरह ब्रजनाथ राधिका नैननि-नदी बढ़ी।
लीने जात निमेष कूल दोउ, एते मान चढ़ी॥
चलि न सकत गोलक नौका सी, नील-पलक बल बोरति।
ऊरध उसाँस समीर तरंगनि तेज तिलक-तरु तोरति॥
कज्जल-कीच कुचील किए तट, अंचर अधर कपोल।
रहे पथिक जु जहाँ सु तहाँ थकि, हस्त चरन मुख-बोल॥
नाहीं और उपाय रमापति बिनु दरसन क्यौं जीजै।
आँसु-सलिल बूड़त सब गोकुल, सूर सु-कर गहि लीजै॥१०१८

ब्रज तें द्वै रितु पै न गई।
ग्रीषम अरु पावस प्रबीन हरि, तुम बिनु अधिक भई॥

ऊर्ध्व उसाँस समीर नैन घन, सब जल जोग जुरे ।
बपि प्रगट कीन्हे दुख दादुर, हुते जो दूरि दुरे ।
विषम वियोग जु बृष दिनकर सम, हिय अति उदौ करै ।
हरि पद बिमुख भए सुनि सूरज, को तन ताप हरै ।।१७११।।

कहाँ लौं कहिये ब्रज की बात ।
सुनहु स्याम, तुम बिनु उन लोगनि, जैसैं दिवस बिहात ।।
गोपी-ग्वाल-गाइ-गोसुत सब, मलिन बदन, कृस गात ।
परम दीन जनु सिसिर हेम हत, अंबुजगन बिनु पात ।।
जो कोउ आवत देखि दूरि तैं, उठि पूछत कुसलात ।
चलन न देत प्रेम आतुर उर, कर चरननि लपटात ।।
पिक-चातक बन बसन न पावत बायस बलि नहिं खात ।
सूर स्याम संदेसनि कैं डर, पथिक न उहिं मग जात ।।१७१२।।

कहि न परति हरि, ब्रज की बात ।
नर नारी पंछी द्रुम बेली दरसन कौं अकुलात ।।
अब तुम हे तब बनफल फलते, यहँ अब पुहुप न पात ।
कोकिल नाहिं कपोत कुलाहल करत नहीं उठि प्रात ।।
गो-मृग निकसि नवाइ नैन-मुख, अति दुख तृन नहिं खात ।
गोपी-ग्वाल उसाँस दुवासन बिरह ज्वाल अकुलात ।।
गोकुल की यह बिपति कहा कहौं, तुम बिनु हो जदुनाथ ।
सूरदास-स्वामी-दरसन को, करत सुरति दिन-रात ।।१७१३।।

दिन दस घोष चलहु गोपाल ।
गाइन की अवसेरि मिटावहु, मिलहु आपने ग्वाल ।।
नाचत नहीं मोर ता दिन तैं, रटत न बरषा-काल ।
मृग दूबरे तुम्हरे दरसन बिनु, सुनत न बेनु रसाल ।।
बृंदाबन हूयौ होत न भावत, देख्यौ स्याम तमाल ।
सूरदास मैया अनाथ है घर चलियै नँदलाल ।।१७१४।।

ऊधौ भली ज्ञान समुझायौ।
तुम मोसौं अब कहा कहत हौ, मैं कहि कहा पठायौ॥
कहनावत हौ बड़े चतुर पै उहाँ न कछु कहि आयौ।
सूरदास ब्रज-बासिनि कौ हित हरि हिय माहँ दुरायौ॥१७१६॥

मैं समुझायौ अति अपनी सौ।
तदपि उन्हैं परतीति न उपजी, सबै लख्यौ सपनौ सौ॥
कही तुम्हारी सबै कही मैं और कही कछु अपनी।
श्रवननि बचन सुनत भइ उनकैं, ज्यौं घृत नाएँ अगिनी॥
कोऊ कही बनाइ पचासक उनकी बात जु एक॥
धन्य धन्य ब्रजनारि बापुरी जिनकी और न टेक॥
देखत उमग्यौ प्रेम इहाँ कौ भरे रहे सब ऊधौ।
सूर स्याम हौं रह्यौ थक्यौ सौ ज्यौं मृग चौकत भूलौ॥१७१७॥

तातैं सुनहु हौ स्याम सुनाऊँ।
जुवतिनि सौं कहि कथा जोग की क्यौं न इतौ दुख पाऊँ।
हौं पचि एक कही निरगुन की, ताहू मैं अटकाऊँ।
वै उमड़ैं वारिधि के जल ज्यौं क्यौंहूँ थाह न पाऊँ॥
कौन कौन कौ उत्तर दीजै तातैं भग्यौ अगाऊँ।
वै मेरे सिर पटिया पारैं कंथा काहि उढ़ाऊँ॥
एक आँधरी, हिय की फूटी, दौरत पहिरि खराऊँ।
सूर सकल षटदरसन वै हौं बारहखरी पढ़ाऊँ॥१७१८॥

कहिबे मैं न कछू सक राखी।
बुधि-बिबेक-अनुमान आपनैं मुख आई सो भाषी॥
हौं मरि एक कही पहरक मैं वै छिन माहिं अनेक।
हारि मानि उठि चल्यौ दीन ह्वै, छाँड़ि आपनी टेक॥
हौं पठयौ कवहीं पैकावै, सठ मूरख जु अयानौ।
तुमहिं बूझ बहुतै बातनि की, उहाँ जाहु तौ जानौ॥

श्री मुख के सिखाए मंत्रादिक, वे सब भए कहानी।
एक होइ तौ उत्तर दीजै, सूर सु मठी उफनानी ।।१७२०।।

कोऊ सुनत न बात हमारी।
मानैं कहा लोग जादवपति, प्रगट प्रेम ब्रजनारी।।
कोउ कहति हरि गए कुंज-बन, सैन धाम मैं देत।
कोऊ कहति इंद्र बरषा तकि, गिरि गोबर्धन लेत।।
कोऊ कहति नाग काली सुनि, हरि गए जमुना तीर।
कोऊ कहति, अघासुर मारन, गए संग बलबीर।।
कोऊ कहत, ग्वाल-बालनि सँग खेलत बनहिं लुकाने।
सूर सुमिरि गुन नाथ तुम्हारे, कोऊ कह्यौ न माने ।।१७२१।।

माधौ जू, कहा कहौं उनकी गति।
देखत बनै कहत नहिं आवै अति प्रतीति तुम तैं रति।।
जब ए हौं पठ धाम रह्यौ ढिग, तहीं नहीं उनकी मति।
दासी कहौं, सबै एकै बुधि परबोधी नहिं मानति।।
तुम कृपालु करुनामय कहियत तातैं मिलत कहा क्षति।
सूरदास प्रभु सोई कीजै जातैं तुम पावहु पति ।।१७२२।।

कहत न बनै ब्रज की रीति।
कहा मौं सठ कौं पठायौ, देखि उनकी प्रीति।।
जुवति-बल्लभ कहत कहावत, करत सकल अनीति।
मोहिं तौ यह कठिन लागत क्यौं करौं परतीति।।
सुनी भी दै कान अपनी लोक-लोकनि प्रीति।
सूर प्रभु अपनी सचाई रही निगमनि जोति ।।१७२३।।

सबै ब्रज घर-घर एकै रीति।
ज्यौं कुकरैल गाड़े की सोनो त्यौं प्रभु तुम्हरी प्रीति।।
वै सब परम विचित्र सयानी जरु सबही जग प्रीति।
उनकौ ज्ञान सुनत हौं जठ भयौ, ज्यौं बारू की भीति।।

एकै गहन गह्यौ प्रन हठ करि, मेटि बेद-बिधि नीति।
गोप बेष भजि सूर स्याम पै, रही बिस्व बर जीति।१०२४।

ब्रज मैं एकै धरम रह्यौ।
स्रुति-सुमृति औ बेद-पुराननि सबै गोबिंद कह्यौ॥
बालक बृद्ध-तरुन अबलनि कौ, एक प्रेम निबह्यौ।
सूरदास-प्रभु छाँड़ि जमुन जल, हरि की सरन गह्यौ।१०२५।

तब तैं इन सबहिनि सचु पायौ।
जब तैं हरि संदेस तुम्हारौ सुनत ताँवरौ आयौ॥
फूले ब्याल दुरे ते प्रगटे, पवन पेट भरि खायौ।
खोले मृगनि चौक चरननि के, हुतौ जु जिय बिसरायौ॥
ऊँचे बैठि बिहँग सभा मैं सुक बनराइ कहायौ।
किलकि किलकि कुल सहित आपनैं, कोकिल मंगल गायौ॥
निकसि कंदरा तैं केहरि पूँछ मूड़ पर ल्यायौ।
गहबर तैं गजराज आइकै, अंगहिं गर्ब बढ़ायौ॥
अब जनि गहरु करहु हो मोहन जौ चाहत हौ ज्यायौ।
सूर बहुरि ह्वैहै राधा कौ सब बैरिनि कौ भायौ।१०२६।

माधौ जू सुनौ ब्रज कौ प्रेम।
साखि मैं षट मास देख्यौ, गोपिकनि कौ नेम॥
हृदय तैं नहिं टरत टारे, स्याम राम समेत।
आँसु-सलिल प्रबाह मानौ, अर्घ नैननि देत॥
चँवर अंचल, कुच कलस वर पानि-पदुम चढ़ाइ।
सुमिरि तुम्हारी प्रगट लीला-कर्म उठती गाइ॥
देह गेह सनेह अर्पन, कमल-लोचन ध्यान।
सूर उनकौ प्रेम देखैं फीकौ लागत ग्यान।१०२७।

माधौ जू, सुनियै ब्रज ब्यौहार।
मेरौ कह्यौ पवन कौ भुस भयौ, गावत नंदकुमार॥

एक ग्वाल गोसुत ह्वै रेंगत एक लकुट कर लेत ।
एक मंडली करि बैठारत छाक बाँटि इक देत ॥
एक ग्वाल नटवर बपु लीला एक कर्म गुन गावत ।
बहुत भाँति करि मैं समुझायौ, एक न उर मैं आवत ॥
निसि बासर येही ढँग सब ब्रज, दिन दिन नव तन प्रीति ।
सूर सकल फीकौ लागत है, देखत वह रस-रीति ॥४८२८

बातैं बूझति यौं बहरावति ।
सुनहु स्याम वै सखी सयानी पावस रितु राधेहिं न सुनावति ॥
घन देखत, गिरि कहति कुसल मति गरजन, गुहा सिंह समुझावति ।
नहिं दामिनि द्रुम-दवा सैल चढ़ि करि बयारि उलटी झर लावति ।
नाहिन मोर बकत पिक-दादुर, ग्वाल-मंडली खगनि खिलावति ।
नहिं नभ-धूरि झरत भरना जल परि परि बुंद उचटि इत आवति ।
कबहुँक प्रगट पपीहा बोलत कहि कुपच्छि करतारि बजावति ।
सूरदास-प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, सो बिरहिनि इतनी दुख पावति ।

माधौ जू मैं अतिही सचु पायौ ।
अपनी जानि सँदेस ब्याज करि, ब्रज जन मिलन पठायौ ॥
छमा करौ तौ करौ बीनती, उनहिं देखि जौ आयौ ।
श्रीमुख ग्यान-पंथ जो उचरयौ सो पै कछु न सुहायौ ॥
सकल निगम-सिद्धांत जन्म-क्रम स्यामा सहज सुनायौ ।
नहिं स्रुति, सेष, महेस, प्रजापति जो रस गोपिनि गायौ ॥
कटुक कथा लागी मोहिं मेरी वह रस-सिंधु उमहायौ ।
उत तुम देखे और भाँति मैं, सकल तृषा जु बुझायौ ॥
तुम्हरी अकथ कथा तुम जानौ, हम जन नाहिं बसायौ ।
सूर स्यामसुंदर यह सुनि कै, नैननि नीर बहायौ ॥४८३०

ब्रज मैं संभ्रम मोहिं भयौ ।
तुम्हरौ ग्यान सँदेसौ प्रभु जू, सबै जु भूलि गयौ ॥

तुमहीं सौं बालक, किसोर वपु मैं घर-घर प्रति देख्यौ।
मुरलीधर घनस्याम मनोहर, अद्भुत नटवर पेख्यौ॥
कौतुक रूप ग्वाल बृंदनि सँग, गाइ चरावन जात।
साँझ-प्रभातहिं गो दोहन मिस चोरी माखन खात॥
नँद-नंदन अनेक लीला करि, गोपिनि चित्त चुरावत।
यह सुख देखि जु नैन हमारे, अब न देख्यौ भावत॥
करि करुना उन दरसन दीन्हौ मैं पचि जोग बकी।
जनु मान्यौ षटमास सूर प्रभु देखत भूलि रही ।१७३१।

ब्रज मैं एक अचंभौ देख्यौ।
मोर मुकुट पीतांबर धारें तुम गाइनि सँग पेख्यौ॥
गोप-बाल सँग धावत तुम्हरैं तुम घर-घर प्रति जात।
दूध दहीउ मही लै डारत चोरी माखन खात॥
गोपी सब मिलि पकरति तुमकौं तुम छुड़ाइ कर भागत।
सूर-स्याम नित प्रति यह सोभा देखि-देखि मन लागत ।१७३२।

सुनि ऊधौ मोहिं नैंकु न बिसरत वै ब्रजबासी लोग।
हम उनकौ कछु भली न कीन्ही निसि दिन दियौ बियोग॥
अब बसुदेव देवकी मथुरा सकल राज सुख भोग।
तदपि मनहिं बसत बंसी बट बन, जमुना संजोग॥
वै उत रहत प्रेम अवलंबन इत तैं पठयौ जोग।
सूर उसाँस छाँड़ि भरि लोचन बढ़यौ बिरह-ज्वर-सोग ।१७३३।

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
वृंदावन-गोकुल-बन-उपबन सघन कुंज की छाहीं।
प्रात समय माता जसुमति अरु नंद देखि सुख पावत।
माखन रोटी दह्यौ सजायौ अति हित साथ खवावत।
गोपी-ग्वाल-बाल सँग खेलत, सब दिन हँसत सिरात।
सूरदास धनि-धनि ब्रजबासी, जिनसौं हित जदु-तात ।[illegible]

ऊधौ, मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंस-सुता की सुंदर कगरी अरु कुंजनि की छाँहीं॥
वै सुरभी, वै बच्छ दोहिनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल-बाल मिलि करत कुलाहल नाचत गहि-गहि बाहीं।
यह मथुरा कंचन की नगरी, मनि-मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की जिय उमगत, तन नाहीं।
अनगन भाँति करी बहु लीला जसुदा-नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि-कहि पछिताहीं।।१७३२।

जो जन ऊधौ मोहिं न बिसारत, तिहिं न बिसारौं एक घरी।
मेटौं जनम जनम के संकट, राखौं सुख आनंद भरी॥
जा मोहिं भजै, भजौं मैं ताकौं, यह परिमिति मेरे पाईं परी।
सदा सहाइ करौं वा जन की, गुप्त हुती सो प्रगट करी।
ज्यौं भारत भरुही के अंडा, राखे गज के घंट तरी।
सूरदास ताहि डर काकौ निसि वासर जो जपत हरी।।१७३३।

— ❀ —

## (ग) द्वारिका-चरित

बार सत्तरह जरासंध जब मथुरा पै चढ़ि आयौ।
गयौ सो सब दिन हारि, जात घर बहुत लजायौ।
तब खिस्याइ कै कालजवन अपनैं सँग ल्यायौ।
हरि जू कियौ बिचार, सिंधु-तट नगर बसायौ॥
उग्रसेन सब लै कुटुंब ता ठौर सिधायौ।
अमरपुरी तैं अधिक तहाँ सुख लोगनि पायौ॥
कालजवन मुचकुंदहिं सौं, हरि भसम करायौ।
बहुरि आइ सरमाइ अचल रिपु ताहि भगायौ॥
जरासंधहूँ हाँ तैं पुनि निज देस सिधायौ।
गए द्वारिका स्याम राम जस सूरज गायौ।।१७२७।

देखौ री सखि, आजु नैन भरि हरि के रथ की सोभा।
जोग, जज्ञ जप, तप तीरथ-ब्रत कीजत है जिहिं लोभा।
चारु चक्र मनि-खचित मनोहर, चंचल चँवर-पताका।
सीस छत्र ज्यौं ससि प्राची दिसि, उदय कियौ निसि राका॥
स्याम सरीर सुदेस पीत-पट, सीस मुकुट उर माल।
जनु दामिनि घन रवि तारागन, प्रगट एक ही काल॥
उपजति छबि अति अमर संत मिलि सुमिरत सब्द प्रसंस।
मानहु अमल कमल मंडल मैं कूजत हैं कल हंस॥

मदन गुपालहिं देखत ही भव, सब दुख-सोक बिसारे।
बैठे हैं सुफलकसुत गोकुल सैन जु जहाँ सिधारे॥
आनंदित नर-नारि नगर के, बदन बिमल जस गायौ।
सूरदास द्वारिका निवासी, प्राननाथ प्रभु पायौ।।१७३८॥

मनमोहन खेलत चौगान।
द्वारावती कोट कंचन मैं, रच्यौ रुचिर मैदान॥
आदवबीर बटाइ बटाई, हरि-बल इक-इक ओर।
निकसे सबै कुँवर असवारी उच्चैस्रवा के पोर॥
नीले सुरंग कुमैत स्याम, तेहिं पर दै सब मन रंग।
बरन अनेक भाँति-भाँतिनि के, चमकत चपला ढंग॥
मीन अराइ जु जगमगाइ रहि, देखत दृष्टि भ्रमाइ।
सुर, नर, मुनि कौतुक सब लागे, इकटक रहे लुभाइ॥
जबहीं हरि लै गोइ कुशावत, कंदुक कर मैं आइ।
तबही चौचक्यौ करि भावत हलधर हरि के पाँइ॥
कुँवर सबै घोरे फेरे पै दौरत नहिं गोपाल।
पछे भजत छल-बल करि जीते, सूरदास प्रभु लाल।।१७३९।

द्विज पाती दै कहियौ स्यामहिं।
कुंडिनपुर की कुँवरि रुकमिनी, जपति तिहारे नामहिं।
पालागौं, तुम जाहु द्वारिका नंद-नंदन के धामहिं।
कंचन चीर-पटंबर देहौं, कर कंकन जु इनामहिं॥
यह सिसुपाल असुचि अज्ञानी हरत पराई बामहिं।
सूर स्याम-प्रभु तुम्हरी भरोसौ लाज करौ किन नामहिं।।१७४०

पाती दीजौ स्याम सुजानहिं।
मुख संदेस सुनाइ दीजियौ, मोहिं दीन करि जानहिं॥
श्री हरि जोग रुकमिनी लिखित, बिनय सुनौ प्रभु कानहिं।
चाँपत वेगि आइयौ माधो, घरी, आव मेरे प्रानहिं॥

समुझत नाहिं वीन दुख कोउ, हरि सत चंपक-पानिहिं।
मनि मरकट काँ देत मूढ़ मति, मृग-मद रज मैं सानिहिं।
कब की दुख सहौं दरसन बिनु, मई मीन बिनु पानिहिं।
सूरदास प्रभु अधर-सुधाधर बरपि, देहु जिय दानहिं ॥१७४१॥

द्विज कहियौ जदुपति सौं बात।
बेद-बिरुद्ध होत कुँडिनपुर, हंस के अंस काग नियरात।
जनि हमरे अपराध बिचारहु कन्या लिख्यौ मेटि गुरु तात।
तन-आतमा समरप्यौ तुमकौं उपजि परी तातैं यह बात।
कृपा करहु, उठि बेगि चढ़हु रथ लगन समै आवहु परभात।
कन्न सिंह बलि भरी तुम्हारी लेवै कौं जंबुक अकुलात।
तातैं मैं द्विज बेगि पठायौ नेम धरम मरजादा जात।
सूरदास सिसुपाल पानि गहै पावक रचौं करौं अपघात ॥१७४२

सुनत हरि रुकमिनि कौ संदेस।
चढ़ि रथ चले बिप्र कौं सँग लै कियौ न गेह प्रवेस।
बारंबार बिप्र कौं पूछत, कुँवरि बचन सो सुनावत।
दीनबंधु करुनानिधान सुनि नैन नीर भरि आवत।
कह्यौ हलधर सौं आवहु दल लै मैं पहुँचत हौं धाइ।
सूरज प्रभु कुँडिनपुर आए बिप्र सौं जाइ सुनाइ ॥१७४३॥

देखि रूप सब नगर के लोग।
बारंबार असीस देत हैं, हरि बर बन्यौ रुकमिनी जोग।
कौ बिधि करि आनत चतुराई, और समुझ जग की सब रीति।
तौ अजहूँ ये राज-सुता कौ, लै जैहैं सिसुपालहिं जीति।
ये राजा कौतुक चलि आए, ते मुख निरखि कहत हैं बात।
परत न पलक चकोर चंद ज्यौं अवलोकत लोचन न अघात।
मनसा के दाता पूरन हैं, सुंदर बर बसुदेव कुमार।
सूरदास जाकैं जिय जैसी, हरि कीन्हौ तैसौ ब्यौहार ॥१७४४॥

सोच पोच निवारि री, चढि देखि, दीनदयाल आयौ।
निरखि लोचन बिपति-मोचन, कुँवरि फल आँचयौ सो पायौ।
सुमत भई अकुलाइ ठाढ़ी, ज्यौं मृतक मधु दै जिवायौ।
चढ़ि सदन वा बदन की छबि, निरखि दानव दव बुझायौ।
लै बुलाइ जु हिय लगायौ, हरषि मंगल चार गायौ।
नैन आरत, अरघ आँसू, मेँन तन-मन-धन चढ़ायौ।
जानिही अजनाथ जी की, कियौ सो जो तुम बतायौ।
श्रम-हरन पुनि परन-बस हरि, जानि हौं किहिँ लोग भायौ।
कृपासागर गुननि आगर, दासि दुख बिन ही बहायौ।
भक्त के बस भक्त-बत्सल, बिदुर साग सुसाग खायौ।
मुदित ह्वै गई गौरि मंदिर, गौरि कर बहु बिधि मनायौ।
प्रगट तिहिँ छिन सूर के प्रभु, बाँह गहि कियौ बाम भायौ।।१०५२।।

रुकमिनि देवी-मंदिर आई।
धूप-दीप पूजा-सामग्री, अली संग सब ल्याई।
रखवारी कौं बहुत महाभट, दीन्हे रुक्म पठाई।
ते सब सावधान भए चहुँदिसि, पंछी तहाँ न जाई।
कुँवरि पूजि गौरी, बिनती करी, बर देउ जादवराई।
मैं पूजा कीन्ही इहिं कारन, गौरी सुनि मुसकाई।
पाइ प्रसाद अंबिका-मंदिर रुकमिनि बाहर आई।
सुभट देखि सुंदरता मोहे, धरनि गिरे मुरझाई।
इहिं अंतर जादवपति आए, रुकमिनि रथ बैठाई।
सूरज प्रभु पहुँचे दल अपनैं, तब सुभटनि सुधि पाई।।१०५४।।

देखहिं धौरि द्वारिकावासी।
सुनत सक्र रिपु जीति, रुक्मिनी लै आए जदुपति अबिनासी।
नगर निकट रथ आनि अगमने, राजत रुधिर रूप रासी।
प्रभु पाहिं बैठी भो सोभित, जनु घन मैं चंद्रिका प्रकासी।

देत पसाउ, करत न्यौछावरि, बलि भुज-बंद तिलक करि दासी ।
नर-नारिनि के नैन निरखि भए, चातक रितु बरषा की प्यासी ॥
सजि आरती कलस लै धाईं, चीन्हि परति कुलबधू न दासी ।
देस-देस भयौ रहस सूर प्रभु, जरासंध सिसुपाल की हाँसी ।।१७४७।।

आवहु री मिलि मंगल गावहु ।
हरि रुकमिनी लिए आवत हैं यह आनँद जदुकुलहिं सुनावहु ॥
बाँधहु बंदनवार मनोहर कनक कलस भरि नीर धरावहु ।
दधि-अच्छत फल फूल परम रुचि आँगन चंदन चौक पुरावहु ॥
कदली-खंभ अनूप किसलय-दल सुरग सुमन लै मंडप छावहु ।
हरद-दूब केसर मग छिरकहु, भेरि मृदंग निसान बजावहु ॥
जरासंध सिसुपाल नृपति तैं जीते हैं उठि अरघ चढ़ावहु ।
बल समेत तन कुसल सूर प्रभु आए हैं, आरती बनावहु ।।१७४८।।

\+ × × ×

कहि न सकति सकुचति इक बात ।
कैतिक दूरि द्वारिका नगरी क्यौं नाहीं जदुपति कौ जात ॥
जाके सखा स्याम सुंदर से श्रीपति सकल सुखनि के दात ।
तिनहिं चलत तुम अपने आलस काहैं रत रहत कृस गात ॥
कहियत परम उदार कृपानिधि अंतरजामी त्रिभुवन तात ।
सर्बस देत रीझि भक्तनि कौं रुचि मानत तुलसी के पात ॥
छाँड़ौ सकुच बाँधि पट-तंदुल सूरज सबै चली उठि प्रात ।
लोचन सफल करौ पिय अपने हरि-मुख-कमल देखि बिकसात ॥

कंत, सिधारौ मधुसूदन पै सुनियत हैं, वै मीत तुम्हारे ।
बाल सखा अरु बिपति-बिभंजन, संकट-हरन मुकुंद, मुरारे ॥
और जु अतिसय प्रीति देखिये निज तन-मन की प्रीति बिसारे ।
सरबस रीझि देत भक्तनि कौं रंक-नृपति काहूँ न बिचारे ॥

यद्यपि तुम संतोष भजत हौ, दरसन सुख तैं होय जु न्यारे।
सूरदास प्रभु मिले सुदामा सब सुख दै पुनि अटल न टारे।।१०२०

सुदामा सोचत पंथ चले।
कैसैं करि मिलिहैं मोहिं श्रीपति भए सब सगुन भले।
पहुँच्यौ जाइ राजद्वारे पर, काहूँ नहिं अटकायौ।
इत-उत चितै धँस्यौ मंदिर मैं, हरि कौ दरसन पायौ।।
मन मैं अति आनंद कियौ हरि, बाल-मीत पहिचान।
धाए मिलन नगन पग आतुर, सूरज प्रभु भगवान।।१०२१।

दूरहिं तैं देख्यौ बलवीर।
अपने बालसखा जु सुदामा मलिन बसन अरु छीन सरीर।।
पौढ़े हे परजंक परम रुचि रुकमिनि चौंर डुलावति तीर।
उठि अकुलाइ अगमने लीन्हें, मिलत नैन भरि आए नीर।।
निज आसन बैठारि स्याम घन पूछी कुसलात, कह्यो मतिधीर।
ल्याए हौ सु देहु किन हमकौं कहा दुरावत लागे चीर।।
दरस परस हम भए सभागे रही न मन मैं एकौ पीर।
सूर सुमति तंदुल चाबत ही, कर पकरयौ कमला मई धीर।।१०२२।

ऐसी प्रीति की बलि जाउँ।
सिंहासन तजि चले मिलन कौं, सुनत सुदामा नाउँ।।
कर जोरे हरि बिप्र जानि कैं, हित करि चरन पखारे।
अंकमाल दै मिले सुदामा, अर्धासन बैठारे।।
अर्धंगी पूछति मोहन सौं, कैसे हितू तुम्हारे।
तन अति छीन मलीन देखियत, पाउँ कहाँ तैं धारे।।
संदीपन कै हम अरु सुदामा पढ़े एक चटसार।
सूर स्याम की कौन चलावै भक्तनि कृपा अपार।।१०२३।

गुरु-गृह हम जब बन कौं जात।
तोरत हमरे बदलैं लकरी, सहि सब दुख निज गात।।

एक दिवस घरघा भई मन मैं, रहि गए ताही ठौर।
इनकी कृपा भयौ नहिं मोहिं स्रम, गुरु आप भऐं मीर॥
सो दिन मोहिं बिसरत न सुदामा जो कीन्ही उपकार।
प्रति उपकार कहा करौं सूरज भाषत आप मुरार।१७२४।

सुदामा गृह कौं गमन कियौ।
प्रगट बिप्र कौं कछु न जनायौ, मन मैं बहुत दियौ।
वेई चीर, कुचील वहै बिधि मोकौं कहा भयौ।
धरिहौं कहा जाइ तिय आगैं भरि-भरि लेत हियौ॥
मी संतोष मानि मन ही मन, आदर बहुत लियौ।
सूरदास कीन्हे करनी बिनु, को पतियाइ बियौ।१७२५।

सुदामा मंदिर देखि डरयौ।
इहाँ हुती मेरी तनक मड़ैया को नृप आनि छरयौ॥
सीस धुनै दोऊ कर मींड़ै अंतर सोच परयौ।
ठाढ़ी तिया जु मारग जोवै ऊँचें चरन धरयौ॥
तोहिं आदरयौ त्रिभुवन कौ नायक अब क्यौं जात फिरयौ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, दारिद दुःख हरयौ।१७२६।

देखत भूलि रह्यौ द्विज दीन।
मन सुधि परै, समुझि नहिं आवै, मेरी गृह प्राचीन।
किधौं देवमाया मति मोह्यौ, किधौं अनत ही आयौ।
तनकु की छाँह गई मिथि माँगत बहुत जतन हीं छायौ।
चितवत चकित चहूँ दिसि ब्राह्मन अद्भुत लीला रीति।
ऊँचे भवन मनोहर द्वारे, मनि-कंचनि की भीति।
चली कंत यह सब हरि किरपा पाँउ धारिए धाम।
तब पहिचानि पैसे मंदिर मैं सूर सकल अभिराम।१७२७।

हौं फिरि बहुरि द्वारिका आयौ।
समुझि न परी मोहिं मारग की कोउ बूझै न बतायौ॥

कहिहैं स्याम सत्त इन लायौ धरी रौंक लखायौ।
तन की छाहैं मिटी निधि माँगत, कौन कुलनि सौं आयौ॥
सागर नहीं समीप कुमति कैं, बिधि कह आन भ्रमायौ।
चितवत चित्त बिचारत मेरौ मन सपनैं कर छायौ॥
सुर-तरु, दासी, दास, अस्व गज बिभौ बिनोद बनायौ।
सूरज-प्रभु नँद-सुवन मित्र हैं मच्छनि लाइ लड़ायौ।।१०५८।।

कहा भयौ मेरौ गृह माटी कौ।
हौं तौ गयौ गुपालहिं भेंटन, और खरच तंदुल गाँठी कौ।
बिनु ग्रीवा जल सुभग न आम्यौ दुवौ कर्मकांडिक काठी कौ।
पुनी बाँस सुत बुनौ खटोला काटु कौ पर्लेग कनक पाटी कौ॥
नूतन छीरोदक सुकती पै भूषन हुतौ न छोड़ माटी कौ।
सूरदास प्रभु कहा निहोरौ मानत रंक त्रास टाटी कौ।।१०५९।।

कैसैं मिले पिय स्याम सँघाती।
कहिये कंथ, कौन बिधि परसे बसन कुचील छीन अति गाती॥
उठिकै दैरि अंक भरि लीन्हौ, मिलि पूछी कुल-प्रत कुसलाती।
पट तैं छोरि लिए कर तंदुल, हरि समीप रुकमिनी जहाँ ती॥
देखि सकल तिय स्यामसुँदर-गुन, पट दै ओट सबै मुसक्याती।
सूरदास-प्रभु नवनिधि दीन्ही, देते और जो तिय न रिसाती।।१०६०।।

हरि बिनु कौन दरिद्र हरै।
कहत सुदामा सुनि सुंदरि, हरि मिलन न मन बिसरै॥
और मित्र ऐसी गति देखत, को पहिचान करै।
बिपति परैं कुसलात न बूझै, बात नहीं बिचरै॥
उठि भेटे हरि तंदुल लीन्हे, मौहिं न बचन फुरै।
सूरदास लखि दई कृपा करि, टारी निधि न टरै।।१०६१।।

## (ख) पुनर्मिलन

स्याम-राम के गुन नित गाऊँ, स्याम-राम ही सौं चित लाऊँ।
एक बार हरि निज पुर छए हलधर जी वृन्दावन गए।
रथ देखत लोगनि सुख पाए आन्यौ स्याम-राम दोउ आए।
नंद-जसोमति जब सुधि पाई, देह-गेह की सुरति भुलाई।
आगे ह्वै लैबे कौं धाए, हलधर दौरि चरन लपटाए।
बल कौं हित करि गरें लगाए दै असीस बोले या भाए।
तुम तौ भली करी बलराम कहाँ रहे मनमोहन स्याम।
देखौ कान्हर की निठुराई, कबहूँ पातीहूँ न पठाई।
आपु जाइ ह्वाँ राजा भए, हमकौं बिछुरि बहुत दुख दए।
कहौ, कबहुँ हमरी सुधि करत, हम तौ उन बिनु बहु दुख भरत"।
कहा करैं ह्वाँ कोउ न जात उन बिनु पल पल जुग सम जात।
हरि अंत आए सब ग्वार, कीन्हें सबनि जथा ब्योहार।
नमस्कार काहूँ कौ कियौ काहूँ कौं अंकम भरि लियौ।
पुनि गोपी जुरि मिलि सब आईं तिन हित साथ असीस सुनाईं।
हरि सुधि करि सुधि-बुधि बिसराईं तिनकौ प्रेम कह्यौ नहिं जाई।
कोउ कहै, हरि प्यारी बहु नार, तिनकौ बढ़्यौ बहुत परिवार।
उनकौं यह हम देति असीस, सुख सौं जीवैं कोटि बरीस।
कोउ कहै, हरि नाहीं हम चीन्हीं, बिनु चीन्हें उनकौ मन दीन्हौ।
निसि दिन रोवत हमैं बिहाइ, कहौ करैं कह कहा उपाइ।
कोउ कहै, इहाँ चरावत गाइ, राजा भए द्वारिका जाइ।

काहे कौं वे आवैं इहाँ भोग बिलास करत नित उहाँ।
कोउ कहै, हरि रिपु छै किए, अरु मित्रनि कौं बहु सुख दिए।
बिरह हमारी मारैं रहि गयौ, बिन हमकौं अतिहीं दुख दयौ।
कोउ कहै, ये हरि की रानी, कौन भाँति हरि कौं पतियानी।
कोउ चतुर नारि जो होइ, करै नहीं पतियारौ सोइ।
कोउ कहै, हम तुम कब पतियाई, उनकैं हित कुल-लाज गँवाई।
हरि कछु ऐसौ टोना जानत, सबकौ मन अपनैं बस आनत।
कोउ कहै, हरि हम सब बिसराई, कहा कहैं, कछु कह्यौ न जाई।
हरि कौं सुमिरि नयन जल ढारैं, नैंकु नहीं मन धीरज धारैं।
यह सुनि हलधर, धीरज धारि, कह्यौ आइहैं हरि निरधारि।
जब यह कहि सँदेस सुनायौ, तब कछु इक मन धीरज आयौ।
बस तहँ बहुरि रहे द्वै मास, ब्रज बासिनि सौं करत बिलास।
सब सौं मिलि पुनि निजपुर आए, सूरदास हरि के गुन गाए॥

× × ×

तब तैं बहुरि न कोऊ आयौ।
वहै जु एक बेर ऊधौ सौं, कछु सँदेसौ पायौ॥
छिन छिन सुरति करत जदुपति की, परत न मन समुझायौ।
गोकुलनाथ हमारैं हित लगि, लिखि हूँ क्यौं न पठायौ॥
यहै बिचार करौ धौं सजनी, इतौ गहरु क्यौं लायौ।
सूर स्याम अब बेगि न मिलहू मेघनि अंबर छायौ॥१०६१॥

बहुरौ हो ब्रज बात न चाली।
वहै जु एक बेर ऊधौ कर कमल नयन पाती दै चाली॥
पथिक, तिहारे पा लागति हौं, मथुरा जाहु जहाँ बनमाली।
कहियौ प्रगट पुकारि द्वार ह्वै, कालिंदी फिरि आयौ काली॥
तब वह कृपा हुती नँदनंदन रुचि रुचि रसिक प्रीति प्रतिपाली।
माँगत कुसुम देखि ऊँचे द्रुम, लेत उछंग गोद करि आली॥

जब यह सुरति होति उर अंतर लागति काम बान की भाली ।
सूरदास-प्रभु प्रीति पुरातन सुमिरत, दुसह सूल उर साली ॥१७६४

तुम्हरे देस कागद-मसि खूटी ।
भूख प्यास अरु नींद गई सब बिरह लयौ तन लूटी ।
दादुर मोर पपीहा बोलै, अवधि भई सब झूठी ।
पाछैं आइ तुम कहा करौगे जब तन जैहै छूटी ।
राधा कहति सँदेस स्याम सौं, भई प्रीति की टूटि ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु सखी करति हैं कूटि ॥१७६५

पथिक कह्यौ ब्रज आइ सुने हरि जात सिंधु-तट ।
सुनि सब अंग भए सिथिल गयौ नहिं बज्र हियौ फट ।
नर-नारी घर-घरनि सबै यह करतिं बिचारा ।
मिलिहैं कैसी भाँति हमैं अब नंद-कुमारा ।
निकट बसत हुती आस कियौ अब दूरि पयाना ।
बिना कृपा-भगवान उपाइ न सूरज आना ॥१७६६॥

हमारे हरि बसन कहत हैं दूरि ।
मधुबन बसत आस हुती सजनी अब तौ मरिहैं झूरि ।
कीन्हैं कह्यौ, कौन सुनि आई किहिं रस रथ की धूरि ।
संगहिं सबै चली माधौ के, नातरु मरतु बिसूरि ।
दच्छिन दिसि इक नगर द्वारिका सिंधु रह्यौ भरिपूरि ।
सूरदास अबला क्यौं जीवैं जात सजीवन मूरि ॥१७६७॥

हम तैं कमल नयन भए दूरि ।
बसन कहत मधुबनहु तैं सजनी, इन नयननि की मूरि ।
चलत कान्ह सब देखन लागीं, उड़त न रथ की धूरि ।
सूरदास प्रभु उतर न आवै, नयन रहे जल पूरि ॥१७६८॥

नैना भए अनाथ हमारे ।
मदनगुपाल यहाँ

वे समुद्र, हम मीन बापुरी कैसैं जीवैं न्यारे।
हम चातक, वे जलद स्याम-घन, पियतिं सुधा-रस प्यारे।
मधुरा बसत आस दरसन की जोइ नैन मग हारे।
सूरदास हमकौं उलटी बिधि, मृतकहुँ तैं पुनि मारे ॥१०६९

सखी दूर तैं को आवै री।
जासौं कहि संदेस पठाऊँ, सो कहि कहन कहा पावै री।
सिंधु-कूल इक देस बसत है, देख्यौ-सुन्यौ न मन धावै री।
तहँ नव नगर जु रच्यौ नंद-सुत द्वारावति पुरी कहावै री।
कंचन के बहु भवन मनोहर, रंक तहाँ नहिं तन छावै री।
ह्याँ के बासी लोगनि कौं, क्यौं ब्रज कौ बसिबौ मन भावै री।
बहु बिधि करति बिलाप बिरहिनी बहुत उपावनि चित लावैं री।
कहा करौं, कहँ जाउँ सूर प्रभु को हरि पिय पै पहुँचावै री ॥१०७०

री कैसैं के दरसन पाऊँ।
सुनहु पथिक, उहिं देस द्वारिका जौ तुम्हरैं सँग आऊँ।
बाहर भीर बहुत भूपनि की बूझत बदन दुराऊँ।
भीतर भीर भोग भामिनि की, तिहिं ठाँ काहि पठाऊँ।
बुधि-बल जुक्ति-जतन करि उहिं पुर हरि पिय पै पहुँचाऊँ।
अब बन बास निसि कुंज रसिक बिनु, कौनैं दसा सुनाऊँ।
स्रम कै सूर जाउँ प्रभु पासहिं मन मैं भलैं मनाऊँ।
नव-किसोर मुख मुरलि बिना इन नैननि कहा दिखाऊँ ॥१०७१

तातैं अति मरियति अपसोसनि।
मथुरा हू तैं गए सखी री, अब हरि कारे कोसनि।
यह अचरज सु बड़ौ मेरैं जिय, यह छाँड़नि, वह पोषनि।
निपट निकाम जानि हम छाँड़ी, ज्यौं कमान बिन गोसनि।
इक तौ हरि-दरसन बिनु मरियति, अरु कुबिजा के ठोसनि।
सूर सुमति कहा उपजी या, दूरि होति करि कोसनि ॥१०७२॥

माई री, कैसैं बनै हरि कौ ब्रज आवन।
कहियत है, मधुबन तैं सजनी, कियौ स्याम कहुँ अनत गवन॥
अगम जु पंथ दूरि दच्छिन दिसि तहँ सुनियत सखि, सिंधु-स्रवन।
सब हरि हौं परिवार सहित गए, मग मैं मारयौ कालजवन॥
निकट बसत मतिहीन भई हम मिलिहुँ न आई सुत्यागि भवन।
सूरदास तरसत मन निसि-दिन जदुपति सौं लै आइ कवन।१७७३

सुनियत कहुँ द्वारिका बसाई।
दच्छिन दिसा छीर सागर कैं, कंचन कोट, गोमती खाई॥
पंथ न चलै, सँदेस न आवै इती दूरि नर कोउ न जाई।
सत साजन मथुरा तैं कहियत यह सुधि एक पथिक पै पाई॥
सब ब्रज दुखी नंद जसुदाहू इकटक स्याम-राम लव लाई।
सूरदास प्रभु के दरसन बिनु भई बिरहिनि ब्रज बाम दुहाई १७७४

बीर बटाऊ, पाती लीजौ।
जब तुम जाहु द्वारिका नगरी, हमरे रमास गुपालहिं दीजौ॥
रंगभूमि रमनीक मधुपुरी, रजधानी ब्रज की सुधि कीजौ।
पार समुद्र छाँड़ि जिन आवत, निरमल जल जमुना को पीजौ।
या गोकुल की सकल ग्वालिनी, देति असीस बहुत जुग जीजौ।
सूरदास प्रभु हमरे कारनै, नंद नदन के पाँ परीजौ।१७७५।

स्याम बिनु भई सरद निसि भारी।
हमैं छाँड़ि प्रभु गए द्वारिका, ब्रज की भूमि बिसारी।
निरमल जल जमुना को छाँड़यौ, सेवत समुद्र जल खारी।
कहियौ जाइ पथिक, जैसैं आगे परननि की पनिहारी।
अबला कहा कौन की जानैं, ब्रजबासिनि जु बिचारी।
सूरदास प्रभु सुन्दर दरस की रटति राधिका प्यारी।१७७६।

× × × ×

रुक्मिनि बूझति है गोपालहिं।
कही बात अपने गोकुल की, [illegible]

जब तुम गाइ चरावन जाते उर धरते बनमालहिं।
कहा देखि रीझे राधा सौं, सुंदर नैन बिसालहिं॥
इतनी सुनत नैन भरि आए प्रेम बिबस नँदलालहिं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, घोष बात जनि चालहिं।।१७७७।

रुकमिनि मोहिं निमेष न बिसरत वे ब्रजबासी लोग।
हम उनसौं कछु भली न कीन्ही, निसि दिन मरत बियोग।
जदपि कनक-मनि रची द्वारिका, बिषय सकल संभोग।
तदपि मन जु हरत बंसी-बट, ललिता कैं संजोग।
मैं ऊधौ पठयौ गोपिनि पै, दैन सँदेसौ जोग।
सूरदास देखत उनकी गति किहिं उपदेसै सोग।१७७८।

रुकमिनि, मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
वह क्रीड़ा, वह केलि जमुन-तट सघन कदम की छाहीं।
गोप-बधुनि की भुजा कंध धरि, बिहरत कुंजनि माहीं।
और बिनोद कहाँ लगि बरनौं, बरनत बरनि न जाहीं॥
जदपि सुख-निधान द्वारावति गोकुल के सम नाहीं।
सूरदास घन-स्याम मनोहर, सुमिरि सुमिरि पछिताहीं।।१७७९।

रुकमिनि, चलौ जन्म भूमि जाहिं।
जदपि तुम्हरौ बिभव द्वारिका, मथुरा कैं सम नाहिं॥
जमुना कैं तट गाइ चरावत, अमृत जल अँचवाहिं।
कुंज-केलि अरु भुजा कंध धरि, सीतल द्रुम की छाहिं॥
सरस सुगंध मंद मलयानिल, बिहरत कुंजन माहिं।
जो क्रीड़ा श्री बृंदाबन मैं तिहूँ लोक मैं नाहिं॥
सुरभी ग्वाल नंद अरु जसुमति मम चित तैं न टराहिं।
सूरदास प्रभु चतुर सिरोमनि, तिनकी सेव कराहिं।।१७८०।

सुनि सतभामा, भौंह सिकारी।
जब जब मोहिं घोष सुधि आवति, नैननि बहत पनारी॥

वा जमुना, वै सखा हमारे नित नव केलि-बिहारी।
वृन्दावन की गुल्म-लता हैं, मन-मधुकर की प्यारी।
वीथी, कुञ्ज, गोप के मंदिर, उपमा कहीं कहा री।
मानौं अमर सरोवर वासे, जमुना-सी महतारी।
माखन खान फेन दुहि पीवन जीवन सुपति बिहारी।
सूरदास प्रभु उनहिं मिले तें मैं सुरपुरी बिसारी ॥१७८१॥

ब्रज-बासिनि कौ दरस हृदय मैं राखि मुरारी।
सब यादव सौं कह्यौ बैठि कै सभा मँझारी।
बड़ौ परब रवि-ग्रहन, कहा कहौं तासु बड़ाई।
चलौ सकल कुरुखेत तहाँ मिलि न्हैयै आई।
तात, मात निज नारि लिए हरि जू सब संगा।
चले नगर के लोग साजि रथ, तुरग सुरंगा।
कुरुक्षेत्र मैं आइ दियौ इक दूत पठाई।
नंद जसोमति गोपि-ग्वाल सब सूर बुलाई ॥१७८२॥

पायस गदगदाय सुनि सुंदरि, यानी विमल पूर्व दिसि बोली।
आजु मिलावा होइ स्याम कौ तू सुनि सखी राधिका भोली।
कुच-भुज-नैन अधर फरकत हैं, बिनहिं बात अंचल-ध्वज डोली।
सोच निवारि, करौ मन आनँद मानौ भाग दसा विधि खोली।
सुनत बात सजनी के मुख की पुलकित प्रेम तरकि गइ चोली।
सूरदास अभिलाष नंदसुत हरषी सुभग नारि अनमोली ॥१७८३॥

माधव आवनहार भए।
अंचल उड़त मन होत गहगहौ, फरकत नैन खए।
पेई देखि सोचि जिय अपनें परगट सगुन ठए।
रितु बसंत फूली मन-बेली, उलहे पात नए।
अपनी अपनी अवधि जानि कै, सबनि सिंगार ठए।
सूरदास-प्रभु मिलौ कृपा करि, अवधि-आस पुजए ॥१७८४॥

हौं इहाँ तेरेहिं कारन आयौ।
तेरी सौं सुनि जननि जसोदा, मोहिं गोपाल पठायौ।
कहा भयौ जो लोग कहत हैं, देवकि माता जायौ।
खान पान-परिधान सबै सुख तैंही लाड़-लड़ायौ।
इतौ हमारौ राज द्वारिका मों जी कछू न भायौ।
जब-जब सुरति होति उहिं हित की, बिछुरि बच्छ ज्यौं धायौ।
अब हरि कुरुच्छेत्र मैं आए सो मैं तुम्हैं सुनायौ।
सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु, हित करि उहाँ बुलायौ ॥१८८६

राधा नैन नीर भरि आए।
कब धौं मिलैं स्याममुंदर सखि, जदपि निकट हैं आए।
कहा करौं किहिं भाँति जाउँ अब पंख नहीं तन पाए।
सूर स्याममुंदर घन दरसै तन के ताप नसाए ॥१८८६॥

अब हरि आइहैं जनि सोचै।
सुनु बिधुमुखी, बारि नैननि तैं अब तू काहैं मोचै।
लै लेखनि-मसि लिखि अपने करिसहिं, छाँड़ि सँकोचै।
सूर सु बिरह अनाथ करत कत प्रबल मदन रिपु पोचै ॥१८८७

पथिक, कहियौ हरि सौं यह बात।
भक्त-बछल है बिरद तुम्हारौ, हम सब किए सनाथ।
मन हमारे संग तिहारैं, हमहूँ हैं अब आवत।
सूर स्याम सौं कहत सँदेसौ नैननि नीर बहावत ॥१८८८॥

नंद, जसोदा, सब ब्रज-बासी।
अपने-अपने सकट साजिकै, मिलन चले अबिनासी।
कोउ गावत, कोउ बेनु बजावत, कोउ उतावल धावत।
हरि दरसन आसा के कारन, बिबिध मुदित सब धावत
दरसन कियौ आइ हरि जू की कहत सपन कै साँची।
प्रेम-मगन कछु सुधि न रही अँग, रहे स्याम-रँग राँची।

जासौं जैसी भाँति चाहिए, ताहि मिले त्यौं धाइ।
देस देस के नृपति देखि यह प्रीति रहे अरगाइ॥
उमँग्यौ प्रेम समुद्र दुहूँ दिसि परिमिति कही न जाइ।
सूरदास यह सुख सो जानै जाकै हृदय समाइ।१५८९।

तेरौ जीवन-मूरि मिलहि किन माई।
महाराज जदुनाथ कहावत तबहिं हुते सिसु कुँवर कन्हाई॥
पानि परे भुज धरे कमल मुख पेखत पूरब कथा चलाई।
परम उदार पानि अवलोकत दीन जानि कछु कहत न आई॥
फिरि फिरि अब सनमुख ही चितवति, प्रीति सकुच जानी जदुराई।
अब हँसि भेंटु करि मोहिं निज-जन, बाम बिहारी मंद दुराइ॥
रोम पुलक गद-गद तन, सीतल, जलधारा नैननि बरषाई।
मिले सु तात, मात, बांधव सब कुसल कुसल करि प्रस्न चलाई॥
आसन देइ बहुत करी बिनती, सुत बोसौं तब बुधि हिराई।
सूरदास प्रभु कृपा करी अब, चितहिं धरे पुनि करी बड़ाई।१५९०।

माधव या लगि है जग जीजत।
जातैं हरि सौं प्रेम पुरातन बहुरि नयौ करि लीजत॥
कहँ हौं तुम जदुनाथ सिंधु तट, कहँ हम गोकुल बासी।
वह बियोग, यह मिलन कहाँ अब, काल चाल औरासी॥
कहँ रबि राहु कहाँ यह अवसर बिधि संजोग बनायौ।
उहिं उपकार आजु इन नैननि हरि दरसन सचु पायौ॥
तब अरु अब यह कठिन परम अति निमिषहुँ पीर न जानी।
सूरदास प्रभु जानि आपने सबहिनि सौं रुचि मानी।१५९१।

हरि सौं बूझति रुकमिनि, इनमैं को बृषभानुकिसोरी।
बारक हमैं दिखावहु अपने बालापन की जोरी॥
जाकौ हेत निरंतर लीन्हे, डोलत ब्रज की खोरी।
अति आतुर ह्वै गाइ दुहावन जाते पर घर चोरी॥

हौं इहाँ तेरेहिं कारन आयौ ।
तेरी सौं सुनि जननि जसोदा, मोहिं गोपाल पठायौ।
कहा भयौ जौ लोग कहत हैं, देवकि माता जायौ।
खान पान-परिधान सबै सुख तैंही लाड़-लड़ायौ।
इतौ हमारौ राज द्वारिका, मो जी कछू न भायौ।
जब-जब सुरति होति वहिं हित की बिछुरि बच्छ ज्यौं धायौ।
अब हरि कुरुच्छेत्र मैं आए सो मैं तुम्हें सुनायौ।
सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु हित करि वहाँ बुलायौ ॥१८८५॥

राधा नैन नीर भरि आए।
कब धौं मिलैं स्यामसुंदर सखि जदपि निकट हैं आए।
कहा करौं किहिं भाँति जाहुँ अब पंख नहीं तन पाए।
सूर स्यामसुंदर घन दरसैं, तन के ताप नसाए ॥१८८६॥

अब हरि आइहैं जनि सोचै।
सुनु बिधुमुखी बारि नैननि तैं अब तू काहैं मोचै।
लै लेखनि-मसि, लिखि अपने संदेसहिं, छाँड़ि सँकोचै।
सूर सु बिरह जनाउ करत कत प्रबल मदन रिपु पोचै ॥१८८७॥

पथिक, कहियौ हरि सौं यह बात।
भक्त-बछल है बिरद तुम्हारौ, हम सब किए सनाथ।
प्रान हमारे संग तिहारैं, हमहूँ हैं अब आवत।
सूर स्याम सौं कहत सँदेसौ, नैननि नीर बहावत ॥१८८८॥

नंद, जसोदा, सब ब्रज-बासी।
अपने-अपने सकट साजि कै, मिलन चले अबिनासी।
कोउ गावत, कोउ बेनु बजावत, कोउ उतावल धावत।
हरि दरसन आसा के कारन, बिबिध मुदित सब आवत।
दरसन कियौ आइ हरि जू कौ कहत सपन कै साँची।
प्रेम-मगन कछु सुधि न रही अँग, रहे स्याम-रँग राँची।

रचते सेज स्वकर सुमननि की नव-पल्लव पुट तोरी।
बिन देखैं ताके मन तरसै छिन बीतै जुग कोरी॥
सूर सोच सुख करि भरि लोचन अंतर प्रीति न थोरी।
सिथिल गात मुख बचन फुरत नहिं ह्वै जु गई मति भोरी॥४६९२

बूझति है रुकुमिनि पिय इनमैं को वृषभानु-किसोरी।
नैकु हमैं दिखरावहु अपनी बालापन की जोरी॥
परम चतुर जिन कीन्हे मोहन, अल्प बैस ही थोरी।
बारे तैं जिहिं यहै पढ़ायौ बुधि बल कल बिधि चोरी॥
जाके गुन गनि ग्रंथित-माला, कबहुँ न उर तैं छोरी।
मनसा सुमिरन, रूप ध्यान उर, दृष्टि न इत-उत मोरी॥
वह लखि जुवति बृंद मैं ठाढ़ी नील बसन तन गोरी।
सूरदास मेरौ मन वाकी चितवनि बंक हर्यौ री॥४६९३

हरि जू इते दिन कहाँ लगाए।
तबहिं अवधि मैं कहत न समुझी गनत अचानक आए॥
भली करी जु बहुरि इन नैननि, सुंदर दरस दिखाए।
जानी कृपा राज काजहु हम निमिष नहीं बिसराए॥
बिरहिनि बिकल बिलोकि सूर प्रभु धाइ हृदै करि लाए।
कछु इक सारथि सौं कहि पठयौ, रथ के तुरँग छुराए॥४६९४

हरि जू वै सुख बहुरि कहाँ।
जदपि नैन निरखत वह मूरति फिरि मन जात तहाँ॥
मुख मुरली सिर मोर पखौवा, गर घुँघचिनि कौ हार।
आगैं धेनु रेनु तन मंडित, तिरछी चितवनि चार॥
राति दिवस सब सखा लिए सँग, हँसि मिलि खेलत खात।
सूरदास प्रभु इत उत चितवत कहि न सकत कछु बात॥४६९५

रुकमिनि राधा ऐसैं भेंटी।
जैसैं बहुत दिननि की बिछुरी एक बाप की बेटी॥

एक सुभाव एक वय दोऊ दोऊ हरि की प्यारी।
एक प्रान मन एक दुहुनि कौ तन करि दीसति न्यारी॥
निज मंदिर लै गई रुकमिनी, पहुनाई बिधि ठानी।
सूरदास प्रभु तहँ पग धारे, जहँ दोऊ ठकुरानी ॥१७६६।

राधा माधव भेंट भई।
राधा माधव, माधव राधा, कीट भृंग गति ह्वै जु गई॥
माधव राधा के रँग राँचे राधा माधव रंग रई।
माधव राधा प्रीति निरंतर, रसना करि सो कहि न गई॥
बिहँसि कह्यौ, हम तुम नहिं अंतर यह कहिकै उन ब्रज पठई।
सूरदास प्रभु राधा माधव ब्रज-बिहार नित नई नई ॥१७६७।

करत कछु नाहीं आजु बनी।
हरि आए, हौं रही ठगी सी जैसैं चित्र धनी॥
आसन हरषि हृदय नहिं दीन्हौ कमल कुटी अपनी।
न्यौछावर उर, अरघ न नैननि, जलधारा जु बनी॥
कंचुकि तैं कुच कलस प्रगट ह्वै टूटि न तरक तनी।
अब उपजी अति लाज मनहिं मन समुझत निज करनी॥
मुख देखत न्यारी सी रहि गई बिनु बुधि मति सजनी।
तदपि सूर मेरी यह जड़ता, मंगल माहिं गनी ॥१७६८।

ब्रजबासिनि सौं कह्यौ सबनि तैं ब्रज-हित मेरैं।
तुमसौं नाहीं दूरि रहत हौं निपटहिं नेरैं॥
भजै मोहिं जो कोइ, भजौं मैं तेहिं ता भाई।
मुकुर माहिं ज्यौं रूप आपनैं सम दरसाई॥
यह कहि कै समुझे सकल, नैन रहे जल छाइ।
सूर स्याम कौ प्रेम कछु, मो पै कह्यौ न जाइ ॥१७६९।

सखिहिनि तैं हित है मन मेरौ।
जनम जनम सुनि सुबल सुदामा निबहौं यह प्रन मेरौ॥

ब्रह्मादिक इंद्रादिक तेऊ, जानत बल सब केरौ।
एकहिं साँस उसाँस त्रास तजि, चलतै तजि निज खेरौ॥
कहा भयौ जो देस द्वारिका कीन्हौं दूरि बसेरौ।
आपुन ही या ब्रज के कारन, करिहौं फिरि-फिरि फेरौ॥
इहाँ-उहाँ हम फिरत साधु हित करत असाधु अहेरौ।
सूर हृदय तैं टरत न गोकुल अंग छुवत हौं तेरौ।।१८००।

हम तौ इतनें ही सचु पायौ।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, बहुरौ दरस दिखायौ॥
कहा भयौ जौ लोग कहत हैं कान्ह द्वारिका आयौ।
सुनिकै बिरह दसा गोकुल की अति आतुर ह्वै धायौ॥
रजक-धेनु-गज कंस मारि कै, कीन्हौ जन कौ भायौ।
महाराज ह्वै मातु-पिता मिलि तऊ न ब्रज बिसरायौ॥
गोपी-गोपउपनंद चले मिलि, प्रेम-समुद्र बढ़ायौ।
अपने बाल-गुपाल निरखि मुख, नैननि नीर बहायौ॥
जद्यपि हम सकुचे जिय अपनैं, हरि हित अधिक जनायौ।
वैसेइ सूर बहुरि नँदनंदन, घर घर माखन खायौ।।१८०१।

— (*) —

# पदानुक्रमणिका


अ

अँखियनि तब तैं बैर परयौ १२५२
अँखियाँ करति हैं अति १११७
अँखियाँ हरि कैं हाथ १२५१
अँखियाँ हरि दरसन की २५१८
अंग-अभूषन जननि उतारति ४०४
( कहौं कहा ) अँगनि की ६४१
अँचल चंचल स्याम गह्यौ १ ६६
अँत के दिन कौं हैं घनस्याम ४४
अचंभौ इन लोगनि कौ आवै ११७
अचानक आइ गए तहँ ७५६
अजहूँ माँगि लेहु दधि देहैं ११५६
अजहुँ सावधान किन होहि १४८
अति प्रभातहिं स्याम कौ १८२
अजौध्या बाजति आजु बधाई १८२
अति आनँद ब्रजबासी लोग ५१४
अति कोमल तनु धरयौ ५ १
अति कोमल ब्रजराम १२६
अति तप करति घोष-कुमारि १ २७
अति तप देखि कृपा हरि १ १७
अति न हठ कीजै री मुनि ६ २
अति बिपरीत तृनावर्त आयौ २८२
अति व्याकुल भईं गोपिका १०८४
अति मलीन वृषभानु ११६१
अति रस-लंपट मेरे नैन १११५
अति सुंदर नँद महर-ढुटौना ५२१
अति सुख कौसिल्या उठि २५४
अतिहिं अरुन हरि नैन ९ ६
अतिहिं करत तुम स्याम ११२७
अद्भुत एक चितयौ हौं ५८२
अद्भुत एक अनूपम बाग ८४१
अद्भुत राम-नाम के अंक ५१
अधर रस मुरली लूटकरावति ९९१
अधर-रस मुरली लूटन लागी ६६
अनत सुत गोरस कौं कत १६
(मोहन) अपनी गैयाँ घरि १७ १
अपने सगुन गोपालहिं माई १११४
अपने स्वारथ के सब कोऊ १६६
अपनैं जन मैं बहुत करी ६५
अपनो गाउँ लेउ नँदरानी १८८
अपनो भेद तुम्हैं नहिं कैहैं ७२६
अपुनपौ आपुन ही बिसरयौ १४५
अपुनपौ आपुन ही मैं पायौ १४९
अपुने कौं को न आदर देइ १६६

अब अति चकितवंत मन १६६४
अबकैं नाथ मोहिं उधारि ५६
अब कैं राखि लेहु गोपाल ५१६
अब कैं राखि लेहु भगवान ५८
अब कैसैं दूजैं हाथ बिकाउँ ७१४
अब कैसैं पैयत सुख माँगि १ १४
अब घर काहू कैं जनि जाहु ४२४
अब आनी पिय बात तुम्हारी ८०
अब तुम कही हमारी मानौ १ ५१
अब तुम नाम गहौ मन नागर ५४
अब तौ प्रकट भई जग ११६६
अब तौ यहै बात मनमानी ५१
अब नँद गाइ लेहु सँभारि १२७६
अब बरषा कौ आगम ११६१
अब मुरली पति करौ न ९८६
अब मैं जानी देह बुढ़ानी ११६
अब मैं तोसौं कहा दुराउँ ८११
अब मैं नाच्यौ बहुत गोपाल ८१
अब मोहिं मज्जत क्यौं न ९७
अब यह बरषौ बीति गई १४१४
अब या तनहिं राखि कहा १४९४
अब वै झूठहु बोलत लोग १०८
अब वो ही लागे दिन ११५१
अब वे बातैं ह्याँ रहीं १२८२
अब वे बिपदा हू न रहीं १६७
अब वे बातैं उलटि गईं ११४५
अब सिर परी ठगौरी देव २१
अब हरि आइहैं जनि सोचै १७८०
अब हरि कौन सौं रति १४२१
अबहीं तैं हम सबनि बिसारी ९११
अबहीं देखे नवल किसोर १ २४
अब हौं कौन कौ मुख हेरौं २४
अब हौं माया हाथ बिकानौ २१
अब हौं सब बिधि हेरि रह्यौ १७५
अबिगत-गति कछु कहत २
अबिगति-गति जानी न परै ११
अमर-नारि अस्तुति करैं ११८४
अरीअरी सुंदर नारि सुहागिनि ११७
अरी मेरे लालन की आजु २६०
अलकनि की छबि अलि-कुल ११५
अहो पथि सो उपाइ कछु २११

आ

आँखिनि मैं बसै जिय मैं बसै ७८०
आँगन मैं हरि सोइ गए री ११५
आँगन स्याम नचावहीं १०६
आए जोग सिखावन पाँड़े १११५
आए नंद-नँदन के भेष १५ १
आछौ गात अकारथ गार्यौ ११
आजु कन्हैया बहुत बन्यौ री ५२८
आजु कोउ नीकी बात १७०१
आजु कोउ स्याम की १४०८
आजु घन स्याम की १४ १
आजु बरसाने गाइ पतौ १४४८
आजु जसोदा जाइ कन्हैया ४५८

आजु आइ देखौं वे चरन १२५८
(माई) आजु तो बधाइ बाजै २७२
आजु दसरथ कैं आँगन भीर १८१
आजु दीपति दिव्य दीप- ५७२
आजु नंद के द्वारैं भीर २७
आजु बन कोउ वै जनि जाइ २६७
आजु बन बनु बनावत १ ४
आजु बने बन तें ब्रज आवत ४११
आजु भोर तमचुर के रोल २६५
आजु मैं गाइ चरावन जैहौं ४१५
आजु रघुनाथ पयानो देत १६४
आजु राधिका भोरहीं जसुमति१७५
आजु रैनि नहिं नींद परी १९८१
आजु सखि देखे स्याम नए ११८
आजु सखी अरुनोदय मेरे ८२४
आजु सखी मनि खंभ निकट ११५
आजु हौं एक-एक करि टरिहौं७१
आनँद सहित सबै ब्रज आए ४०१
आनँदै आनँद बढ़्यो अति २५६
आपु गए हरुएँ सूनें घर १०१
आपु चढ़े ब्रज-ऊपर काल ४८५
आपुन भई स्याम पर वारी ११२१
आयौ घोष बड़ो ब्यौपारी ११५८
आवत उरग नाथे स्याम ५०८
आवहु निकसि पौरि-कुमारि १ ११
आवहु री मिलि मंगल १०४८
आस मनि हौरहु स्याम १ ६

इ

इक दिन नंद चलाई बात ११९८
इत-उत देखत जनम गयौ १ ७
इत तें राधा जाति जमुन ७६१
इन अँखियन आगें तें मोहन१७५
इनकौं ब्रह्म कहौं न सुखपुञ्ज८६
इन नैननि की कथा सुनावैं १२१८
इन नैननि मोहि बहुत १२१४
इन बातनि कहु पावति री ८१७
इन बातनि कहुँ होति १२११
इनहूँ मैं पटतारैं कीन्ही ७११
इहिं अंतर मधुकर इक १५ २
इहिं अंतर हरि आइ गए १ २१
इहिं उर माखनचोर गड़े १६ १
इहिं डर बहुरि न गोकुल ११७२
इहिं दुख तन तरफत १४११
इहिं बिधि कहा घटैगौ तेरौ १ ६
इहिं बिधि पावस सदा १६२४
इहिं बिधि बन बसे रघुराइ २ ७
इहिं बिधि बेद-मारग सुनौ १ ५१
इहिं बिरियाँ बन तें ब्रज १६४६
इहिं राजस को को न बिगोयौ २८
इहै सोच अक्रूर पर्यौ १९८५

उ

उग्रसेन कौं दियौ हरि राज ११ १
उपरत स्याम नृपति मारि १ ७१
उठीं सखी सब मंगल गाइ २६५

उठे कहि माधौ इतनी बात १११२
उत नहिं सपनौ भयौ १२५७
उती दूर तैं को आवैं री १७७
उनकौं ब्रज बसिबौ नहिं १४१८
उनहीं कौ मन राखैं काम ८२१
उपँग-सुत हाथ दई हरि १४५८
उपमा धीरज तज्यौ निरखि ११७
उपमा नैन न एक रही १५४५
उपमा हरि-तनु देखि लजानी ११८
उमड्यौ स्याम, महरि २१
उमँगि ब्रज देखन कौं सब १४८
उरग लियौ हरि कौं लपटाइ ५ १
उलटि पग कैसैं दीन्हौ नंद १११७
उल्टी रीति तिहारी ऊधौ १५१५

ऊ

ऊधौ अँखियाँ अति १५४७
ऊधौ अब कछु कहत न १५११
ऊधौ अब कान्ह न ऐहैं १०
ऊधौ अब नहिं स्याम हमारे ११ ७
ऊधौ अब हम समुझि भईं ११४०
ऊधौ आवैं भये परेली १५७६
ऊधौ इक पतिया हमरी ११८४
ऊधौ इतनी कहियो १४५६,११६
ऊधौ इतनी कहियो बात ११८८
ऊधौ इतनी बार कहो ११८७
ऊधौ ऐसो काम न कीजै १५५१
ऊधौ और कछू कहिबे कौं १५१५
ऊधौ करि रहीं हम जोग १५८६
ऊधौ कहा करैं लै पाती १४६६
ऊधौ कहा हमारी चूक १५७४
ऊधौ कही सु फेरि न कहिये१५५८
ऊधौ कहो सहज की पारो १५११
ऊधौ कहौ साँची बात १४८६
ऊधौ कहो हरि कुसलात १४६१
ऊधौ काहे कौं भक्त ११२१
ऊधौ किहिं बिधि कीजै १५६१
ऊधौ कोउ नाहिंन ११४२
ऊधौ कोकिल कूजत कानन११५५
ऊधौ क्यौं बिसरत वह नेह ११०
ऊधौ क्यौं राखैं ये नैन ११४१
ऊधौ जननी मेरी कौं मिलि १४११
ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ१० ५
ऊधौ जाय बहुरि सुनि ११२१
ऊधौ जाके माथें भाग ११७१
ऊधौ जात अबहिं सुने १४११
ऊधौ जाहु तुमहिं हम जाने १५१०
ऊधौ जू कहियो तुम हरि ११११
ऊधौ जोग कहा है कीजतु ११५६
ऊधौ जोग जोग हम नाहीं ११४६
ऊधौ जोग तबहिं तैं जान्यौ १५६
ऊधौ जोग बिसरि जनि ११२१
ऊधौ जोग सिखावन आए १५१५
ऊधौ जो हरि हितू तुम्हारे १११
ऊधौ तिहारे पा लागति हौं १११५

ऊधो तुम अति चतुर १५५२
ऊधो तुम अपनी जतन करौ १५५९
ऊधो तुम ब्रज की दसा १५६४
ऊधो तुम ब्रज मैं पैठ करी १५७७
ऊधो तुम यह निहचै जानौ १४७६
ऊधो तुमहिं स्याम की सौं १५६२
ऊधो तुम हो निकट के १५८०
ऊधो धनि तुम्हरो व्योहार १५४२
ऊधो न लागति हौं कहिबो १५६६
ऊधो बिरहो प्रेम करै ६६१
ऊधो बगि मधुबन जाहु १५१४
ऊधो बागिनी ब्रज जाहु १४५
ऊधो ब्रजहिं जाहु पा लागौं १४६६
ऊधो भली भई ब्रज आए १५११
ऊधो भली भाग समुझायो १०१७
ऊधो मन अभिमान १४५१
ऊधो मन तौ एकै आहि १६ १
ऊधो मन न भए दस बीस १६ २
ऊधो मन महिं साध हमारैं १५६६
ऊधो मन माने की बात १६७१
ऊधो मोहिं ब्रज १०१४; १०१५
ऊधो मोन साधि रहे १५१८
ऊधो यह राधा सों कहियो १४६७
ऊधो ले चल लै चल १६२६
ऊधो सुधि नाहीं या मन की १६७४
ऊधो सुनहु नैंकु जो बात १६४८
ऊधो स्याम इहाँ ले आवहु १६६६
ऊधो स्याम सखा तुम साँचे १५११
ऊधो हम आजु भईं बड़ १५२४
ऊधो हम ऐसी नहिं जानी १६६६
ऊधो हम कह जानें जोग १५६१
ऊधो हम लायक सिख दीजै १६२८
ऊधो हमरी सौं तुम जाहु १६१७
ऊधो हमहिं कहा समुझावहु १६१७
ऊधो हमहिं न जोग १५८८
ऊधो हम हैं हरि की दासी १५१२
ऊधो हरि काहे के अंतर १५६६
ऊधो हरि गुन हम चकडोर १५११
ऊधो होउ आगे तें न्यारे १५२१

ए

ए अलि कहा जोग में १६६१
एते गुन नंद अहीर के १६६८
एक गाउँ के बास बसी १२ १
एक दीन कुबानि मैं माई १४१
एक बार मोहिं कहा ११०१

ऐ

ऐसी कब करिहौ गोपाल ६१
ऐसी बड़ी ढैंगीसे लाल ८८४
ऐसी कुँवरि कहाँ तुम पाई ८५८
ऐसी प्रीति की बलि जाऊँ १७६१
ऐसी बात कहौ जनि ऊधो १५८५
ऐसी रिस तौ सौ नंदरानी ४६६
ऐसी रिस मैं जौ धरि पाऊँ ३६६
ऐसे आतुर भए नैन १२११

ऐसौ मन मूढ़ कहावत १५१९
ऐसे बादर ता दिन आए १४ २
ऐसें बनि बोलत नँद-लाला ११४९
ऐसें कहियै ब्रज की बीथिनि ४९७
ऐसो कोउ नाहिंनै सजनी ११५९
ऐसो हित न करौ रघुराई १९१
ऐसो हित न हम पै होइ १११९
ऐसो दाम माँगियै नहिं जो ११४४
ऐसो सुनियत है बैसाख १५५१
ऐसो सुनियत है द्वै सावन १४११

औ

और कहौ करि कौं अनुमान ६८०
और मंद माँगो कछु हमसौं ५४
और सकल अंगनि तें ऊधौ १५४१
और सखा सँग लिए ११५४

क

कंस नृपति अक्रूर बुलाये १२५६
कंस बुलाइ दूत इक लीन्हौ ४८२
कंस बिचारो मधुपुरन पै १७५
कछु रिस कछु नागरि हित ८६१
कजरी की पय पियहु लाल १२२
कटि तट पीत बसन सुदेस १
कत हो कान्ह काहु कैं जात १८१
कन्हैया तू नहिं मोहिं डरात १६२
कन्हैया मेरी छीँक बिराई ११७१
कन्हैया हार हमारो देहु ११५
कन्हैया हालरो हलरोइ २०६
कपटी नैननि तैं कोउ नाहीं १२१४
कब के बाँधे ऊखल-दाम ४१२
कब देखौं इहिं भाँति कन्हाई १३५४
कब री मिलै स्याम नहिं ७१६
कबहुँ सुधि करत गुपाल १४८८
कबहुँ स्याम जमुना तट ८११
(मेरे) कमलनैन प्राननि तैं १२१४
कर कंकन तैं भुज टाँड़ ११८२
कर कंपै, कंकन नहिं छूटै १८५
करत अचगरी नंद महरको ११९६
करत कछु नाहीं आजु बनी १०५८
करत कान्ह ब्रज घरनि ६८४
करति अबसर वृषभानु-नारि ८१८
करति सिंगार वृषभानु नारि ८११
करति है हरि चरित ब्रज १०६६
करतल सोभित बान १८१
करन दै लोगनि कौ १२ २
कर पग गहि, अँगुठा मुख २७६
करि गए थोरे दिन की १११६
करि ल्यायी हरि आपुनि मैया ९८८
करी गोपाल की सब होइ १ १
करौं हरि ग्वालनि संग ११७
कहत कान्ह जननी समुझाई १७४
कहत कान्ह नँद बाबा ५११
कहत नंद जसुमति सौं बात १५८
कहत न बनै ब्रज की रीति १०११
कहति है, आगें जपिहै पथ ११

कहति कहा ऊधौ सौं बैरी १५१८
कहति बाँह सौं नागरी, को ८६४
कहति जसोदा बात सयानी २७८
कहन लागी अब बढ़ि बढ़ि ४ ६
कहन लगे मोहन मैया-मैया ११६
कहाँ गयौ मरुत-पुत्र कुमार २४१
कहाँ रहे अब लौं तुम स्याम १ ६१
कहाँ रह्यौ मेरौ मन मोहन ११२२
कहाँ लौं कहिऐ ब्रज की १०१४
कहाँ लौ बरनौं सुन्दरताई २७६
कहा सुख ब्रज कौ सौं संसार १४४१
कहा इन नैननि कौ ११७२
कहा कमी जाके राम धनी १७
कहा करौं मोतो कहौ हमसौं १११२
कहा कहति तू बात अयानी ७६६
कहा कहति तू भई बावरी ७१७
कहा कहति तू मोहि री ११६०
कहा ठग्यौ तुम्हरी ठगि ११६६
कहा तुम इतनैहि कौ ६ १
कहा दिन ऐसैं ही चलि १२५७
कहा प्रकृति परी अमल ११४०
कहा भई धनि बावरी, कहि ८७२
कहा भऐ जो ऐसे लोचन १२१२
कहा भयौ जौ घर कौ ४१
कहा भयौ जौ हम पै आईं १ ५४
कहा भयौ मेरौ गृह माटी १०५६
कहा मति दीन्ही हमहिं १११६
कहा हैं सत मोरत हौ भौंह ११७१
कहा हमहिं रिस करत ११६१
कहा होत जौ हरि हित १६६७
कहा हौं ऐसे ही मरि जैहौं १२८४
कहि यौं सखी बटाऊ को है १६८
कहि न परत ब्रज हरि की १०६५
कहि न सकति सकुचति १०७६
कहिबे मैं न कछूक राखी १७२
कहियौ जसुमति की १७ १
कहियौ ठकुराइति हम १५६८
कहि राधा ये को हैं री ८५४
कहि राधा हरि कैसे हैं ७५
कहि राधिका बात अबलौंकी ७६८
कहै भामिनी कंत सौं १ ८८
कह्यौ कपि रघुपति कौ संदेस २४१
कह्यौ कहाँ ते आए हौ १५ १
कह्यौ तो कुल आपनौ १५२२
कह्यौ तौ माखन ल्यावै घर तैं ४ ८
कह्यौ नंद कहाँ छाँड़े कुमार ११२४
कह्यौ री जो कहिबे की १४२७
कह्यौ शान्त मुनि मथुरा १४८७
कह्यौ सुक श्रीभागवत १५२
कह्यौ सुक श्रीभागवत ११६
काचे काची गुन गाई ७११
काग रूप इक दनुज धरयौ २७७
कान्ह कहत दधि-दान ११५८
कान्ह कह्यौ बन रैनि न ८१४

खेलत खात माखन खात २२६
खेलत कान्ह चले ग्वालनि ४१८
खेलत नवलकिशोर किशोरी ६१२
खेलत बनै घोष निकास १६२
खेलत मैं को काको गुसैयाँ ५६४
खेलत स्याम आपनैं रंग ५८८
खेलत स्याम ग्वालनि संग १४१
खेलत स्याम ग्वालिनि संग ६११
खेलत स्याम, सखा लिए संग ८८६
खेलत हरि निकसे ब्रज-खोरी १६४
खेलन मेरी बल जाइ बलैया १४५
खेलनकै मिस कुँवरि राधिका ११०
खेलन कौं मैं जाउँ नहीं ७२२
खेलन को हरि दूरि गयौ री १४६
खेलन दूरि जात कत कान्हा १४०
खेलौ जाइ स्याम संग राधा ६०१

ग

गंग तरंग बिलोकत नैन १८
गई वृषभानु-सुता अपनैं घर १६५
गए स्याम ग्वालिनि घर सूनैं १८८
गए स्याम ढिग ग्वालिनि कैं ११६२
गन गंधर्व देखि सिहात १८२
गरब भयौ ब्रजनारि कौ १०८१
गरब कान्ह तैं जो तौ चाही ५१२
गहर करि आइ गोकुल १४०१
गावत [illegible] ४३८
[illegible] स्याम कै ५४०
गिरि पर बरषन लागे बादर ६५
गिरिधर कैहैं कियो अमर ५६६
गिरिधर धर्यौ आपने कर ११६६
गिरिधर मीठैं करौ कन्हैया ५५६
गिरिधर स्याम की अनुहारि ५३८
गुप्त मतौ की बात कहौं ११२७
गुरु-गृह हम जब बन कौं १७५४
गुरु बिनु ऐसी कौन करे १५
गोकुलनाथ बिराजत डोल ६४
गोकुल प्रगट भए हरि आइ २६४
गोद लिए हरिकौं नँदरानी १८६
गोपिन कौ पद धरत कन्हाई ११
गोपाल दुरे हैं माखन खात १७४
गोपालराय दधि माँगत अरु १२१
गोपालराय निरतत फल-फलित २
गोपालराइ हौं नवरम तजि ११११
गोपालहिं पावौं कौ विधि ११४५
गोपालहिं माखन खान दै १०१
गोपालहिं राखहु मधुबन ११३४
गोपिका अति आनँद भरी ११०८
गोपी कहति धन्य हम नारी ११८१
गोपी ब्रज-हरि-बदन निहारति ११२
गोपी तजि लाज, सँग स्याम १०८
गोपी सुनहु हरि कुसलात १७९२
गोपी सुनहु हरि १७९१ १७८४
गोपि कोटि नाद भर ६६१
गोपि ऐसे नवनि की मानत ८

गौरी पति पूजति ब्रजनारि १ १४
ग्वारनि कही ऐसी जाइ ११२५
ग्वारिनि जब देखे नँद-नंदन ११५५
ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत ४५७
ग्वालनि बैन दई तब स्याम ११५६
ग्वाल सखा कर जोरि कहत ४५१
ग्वालिनि अपने चीरहिं लै १ १२
ग्वालिनि तुम कत उरहन ६६१
ग्वालिनि है घर ही की १ २२

घ

घट भरि दियौ स्याम उठाइ ११२१
घट भर देहु लकुट तब ११२२
घर गोरस जनि जाहु पराए १८२
घर-घर हरै सब घरचौ १४७१
घर तजु मन भिना नहिं ११८८
घरनि-घरनि ब्रज होत बधाई ५११
घरहिं चली जमुना-जल ११४२
घरहिं जाति मन हरष बढ़ायौ७१५
घर ही की इक ग्वारि बुलाई ४५१
घर ही के बाढ़े रावरे १५६

च

चकई री, चलि चरन-सरोवर१३१२
चकित देखि यह कहैं नर ५२२
चकित भई ग्वालिनि तन ११८
चतुर नारि सब कहति १ १
चरन-कमल बंदौं हरि-राइ १
चरन गहे अँगुठा मुख मेलत१८
चरावत वृंदावन हरि धेनु ४७६
चलत गुपाल के सब चले १११८
चलत जानि चितवति ब्रज११६२
चलत देखि जसुमति मुख १ १
चलत न माधौ की गही १०८७
चलन चलन स्याम कहत १२११
चलि सखि, तिहिं सरोवर १११
चली बन बेनु सुनत जब १ ४४
चली ब्रज-घर घरनि यह बात१७
चले नंद ब्रज की समुदाइ १११५
चले ब्रज-घरनि कौं नर-नारि५४१
चले बन गाइ चरावन ग्वाल४१७
चले सब गाइनी पछिताइ ६६६
चलौ किन मानिनि कुंज ८८८
चारु चितौनि सु चंचलडोल१२४
चित दै सुनौ अंबुज-नैन १ ६१
चित दै सुनौ स्याम प्रबीन १७१
चितवत ही मधुबन दिन ११७१
चितवनि रोकैं हूँ न रही ७७५
चितैबौ छाँड़ि दै री राधा ६८
चितै रही राधा हरि कौ मुख७७१
चूक परी मोतैं मैं जानी ८७१
चूक परी हरि की सेवकाई११२६
चोरी करत कान्ह धरि पाए१८
चौंकि परी तन की सुधि पाइ५

छ

छाँड़ि देहु सुरपति की पूजा५१२

छाक लेन पै ग्वाल पठाए ४५२
छोटी-छोटी गोड़ियाँ, अँगुरियाँ १९५

ज

जंत्र मंत्र कछु जानै मेरौ । १६६
जग मैं जीवत ही कौ नातौ ११७
जदुपति जानि उद्धव रीति १४१६
जदुपति लख्यौ तिहिं १४४१
जद्यपि मन समुझावत लोग १५११
जन कौ हौं आधीन सदाई १७७
जननि मथति दधि दुहत ४१४
जननी अतिहिं भई रिसहाई ८ १
जननी कहति कहा भयौ १६४
जननी जाँचति मुख स्याम ५६७
जननी, हौं अनुचर रघुपति २१६
जनम तौ ऐसेहिं बीति गयौ ४५
जनम सौ बादहिं गयौ सिराइ ८२
जनम सिरानौ अटकैं अटकैं १ ८
जनम सिरानौई सौ लाग्यौ ४२
जनि कोउ काहू कैं बस ११६२
जब ऊधौ यह बात कही १४४८
जब गहि राजसभा मैं आनी १५६
जब जब तेरी सुरति करत ६
जब जब मुरली कान्ह १ ६
जब तैं आँगन खेलत देख्यौ ५८१
जब तैं प्रीति स्याम सौं कीन्हीं७०१
जब तैं बंसी स्रवन परी ६७०
जब तैं सुंदरबदन निहार्यौ१५४१
जब दधि-मथनी टेकि अरै ११
जब मैं इहाँ तैं जु गयौ १७ ७
जब लगि ध्यान हृदै नहिं १५१४
जब हरि मुरली अधर धरत६४२
जबहिं कह्यौ ये स्याम नहीं १४८१
जबहिं चले ऊधौ मधुबन १४७२
जबहिं बन मुरली स्रवन १ ४२
जबहिं स्याम तन चाहि ५ ४
जबही यह आँगी गाहि १४४४
जबहीं रथ अक्रूर चढ़े १२७७
जमुना [illegible] नंद-नंदन१११
जमुना जल बिहरति ब्रज- ७४१
जमुना जलहिं गई वे नारी ५४८
जमुना तीरहिं कहौ क्यौं आवै ९ ७
जय जय जय जय माधव १७९
जय जय-धुनि अमरनि नभ ९१५
जसुदा कहँ लौं कीजै कानि १७२
जसुदा कान्ह कान्ह कै बूझै१११
जसुदा तेरौ मुख हरि जोवै ४ १
जसुदा देखति है छिप आड़ी १११
जसुदा देखि सुत की ओर ४११
जसुदा मदन गोपाल सोवावै६८१
जसुदा यह न बूझि कौ काम४१५
जसुमति अति ही भई १२७
जसुमति करति मोकौं टेव १४२६
जसुमति कहति कान्ह मेरे ४२८
जसुमति आगहिं दई १४८

गौरी-पति पूजति ब्रजनारि १ १४
ग्वारनि कही ऐसी जाइ ११२५
ग्वालिनि जब देखे नँद-नंदन ११५५
ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत ४५७
ग्वालनि सैन दई तब स्याम ११५६
ग्वाल सखा कर जोरि कहत ४५१
ग्वालिनि अपने चीरहिं लै १ १९
ग्वालिनि तुम कत उरहन ६६६
ग्वालिनि है घर ही की १ ९२

घ

घट भरि दियौ स्याम उठाइ ११२१
घट भर देहु लकुट तब ११२२
घर गौरस जनि जाहु पराए ६८२
घर-घर हरै सन्म परयौ १४७१
घर तजु मन किन नाहिं ११८८
घरनि-घरनि ब्रज होत बधाई ५११
घरहिं चली जमुना-जल ११४२
घरहिं आति मन हरष बढ़ायौ ७१५
घरही की इक ग्वारि बुलाई ४२१
घर ही के बाढ़े रावरे १६६०

च

चकई री, चलि चरन-सरोवर ११२
चकित देखि घर कहँ नर ५२१
चकित भई ग्वालिनि तन ११८
चतुर नारि सब कहति १ १
चरन-कमल बंदौं हरि-राइ १
चरन गहे अँगुठा मुख मेलत १८

चरावत वृंदावन हरि धेनु ४७६
चलत गुपाल के सब चले ११८८
चलत आति चितवति ब्रज ११६९
चलत देखि जसुमति सुख १ ६
चलत न माधौ की गही १०८७
चलन चलन स्याम कहत १२६१
चलि सखि तिहिं सरोवर १११
चली बन धेनु सुनत जब १ ४४
चली ब्रज-घर घरनि यह बात १७
चले नँद ब्रज की समुहाइ ११९५
चले ब्रज-घरनि कौं नर-नारि ५४२
चले सब गाइ चरावन ग्वाल ४१७
चले सब गाइनि पछिताइ ६६६
चलौ किन मानिनि कुंज ८८
चारु चितौनि सु चंचल लोला १२४
चित दै सुनौ अंबुज-नैन १ ४१
चित दै सुनौ स्याम प्रवीन १०१
चितवत ही मधुबन दिन ११०२
चितवनि रोकैं हूँ न रही ७७५
चितैबौ छाँड़ि दै री राधा ६८
चितै रही राधा हरि कौ मुख ७४१
चूक परी मोतें मैं जानी ८४१
चूक परी हरि की सेवकाई ११६६
चोरी करत कान्ह धरि पाए १८
चौंकि परी तन की सुधि पाई ५

छ

छाँड़ि देहु सुरपति की पूजा ११९

छाक लेन जे ग्वाल पठाए ४२९
छोटी-छोटी गोडियाँ, अँगुरियाँ १६५

ज

जग जग घर जाने मेरी १५१९
जग मैं जीवत ही को नातो ११७
जदपि जानि उद्धव रीति १४९९
जदपि सखी लिखि १४४६
जद्यपि मन समुझावत लोग १३११
जन यौं हौं आधीन तुम्हारे १०७
जननि मथति दधि दुहत ४१४
जननी बलिहारि मैं तिहारे ८१
जननी कहति कहा भयौ ११४
जननी जोवति हाथ स्याम ५१०
जननी, हौं अनुचर रघुपति ९११
जनम तो ऐसेहि बीति गयौ ४५
जनम तो बादहि गयौ सिराइ ८२
जनम सिरानौ अटकें-अटकें १०८
जनम सिरानौई सो लाग्यौ ४२
जनि कोउ काहू कै बस ११९२
जब ऊधौ यह बात कही १४७८
जब दधि रागनय मैं काली १६५
जब जब तेरी सुरति करत ९
जब जब मुरली कान्ह १ ९
जब तैं पाँवन लगत धरयौ ५८१
जब तैं प्रीति स्याम सौं कीन्ही १००१
जब तैं बंसी स्रवन परी ९७०
जब तैं सुंदरवदन निहारयौ १५४१
जब दधि-मथनी टेकि अरै ९११
जब मैं इहाँ तैं जु गयौ १० ७
जब लगि ज्ञान हृदै नहिं १५१४
जब हरि मुरली अधर धरत ९४२
जबहिं कह्यौ ये स्याम नहीं १४८१
जबहिं चले ऊधौ मधुबन १४७२
जबहिं बन मुरली स्रवन १ ४२
जबहिं स्याम तन भ्राति ५०४
जबहीं यह बाँचौ पाति १४४४
जबहीं रथ अक्रूर चढ़े १२७७
जमुना अंकोभृत नंद-नंदन १११०
जमुना जल बिहरति ब्रज- ७४१
जमुना जलहिं गई पै मारी ५४८
जमुना तीरहिं कह्यौ क्यों भावै ५ ७
जय जय, जय जय माधव १०९
जय जय-धुनि अमरनि नभ ५१९
जसुदा कहँ लौं कीजै कानि १७९
जसुदा चन्द कान्ह के पूछै ११२
जसुदा तेरौ मुख हरि जोवै ४०१
जसुदा देखति है दिन छाकी ९११
जसुदा देखि सुत की ओर ४११
जसुदा मदन गोपाल सोवावै ९८१
जसुदा यह न बूझि को काम ४१५
जसुमति चलि ही भई १२७
जसुमति करति मोकौं देत १४५९
जसुमति कहति कान्ह मेरे ४२८
जसुमति जगावहि भये १४८

जसुमति अबहिं कह्यौ १२८
जसुमति टेरति कुँवर कन्हैया ५१
जसुमति तेरो बारो कान्ह १६१
जसुमति दधि मथन करति १११
जसुमति दौरि लिए हरि ४४
जसुमति बार-बार पछितानी ५७५
जसुमति भाग-सुहागिनी, हरि २८५
जसुमति मन अभिलाष करै २८८
जसुमति मन-मन यहै ११७
जसुमति यह कहि कै रिस १११५
जसुमति राधाकुँवरि सँवारति१७
जसुमति लै पलिका पौढ़ावति११५
जसुमति सुनि-सुनि पछित ४४९
जसोदा एतौ कहा रिसानी ४
जसोदा, तेरो चिरजीयहु ११
जसोदा बार-बार यौं भाखै १२१८
जसोदा हरि पालनैं झुलावै २०१
जहाँ तहाँ तुम हमहिं उबारयौ५१२
जाइ सबै कंसहिं गुहरायहु ११९२
जाको दीनानाथ निवाजैं १४
जाकौं मनमोहन अंग करै १५
जाको हरि अंगीकार कियौ १६
जागहु-जागहु नंद-कुमार ४११
जागि उठे तब कुँवर कन्हाई ४७८
जागिए,ब्रजराज कुँवर कमल ११८
जागो, जागो है गोपाल १४
जा दिन तैं गोपाल चले १५८१
जा दिन तैं हरि दृष्टि परे री७०
जा दिन मन पंछी उड़ि जैहै १
जा दिन संत पाहुने आवत ११६
जानि करि बावरी जनि होहु१११
जापर दीनानाथ ढरै ११
जाहि लगी मैं जानति तौलौं७१६
जाहु चली अपनें-अपनें घर ४२
जाहु जाहु आगे तैं ऊधौ १५२२
जाहु तहीं मोहिनी गँवारि ८०८
(तुम) जाहु बालक, छाँडि ५१४
जिन जिनहीं केशव उर गायौ ९५
जीती जीती है रन बंसी ६५४
जीवन सुख देखे को नीको१६११
जुवति अंग छवि निरखति १०७१
जुवति इक आवत देखी ११२१
जुवति ओपि सब परहिं ११५४
जुवती जुरि राधा-ढिग आईं ७१
जुवती ब्रज पर नाम ११६१
जेंवत कान्ह नंद इकठौरे २५
जेंवत स्याम नंद की कनिया २५१
जे लोभी ते देहिं कहा री १२२२
जैसैं तुम मन को पाठ छुड़ायौ११
जैसैं राखहु तैसैं रहौं ८१
जैहै कहाँ मोखिहरि मीरी ८१
जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै १५७८
जोग-बिधि मधुबन सिखिहैं १५६९
जोग सँदेसौ ब्रज मैं लावत १५६७

जौ मन ऊधौ मोहि न १०११
जौ सुख ब्रज मैं एक घरी २८४
जौ सुख होत गुपालहिं गाएँ ११५
जौ अपनौ मन हरि सौं राँचै ४०
जौ कोउ बिरहिनि कौ दुख११०१
(ऊधौ) जौ कोउ गए बन १६२
जौ तुम सुनहु जसोदा गोरी १७५
जौ तू राम-नाम-धन धरतौ ११२
जौ देखैं द्रुम के तरैं, मुरली१ ६१
जौ पै राखति हौ पहिचानि १११६
जौ पै हिरदै माँझ हरी ११६५
जौ प्रभु मू कौ आपनु पाऊँ २२७
जौ प्रभु मेरे दोष बिचारैं ६१
जौ बिधना अपबस करि ७६१
जौ मेरे दीनदयाल न होते १६१
जौ लौं मन-कामना न छूटै १४१
जौ लौं माई हौं जीवन भर ११२
जौ लौं सत सरूप नहिं १४४
जौ सखि मारिहैं ब्रज ११५
जौ हम भले-बुरे तौ तेरे ८८
जौ हरि ब्रत निज उर न धरैगो४१
ज्ञान बिना कहुँवै सुखनाहीं१५५७

झ

झगरौ न मिटमै पाऐं आप १७४
झिरकि कै नारि दै गारि ५ २
झुनक स्याम की पैंजनियाँ १ ८
झूमक सारी तन गोरैं हो ६२१
झूठहिं मुठहिं लगावति ११३७
झूठ ही लगि जनम गँवायौ ११६
झूलत नंदनंदन डोल ९४१
झूलत स्याम स्यामा संग ६२७

ठ

ठाढ़ी कुँअरि राधिका लोचन१५७
ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैं ६१
ठाढ़े देखत हैं ब्रजबासी ५११
ठाढ़े स्याम जमुना-तीर ११११

ड-ढ

डफ बाजन लागे हेली ६१६
ढोटा कौन कौ यह री १२९

त

तजौ मन हरि-बिमुखन कौ११
तनक कनक की दोहिनी ४१२
(माधव) तनक सौ बदन ११४
तन मन नारि वारति वारि १४५
तब ऊधौ हरि निकट १४६९
तब तुम मरें काहे कौं ११६७
तब तू मारिबौई करति ११२१
तब तैं इन सबहिन १०२६
तब तैं बीम सरीर सुभाइ १० १
तब तैं नैन रहे इकटकही१२१२
तब तैं बहुरि न कोऊ १७६१
तब तैं मिटे सब आनंद ११२७
तब नागरि जिय धर्यो १७८०
तब नागरि मन हरष भई ७११

तब बसुदेव हरषित गात ११ १
तब रिस कियौ महाबल १२६७
तब राधा सखियन पै आई ७४
तब लगि सबै सयान रहे ६१२
तब लगि हौं बैकुंठ न जैहौं १७२
तब हरि कौं टेरति नँदरानी७ १
तब हरि भए अंतरधान १ ८२
तबहिं उपंगसुत आइ गए १४४१
तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई४२२
तब हौं नगर अयोध्या जैहौं २२६
तरुनी गई तब बिलखाइ १४८२
तरुनी निरखि हरि प्रतिअंग ६ १
तरुनी स्याम-रस मतवारि ११६१
तहँइ आजु क्यौं रैनि बसे ८८१
तातैं अति मरियत १७७२
तातैं सेइयै श्री जदुराइ १ ५
तिहारौ कृष्न कहत कह जात२२१
तुम अलि कासौं कहत १५६१
तुम कत गाइ चरावन जात ४७२
तुम कबके जु भए हौ दानी११४८
तुम कहुँ देखे स्याम बिसासी१०८१
तुम कुल बधू निलज जनि ७६
तुमकौं कैसे स्याम लगे ७५१
तुम जानकी जनकपुर जाहु ६६
तुम जानति राधा है छोटी ७८१
तुम तजि और कौन पै जाउँ ८१
तुम तौ कहत सँदेसौ आनि १५११
तुम पठवत गोकुल कौं १४५२
तुम पावत हम घोष न १ ५८
तुम पै कौन दुहावै गैया १८०
तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत ६
तुम रीझे की उनहिं रिझाए ८८७
तुम लछिमन निज पुरहिं १६२
तुम लछिमन या कुस-कुटी २११
तुम सौं कहा कहौं सुंदरघन ७ ५
तुमहिं कहत कोउ करै ४८८
तुमहिं बिना मन धिक ११६
तुमहिं बिमुख रघुनाथ, कौन२ १
तुम्हरे देस कागद मसि १७६५
तुम्हरे बिरह ब्रजनाथ १७१२
तुम्हरी भक्ति हमारे प्रान ८७
तुम्हैं पतिआनति नाहीं बीर२१०
तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत १४५४
तू जननी अब दुख जनि २२२
तू मोहिं कौं मारन जानति ११११
तू री चौंह किए हरि रासमिद११
तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी ८४
तेरी जीवन-मूरि मिलिहि १७६
तेरी सौं सुन सुन मेरी मैया १६५
तेरैं आवैंगे आजु सखी हरि६११
तेरौ बुरौ न कोऊ मानै ११५७
(जसोदा) तेरौ भलौ हियौ ४११
तेरौ लाल गोपाल रन-सूरौ ६५४
तै कत तोर्यौ हार नौसरि११५१

तैं कैकइ कुमंत्र कियौ २
तै ही स्याम भले पहिचाने ७६१
तोसौं कहा धुताई करिहौं ४९२
तोहिं स्याम हम कहा दिखावैं ८२८
तोहि किन रूठन सिखई ६१७
तौ तू उड़ि न जाइ रे कागा १४७४
तौ लगि बगि हरौ किन पीर ६४
तौ हम मानैं बात तुम्हारी ११२६
थ
थोरे जीवन भयौ तन भारौ ८
द
दधि मटकी हरि छीनि लई ११४९
दसहूँ दिसा तैं बरत दवानल ५१७
दान दिए बिनु जान न १०६
दिन दस घोष चलहु १७१६
दिन दस लेहि गोबिंद गाइ १२१
दिन द्वै लेहु गोबिंद गाइ १२४
दीजै कान्ह काँधे कौ कंबर ८११
दीन जन क्यौं करि आवै सरन ९२
दीनानाथ अब बारि तुम्हारी ९७
दुरत नहिं नेह अरु सुगंध ७१४
दुलहिनि दूलह स्यामा स्याम ११ ७
दुरत स्याम गेंद खिलाई ६७७
दुहि दीनी राधा की गाइ ६९
दूरि करहिं बीना कर धरिबौ १४९
दूरिहिं तैं देख्यौ बलबीर १०५२
दृढ़ मत कियौ मेरैं हेतु १ १५
देखत नंद कान्ह अति सोवत ४७७
देखत भूलि रह्यौ मनमोहन १०५७
(रूपौ) देखत हौ जैसे १० ४
देखन कौं मंदिर आनि २९५
देखहिं दौरि द्वारिकावासी १७४०
देखि, महरि मनहीं मु ११८
देखिमाई हरि जू की लोटनि १९६
देखियत चहुँदिसि तैं ११२९
देखियत दोऊ घन उनए ५७१
देखियत कालिंदी अति ११४२
देखि री देखि आनँद कंद ५९६
देखि री देखि कुंडल-झलक ६५
देखि री देखि कुंडल लोल ६४१
देखि री देखि सोभा रासि ६४४
देखि री नंद-नंदन ओर ४१४
देखि री नवल नंद-किसोर ६९६
देखि री हरि के चंचल तारे ६९७
देखि री हरि के चंचल नैन ६१९
देखि रूप सब नगर के लोग १७४४
देखि सखी अधरनि की लाली ६५२
देखि सखी उत है वह गाउँ ११०४
देखि सखी घन तैं जु बने ५९१
देखि सखी मोहन मन चोरत ६४
देखि सखी यह सुन्दरताई ६१६
देखि सखी हरि अंग अनूप ५९९
देखि सखी हरि को मुखचारु ६२६
देखि स्याम मन हरष १ ४७

देखे नँद चले घर आवत ४९५
देखौ कपिराज, भरत वे ९५१
देखौ नँद-द्वार रथ ठाढ़ौ १४८४
देखौ माई कान्ह हिलकिनि ४ ४
देखौ माई रूप सरोवर १ ७२
देखौ माई सुंदरता कौ सागर ५९७
देखौ री जसुमति बौरानी १५९
देखौ री हरि खात मैन १७१८
देन आए ऊधौ मत नीकौ १५१२
देवकी मन-मन चकित भई २१
देह धरे कौ यह फल प्यारी ७११
दोउ ढोटा गोकुल-नायक १११८
द्वारे ठाढ़े हैं द्विज बामन १७१
द्विज कहियौ जदुपति सौं १७४१
द्विज पाती दै कहियौ १७४
द्वै मैं एकौ तौ न भई ११४
द्वै लोचन तुम्हारे द्वै मेरे १२१

ध

धनि जननी जो सुभटहिं २४४
धनि वृषभानु सुता बड़ ८७९
धनि यह वृंदाबन की रेनु ४९८
धनुही-बान लए कर डोलत १८४
धन्य धन्य मैंखियाँ १२५१
धन्य धन्य बड़भागिनि ७६७
धन्य धन्य वृषभानु ८२७, ६ ८
धीर धरहु, फल पावहुगे ८८८
धेनु दुहत अतिहीं रति बाढ़ी ६८८
धेनु दुहन दै मेरे स्वामी ६८१
धोखैं ही धोखैं डहकायौ १९८

न

नंद करत पूजा, हरि देखत ११
नंद कहौ हौ कहँ छाँड़े १११६
नंद गयौ घर आतु कन्हाई ९१
नंद गए खरिकहिं हरि लीन्हें ११३
नंद-घरनि ब्रजनारि ४८९
नंद-घरनि यह कहति पुकारे ५२
नंद-घरनि सुत भलौ पढ़ायौ १९८
नंद घरनि सौं पूछत बात ४९१
नंद जसोदा सब ब्रजबासी १७८९
नंद जू के बारे कान्ह छाँड़ि ११२
नंद नंदन उनकौं हम १ ९७
नंद नँदन तिय छबि तनु ८५१
नंद नँदन वृंदाबन चंद १२५
नंद-नंदन वृषभानु किसोरी ९१८
नंद-नँदन मुख देखौ नीकैं १७९
नंद नँदन मुख देखौ माई ५९५
नंद नँदन सुखदायक हैं ८२
नंद नँदन सौं इतनी ११८९
नंद नँदन हैं ठ नागरी-सुजान ८५९
नंद बाबा की बात सुनौ हरि ११११
नंद बुलावत हैं गोपाल १७९
नंद ब्रज लीजै ठोंकि बजाइ १११२
नंद महर घर के पिछवारैं ८११

नंदराइ कैं नवनिधि आई २६६
नंदलाल सौं मेरौ मन १२ १
नंद-सुत लाड़ लड़ाइ पठाऊँ १२५५
नंद सुनत मुरझाइ भए ४८४
नंद-सुवन गावती बुलावहु ९६०
नंद हरि तुमसौं कहा कह्यौ १२२१
नंदहिं कहति जसोदा रानी १५०
नंदहि कहति हरि अब गाइ ११११
नटवर बेष काछे स्याम ६६६
नमो नमो हे कृपानिधान १७
नर तैं जनम पाइ कह कीनौ ३७
नवल नंद-नंदन रंगभूमि ११
नवल स्याम,नवला श्रीस्यामा८६
नहिं अस जनम बारंबार ५२
नहिं कोउ स्यामहिं राखै ११६०
नागरि मन गई अरुझाइ ६६
नागरि हरौ मुकुट निहारि ८६०
ना जानौं तबही तैं मोकौं, ७०२
नाथ, अनाथनि की सुधि १२४१
नाथन स्याम निर्बल म ५ ५
नाम सखी सौं मोहि बखानौ ७१
नान्हरिया गोपाल लाल ८८०
नाम कहा तेरौ री ६६६
नाम कहा सुंदरी तुम्हरौ ८६५
नारद रिषि नृप सौं यौं ४८१
(ऊधौ) ना हम बिरहिनि १६२४
नाहिनैं मन ब्रज नंद १४११
निठुर बचन जनि बोलहु १ ५७
निठुर बचन सुनि स्याम १ ३६
निमिषमात्र वृंदावन स्याम ६२८
निरखत ऊधौ कौ मुख १४८३
निरखत रूप नागरि नारि ६४१
निरखति अंक स्याम सुंदर १४६५
निरखि पिय-रूप तिय ८५०
निरखि मुख राघव भरत ९१९
निरखि सखि सुंदरता की ६६४
निरगुन कौन देस कौ १५६७
निसि बासर बनकौं १ ४८
निसि दिन बरसत नैन १५६४
नीकैं गाइ गुपालहिं मन रे ३८
नीकैं तप कियौ तनु गारि १ २६
नीकैं देहु न मेरी गिंडुरी ११२८
नीकैं धरौ नंद-नंदन ५५८
नीकैं रहियौ जसुमति मैया १४६
नूतन अंग अभूषन बाजत १ ६६
नूतन स्याम नाना रंग १ ७५
नृपति मन हुई बिचार १२५४
नैनहिं मैं हरि घाइ रहैंगे १ ५
नैकु गोपालहिं मोकौं दै री १७५
नैकु न मन तैं टरत ११२५
नैकु निठुर कृपा करि ८६०
नैन करैं सुख, हम दुख १११७
नैन भए न फिरे री माई १२१८
नैन चकचौंधे कहौ ऐंठौ ८६४

नैन न मेरे हाथ रहे १२ ७
नैननि उहै रूप कौ देखौं १५१६
नैननि ध्यान नंद-कुमार ६४८
नैननि नंद-नंदन ध्यान १५४
नैननिबानि परी मटिनीकी १२८५
नैननि सौं झगरौ करिहौंरी १२१६
नैननि हरि कौ निठुर कराए १२४१
नैन परे रस-स्याम-सुधा मैं १२ ६
नैन भए बस मोहन तैं १२२८
नैन भए बोहित के काग १२१५
नैन सफल अब भए हमारे १ १६
नैन सलोने स्याम बहुरि ११८५
नैन स्याम-मुख सूरत हैं १२४२
नैना अटिहीं लोभ भरे १२२
नैना घूँघट मैं न समात १२४७
नैना नाहिंनै ये रहत १५४६
नैना नीकैं उनहिं रए १२ ८
नैना बहुत भाँति हटके १२५
(मेरे)नैना बिरह की बेलि १११६
नैना भए अनाथ हमारे १७६६
नैना भए बजाइ गुलाम १२११
नैना भरे चर के चोर १२२१
नैना (माई) भूले अनत न १११२
नैना मानऽपमान सह्यौ १२१७
नैना रहैं न मेरे हटके १२८
नैना हरि अंग-रूप लुब्धे री १२१
नैना हैं री ये बटपारी १२१
नौका हौं नाहीं ले आऊँ १७५
न्याय सखी स्यामा गोपाल ११ १

प

पंथी इतनी कहियो बात १११४
पढ़ौ माइ, राम-मुकुंद-मुरारि १०१
पतित पावनहरि,बिरद तुम्हारो ७२
पथिक, कहियो हरि सौं यह १०८८
पथिक कह्यौ ब्रज जाइ सुने १०६६
पनघट रोके रहत कन्हाई ११२
परम चतुर वृषभानु-कुमारी ८२
परसुराम तेहिं औसर आए ८६
परी पुकार द्वार गृह-गृह तें १५११
परेखौ कौन बोल कौ कीजै ११४१
पलना झूलौ मेरे लाल ११६
पहिले प्रनाम नँदराइ कौं १४०
पाई पाई हे रे भैया, कुंज ४०
पाउँरी बिलपत मेरे लोचन ११८१
पाती दीजो स्याम सुजानहिं ७४१
पाती बाँचत नंद डराने ४८१
पाती मधुबन तैं आई १४८१
पाती मधुबन ही तैं आई १४८४
पाती लिखि ऊधौ कर १४६४
पावै कौन सिरैं बिनु भाग ७५४
पिउ पद-नमक कौ मकर १०५८
पिय तरैं बन यौं री माई ८१
पिय प्यारी खेलैं जमुना तीर ११११
पिय बिनु नागिनि कारी ११८१

पियहि निरखि प्यारी हँसि ८९१
पुनि-पुनि कहति हैं ब्रज-नारि७५६
पूछो अब तात सो बात ४८७
प्यारी चितै रही मुख पियकौ८८२
प्यारी पीतांबर उर अरुझ्यौ११९६
प्रकृति जो जाकै अंग परी १५२
प्रगट भए नँद नंदन आई ११ ४
प्रथम करी हरि माखनचोरी१९९
प्रथम सनेह दुहुनि मन ९५९
प्रभु को देखौ एक सुभाइ ८
प्रभु जू बिपदा भली बिचारी१९९
प्रभु, तुमकौं मैं बदन ल्याई१२९५
प्रभु, मोहिं राखिये इहिं ठौर ९
प्रभु हौं बड़ी बेर को ठाढ़ो ७५
प्रभु, हौं सब पतितनि को ७९
प्रात गई नीकैं उठि घर तैं ९६५
प्रात भयौ, जाग्यौ गोपाल ११६
प्राननाथ हो, मेरी सुरति किन ८ १
प्रीतम जानि लेहु मन माहीं ४९
प्रीति करि काहू सुख न ११६
प्रीति करि दीन्हीं गरैं छुरी११४
प्रीति के बस्य मैं हैं मुरारी ८२१
प्रीति तो मरिबौऊ न ११९१
प्रेम न रुकत हमारे बूतैं ११४९
प्रेम बिवस सब ग्वालि भई १ १९
प्रेम सहित हरि तेरैं आए ७७४

फ

फल-फल प्रति निरखत नँद १ ६
फिरत प्रभु पूछत बन-द्रुम २१
फिरतलोग जहँ तहँ बितताने५४९
फिरि करि नँद न उत्तर १११४
फिरि फिर देखौं करत २६
फिर फिरि कहा बनावत १५८९
फिरि फिरि कहा सिखावत १५८७
फिरि फिर नृपति चलावत १९१
फिरि ब्रज बसहु गोपाल ११९
फिरि ब्रज बसौ गोकुलनाथ१११९
फिरि ब्रज बसौ नंदकुमार १७११
फूली फिरति ग्वालि मन मैं ११४
फेंट छाँड़ि मेरी देहु श्रीदामा७९१

ब

बंदौं चरन-सरोज तिहारे ९५
बंधू करियौ राम सँभारे ९ ४
बंसी बनराज आजु आई रन८४९
बंसी री बन कान्ह बजावत ९४४
बड़ी है राम नाम की ओट ९६
बड़े की मानिये जो कानि ९७७
बड़े भाग हैं महर महरि के ५२९
बड़ौ निठुर बिधना यह देख्यौ ९
बड़ौ मंत्र कियौ कुवर कन्हाई७ ४
बतियाँ कहति हैं ब्रजनारि ५५१
बन कुजनि बसी ब्रजनारि १०८९
बनचर कौन देस तैं आयौ २१८

बन पहुँचत सुरभी लई जाई ४४०
बनी मोतिनि की माल ६१६
बने बिसाल अति लोचन ५६८
बने बिसाल कमल-दल नैन ६२
बरनौं बाल बेष मुरारि ५८५
बरषि-बरषि हहरे सब बादर ५१
बरु मेरी परतिज्ञा जाउ १६४
बरु ये बदरौ बरषन आए ११६८
बलि गइ बाल-रूप मुरारि १ १
बलि-बलि जाउँ मधुर सुर १२६
बसन हरे सब कदम १ १
बसुधौ कुच-व्यौहार ११ ४
बहुत दिन जीवौ पपीहा १४१
बहुत फिरी तुम काज ४५४
बहुरि नागरी मान कियौ ८२६
बहुरि पपीहा बोल्यौ माई १४ ७
बहुरि स्याम सुख-रास कियौ ११ ६
बहुरि हरि आवहिंगे किहिं १६६
बहुरो देखिबौ इहिं भाँति ११५१
बहुरो भूलि न आँखि लगी ११७८
बहुरो हो ब्रज बात न १०६४
बाँची आजु कौन तोहिं छोरै ४ १
बाँसुरी बजाइ आछे रँग सौं ६४५
बाँसुरी बिधिहूँ तैं परवीन ६६६
बाँधे कर द्रुम देखि टाढ़ी १ ६
बाजति नंद अवास बधाई २१६
बात कहौ को तेरे बढ़ै री १ २१
बात यह तुमसौं कहत ७ १
बातैं बूझति यौं बहरावति १०६६
बातैं सुनहु तौ स्याम सुनाऊँ १०१६
बाबा मोकौं दुहन सिखायौ ४११
बावस गहगहात मुनि १०८१
बारक जाइयौ मिलि माधौ ११६२
बार बार जनि तू यौं आवै ६८२
बार-बार बलराम कौ १२८०
बार-बार मुख जोवति माता ११११
बार सचरह जरासंध १०१०
बाल गुपाल खेलौ मेरे तात ११८
बासुदेव की बड़ी बड़ाई १
बिचारत ही लागे दिन जान १'८
बिछुरत श्रीव्रजराज आजु १२५६
बिछुरी मनौ संग तैं हिरनी २११
बिछुरी रे मेरे बाल-सँघाती १४६८
बिधना अतिहीं पोच कियौ ६५१
बिधना चूक परी मैं जानी ६२२
बिधना मुरली सौति बनाई ६८५
बिधना इहै लिखी संजोग १४६६
बिनती करत नंद कर जोरैं ५४१
बिनती करत मरत हौं लाज ५७
बिनती करत बचत बहीर ५४०
बिनती जिहिं बिधि प्रभुहिं ६५०
बिनती सुनहु देव जगपालिन ५१५
बिनती सुनौ दीन की चित १८
बिनवै अनुशमन करभोरें ४६५

बिनु गुपाल बैरिनि भइ ११८८
बिनु माधौ राधा तन सजनी १४१५
बिन बुलाए किए नँदराइ ५१५
बिमुख जननि की संग न ७६२
बिरथा जनम लियौ संसार १ ६
(हौं तौ मोहन के) बिरह १४११
बिरही कहँ लौं आपु सँभारै १६१२
बिलग जनि मानौ ऊधौ ११ ६
बिलग जनि मानौ भ्रमरी १५२६
बिलग हम मानैं ऊधौ १११२
बिरहा जात हर्यौ गात १४१
बिहँसि राधा कृष्ण अंक ८ १
(माई) बिहरत गोपाल राइ २६१
बिहरत हैं जमुना जल १'१२
बिहारीलाल आवहु, आई ४५५
बीच दियौ कुल-कानन आइ ७६१
बीर बटाऊ पाती लीन्यौ १७७५
बूझत स्याम कौन तू गोरी ६५५
बूझत हैं अकुरीहिं स्याम १२८६
बूझति जननि कहाँ हुतौ ६०२
बूझति है रुकमिनि पिय १०२१
बृंदावन देख्यौ नँद-नँदन ४१६
बृंदावन मोकौं अति भावत ४५
बृंदावन हरि बैठे धाम ८०४
बृषभानु की घरनि अनुमति ६६८
बेगि ब्रज कौं फिरिए ११ ८
बैरन भौंहैं नाहिं भामिनी ६२२
बैठिगईं मटुकी सब धरि कै ११६४
बैठी कहा मदन मोहन कौ ६४६
बैठी जननि करति सगुनौती ६५१
बैठी मानिनी गहि मौन ८६८
बोलि लियौ बलरामहिं ४४१
बोलि लेहु हलधर भैया कौ ६५२
बौरे मन, रहन अटल करि १२६६
ब्याकुल भईं गोप कुमारि १७८५
ब्रज क निकट आइ फिरि १७ ६
ब्रज के बिहारी लोग बुलारे १७ ६
ब्रज के लोग उठे अकुलाई ५१८
ब्रज के लोग फिरत बितताने ५५२
ब्रज-घैये कौ चलन न ११४
ब्रज पर गईं गोप-कुमारि १ ६५
ब्रज घर-घर अति होत ५११
ब्रज घर-घर प्रगटी यह बात ६६१
ब्रज घर-घर यह बात ११६८
ब्रज घर-घर सब होति १४६
ब्रज बन सघन स्याम ब्रत १६५२
ब्रज-जुवती रस राग पगी १११६
ब्रज-जुवती स्यामहिं उर ४२५
ब्रज तैं है रितु पै न गई १७१३
ब्रज नर नारि नंद अनुमति ५५१
ब्रज पर सजि पावस दल १११७
ब्रज बनिता देखति नँदनंदन ६१
ब्रज बनिता रवि कौ कर १ २८
ब्रज बसि काके बोल७ ६ ११७

ब्रजबासिनि के सरबस १२६५
ब्रजबासिन कौ हेत, हृदय १७८२
ब्रज-बासिनि मोकौं बिसरायौ५४१
ब्रजबासिनि सौं कह्यौ ७६६
ब्रज-बासी पटतर कोउ नाहिं४५८
ब्रज-बासी सब सुनि सब ४६८
ब्रज-बासी सब सोवत पाए १११५
ब्रज मैं एक अचंभौ देख्यौ१७१२
ब्रज मैं एकै धरम रह्यौ १७२५
ब्रज मैं को उपज्यौ यह भैया ४४४
ब्रज मैं वै उनहार नहीं ११५९
ब्रज मैं संभ्रम मोहि भयौ १७११
ब्रजहिं चलौ आई अब साँझ ४५६
ब्रजहिं बसैं आपुहिं बिसरायौ ७१
ब्रह्म जिनहिं यह आयसु ११८१
ब्रह्मा बालक बच्छ हरे ४११

भ

भए सखि नैन सनाथ १२६९
भक्त सकुचे सुगम अगम १५१
भक्त हेतु अवतार धरौ ११९८
भक्ति कब करिहौ, जनम १२६
भजन बिनु कूकर-सूकर जैसौ ११८
भली भई हरि सुरति करी १४८१
भवन नहीं मन जाहि १५६
भवन रवन सबही बिसरायौ१ ११
महरात महरात कथा (मत) ५२१
भादौं की अध-रात अँधियारी१११
भावी काहू सौं न टरै १ ४
भीतर तैं बाहर लौं आवत १ ५
(घेरैं) भुजनि बहुत बल ११५
भुज भरि लई हिरदय लाइ ८४४
भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हौं७६४
भूलौ भयौ आजु मेरौ बारौ ४२१
भूलि नहीं अब मान करौ ८४
भाव-भुज निरखि राम २ ९

म

मंथिनि नीकौ मंत्र बिचारयौ२११
मति कोउ प्रीति कैं फँग १७८९
मथुरा जाति हौं बेचन १८४
मथुरा तैं पै आई हैं ८५६
मथुरा दिन-दिन अधिक११ ७
मथुरापति जिय अतिहिं १७८
मथुरा पुर मैं सोर पर्यौ ११८८
मथुरा मैं बस बास तुम्हारो ८२७
मथुरा हरषित आजु भई १९८८
मधुकर आपुन होहिं १११८
मधुकर, कहौं पठी यह १५ ९
मधुकर कहिए काहि १५२८
मधुकर कहियौ सुचित १६९१
मधुकर काके मीत भए १५०७
मधुकर कौन मनायी मानै१५११
मधुकर छाँड़ि अटपटी बातैं१५१४
मधुकर तुम रस-लंपट लोग१५११
मधुकर, तुम ही स्याम १५१९

मधुकर प्रीति किए १११४
मधुकर ब्रज को बसिबो १५१७
मधुकर भली करी तुम आए ११४
मधुकर यह निहचै हम १५६८
मधुकर यह सुख तुमतैं दूरि १६७०
मधुकर स्याम जोग सँदेसो ६११
मधुकर स्याम हमारे हित १५६४
मधुकर स्याम हमारे चोर १६ ५
मधुकर हम अजान मति १५११
मधुकर हम न होहिं बेलि १५ ८
मधुकर हमहीं क्यौं समुझावत १५ ५
मधुबन तुम क्यौं रहत हरे ११४६
मधुबन लोगनि को पतियाइ १५५१
मधुबन सब कृतज्ञ धरमीले १५५२
मन कैं भेद नैन गए माई १२ ६
मन तोसौं किती कही १२५
मन बिगर्‌यौ यह नैन १२ ५
मन-भीतर है बास हमारौ ११८६
मम मधुकर पद-कमल ७५७
मन मेरौ हरि साथ गयौ री ७७७
मन मैं रह्यौ नाहिंन ठौर १६ ४
मन मोहन खेलत चौगान १७१६
मन हरि लीन्हौ कुँवर कन्हाई७७१
मनहीं मन रीझति महतारी ७२१
मनिमय आगन आनि धरे ६५६
मनोहर है नैननि की भाँति ६१७
मनो दोउ एकहिं मते भए १२४६
महर बृषभानु की यह कुमारी६६६
महर-महरि कैं मन यह आई४२६
महर-महरि-मन गई मनाइ ४६७
महरि कह्यौ री लाड़िली ६०६
महरि गारुड़ी कुँवर कन्हाई ७
महरि तुम मानौ मेरी बात ६७६
महरि, तैं बड़ी कृपन है माई१८६
महरि पुकारति कुँवरि कन्हाई४६६
महरि मुदित उलटाइकै मुख ६८१
महरि स्याम कौं बरजति ६ २
महा बिरह बन माँझ परी ८६४
महाराज दसरथ कौ सोभत १८८
माई कृष्न नाम जब तैं स्रवन७८१
माई मेरौ मन पिय सौंपौ ८४२
माई मोकौं चंद लग्यौ दुख१४९२
माई री, कैसैंकै हरि कौं१७७१
माखन खात हँसत किलकत११७
माखन दधि हरि खात ११६७
मातु पिता अति त्रास ७६८
मातु पिता इनके नहिं कोई५६८
मातु पिता गुन कह्यौ तुम्हारे ६७२
मातु-पिता तुम्हरे कौ नाहीं’ ५
माधव या लगि है जग १७८१
माधव भा॰महार भए १७८४
माधौ जू कहा कहौं इनकी१७१२
माधौ जू, जो जन तैं बिगरे ६६
माधौ जू मन माया बस १

माधौ जू, मन हठ कठिन १
माधौ जू, मैं अति ही सचु १७१
माधौ जू, मोहिं काहे की ७६
माधौ जू, यह मेरी इक गाइ ५५
माधौ जू सुनिये ब्रज १०२८
माधौ जू सुनौ ब्रज कौ प्रेम १०२७
माधौ, तहाँ बुलाई राखे ६२
माधौ नैंकु हटकौ गाइ १
माधौ मोहिं करौ वृंदावन ४६१
मान करौ तुम और सवारे ८७७
मान बिना नहिं प्रीति रहै ८१७
मानिनि मानहि क्यौं न ९२१
मानौ माई घन-घन अंतर १ ७१
मानौ माई सबनि यहै है १४ १
माया देखत ही जु गई २२
मिलतु स्याम मोहिं चूक १ ९८
मिलि बिछुरन की बेदन ११४८
मिलि हनु पूछी प्रभु यह २१२
मीठी बातनि मैं कहा लीजै १५७९
मुकुर छाँह निरखि देह की ८११
मुक्ति आनि मंदे मैं मेली ११
मुख छबि कहा कहौं बनाइ ५८२
मुख छबि कहौं कहाँ लगि १ ५
मुख-छबि देखि हो नँदघरनि ४ १
मुख पर चंद डारौं वारि ६५१
मुरलिया एकै बात कही १ ०
मुरलिया कपट चतुराई ठनी ९९
मुरलिका मोकौं लागति १ १
मुरलिया स्यामहिं और कियौ ९८
(माई री) मुरली अति गर्व ९४९
मुरली चली अति इतराइ ९७५
मुरली एमै पर अति प्यारी ९७१
मुरली कहै सु स्याम करैं री ९९४
मुरली की सरि कौन करै ९७८
मुरली की सरि भनि करौ १ १
मुरली कैं बस स्याम भए री ९५८
मुरली कौन सुकृत फल पाए ९५१
मुरली कौ मन हरि सौं ९८२
मुरली जैसैं तप कियौ तैसैं १ २
मुरली तऊ गुपालहिं भावति ९५१
मुरली तप कियौ तनु गारि १ १
मुरली तैं हरि हमहिं ९६९
मुरली तौ अधरनि पर १
मुरलो दिन दिन भली १ ११
मुरली धूरि कराएँ बनिहै ९६२
मुरली-धुनि करी बलबीर १ ४५
मुरली-धुनि बैकुंठ गई १ ७८
मुरली-धुनि स्रवन सुनत ९७८
मुरली नहिं करत स्याम ९६७
मुरली भई सौति बजाइ ९६१
मुरली मोहिनी अब भई ९७६
मुरली मोह कुँवर कन्हाई ९५
मुरली लई कर तैं छीनि ८२९
मुरली शब्द सुनि ब्रज १ ४१

मुरली सुनत अचल चले १०७९
मुरली सौं अब प्रीति करौ १०४
मुरली स्याम अधर नहिं ६५७
मुरली स्याम कहाँ तैं पाई ६५९
मुरली स्याम बजावत है री १०८
मुरली हम कहँ सौति भई ६६५
मुरली हम सौं बैर बढ़ायो ६७४
मुरली हरि-कौं नाच नचावति ६६५
मुरली हरि कौ भावै री ६६४
मुरि-मुरि चितवति नंद गली ६६१
मूँदि रहे पिय प्यारी-लोचन ८६८
मूरख रघुपति-सत्रु कहावत २११
मेरा मुरली की तानसुनावै ११६९
मेघनाद ब्रह्मा वर पायो २१७
मेघनि गाइ कही पुकारि ५६१
मेघवर्ण मेघनि समुझावत ५४६
मेरी कैसी बिनती करनी २७५
मेरी कौन गति ब्रजनाथ ६८
मेरौ गोपाल बनि चढ़ौ ११६
मेरे आगैं महरि जसोदा ६०१
मेरे इन नैननि इते करे ११२५
मेरे कहैं मैं कोउ नाहिं ११६८
मेरे कुंवर कान्ह बिनु सब १११०
मेरे दधि कौ हरि स्वाद ११८
मेरे दुख कौ ओर नहीं ६६८
मेरे नैन कुरंग भए १११३
मेरे नैन-चकोर मुम्दै १२११
मेरे नैन निरखि सुख पावत ५६१
मेरे मन इतनी सूल रही १४१२
मेरे माई स्याम मनोहर ५८४
मेरौ कह्यौ नाहिंन सुनति ६७९
मेरौ कह्यौ सत्य करि मानौ ५११
मेरौ मन अनत कहाँ सुख ८१
मेरौ मन मति-हीन गुसाईं ६२
मेरौ मन वैसैयै सुरति करै ११०८
मेरौ माई कौन कौ दधि १८०
मेरौ माई निपटी कौ पन १२६६
मैं अपनी सब गाइ चरैहौं ४४१
मैं अपनी सी बहुत करी री ८१९
मैं अपनैं मन रहति स्याम ६६७
मैं अपनैं मन गरब बढ़ायौ ६४
मैं अपनैं जिय गरब कियौ ८११
मैं अपनौ मन हरत न जान्यौ ७०९
मैं यह जानु मरै पै माई ७४१
मैं यह तौहिं मनावन आई ८०१
मैं कैसैं रस रासहिं गाऊँ १११०
मैं जमुना जल भरि रही ८०४
मैं जानति हौं ढीठ कन्हाई ११११
मैं जानी जिय-मन की बात ८६१
मैं तुम्हरे मन की सब ११५२
मैं तो जु हरे हैं, मैं तो ४६४
मैं सोवन-भरम चित दीन्हौ २१५
मैं दुलही मोहिं सुख ४१०
मैं परदेसिन नारि अकेली २११

मैं बरज्यौ जमुना-तट जात ४७६
मैं बलि जाउँ कन्हैया की ८१५
मैं बलि जाउँ स्याम मुख ६१४
मैं ब्रजबासिन की बलिहारी ११७८
मैं मन बहुत भाँति समुझायौ ७७८
मैं मोही तेरैं लाल री ५८१
मैं समुझाई अति अपनौ सौ १०१८
मैं हरि सौं हो मान कियौ ८८२
मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी १२१
मैया बहुत बुरौ बलदाऊ ४१२
मैया, मैं तौ चंद खिलौना १११
मैया मैं नहिं माखन खायौ १६४
मैया, मोहिं दाऊ बहुत १४१
मैया मोहिं बड़ौ करि लै री १२४
मैया री, मोहिं दाऊ टेरत ४४२
मैया री मोहिं माखन भावै १६२
मैया, हौं गाइ चरावन जैहौं ४१६
मैया हौं न चरैहौं गाइ ४०१
मोकौं माई जमुना जम ११८४
मो सम कौन कुटिल खल ७८
मोसौं कहा दुरावति राधा ७१६
मोसौं बात सकुच तजि कहियै ०४
मोसौं बात सुनहु ब्रज-नारी ११६५
मोहन इती मोह चित ११६६
मोहन काहैं न उगिलौ माटी १५१
(माई) मोहन की मुरली १ १२
मोहन गए, आतु तुम आतु ६१७
(मेरे) मोहन अस प्रभाइ ५६४
मोहन का दिन बनहिं न ११४७
(मेरे) मोहन, तुमहिं बिना १११
मोहन, नैंकु बदन-तन हेरौ १२७५
मोहन-बदन बिलोकत ६२१
मोहन माँग्यौ अपनौ रूप १६१
मोहन मानि मनायौ मेरौ १४४
मोहन हौं तुम ऊपर वारी ४१२
मोहन-कर तैं दोहनि लीन्हीं ६८५
मोहिं कहति जुवती सब ४२७
मोहिं छुवौ जनि दूरि रहौ ८०१
मोहिं दोहनी दै री मैया ६११

य

यह असि हमैं कैसेहौ भावै १५७५
यह आशा पापिनी दहै २७
यह रितु रूसिबे की नाहीं ६११
यह सुख नौकी बात ८७५
यह कमरी कमरी करि ११६४
यह कहि कै तिय धाम गई ८८५
यह गति ऐसे आत सँदेसौ २२
यह गोकुल गोपाल उपासी १६५१
यह जनि कहौ घोष-कुमारि १ ४६
यह जानति तुम नंद महर ११६६
यह छिप हौंस पै सु रही ११६५
यह जुवतिनि कौ धरम न १ ५२
यह बन कैलिक आदौर ७८५
यह वृषभानु-सुता यह को है ८५१

यह महिमा येई पै जानै ११८५
यह मुरली मोहिनी कहावै ६६८
यह सब मेरीयै आइ कुमति ११५
यह सुरति कहाँ तैं आई ८६२
यह सुनि हँसि मौन रहो री ७६१
यह सुनि कै हलधर तहँ धाए४१८
यह सुनि गिरी धरनि १२७२
यह सुनि मदनगोकुल नंद ११ ९
यह सुनि हँसि चली ब्रज-७१८
यह सुनि हँसी सकल ब्रज- ११५७
यह हमकौं विधना लिखि ९८६
याकी सीख सुनै ब्रज को रे १५५४
या घर प्यारी आवति १८४
या बिनु होत कहा अब सूनौ १४१९
याहि और नहिं कछू १४४२
याहू मैं कछु बात बिहारी ११७२
ये दिन रूसिबे के नाहीं ११९४
ये दोऊ मेरे गाइ चरैया ४७५
ये नैना मेरे ढीठ भए री १२४६
ये नैना यौं मारहिं हमारे १२११

र

रघुनाथ पियारे आजु रहौ १८६
रघुपति, अपनो प्रन २९८
रघुपति, जौ न इंद्रजित २११
रघुपति, बेगि जतन अब २२८
रघुपति, मन संदेह न कीजै २४२
रजनी-मुख बन तैं बने ५२७
रथ पर देखि हरि-बलराम१२६१
रमि हौं बिनय करति कर १ १६
रहि री मानिनि मान न ९ ४
रहौं जहाँ सो तहाँ सब १२७८
रहु रे मधुकर, मधु मतवारे१५ ६
रहौ मन सुमिरन कौ १९
राखि लेहु अब नंदकिसोर ५५५
राखि लेहु गोकुल के नायक ५५४
राखौपतिगिरिवर गिर-धारी१५८
राजति रोम-राजी रेख ६०२
राधा अतिहिं चतुर प्रवीन ८१६
राधा कह्यौ आजु इन बानी७४८
राधा को कछु और सुभाउ ८२५
राधा, चलहु भवनहिं जाहिं ७४९
राधा चकित भई मन माहीं८१२
राधा जल बिहरति सखियनि७४२
राधा डर डरपति घर जाई ८१९
राधा, तैं हरि कैं रँग राँची ७८२
राधा नैंद नंदन अनुरागी ७८६
राधा निरखि भूली अंग ७४४
राधा नैन नीर भए आए १७८६
राधा परम निर्मल नारि ७६
राधा बिनय करति मनहीं ७२५
राधा भवन सखी मिलि ८१५
राधा, भाग कियौ यह नीकौ७७६
राधा भूलि रही अनुराग ११ २
राधा मन मैं यहै बिचारति ७५१

राधा माधव भेंट भई १०६७
राधा ये ढँग है री तेरे १०८
राधा सखिनि लई बुलाइ ११४१
राधा सखी देखि हरषानी ९ ५
राधा सों माखन हरि ११०६
राधा स्याम की प्यारी ७६१
राधा हरि कैं गर्ब गहीली ७५२
राधिका बस्य करि स्याम ९२१
राधिका मौन ब्रत किनि ७११
राधिका हृदय तैं चोल टारी ८२९
राधे छिरकति छींट छबीली ११११
राधे, तेरे नैन किधौं बटपारे ९१५
राधे, तेरे नैन किधौं सगवारे ९१४
राधे तेरौ बदन बिराजत ७२
राधे हरि तेरौ नाम बिचारैं ९ १
राधेहिं मिलेहुँ प्रतीति न ८७१
राधेहिं स्याम देखी आइ ९११
राम जू कहाँ गए री माता २ १
राम धनुष अरु सायक २ १
राम न सुमिरयौ एक घरी ४१
राम भक्तवत्सल निज बानौं १
रामहिं राखौ कोऊ जाइ १९९
रावन चल्यौ हनुमान मरयौ २१८
रास-मंडल बने स्याम १ ६७
रास-रस-मुरली ही तैं जान्यौ १०८
रास-रस लीला गाइ १११८
रास-रस श्रमित भई ११९
रास-रचि मनहिं स्याम १ ६५
रिस करि लीन्ही फेंट छुड़ाइ ९९१
रीझत ग्वाल रिझावत स्याम ९५५
रीती मटुकी सीस धरैं ११९२
रुकमिनि, चलौ जन्मभूमि १०८
रुकमिनि देखी मंदिर आईं १०४१
रुकमिनि बूझति हैं १०००
रुकमिनि, मोहिं निमेष न १०७८
रुकमिनि, मोहिं ब्रज १०७९
रुकमिनि राधा ऐसें भेंटी १०९१
रुदन करति वृषभान कुँ १ ९१
रूप मोहिनी धरि ब्रज आई २७०
रे कपि क्यौं पितु-बैर २१४
रे पिय लंका बनचर आयौ २११
रे मन, अजहूँ क्यौं न सम्हारै ११
रे मन, गोबिंद के ह्वै रहियै १५
रे मन छाँड़ि बिषय ११
रे मन जग पर जनि ठगायौ १२
रे मन मूरख, जनम गँवायौ १११
रे मन, राम सौं करि हेत १२
रे सठ, बिन गोबिंद सुख १२०
रोम रोम ह्वै नैन गए री ११११
रोमावली-रेख अति राजति ९ ४
रोवति महरि फिरति ७ १

ल

लंकपति द्रुमित कौं २१९
लछिमन, रचौ हुतासन २६

लछिमन सीता देखी जात २४८
लरिकाई कौ प्रेम कहौ १६७५
ललकत स्यामघन ललचात ११२४
ललिता प्रेम बिबस भई भारी८७५
(माई मेरे) लाल हो ऐसी १११
लिखि आई ब्रजनाथ की १४६७
लिखि नहिं पठवत हैं ११७५
लै आवहु गोकुल गोपालहिं१११
लै लै मोहन चंदा लै ११४
लोक-सकुच कुल-कानि ११६५
लोचन चोर बाँधे स्याम १२२४
लोचन टेक परे सिसु जैसे १२४८
लोचन भए पखेरू माई १२२५
लोचन मेरे भृंग भए री १२२६
लोचन लालच तैं न टरैं १११८
व
वा पट पीत की फहरानि ११५
वे हरि सकल ठौर के बासी११६५
वै बातैं जमुना-तीर की १६७५
श
श्रीदामा गोपिनि समुझावत११०४
स
संग मिलि कहौ काहौ बात१४४
सँग राजति वृषभानु-कुमारी ८८१
सँदेसनि मधुबन कूप भरे ११६५
सँदेसो देवकी सौं कहियो १११५
सकल तजि, भजि मन चरन१४७
सखनि संग खेलत हरि आँगन८५६
सखा कहत हैं स्याम खिसाने १४२
सखा सुनि एक मेरी बात १४४०
सखि, कर धनु लै चलहिं १४१८
सखि, कोउ नई बात सुनि १४ ४
सखियन बीच नागरी आवै १ ४१
सखियन मिलि राधा घर १६४
सखियनि यहै बिचार पर्यो ७२६
सखी इन नैननि तैं घन १११९
सखी कहति तू बात गँवारी७८४
सखि तू राधेहिं दोस लगावति७१९
सखी मोहिं हरि-दरस-रस १२
सखी री काहे रहति मलीन११७९
सखी री कहाँ गए कमलापति२१९
सखी री चातक मोहिं १४ ९
सखी री नंद-नंदन देखु ५८६
सखी री, मथुरा मैं द्वै हंस १५४८
सखी री, माधौहिं दोष न ९९२
सखी री, मुरली लीजै चोरि ९५२
सखी री बहुरौ कौन बात १९८
सखी री सुदरता कौ रंग १ १
सखी री, स्याम सबै इक ११०८
सखी री हरि आवहिं किहिं ११८१
सजनी अब हम समुझि परी९८४
सजनी नख-सिख तैं हरि ९८८
सजनी, निरखि हरि कौ रूप१४७
सजनी स्याम सदाई ऐस ९८१

सतगुरु चरन भजे बिनु १९९५
सपनो सुनि जननी अकुलानी४८
सब खोट मधुबन के लोग १९५
सब जल तजे प्रेम के नातें १६२९
सब तजि भजिऐ नंद-कुमार ४
सब दिन एकहिं से नहिं ११ ६
सबनि सनेही छाँड़ि दयौ १११
सब ब्रज है जमुना कैं तीर ५११
सबहिनि तैं हित है जन १८
सबै सुख लै जु गए ब्रजनाथ१०१७
सबै दिन एकै से नहिं जात १०२
सबै दिन गए विषय के हेत १११
सबै ब्रज घर-घर एकै रीति१०२४
सबै रितु औरै लागति १४१४
समुझि न परति तिहारी १५२१
समुझि री नाहिंन नई ९२५
सरद निसि देखि हरि हरष१ १७
सरन गए को को न उबारयौ ९
सहस सकट भरि कमल ५१६
साँवरेहिं बरजति क्यौं जु १७०
साँवरो मनमोहन माई ५९४
साँवरी साँवरी रैनि को १५७२
सारंग स्यामहिंसुरति कराइ१४ ८
साधु मनर घर मास बितावैं ७८८
सिंधु तट उतरे राम उदार९१२
सिखवति चलनजसोदा मैया १ २
सिखिनि सिखर चढ़ि टेर १४ ९
सिर धौंहिनी चली लैप्यारी१९२
सिवर्धकर हमको फल १ १६
सिव सौं बिनय करति १ १५
सीता पुहुप-वाटिका जाते २ ८
सुंदर बर सँग ललना ९१
सुंदर मुख की बलि-बलि ६११
सुंदरस्यामकमल दल-लोचन७९९
सुत कौंवरज राखहु महरि१११९
सुत-मुख देखि जसोदा फूली ९९२
सुता लए जननी समुझावति७२४
सुता सौं कहति वृषभानु ८ ५
सुदामा गृह कौं गमन कियौ१०५५
सुदामा मंदिर देखि डर्यौ १०५६
सुदामा चीरत पंथ चले १०५१
सुनत बन बेनु-धुनि चली १ ४९
सुनत हरि रुकमिनि को १०४१
सुनहु बात जुवती इकमेरी ११८७
सुनहु बात मेरी बलराम ४२१
सुनहु महरि तेरो लाड़िलो१११
सुनह री मुरली की उत्पति६७
सुनहु सखी ते धन्य नारि११८१
सुनहु सखी, वाके कुल-धर्म९०१
सुनहु सखी, राधा की बातें७९७
सुनहु सखी, राधा की७१६ ७११
सुनहु सखी, राधा हरि को ६७८५

सुनहु स्याम मेरी बिनती ७१२
सुनहु, हरि मुरली मधुर १ १८
सुनि ऊधौ मोहिं नैकु न १७११
सुनि के कुच कानन बैन १ १९
सुनि देवकी को हितू हमारैं २११
सुनि सुनि सखन उठी ११
सुनि मेघवत्त सजि सैन आए ९४४
सुनि मैया मैं तो पय पीवौं ४६५
सुनियत ऊधौ लए सँदेसो १४६८
सुनियत कहुँ द्वारिकाबसाई १७७४
सुनियत मुरली देखिलजात १३४४
सुनियै ब्रज की दसा गुसाईं १७०८
सुनि राजा दुर्योधना, हम तुम१५१
सुनि राधा अब तोहिं न ८९
सुनि राधा यह कहा बिचारै ८२९
सुनि राधे तोहि स्याम दिनैं१०१७
सुनि री मैया कालिहीं ८०७
सुनि री सखी दसा यह मेरी ७६५
सुनि री सयानी तिय, करिबेह१९
सुनि रे मधुकर, चतुरसयाने१५८०
सुनि सखि वे बड़भागी मोर७६
सुनि सजनी तू भई सयानी १२१५
सुनि सजनी, मोसौं इक १२४१
सुनि सतभामा सोहिंबिहारी १७८१
सुनि सुत एक कथा कहौं ३१५
सुनि-सुनि ऊधौ, आवति १५७
सुनि सुनि बात सखी ७२८
सुनि-सुनि री तैं महरि १६७
सुनहि महाबल बालब्रह्मचारी१६२६
सुनु कपि वै रघुनाथ नहीं २१९
सुनि री ग्वारि, कहौं इक १९१
सुनु सखा, हित प्रान मेरैं१४५१
सुने ब्रज लोग आवत १४७७
सुने हैं स्याम मधुपुरी आवत१२७१
सुनौ अनुज,इहिं बन इतननि२९
सुनौ कपि कौसिल्या की २४५
सुनौ गोपी, हरि कौ संदेस१५ ४
सुपनैं हरि आए हौंकिलकी११७७
सुपनैंहु मैं देखियै जो नैन १३०६
सुफलक-सुत हरि दरसन १३५६
सुभग साँवरे गात की मैं ५९
सुभट भए कोसल ये नैन १२२९
सुरगन करतअस्तुतिमुनिभि५७
सुरगन चढ़ि बिमान नभ १ ६८
सुरगन सहित इन्द्र ब्रज ५६९
सुरति करि इहाँ की पीर १४११
सुवा, चलि ता बन कौ रस११४
सूधैं दान न काहैं लेत ११४५
सैन दै नागरी गई बन कौं८१२
सैननि नागरी समुझाइ ६५८
सैन साजि ब्रज पर चढ़ि ९४९
सोइ कछु कीजै दीन-दयाल१९
सोइ रसना जो हरि-गुन ३१५
सोच पोच निवारि री उठि१०४५

सोचि भिय पवन-पूत १२४
सौ दिन बिछुटी कछु कम १११४
सोभा कहत कही नहिं आवै ५१२
सोभा सिंधु न अंत रही री १७१
सोभित कर नवनीत लिए ११८
सोवत नींद आइ गई ४७६
स्याम अंग जुवती निरखि ६१
स्याम अचानक आए री ७७५
स्याम-उर प्रीति मुख-कपट १ ५६
स्याम करत हैं मन की चोरी ७८
स्याम कर पत्री लिखी १०५७
स्याम कर मुरली अतिहिं ६११
स्याम कुंज बैठारि गईं ८७१
स्याम कौन कारे की गोरे ७१८
स्याम गर्ये सखि प्रान रहेंगे १२६१
स्याम गरीबनि हूँ के गाहक १
स्याम छबि निरखतिभामिनि ११ ५
स्याम-तनु राजति पीत १ ७४
स्याम तिया सन्मुख नहिं ८२२
स्याम धरयौ तियमोहन रूप ६११
स्याम नारि मैं बिरह भरे ८७८
स्याम निरखि प्यारी अंग ८२७
स्याम बलराम गए मथुरा १२६१
स्याम बलराम रँगभूमि १२११
स्याम बिनु भई सरद निसि१७७६
स्याम बिनोदी रे मधुबनियाँ१४२६
स्याम बियोग सुनौ हो १५४४
स्याम भए वृषभानु-सुता-बस८२१
स्याम भए राधा बस ऐसै ८६८
स्याम भुजनि की सुंदरताई ६ ७
स्याम मुरली कैं रंग ढरे ६६
स्याम मातुमसौं क्यौ मकरौं० ७
स्याम-राम के गुन नित१७६१
स्याम लियौ गिरिराज उठाइ ५५६
स्याम सखा कौं गेंद चलाई ४९
स्याम सखि नीकैं देखे नाहिं७५८
स्याम सिधारे कौनैं देस ११५८
स्याम सुनहु इक बात ११८६
स्याम हँसि बोले प्रभुता १ ६१
स्यामहिं दोष कहा कहि ६६१
स्यामहिं मैं कैसैं पहिचानौं ७६४
स्याम-हृदय जल-सुत की ६११
स्यामा तू अति स्यामहिं ८२६
स्यामा स्याम कुंज बन ८२१
स्रम करिहौ अब मेरी ही६६६
स्वामी चहितौ प्रेमसैंभारौ ११८१

ह

हँसत कहौ मैं दोसौं प्यारी ६८१
हँसत सखनि सब कहत ११५१
हँसत स्याम ब्रज-घर कौं १ १८
हँसि जननी सौं बात करत ४७७
हँसि बोले गिरधर रस-बानी७०८
हम अहीर ब्रजबासी लोग ७८२
हमकौं जागत रैनि बिहानी ११८१

हमकौं नृप हरि हेत बुलाए १२१४
हमसौं विधि भ्रम-वधू न १ ७
हमको सपनेहू मैं सोच ११८
हमकौंहरि की कथा सुनाउ १५६२
हम अनति मेद कुँवर ११७५
हम तप करि तनु गारयौ ६०१
हम तैं कछु सेवा न भई १४८८
हम तैं कमल नयन भए १०६८
हम तैं तप मुरली न करे १ ६
हम तैं बिदुर कहा है नीके १५६
हम तैं हरि कबहूँ न उदास १६५६
हम तौ इतनें ही सचु पायौ १८ १
हम तौ कान्ह केलि की १५८१
हम तौ दुहूँ भाँति फल ११२५
हम तौ नंद-घोष के बासी ११५
हम तौ सब बातनि सचु १५२०
हम पर काहैं कुकति १४६५
हम पर हेत किए रहिबौ ११८
हम भई दीठि भले तुम ११०
हम भक्तन के, भक्त हमारे ११२
हम मति-हीन कहा कछु ११८५
हमारी सुरति बिसारी ८१८
हमसौं उनसौं कौन सगाई ११६८
हमहिं कहौ हो स्याम ७४०
हमहिं कर कौन कहै रे मैया ५०१
हमारी जन्म-भूमि यह गाऊँ २१२
हमारी तुमकौं लाज हरी ६२
हमारे अंबर देहु मुरारी १ ११
हमरे देहु मनोहर चीर १ १४
हमारे प्रभु, अवगुन चित न ६८
हमारे माई, मोरवा बैर १४ ६
हमारे हरि चलन कहत हैं१७६७
हमारे हिरदै कुलिसहु १४९९
हमारे हरि हारिल की १६६१
हमैं नँदनंदन मोल लिये ८२
हर बर बाक बरे हरि आवत१७१
हरख नर-नारि मथुरा-पुरी११ १
हरषि स्याम तिय ९ ६, ९१
हरि अपनें आँगन कछु २९५
हरि किलकत जसुदा ३९१ २९१
हरि की ब्रज तन दीठि १५
हरि की सरन महँ तू आउ१२१
हरि के जन सब तैं अधिकारी१२
हरि के बाल-चरित अनूप५८०
हरि कौ बिमल जस गावत१ १
हरि की मारग दिन प्रति १४१४
हरि पाछली तहाँ तब आए ७ २
हरि गोकुल की प्रीति १४७५
हरि-छबि देखि नैन १२१५
हरि जू इते दिन कहाँ १०९४
हरि जू की आरती बनी१४६
हरि जू की बाल छबि कहौं १८
हरि जू, तुमतैं कहा न होइ ६६
हरि जू, वे सुख बहुरि कहाँ१०९५

हरि ठाढ़े रथ चढ़े दुवारे १५४
हरि-तन मोहिनी माई ५११
हरि, तुम क्यौं न हमारैं आए १५७
हरि, तेरो भजन कियौ न १६
हरि-दरसन कौं तरसति १३११
हरि बिन अपनौ को संसार ४८
हरि बिनु हरि बिधि है १३४४
हरि बिनु को पुरवै मो ११८
हरि बिनु कौन दरिद्र हरे १७११
(ऊधौ) हरि बिनु ब्रज रिपु १५११
हरि बिनु मीत नहीं कोउ तेरे ४१
हरि बिनुमुरली कौनबजावै१४११
हरि बिनु लागत है बन ११ १
हरि ब्रज-जन के दुख ५२४
हरि-मुख किधौं मोहिनी १४२
हरि-मुख देखि भूले नैन १ १४
हरि-मुख देखिहौं नँद-नारि ४ ७
हरि-मुख देखिहो बसुदेव २५८
हरि-मुख निरखत नैनभुलाने१२८
हरि मुख बिधु मेरीअँखियाँ१२१४
हरि-मुख राधा-राधा बानी ११८
हरि-मुख सुनत बेनु रसाल १ ४१
हरि रस तौऊ जाइ कहूँ १४
हरि-रस तौ ब्रजबासी जानैं१६०१
हरि-सँग खेलति हैंसब फागु१४
हरि संग खेलन फागु चली १३५
हरि सुनि दीन बचन रसाल १ ११
हरि सौं ठाकुर और न जन कौं १
हरि सौं बूझति रुकमिनि १०९१
हरि सौं धेनु दुहावति प्यारी १८
हरि हरि हरि सुमिरौ सब १
हरि हैं राजनीति पढ़ि आए ११११
हरि, हौं सब पतितनि कौ
हलधर कहत प्रीति जसुमति १११
हलधर सौं कहि ग्वालि ४१०
हाथ हाथ करि लकुटि पुकारौ १४
हारि-जीति नैना नहिं १३११
हा हा हो पिय, नुम करौ ११०८
हुते कान्ह अबहीं संग बन १०८२
है कोउ वैसी ही अनुहारि १००
है हरि-भजन कौ परमान १ १
होत सो जो रघुनाथ ठटै १ १
हो, ता दिन कजरा मैं ११०१
हौ इन मोरनि की ११०
हौं यहाँ तेरेहिं कारन १००
हौं कैसैं कै दरसन पाऊँ १००१
हौं तो माई मथुरा ही पै ११११
हौं फिरि बहुरि द्वारिका १०१८
हौं या माया ही लागी तुम ८ २
हौं सँग साँवरे के जैहौं ११ ४
हौं बलि जाँ चाइ इक बातें११८
हौं तुम कहत कौन की १११

## ड। प्रेमनारायण टंडन का सूरदास-नंददास-संबंधी साहित्य

### ब्रजभाषा सूर-कोश

प्रस्तुत कोश में ब्रजभाषा कवियों के सभी शब्द-रूप दिए गये हैं और सूरदास द्वारा प्रयुक्त शब्द के साथ अर्थ की पुष्टि और स्पष्टता के लिए अपेक्षित उद्धरण भी दिए गए हैं। साथ ही अवधी तथा खड़ीबोली के प्रतिष्ठित कवियों के विशिष्ट प्रयोग भी संकलित हैं जिससे कोश का व्यावहारिक मूल्य बहुत बढ़ गया है। हिन्दी में अपने ढंग का यह सर्वप्रथम कोश डा॰ दीनदयालुगुप्त के निर्देशन में तैयार हुआ है और लखनऊ विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन के अन्तर्गत प्रकाशित हो गया है। इसमें २×१०+८ साइज के लगभग १५ पृष्ठ हैं। मूल्य सजिल्द (१ खंडों में ४) और फुटकर दस जिल्दों में १०)५।

### सूर की भाषा

इस प्रबंध में निम्नलिखित विषयों की विवेचना है—

१. ब्रजभाषा और सूर की भाषा के अध्ययन का इतिहास। २. ब्रजभाषा—उसका विकास और सूर का भाषा-ज्ञान। ३. सूर की भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन। ४. सूर की भाषा का व्याकरणिक अध्ययन। ५. सूर की भाषा का व्यावहारिक और शास्त्रीय अध्ययन। ६. सांस्कृतिक दृष्टि से सूर की भाषा का महत्व। ७. उपसंहार—समकालीन और परवर्ती ब्रजभाषा कवियों से सूर की भाषा की तुलना एवं अध्ययन का सारांश।

परिशिष्ट—१. सूर काव्य में प्रयुक्त शब्दों की संख्या। २. सूर-साहित्य और उसकी संपादन-समस्या। ३. नामानुक्रमणिका। रायल अठपेजी साइज। पृष्ठ संख्या सवा छः सौ। मू॰ १०)

### सूर-साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन

इस पुस्तक में सूरदास के समकालीन समाज की सांस्कृतिक विचार-धारा का परिचय देने के लिए उसके सामाजिक भौगोलिक

धार्मिक और सामान्य विश्वासों के साथ-साथ शकुन अपशकुन और स्वप्न-संबंधी विश्वासों के अतिरिक्त भारतीय कवियों में प्रसिद्ध बातों और भारतीय संस्कृति के प्रमुख अंगों—पर्वोत्सवों संस्कारों और कला-कौशल—पर भी प्रकाश डाला गया है। सूर-साहित्य के ही नहीं हिंदी के किसी भी एक कवि के काव्य के इतने विशद सांस्कृतिक अध्ययन का हिंदी में यह प्रथम प्रयास है। रायल अठपेजी साइज। सजिल्द प्रति, मूल्य ५)

## सूर-सारावली एक अप्रामाणिक रचना

'सारावली' को प्रामाणिक माननेवालों सूर-साहित्य के विद्वानों के मतों का सोदाहरण खंडन करके लगभग सौ वर्षों से फैले एक बड़े भ्रम का निवारण किया गया है। मूल्य १२॥) । उक्त ग्रन्थ का संक्षिप्त संस्करण भी प्रकाशित किया गया है। मू० १॥)

## सूर विनय-पदावली

सूरदास के १२१ विनय-पदों का सुंदर संकलन जिसमें ३२ पृष्ठों में कवि-काव्य-परिचय और ४४ पृष्ठों में विस्तृत टिप्पणियाँ हैं। मूल्य १॥)

## रास-पंचाध्यायी

कविवर नंददास के प्रसिद्ध काव्य का सुंदर संस्करण जिसके